ⓟⓞⓢⓣ Ⓑⓨ (कृष्णा जी HR याणा आले)👈

भारत : ऐतिहासिक मानचित्रावली

बृष्टि बंदोपाध्याय
मनजीत सिंह
प्रदीप गौतम
राजेन्द्र प्रसाद शर्मा

मुख्य संपादक
कल्पना राजाराम

संपादकीय सहायक
सोनिया शर्मा

thejobsyogi.com

2019

स्पेक्ट्रम बुक्स प्रा. लि.
A1 291, प्रथम तल, जनकपुरी,
नई दिल्ली 110 058

संपादकीय.....

इस पुस्तक के पूर्णतया संशोधित एवं परिमार्जित संस्करण के प्रति व्यापक प्रशंसा एवं रुझान ने हमें पुस्तक के नवीन संस्करण लाने को प्रेरित किया जिसमें परीक्षा के बदलते नवीनतम स्वरूप को ध्यान में रखते हुए तथ्यों एवं सूचनाओं का समावेश किया गया है।

इस पुस्तक में मानचित्रों के तीन सेट दिए गए हैंः एक में प्रागैतिहासिक काल से लेकर स्वतंत्रता के बाद तक के भारत को दर्शाया गया है तथा दूसरे में भारत के ऐतिहासिक स्थलों को प्रदर्शित किया गया है, जबकि तीसरे सेट में भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के विशिष्ट पहलुओं से सम्बद्ध स्थलों को प्रस्तुत किया गया है।

ऐतिहासिक स्थलों के विन्यास में 'प्राचीन काल' तथा 'मध्यकाल' का विभेद नहीं किया गया है, क्योंकि परीक्षा में आपको ऐतिहासिक महत्व के किसी स्थल को चिन्हित करने को कहा जाता है, चाहे वे स्थल प्राचीन काल में महत्वपूर्ण रहे हों अथवा मध्यकाल में। आपके लिए यह जानना आवश्यक है कि कोई स्थल-विशेष, भारत में कहां स्थित है तथा उसका ऐतिहासिक महत्व क्या है? इसके अतिरिक्त, कुछ स्थल ऐसे हैं जो किसी एक ही समय में महत्वपूर्ण नहीं रहे, अतः इस पुस्तक में स्थलों को अंग्रेजी वर्णमाला के क्रम में दर्शाया गया है तथा उन्हें मानचित्र में चिन्हित किया गया है। प्रत्येक स्थल के ऐतिहासिक/सांस्कृतिक महत्व को स्पष्ट करती हुई संक्षिप्त किंतु पूर्ण पाठ्य सामग्री भी दी गई है। पाठकों के लिए यह विन्यास अधिक सहायक होगा तथा उन्हें स्थलों को चिन्हित करने में अधिक सरलता होगी।

पुस्तक में 300 से भी अधिक स्थल दिए गए हैं, जिनमें से अधिकांश स्थल, संघ लोक सेवा आयोग की सिविल सेवा परीक्षा (मुख्य) के अंतर्गत वैकल्पिक विषय इतिहास में एकाधिक बार पूछे गए हैं।

पुस्तक के अंतिम भाग में विभिन्न स्थलों की सही स्थिति को स्मरण करने हेतु उपयोगी निर्देश दिए गए हैं जिससे कि स्थलों को रिक्त मानचित्र पर सही-सही चिन्हित किया जा सके।

यह पुस्तक हमारे प्रकाशन की अंग्रेजी में लिखित 'Historical Atlas of India' का हिन्दी संस्करण है।

इस प्रकार के महत्वपूर्ण कार्य में तमाम एकाग्रचित व गंभीर प्रयासों के बावजूद कुछ त्रुटियों का बने रहना अस्वाभाविक नहीं है। इन त्रुटियों के सुधार हेतु हम प्रतिबद्ध हैं। यदि पाठक हमें अपनी शंकाओं से निरंतर अवगत कराने के साथ-साथ अपने रचनात्मक एवं आलोचनात्मक सुझाव संप्रेषित करते हैं, तो वह हमारे लिए अत्यंत सुखद एवं संतुष्टिदायक होगा। पाठकों का अनवरत सहयोग ही हमें अपने आगामी संस्करण को त्रुटिहीन, परिष्कृत तथा शत-प्रतिशत अपेक्षानुरूप बनाने की उत्प्रेरणा एवं उत्साह प्रदान करेगा।

मुख्य सम्पादक
कल्पना राजाराम

thejobsyogi.com

विषय सूची

भाग एक

मानचित्र में भारत का ऐतिहासिक पुनरीक्षण 1

भारत में प्रागैतिहासिक संस्कृति 3
हड़प्पा सभ्यता 8
गैरिक मृदभांड संस्कृति (ओसीपी), ताम्र भंडार संस्कृति 10
भारतीय उपमहाद्वीप में काले तथा लाल मृदभांड संस्कृति, चित्रित धूसर मृदभांड संस्कृति तथा उत्तरी काले चमकदार मृदभांड संस्कृति 12
वैदिक काल 14
दक्षिण भारत में महापाषाणकालीन स्थल-भारतीय प्रायद्वीप में लौह युग का आरम्भ 16
छठी से चौथी शताब्दी ईसा पूर्व तक राज्यों का निर्माण, शहरीकरण एवं धार्मिक आंदोलन 17
मौर्य साम्राज्य 18
मौर्योत्तर काल 20
भारत के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रों के साम्राज्य 21
भारत एवं पश्चिम के मध्य प्राचीन व्यापारिक मार्ग 23
गुप्तकाल 25
गुप्तोत्तर काल 27
दक्षिण-पूर्वी एशिया का भारतीयकरण 29
आरम्भिक मध्यकालीन भारत के राज्य (750-1200 ई.) 31
प्रारंभिक मध्यकाल में चोल साम्राज्य 33
दिल्ली सल्तनत 34
उत्तरोत्तर सल्तनत काल में प्रांतीय राजवंश 36
मुगल साम्राज्य 38
17वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मुगल साम्राज्य 40
मराठा साम्राज्य 42
1765 ई. में भारत 43
1797-1805 की अवधि में भारत 45
1858 में भारत 47
20वीं सदी के प्रारंभ में भारत 49
1947 में भारत (स्वतंत्रता से पूर्व) 50
स्वातंत्र्योत्तर भारत में राज्यों एवं संघ-शासित प्रदेशों का पुनर्गठनः 1955 में भारत 52

भाग दो

ऐतिहासिक महत्व के स्थान 53
भारत राजनैतिक 2017 56
भारत नदियां 57

A

मानचित्र 59
आदमगढ़ 58
अदिचनल्लुर 58
आगरा 58
अहार 58
अहिच्छत्र 60
अहमदाबाद 60
अहमदनगर 60
एहोल 60
अजंता 61
अजमेर 61
आलमगीरपुर 62
अलची गोम्पा 62
इलाहाबाद/कोसाम 62
अमरावती 63
अमरकंटक 63
अमरकोट 63
आम्बेर/आमेर 63
आमरी 64
अमृतसर 64
अनेगोंडी 64
अंग 64
अन्हिलवाड़ा 65
अनूप 65
अनुराधापुर 65
ओर्नस 65
अपराजितक/अपरांत 65
अफसाद 65
अरम्मलई 66
अरिकामेडु 66
असीरगढ़ 66
अस्सक (असमक) 67
अतरंजीखेड़ा 67
अतिरमपक्कम 67
अटक 68
औरंगाबाद 68
अवन्ति 68
अवन्तिपुर 69
अयोध्या 69

B

मानचित्र 71
बादामी 70
बदायूं 70
बद्रीनाथ 70
बाघ 70
बागोर 72
वैराट/बिराट/बैराट 72
बालासोर 72

thejobsyogi.com

बामियान 72
बनारस/वाराणसी 72
बनवाली 73
बनवासी/वैजयन्ती 73
बंगलौर/बंगलुरू 73
बानगढ़ 73
बारबरा/बराबर 74
बारबेरिकम 74
बरखेड़ा 74
बड़ौदा 74
बेरीगाजा/भृगुकच्छ 74
बसोहली/बसोली/बशोली 75
बेसीन 75
बयाना 75
बेदसा 75
बेलूर 75
बरार 76
बेसनगर/विदिशा/भिलसा 76
भगतराव 76
भगवानपुरा 76
भाजा 77
भरहुत 77
भटिंडा 77
भटकल 79
भटनेर 79
भट्टीप्रोलू 79
भीमबेटका 79
भीटा 79
भीतरगांव 80
भीतरी 80
भुवनेश्वर 80
भूमरा 80
बीदर 81
बीजापुर 81
बीकानेर 81
बोध गया 82
ब्रह्मगिरि 82
बूंदी 82
बुरहानपुर 82
बुर्जहोम 83

C

मानचित्र 85
कालीकट 84
खंभात 84
कन्नूर/कन्नौर 84
चम्पा 84
चम्पानेर 86
चंदेरी 86
चंद्रगिरि 86
चन्द्रकेतुगढ़ 86
चन्हुदड़ो 87
चौल 87
चौसा 87
चिदाम्बरम 87
चिरांद 87
चित्तौड़ 88
चोपानी-मंडो 88
चुनार 88

D

मानचित्र 90
डाभोल 89
दैमाबाद 89
दाओजली हडिंग 89
दौलताबाद 89
देबल 91
दिल्ली 91
देवगढ़ 91
देसलपुर/गुंथली 92
धमनेर 92
धार 92
धौली 92
धौलावीरा 92
दीव 93
द्वारका 93

E & F

मानचित्र 95
एलिफैन्टा 94
एलिचपुर/अचलपुर 94
एलौरा 94
एरण 94
फतेहपुर सीकरी 96

G

मानचित्र 98
गंधार 97
गंगैकोण्डचोलपुरम 97
गंजाम 97
गंगोत्री 99
गौड़/लखनौती 99
घंटशाला/कंटकशिला 99
गिलुंड 99
जिंजी 99
गिरनार 100
गोलकुंडा 100
गोली 100
गोप मोती 100
गुलबर्गा 100
ग्वालियर 101
ग्यारसपुर 101

thejobsyogi.com

H

मानचित्र	103
हैलीबिड/द्वारसमुद्र	102
हल्लूर	102
हम्पी	102
हांसी	104
हनुमानगढ़	104
हड़प्पा	104
हरिद्वार	104
हरवान	104
हस्तिनापुर	105
हिरेबेंकल	105
हुनसागी/हुनासगी/हुनसगी	105

I & J

मानचित्र	107
इंदौर	106
इंद्रप्रस्थ	106
इटानगर	106
जादिगेनहल्ली	106
जगदला/जगद्दला/जग्गदला	106
जयपुर	108
जैसलमेर	108
जाजनगर	108
जालौर	108
जंजीरा	108
जटिंग रामेश्वर	108
जौगढ़	109
जौनपुर	109
झांसी	109
जोधपुर	109
जोगीमारा	110
जोरवे	110
जुन्नार	111

K

मानचित्र	113
काबुल	112
कलाड़ी	112
कालीबंगा	112
कालिंजर	112
कल्लुर	114
काल्पी	114
कालसी	114
कल्याणी	114
कामरूप/कामरूपा	114
कांपिल्य/काम्पिली	115
कन्नौज	115
कांचीपुरम	115
कंधार/कंदहार	115
कांगड़ा	116
कन्हेरी गुफाएं	116
कपिलवस्तु	116
कापुगल्लु/कुपगल्लू	116
कारसांबल/खादसमला	116
कड़ा	117
कारगिल	117
कार्ले	117
कावेरीपट्टनम/पुहार	117
कीझडी पल्लई संधाईपुदुर	118
खजुराहो	118
किब्बनहल्ली	118
किशनगढ़	119
कोणार्क	119
कोप्पम	119
कोरकई	119
कौसाम्बी/कौशाम्बी	119
कोटदिजी	120
कुडा गुफाएं	120
कुम्भारिया/कुम्भरिया	120
कुरुक्षेत्र	120
कुशीनगर (कसिया)	121

L

मानचित्र	123
लखुडियार	122
ललितगिरी	122
ललितपाटन	122
लेनयाद्रि गुफाएं	122
लेपाक्षी	124
लोथल	124
लखनऊ	124
लुम्बिनी ग्राम	124

M

मानचित्र	126
मदुरई	125
महाबलिपुरम/मामल्लपुरम	125
महास्थान	127
महेश्वर/महिष्मती	127
महोबा	127
मलयदिपत्ती गुफा	128
मांडला	128
मांडू	128
मनमोद गुफाएं	129
मानसेहरा	129
मान्यखेत	129
मास्की	129
मसूलीपट्टनम	129
मथुरा	130
मेरठ	130

thejobsyogi.com

ⓟⓞⓢⓣ Ⓑⓨ (कृष्णा जी H R याणा आले)☚

मेहरगढ़ 130
मोधेरा 130
मोहनजोदड़ो 131
मुंगेर 131
मुखलिंगम 131
मुल्तान 131
मुंबई 132
मुर्शिदाबाद 132
मुजिरिस 132

N

मानचित्र 134
नचना-कुठार 133
नागपट्टिनम 133
नागार्जुनकोंडा 133
नगरकोट 133
नागौर 133
नालंदा 135
नापचिक 135
नारनौल 135
नासिक 135
नेवदाटोली 136

O, P & Q

मानचित्र 138
ओदन्तपुर/ओदन्तपुरी/उड्डन्डपुरा 137
ओहिंद 137
ओरछा 137
पैठन 137
पांचाल 137
पंढारपुर 139
पांडु राजर धिबि 139
पांडुआ 139
पंगुदरिया/पंगुरारिया/पंगोररिया 139
पानीपत 140
पणजिम/पणजी 140
पटना 140
पट्टडकल 141
पावापुरी 141
पेनुकोंडा 141
पेशावर 141
पिकलिहाल 142
पिपरहवा 142
पितलखोड़ा 142
पांडिचेरी (वर्तमान में पुदुचेरी) 142
पुलिकट 143
पुणे 143
पुरंदर 143
पुरी/जगन्नाथपुरी 143
पुष्कलावती 143
पुष्कर 144
क्विलोन/कोल्लम 144

R

मानचित्र 146
रायगढ़ 145
राजगीर 145
राजिम 145
राखीगढ़ी 145
रामेश्वरम् 147
रंगपुर 147
रणथम्भौर 147
रत्नागिरि/पुष्पागिरि 148
रोहतास 148
रोजड़ी 148
रोपड़ 149
रूपनाथ 149

S

मानचित्र 151
साकेत/अयोध्या 150
सालसीट 150
समाधा 150
संभल 150
सांभर 150
सामूगढ़ 152
सांची 152
संघोल 152
संकाश्य/संकिसा 153
सराय नाहर राय 153
सारनाथ 153
सासाराम 153
ससपोल गुफाएं 154
सतारा 154
शाहबाजगढ़ी 154
शारदा पीठ 154
शत्रुंजय 154
शिवनेर 155
श्रवणबेलगोला 155
स्यालकोट/शाकल 155
सिद्धपुर 155
सिगिरिया 155
सिकन्दरा 156
सरहिन्द 156
सीरी 156
सिरपुर/शिरपुर/श्रीपुरा 156
सिरसा 157
सित्तनवासल 157
सोमापुर महाविहार 157
सोमनाथ 157
सोपारा 158

thejobsyogi.com

श्रावस्ती 158
श्रीनगर 158
शृंगेरी 158
श्रीरंगम 158
श्रीरंगपट्टनम 159
सुल्तानगंज 159
सूरत 159
सुरकोटदा 159

T

मानचित्र 161
तगार/तेर 160
तालिकोटा 160
ताम्रलिप्ती/तामलुक 160
तराइन 160
तक्षशिला/तक्शशिला/शाह-धेरी 162
थानेश्वर/थानेसर 162
तंजावुर 162
थट्टा 162
थिकसे गोम्पा 162
तिगवा 163
तिलौराकोट/तिलौरा कोट 163
तिरुचिरापल्ली 163
तिरुपति 163

U

मानचित्र 165
उच्छ 164
उदयपुर 164
उदयगिरि एवं खंदगिरि की गुफाएं 164
उडुपी 164
उज्जैन 166
उदंवल्ली गुफाएं 166
उरैयूर 166
उत्तरामेरूर 166

V & W

मानचित्र 169
वैशाली 168
वलभी 168
वेंगी 168
विजयनगर 168
विक्रमशिला 170
विलिनाम/विझीनजाम 170
वारंगल 170

भाग तीन

भारतीय इतिहास तथा संस्कृति के विभिन्न पहलुओं से संबद्ध अलग-अलग स्थलों को दर्शाते मानचित्र 171
प्राचीन गुहा चित्रकला केंद्र 172
भारतीय उपमहाद्वीप में प्राचीन बंदरगाह 173
भारतीय उपमहाद्वीप में प्राचीन एवं मध्यकालीन शिक्षा केंद्र 174

भाग चार

अभ्यास सत्र 175
दिशा-निर्देश 176
अभ्यास 180
अभ्यास 'एक' 180
अभ्यास 'दो' 180
अभ्यास 'तीन' 180
अभ्यास 'चार' 180
अभ्यास 'पांच' 180
अभ्यास हेतु रेखा-मानचित्र 181
अभ्यास छह (यूपीएससी सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2016) 182
अभ्यास सात (यूपीएससी सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2015) 183
अभ्यास आठ (यूपीएससी सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2014) 184
अभ्यास नौ (यूपीएससी सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2013) 185
अभ्यास दस 186
अभ्यास ग्यारह 187
अभ्यास छह हेतु उत्तर 188
अभ्यास सात हेतु उत्तर 188
अभ्यास आठ हेतु उत्तर 188
अभ्यास नौ हेतु उत्तर 188
अभ्यास दस हेतु उत्तर 188
अभ्यास ग्यारह हेतु उत्तर 188

thejobsyogi.com

भाग एक

मानचित्रों द्वारा भारत का ऐतिहासिक पुनरीक्षण

इस भाग में भारत के इतिहास का सांस्कृतिक अथवा वंशावली के आधार पर विभाजित कालों के संदर्भ में सिंहावलोकन किया गया है। प्रत्येक प्रमुख काल—प्रागैतिहासिक से लेकर आधुनिक—से संबंधित मानचित्रों के साथ-साथ उनका संक्षिप्त विवरण भी दिया गया है जिससे कि आपको एक दृष्टि में वृहत भारतीय इतिहास के बारे में जानकारी मिल सके।

thejobsyogi.com

विषय वस्तु

भारत में प्रागैतिहासिक संस्कृति 3
हड़प्पा सभ्यता 8
गैरिक मृदभांड संस्कृति (ओसीपी), ताम्र भंडार संस्कृति 10
भारतीय उपमहाद्वीप में काले तथा लाल मृदभांड संस्कृति, चित्रित धूसर मृदभांड संस्कृति तथा उत्तरी काले चमकदार मृदभांड संस्कृति 12
वैदिक काल 14
दक्षिण भारत में महापाषाणकालीन स्थल—भारतीय प्रायद्वीप में लौह युग का आरम्भ 16
छठी से चौथी शताब्दी ईसा पूर्व तक राज्यों का निर्माण, शहरीकरण एवं धार्मिक आंदोलन 17
मौर्य साम्राज्य 18
मौर्योत्तर काल 20
भारत के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रों के साम्राज्य 21
भारत एवं पश्चिम के मध्य प्राचीन व्यापारिक मार्ग 23
गुप्तकाल 25
गुप्तोत्तर काल 27
दक्षिण-पूर्वी एशिया का भारतीयकरण 29
आरम्भिक मध्यकालीन भारत के राज्य (750-1200 ई.) 31
प्रारंभिक मध्यकाल में चोल साम्राज्य 33
दिल्ली सल्तनत 34
उत्तरोत्तर सल्तनत काल में प्रांतीय राजवंश 36
मुगल साम्राज्य 38
17वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मुगल साम्राज्य 40
मराठा साम्राज्य 42
1765 ई. में भारत 43

1797-1805 की अवधि में भारत 45
1858 में भारत 47
20वीं सदी के प्रारंभ में भारत 49
1947 में भारत (स्वतंत्रता से पूर्व) 50
स्वातंत्र्योत्तर भारत में राज्यों एवं संघ-शासित प्रदेशों का पुनर्गठनः 1955 में भारत 52

thejobsyogi.com

भारत में प्रागैतिहासिक संस्कृति

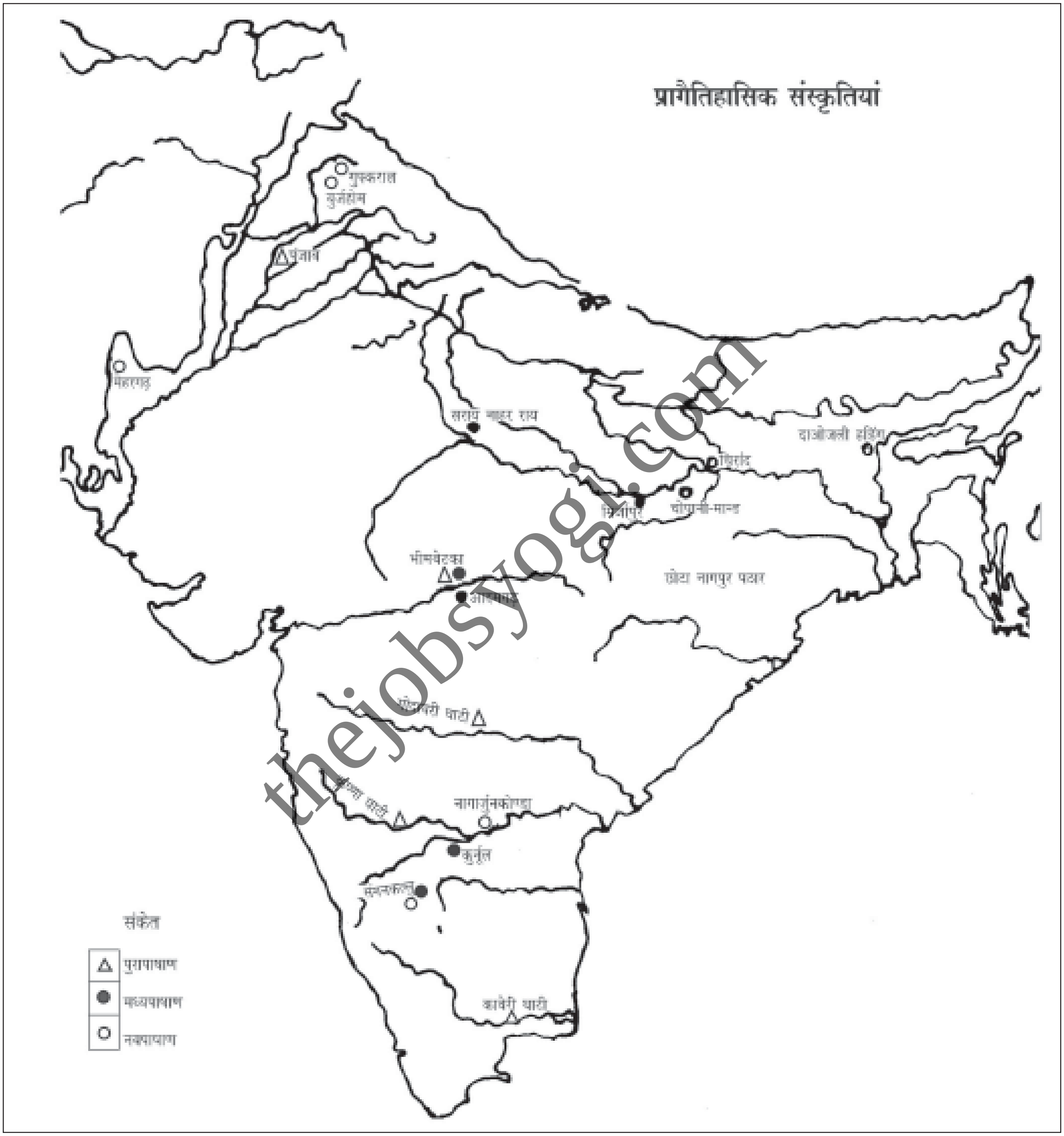

thejobsyogi.com

मानवीय अस्तित्व की अवस्था का वह काल, जिसका कोई लिखित साक्ष्य प्राप्त नहीं होता, प्रागैतिहासिक काल कहलाता है। भारत में, प्रारंभिक प्रागैतिहासिक काल 8 सहस्राब्दी ईसा पूर्व के पहले माना जाता है तथा प्रागैतिहासिक पशुपालन एवं कृषि का काल आठ से चौथी सहस्राब्दी ईसा पूर्व माना जाता है। इसी कालावधि में पुरापाषाण, मध्यपाषाण एवं नवपाषाण सभ्यताओं का उद्‌भव हुआ।

पुरापाषाण काल लगभग 5 लाख वर्ष पहले था। इस काल में मानव सभ्यता विकास की बिल्कुल प्रारंभिक स्थिति में थी। यह शिकार संग्रहण का चरण था तथा मानव को धातु एवं कृषि की कोई जानकारी नहीं थी। वे अग्नि से भी परिचित नहीं थे। मृतकों को दफनाया

भारतीय उपमहाद्वीप में पुरापाषाण कालीन मुख्य स्थल

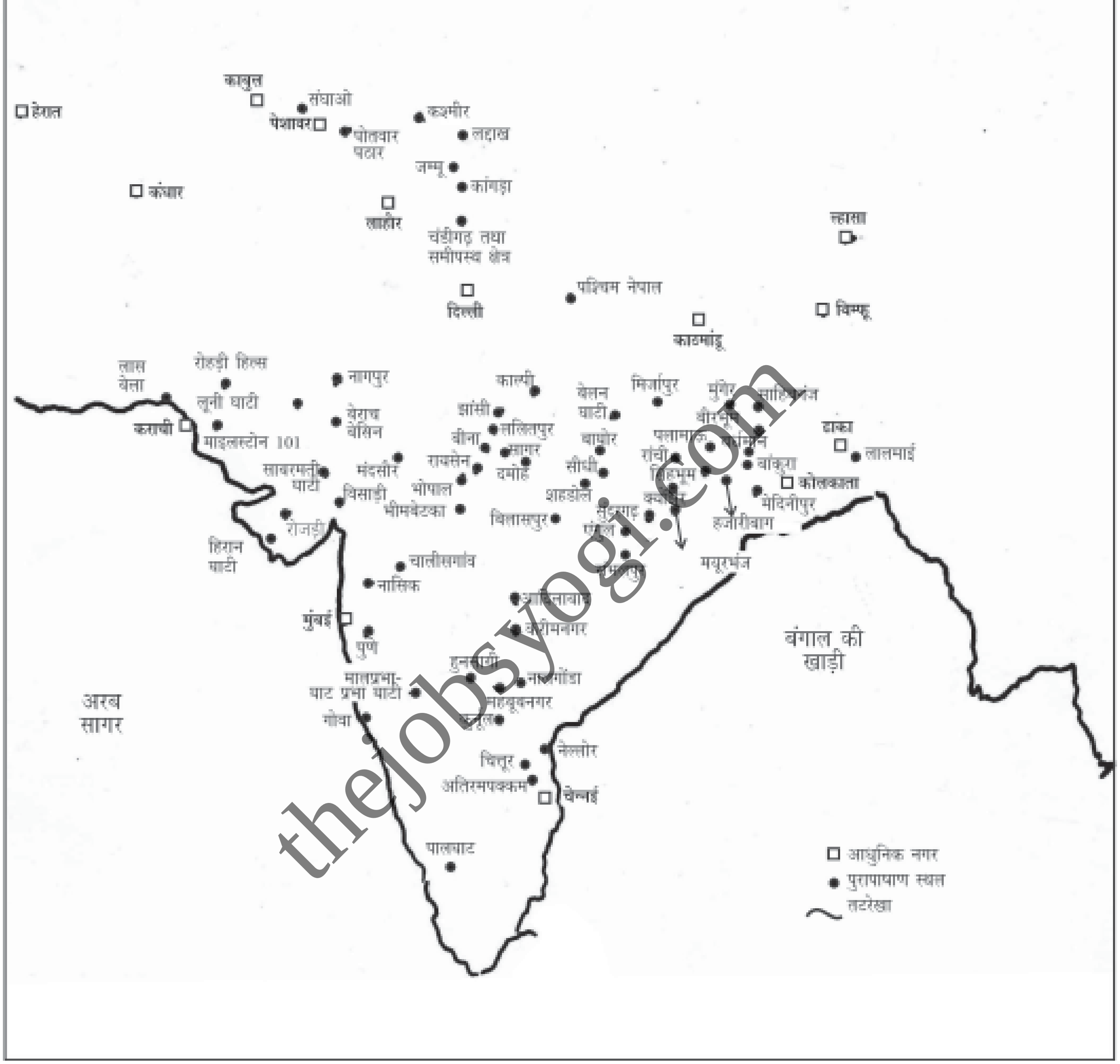

thejobsyogi.com

नहीं जाता था बल्कि उन्हें खुले में ही फेंक दिया जाता था, जहां जंगली जानवर उन्हें आहार बना लेते थे। ये भोजन के लिए मुख्यतः फलों, जानवरों एवं मछलियों पर निर्भर थे, जिनका शिकार ये पाषाण के बने विभिन्न उपकरणों, यथा—हैण्डएक्स, क्लीवर, चोपर, फ्लेक, साइड स्क्रैपर एवं ब्यूरिन इत्यादि के माध्यम से करते थे। भारत में पुरापाषाणकालीन उपकरण एक विस्तृत क्षेत्र में पाए गए हैं जबकि मानव की उपस्थिति के सबसे प्रारंभिक प्रमाण पंजाब में मिले हैं। विन्ध्याचल पर्वत-शृंखलाओं में स्थित भीमबेटका अपनी शैल चित्रकारी के लिए प्रसिद्ध है।

मध्यपाषाणकाल, जो लगभग 8000 ईसा पूर्व में प्रारंभ हुआ, पुरापाषाणकाल एवं नवपाषाणकाल के बीच का चरण था। मध्यपाषाणकालीन लोग शिकार-संग्रहण समूह से संबंधित थे। ये मुख्यतया मत्स्य आखेट पर निर्भर थे तथा लघु स्तर के कृषक भी थे। इनके आहार में मांस एवं फल-सब्जियां दोनों सम्मिलित थे। ये जंगली जड़ें, कंद एवं शहद भी बड़े चाव से खाते थे। मध्यपाषाण कालीन उपकरण माइक्रोलिथ (छोटे पाषाण उपकरण) हैं। इनमें ब्लेड, कोर, प्वाइंट, तिकोने औजार, फ्लैक इत्यादि उपकरण सम्मिलित थे। इलाहाबाद-प्रतापगढ़ क्षेत्र में स्थित सराय-नाहर-राय, भीमबेटका,

भारतीय उपमहाद्वीप में मुख्य मध्यपाषाणकालीन स्थल

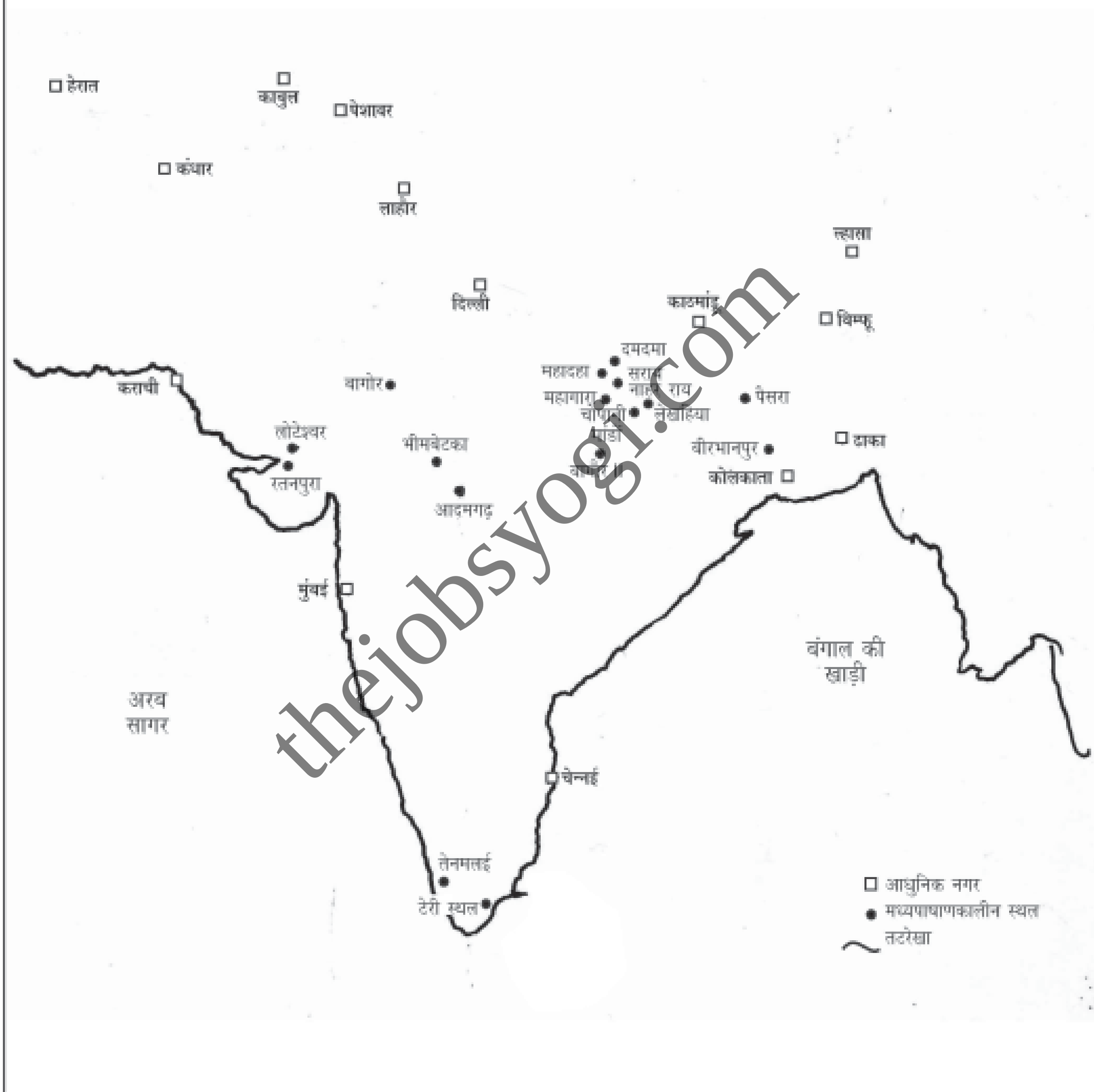

thejobsyogi.com

होशंगाबाद में आदमगढ़ एवं छोटा नागपुर का पठार वे क्षेत्र हैं, जहां से बड़ी संख्या में मध्यपाषाणकालीन पाषाणोपकरण प्राप्त हुए हैं। भीमबेटका एवं आदमगढ़ में चित्रकारी एवं नक्काशी के सुंदर नमूने प्राप्त होते हैं। इन चित्रों में तत्कालीन मानव की विभिन्न गतिविधियों यथा-शिकार, आहार-संग्रहण एवं दाह संस्कार इत्यादि के जो चित्र प्राप्त होते हैं, वे इस बात के परिचायक हैं कि इस चरण में मानवीय जीवन स्थायी एवं सामाजिक होने लगा था।

नवपाषाणकाल की अवधि 5000-3000 ई.पू. मानी जाती है। इस चरण की सबसे मुख्य विशेषता स्थायी तौर पर कृषि का प्रारंभ एवं पशुओं को पालतू बनाया जाना है। अनाजों की खेती एवं कृषि

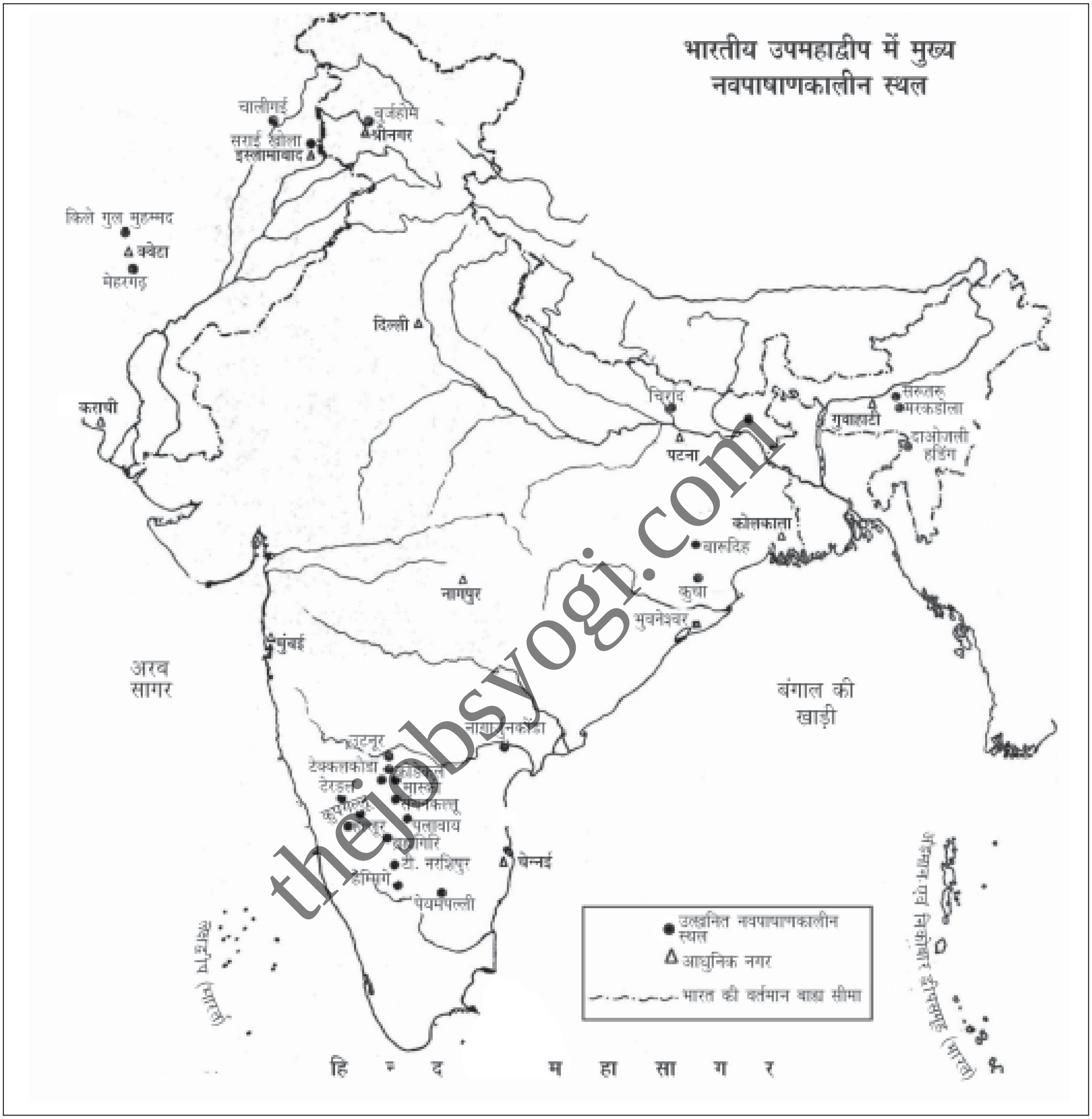

thejobsyogi.com

के विकास से उनके जीवन में कायांतरण हुआ तथा वे घुमन्तू शिकारियों से स्थायी कृषक बनने लगे। इससे ग्रामीण सभ्यता का उद्भव एवं विकास, नए प्रकार के पाषाणोपकरणों का निर्माण एवं प्राकृतिक संसाधनों पर मानव के बेहतर नियंत्रण की प्रक्रिया का शुभारंभ हुआ। नवपाषाणकालीन उपकरण सुघड़ एवं पालिशदार हैं। इन उपकरणों में सम्मिलित हैं—कुल्हाड़ी, हथौड़े, सिलबट्टे, सींग एवं हड्डी की बनी छेनी, बाण, बरमा, सुई, कुदाल, चूड़ी इत्यादि। ये उपकरण लगभग पूरे देश में पाए गए हैं। कश्मीर घाटी में बुर्जहोम तथा गुफ्फकराल, (जहां से गर्त आवास के साक्ष्य भी मिले हैं); दक्षिण-पूर्वी उत्तर प्रदेश, जिसमें सम्मिलित हैं—चोपानी, मांडो; उत्तरी बिहार; उत्तर-पूर्व में दाओजली हडिंग; छोटा नागपुर का पठार एवं दक्षिण भारत से ये उपकरण प्राप्त किए गए हैं। कराची के मैदान में स्थित मेहरगढ़ की पहचान दक्षिण एशिया की पहली कृषि बस्ती के रूप में हुई है। बुर्जहोम एवं गुफ्कराल के पुरातात्विक उत्खनन से मसूर, मटर, गेहूं एवं जौ; चोपानी मांडो के उत्खनन से चावल तथा दक्षिण भारत से रागी की खेती के प्रारंभिक साक्ष्य प्राप्त हुए हैं। दाह संस्कार की प्रक्रिया तथा शवाधान से संबद्ध अनुष्ठानों के प्रयोग का प्रारंभ होना भी इस काल की महत्वपूर्ण विशेषताएं थीं।

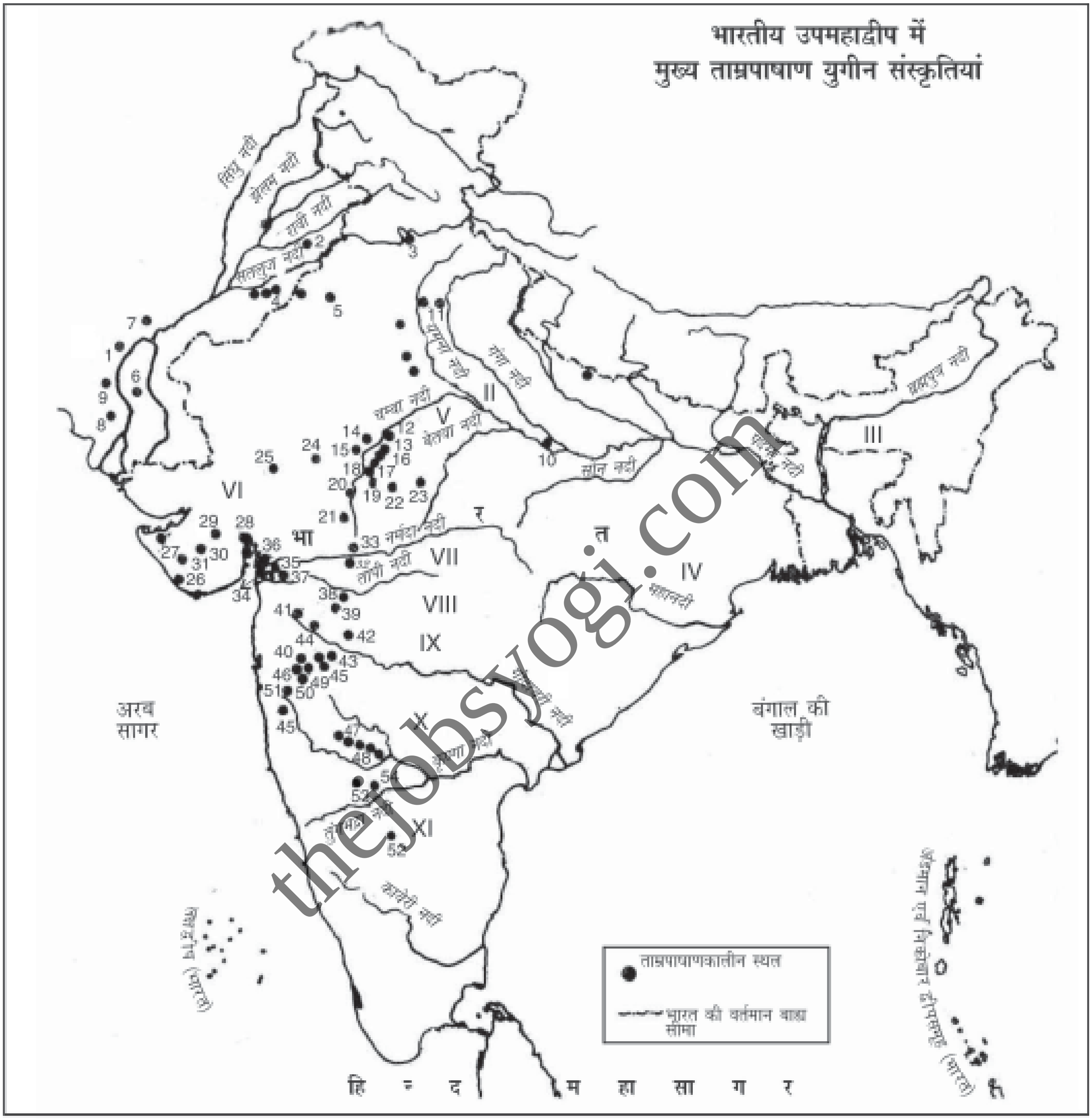

thejobsyogi.com

I. *सिंधु तंत्रः* 1. मोहनजोदड़ो 2. हड़प्पा 3. रोपड़ 4. सूरतगढ़ 5. हनुमानगढ़ 6. चन्हुदड़ो 7. झुकर 8. आमरी 9. झंगर
II. *गंगा तंत्रः* 10. कौशाम्बी 11. आलमगीरपुर
III. *ब्रह्मपुत्र तंत्र*
IV. *महानदी तंत्र*
V. *चम्बल तंत्रः* 12. सेवा 13. नागदा 14. परमार-खेर्त 15. तुंगनी 16. मेटवा 17. टकराओडा 18. भिलसुरी 19. माओरी 20. घटा-बिलोड 21. बेतवा 22. बिलावली 23. अष्ट
VI. *राजपुताना-सौराष्ट्रः* 24. रंगपुर 25. अहर 26. प्रशास पाटन, 27. लखाबावल 28. लोथल 29. पिथादिया 30. रोजड़ी 31. अदकोट
VII. *नर्मदा तंत्रः* 31. नवदातोली 33. महेश्वर 34. भगतराव 35. तेलोद 36. मेहगम 37. हसनपुर
VIII. *तापी तंत्रः* 38. प्रकाश 39. बहल
IX. *गोदावरी-प्रवर तंत्रः* 40. जोरवे 41. नासिक 42. कोपरगांव 43. नेवासा 44. दायमाबाद
X. *भीमा तंत्रः* 45. कोरेगांव 46. चन्दोली 47. उम्बरा 48 चानेगांव 49 अनाची 50 हिंगनी 51. नागरहल्ली
XI. *कर्नाटक तंत्रः* 52. ब्रह्मगिरि 53. पिकलीहाल 54. मास्की

हड़प्पा सभ्यता

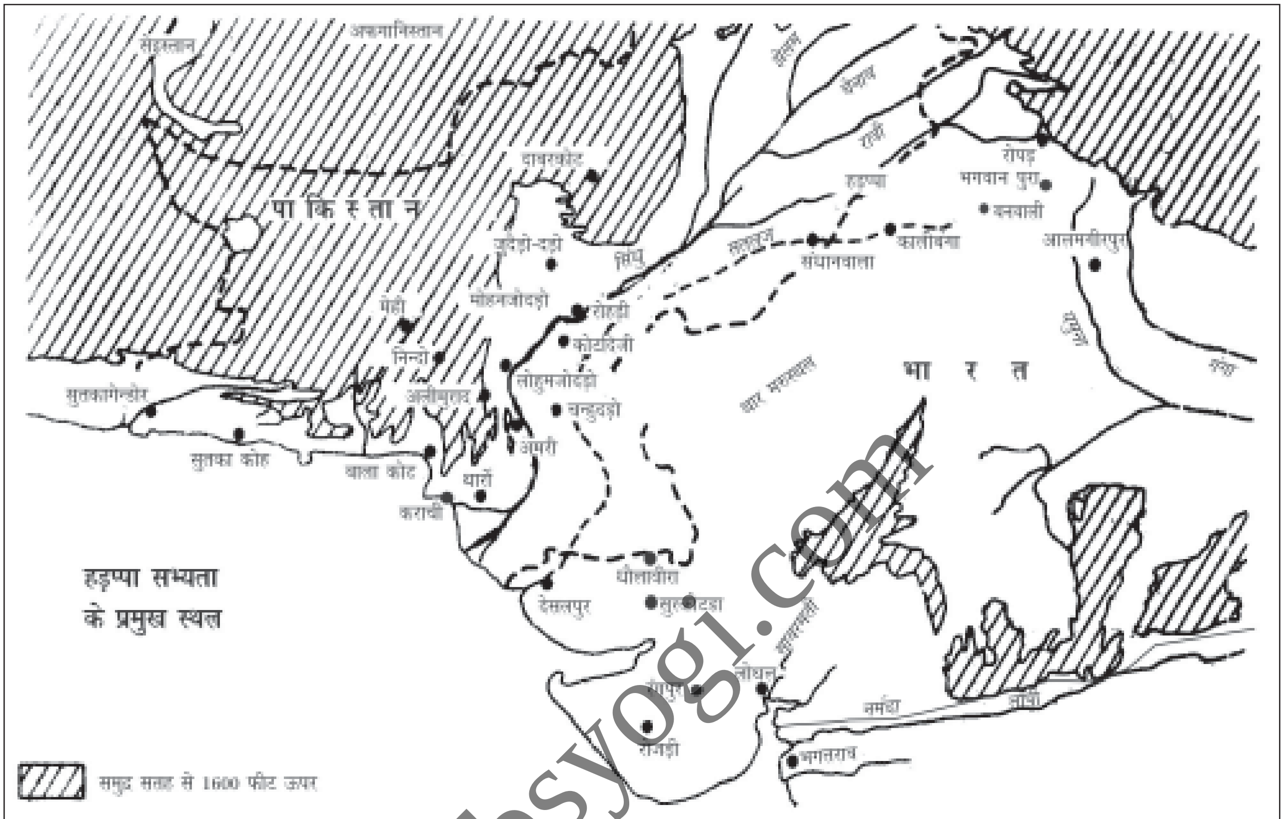

सिन्धु घाटी या हड़प्पा सभ्यता, विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक है। यह सभ्यता लगभग 3000 ईसा पूर्व अस्तित्वमान थी। हड़प्पा सभ्यता, मिस्र, मेसोपोटामिया एवं चीन की प्राचीन सभ्यताओं की समकालीन थी। इस सभ्यता का नामकरण हड़प्पा नामक स्थल के नाम पर किया गया है, जिसकी खोज सर्वप्रथम 1826 में की गई थी। वर्तमान समय में हड़प्पा पश्चिमी पंजाब में रावी नदी के तट पर स्थित है, जो अब पाकिस्तान में है। इस सभ्यता को सिंधु सभ्यता के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि इस सभ्यता के बहुत से स्थल सिंधु नदी की घाटी में सकेन्द्रित थे। सिंधु घाटी सभ्यता के प्रारंभ के संबंध में विभिन्न इतिहासकारों एवं पुरातत्ववेत्ताओं के मध्य मत-मतांतर था। कई इतिहासकारों का मत था कि विदेशी आक्रांताओं ने अचानक आक्रमण करके सिंधु घाटी क्षेत्र को जीत लिया था तथा यहां उन्होंने नए नगर बसाने प्रारंभ कर दिए। यद्यपि नवीनतम साक्ष्यों से यह संकेत मिलता है कि सिन्धु घाटी की इस नगरीय सभ्यता का उद्‌भव सिन्धु क्षेत्र में स्थानीय सभ्यता से ही हुआ था। इस सभ्यता के विभिन्न स्थलों के उत्खनन से प्राप्त साक्ष्यों एवं खुदाई के स्तरों के आधार पर विद्वानों ने इस सभ्यता को कुछ प्रमुख चरणों में विभक्त किया है। प्रथम चरण प्राक-हड़प्पा नव पाषाणकालीन चरण था, जिसकी अवधि 5500-3500 ईसा पूर्व मानी गई है। बलूचिस्तान एवं सिंध के मैदानी इलाकों में मेहरगढ़ एवं किली गुल मोहम्मद जैसी बस्तियों से सीमित कृषि, ग्रामों का मौसमी व्यवसाय एवं स्थायी ग्रामों के क्रमिक उद्‌भव के प्रमाण प्राप्त हुए हैं। इन्हें विभिन्न फसलों जैसे—गेहूं, जौ, खजूर, कपास इत्यादि का ज्ञान था तथा ये भेड़, बकरी एवं अन्य पशुओं को पालते थे। इस चरण में मिट्टी से बने आवासों, मृदभाण्डों एवं कलात्मक वस्तुओं के प्रमाण भी प्राप्त हुए हैं।

दूसरा चरण प्रारंभिक हड़प्पा काल था, जिसकी अवधि 3500-2600 ईसा पूर्व निर्धारित की गई है। इस चरण में लोगों ने स्थायी तौर पर पहाड़ियों एवं मैदानी क्षेत्रों में रहना प्रारंभ कर दिया था। इस चरण में लोग तांबे के प्रयोग, पहिए एवं हल से परिचित थे। इस चरण में विविध प्रकार के सुंदर एवं कलात्मक मृद्‌भाण्डों की प्राप्ति से कई क्षेत्रीय परम्पराओं के प्रारंभ के संकेत भी मिलते हैं। अन्नागार, रक्षात्मक प्राचीर एवं लंबी दूरी के व्यापार एवं मृदभाण्ड संस्कृति के उद्‌भव के प्रमाण समस्त सैंधव घाटी क्षेत्र में पाए जाते हैं।

कृषि की तकनीक के उन्नत होने तथा सिन्धु के उपजाऊ मैदानों के उपयोग से निश्चित तौर पर कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई होगी। इससे अधिशेष बढ़ा होगा, जनसंख्या में वृद्धि हुई होगी तथा दूरवर्ती समुदायों से व्यापारिक संबंध स्थापित हुए होंगे। अधिशेष की मात्रा बढ़ने से लोगों ने गैर-कृषि हस्तशिल्प, यथा-धातुकर्म, मृदभाण्ड निर्माण

thejobsyogi.com

एवं कलात्मक वस्तुओं की ओर अपना ध्यान केन्द्रित किया होगा। इसी से संभवतः शासक वर्ग की उत्पत्ति भी हुई होगी। इस चरण ने 'परिपक्व हड़प्पा चरण' का मार्ग प्रशस्त किया, जिसकी अवधि 2600-1800 ईसा पूर्व मानी गई है। इस चरण की मुख्य विशेषताएं थीं—शहरी जीवन, लेखन, एकसमान मानक प्रणाली, हस्तशिल्प का क्षेत्रीय विशिष्टीकरण एवं मेसोपोटामिया तथा खाड़ी के अन्य देशों से समुद्रपारीय व्यापार। सिन्धु सभ्यता की नगरनियोजन व्यवस्था अत्यन्त विकसित थी तथा यह जल-निकासी की समुन्नत व्यवस्था के लिए जानी जाती थी। इस तथ्य के सुस्पष्ट प्रमाण सिन्धु सभ्यता के दो प्रमुख स्थलों—हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो के उत्खनन से भी प्राप्त हुए हैं। गेहूं, जौ, राई, मटर, तिल एवं सरसों हड़प्पा सभ्यता की मुख्य फसलें थीं। चन्हुदड़ो से सरसों के बीज प्राप्त हुए हैं।

सिन्धु सभ्यता, ताम्र-पाषाण काल से संबंधित थी। यह इस बात की पुष्टि करता है कि इस सभ्यता के निवासी तांबे एवं पाषाण दोनों के प्रयोग से भलीभांति परिचित थे। तांबे की एक मिस्र धातु कांसे का उपयोग बर्तन, आभूषण एवं औजार बनाने में किया जाता था। इस सभ्यता की भाव-चित्रात्मक लिपि को अभी तक नहीं पढ़ा जा सका है। इस सभ्यता के विभिन्न स्थलों से कई मुहरें भी प्राप्त हुई हैं, जिसमें विभिन्न प्रकार के प्रतीक बने हुए हैं।

हड़प्पा सभ्यता विस्तृत भू-क्षेत्र में फैली थी तथा हड़प्पा, घग्घर एवं मोहनजोदड़ो धुरी में केन्द्रित थी। सुतका कोह एवं सुत्कागेंडोर, जो मकरान तट पर स्थित थे, इस सभ्यता की पश्चिमी सीमा का निर्धारण करते थे जबकि बड़गांव, मानपुर एवं उत्तर प्रदेश में आलमगीरपुर इस सभ्यता की पूर्वी सीमा का निर्माण करते थे। इस सभ्यता के महत्वपूर्ण स्थल, जो अब पाकिस्तान में हैं, उनमें सम्मिलित हैंः मोहनजोदड़ो, अलीमुराद, हड़प्पा, कोटदिजि एवं सुत्कागेंडोर। भारत में स्थित महत्वपूर्ण स्थल हैंः पंजाब में रोपड़, गुजरात में लोथल, रंगपुर एवं सुरकोटडा; राजस्थान में कालीबंगा एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश में आलमगीरपुर। कुछ समय पूर्व ही भारत के गुजरात राज्य में खोजा गया स्थल धौलावीरा इस सभ्यता का सबसे बड़ा एवं सबसे नवीन स्थल है।

हड़प्पा सभ्यता का उत्तरवर्ती चरण 1800 ईसा पूर्व एवं उसके आगे से प्रारंभ होता है। इस चरण में हड़प्पा/सिन्धु सभ्यता के अवसान के संकेत दिखाई देते हैं। इस चरण में शहरी विशेषताएं विलुप्त होने लगी थीं, यद्यपि हड़प्पाई हस्तशिल्प एवं मृदभाण्ड परम्परा विद्यमान रही।

thejobsyogi.com

गैरिक मृदभांड संस्कृति (ओसीपी), ताम्र भंडार संस्कृति

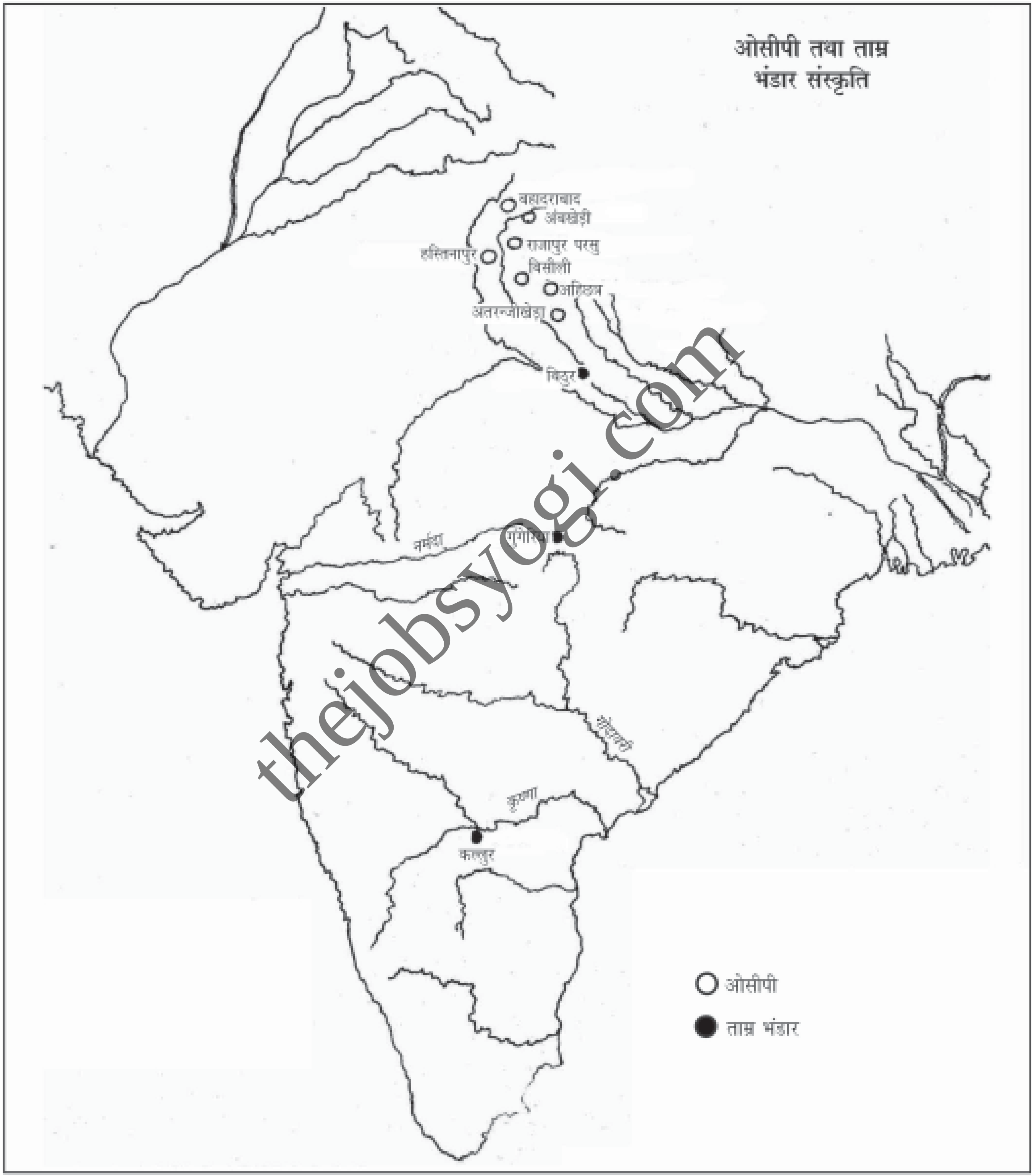

thejobsyogi.com

वर्ष 1950 में, उत्तर प्रदेश के बिसौली (बदायूं जिला) तथा राजापुर परसु (बिजनौर जिला) में खुदाई के दौरान नए प्रकार के मृदभांडों की खोज हुई जिन्हें बाद में गैरिक मृदभांड संस्कृति (OCP Culture) नाम दिया गया। ये दोनों स्थल ताम्र भंडार संस्कृति के भी स्थल

रहे हैं। अधपकी मध्यम दानेदार मिट्टी से बने ये मृदभांड नारंगी से लाल रंग लिए हुए हैं।

गैरिक मृदभांड स्थल सामान्यतः नदी के तटों पर स्थित हैं। इन स्थलों के छोटे आकार तथा टीलों की कम ऊंचाई से प्रतीत होता है कि इन बस्तियों की समयावधि कम होगी। कुछ ओसीपी स्थलों (उदाहरणतः अंबखेड़ी, बहेरिया, बहादराबाद, झिंजाना, लाल किला, अतरंजीखेड़ा, सपाई आदि) के उत्खनन में नियमित बस्ती के कोई चिन्ह नहीं मिले। हस्तिनापुर तथा अहिछत्र में ओसीपी संस्कृति तथा उसकी उत्तरवर्ती चित्रित धूसर मृदभांड संस्कृति के बीच की कालावधि में बस्तियों में एक विराम आ जाता है। अतरंजिखेड़ा में ओसीपी संस्कृति काल के पश्चात् काले व लाल मृदभांड (BRW) आते हैं। मृदभांडों के काल निर्धारण हेतु थर्मोल्यूमिनिसेन्स के आधार पर, ओसीपी संस्कृति को 2000 ई.पू. से 1500 ई.पू. के बीच रखा गया है। ओसीपी स्थलों से ताम्र भंडारों के पाए जाने से उन्हें ओसीपी संस्कृति से जोड़ने में हमें मदद मिलती है। अतः ताम्र भंडारों की कालावधि को भी 2000 ई.पू. से 1500 ई.पू. का माना जा सकता है।

thejobsyogi.com

भारतीय उपमहाद्वीप में काले तथा लाल मृदभांड संस्कृति, चित्रित धूसर मृदभांड संस्कृति तथा उत्तरी काले चमकदार मृदभांड संस्कृति

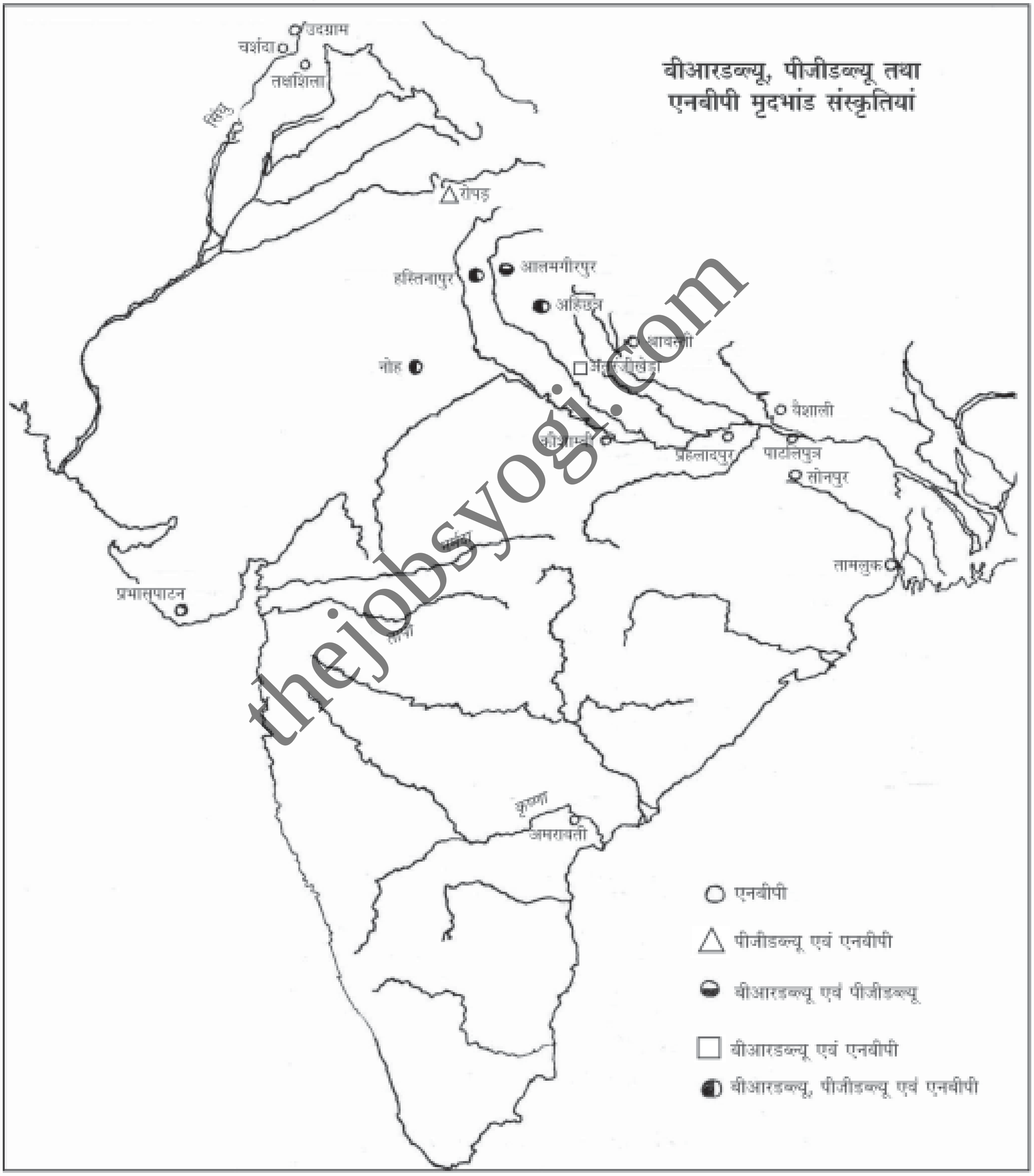

thejobsyogi.com

काले तथा लाल मृदभांड संस्कृति **(BRW)** की कालावधि 2400 ई.पू. से ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों तक है। 'काले लाल मृदभांड' (BRW) तथा 'लाल पर काले मृदभांड (Black on Red) को लेकर कोई भ्रम नहीं होना चाहिए। लाल पर काले मृदभांड हड़प्पा की विशेषता है जिसमें पात्र का आंतरिक एवं बाह्य धरातल लाल रंग का, एवं डिजाइन काले रंग से चित्रित होते हैं। कुछ क्षेत्रगत भिन्नता के साथ, BRW एक बृहद क्षेत्र में प्राप्त हुए हैं—ये क्षेत्र उत्तर में रोपड़ से लेकर दक्षिण में अदिचनल्लुर तक, तथा पश्चिम में आमरा व लखाभवल से लेकर पूर्व में पांडु-राजर-धिबि तक फैला है।

काले तथा लाल मृदभांड भारतीय उपमहाद्वीप के अनेक भागों में कई अलग-अलग सांस्कृतिक संदर्भों में विद्यमान हैं। उदाहरणार्थ, नवपाषाण स्थलों (चिरांद, पिकलिहल, आदि), हड़प्पा पूर्व लोथल, गुजरात के हड़प्पा स्थलों (जैसे—लोथल, सुरकोतडा, रोजड़ी, रंगपुर, तथा देसलपुर), मध्य तथा निम्न गंगा घाटी के ताम्रपाषाण स्थल (चिरांद, पांडु राजर धिबि इत्यादि), अहार/बनास संस्कृति के स्थल (अहार, गिलुंड), मालवा संस्कृति (नविदातोली, इनामगांव), कयाथा संस्कृति (कयाथा), तथा जोरवे संस्कृति (चंदोली), चित्रित धूसर मृदभांड (PGW) स्थल (अतरंजिखेड़ा, हस्तिनापुर, आदि) दक्षिण भारत के वृहद्पाषाण स्थल (ब्रह्मगिरि, नागार्जुनकोंडा, आदि), तथा पूरे उपमहाद्वीप में प्रारम्भिक ऐतिहासिक स्थलों में पाए जाते हैं।

काले तथा लाल मृदभांडों की विशिष्टता है कि पात्रों का अंदर एवं गर्दन का भाग काला तथा शेष भाग लाल रंग का होता है। यह रंग-संयोजन, ऐसा माना जाता है कि, उल्टे जलावन अर्थात् इनवर्टिड फायरिंग द्वारा उत्पन्न होता है। अधिकांश मृदभांड चाक पर निर्मित हैं यद्यपि कुछ हाथों द्वारा भी बने हुए हैं। ये पात्र उत्कृष्ट मिट्टी से बने थे। राजस्थान, मध्य प्रदेश, बिहार तथा पश्चिमी बंगाल में चित्रित मृदभांड मिले हैं जबकि दोआब क्षेत्र के काले व लाल संस्कृति के मृदभांडों में चित्रकारी नहीं मिलती।

चित्रित धूसर मृदभांड संस्कृति **(PGW)** को कालक्रमानुसार 1100 ई.पू. से 500/400 ई.पू. के बीच रखा जा सकता है। उत्तर पश्चिम के स्थल गंगा घाटी के स्थलों की तुलना में और अधिक पुराने हैं। इनके वृहद् भौगोलिक वितरण एवं कालानुक्रमिक फैलाव के चलते यह चौंकाने वाला तथ्य नहीं है कि इन मृदभांडों व उनसे संबंधित अवशेषों में क्षेत्रीय विभिन्नता पाई जाती है। PGW संस्कृति के साक्ष्य हस्तिनापुर, आलमगीरपुर, अहिछत्र, अल्लाहपुर, मथुरा, काम्पिली, नोह, जोधपुर, भगवानपुरा, जारवेरा, कौशाम्बी तथा श्रावस्ती के उत्खनन स्थलों से प्राप्त होते हैं। इस संस्कृति के विशिष्ट मृदभांड अच्छी तरह से अवशोषित मिट्टी से चाक निर्मित तथा पतली गुंथी हुई चिकनी सतह द्वारा बने हैं। इनका रंग धूसर अथवा राख के रंग जैसा है, जिसके बाह्य तथा साथ ही साथ आंतरिक सतह पर काला रंग व कभी-कभी गहरा चाकलेटी रंग किया होता है।

गंगा घाटी के पुरातात्विक क्रम में, *उत्तरी काले चमकदार मृदभांड* **(NBPW),** चरण चित्रित धूसर मृदभांड (PGW) चरण का उत्तरवर्ती था परंतु कुछ स्थलों में NBPW, काली व लाल मृदभांड (BRW) की उत्तरवर्ती थी। NBPW के बाद की अवस्था लाल स्लिप मृदभांड (RSW) अवस्था थी। उत्तरी काले चमकदार मृदभांड संस्कृति के विशिष्ट मृदभांडों की खोज सर्वप्रथम 1930 में तक्षशिला में हुई तथा इनके काले रंग की विशेष चमक के कारण खोजकर्ताओं ने इसे 'ग्रीक काले मृदभांड' के रूप में लिया। इन मृदभांडों का वितरण उत्तर-पश्चिम में तक्षशिला व उद्ग्राम से लेकर पूर्व में पश्चिम बंगाल के तामलुक तक तथा दक्षिण में आंध्र प्रदेश के अमरावती तक पाया गया है। प्रमुख NBPW स्थल हैं—रोपड़ (पंजाब), राजा कर्ण का किला (हरियाणा), नोह (राजस्थान), अहिछत्र, हस्तिनापुर, अतरंजिखेड़ा, कौशाम्बी तथा उत्तर प्रदेश में श्रावस्ती; बिहार में वैशाली, पाटलिपुत्र तथा सोनपुर।

thejobsyogi.com

वैदिक काल

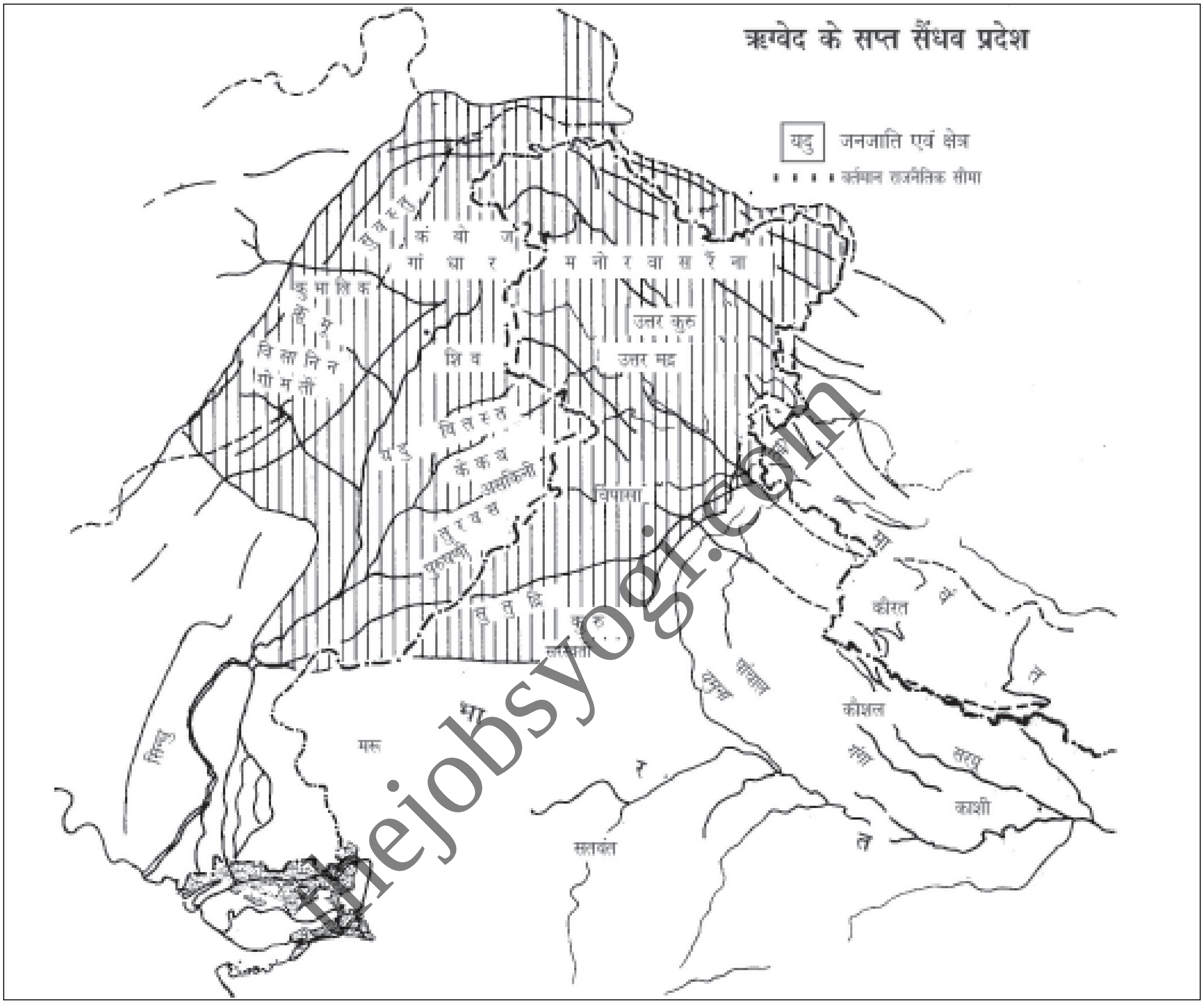

thejobsyogi.com

सिन्धु सभ्यता के शहरों एवं प्रशासनिक व्यवस्था के पतनोपरांत भारत में एक बार पुनः ग्रामीण सभ्यता का उद्भव हुआ। यह संभवतः द्वितीय सहस्राब्दी ईसा पूर्व का मध्य काल था, जब घुमन्तु पशुपालक लोग, जो इंडो-आर्यन (भारोपीय भाषाओं का एक समूह) भाषा बोलते थे, इंडो-इरानियन सीमा क्षेत्र से पहाड़ी दर्रों से गुजरकर, छोटे-छोटे समूहों में भारतीय भूमि में आए तथा उत्तर-पश्चिमी भारत में बस गए। इस कालावधि के संबंध में जानकारियों का मुख्य स्रोत ऋग्वेद है, जिसमें तत्कालीन समय के श्लोकों को संकलित किया गया है। चारों वेदों ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद एवं अथर्ववेद में सर्वप्राचीन ऋग्वेद संभवतः 1500-1000 ईसा पूर्व के काल की स्थिति का प्रतिनिधित्व करता है। 'वेद' शब्द संस्कृत भाषा से उद्धृत है, जिसका अर्थ है—ज्ञान। इन वेदों में श्लोकों एवं प्रार्थनाओं को व्यवस्थित रूप से संकलित किया गया है। इन श्लोकों का अध्ययन, मनन एवं मौखिक रूप से ऋषियों द्वारा अपने शिष्यों को स्थानांतरण किया जाता था। इस समय ये श्लोक संकलित नहीं किए गए थे। ऋगवैदिक काल को पूर्व वैदिक काल के नाम से भी जाना जाता है। उत्तर वैदिक काल की अवधि 1000-600 ईसा पूर्व है। यह वह समय था, जब अन्य तीन वेदों की रचना की गई।

ऋगवेद के अनुसार, प्रारंभिक आर्य, जिस क्षेत्र में आकर बसे, उसे सप्त सैंधव कहा गया। यह सात नदियों वाला क्षेत्र था, जिसमें सिन्धु, झेलम, चेनाब, रावी, व्यास, सतलज एवं सरस्वती प्रवाहमान थीं। तत्कालीन आर्य बस्तियां वर्तमान के पूर्वी अफगानिस्तान, पाकिस्तान, पंजाब एवं उत्तर प्रदेश के कुछ क्षेत्रों तक सिमटी हुई थीं। पूर्व वैदिक काल में पशुओं का पालन एवं उनका पोषण करना लोगों का मुख्य व्यवसाय था यद्यपि ये लोग स्थानांतरित कृषि से भी परिचित थे। गेहूं एवं जौ इस समय की मुख्य फसलें थीं। बाह्य

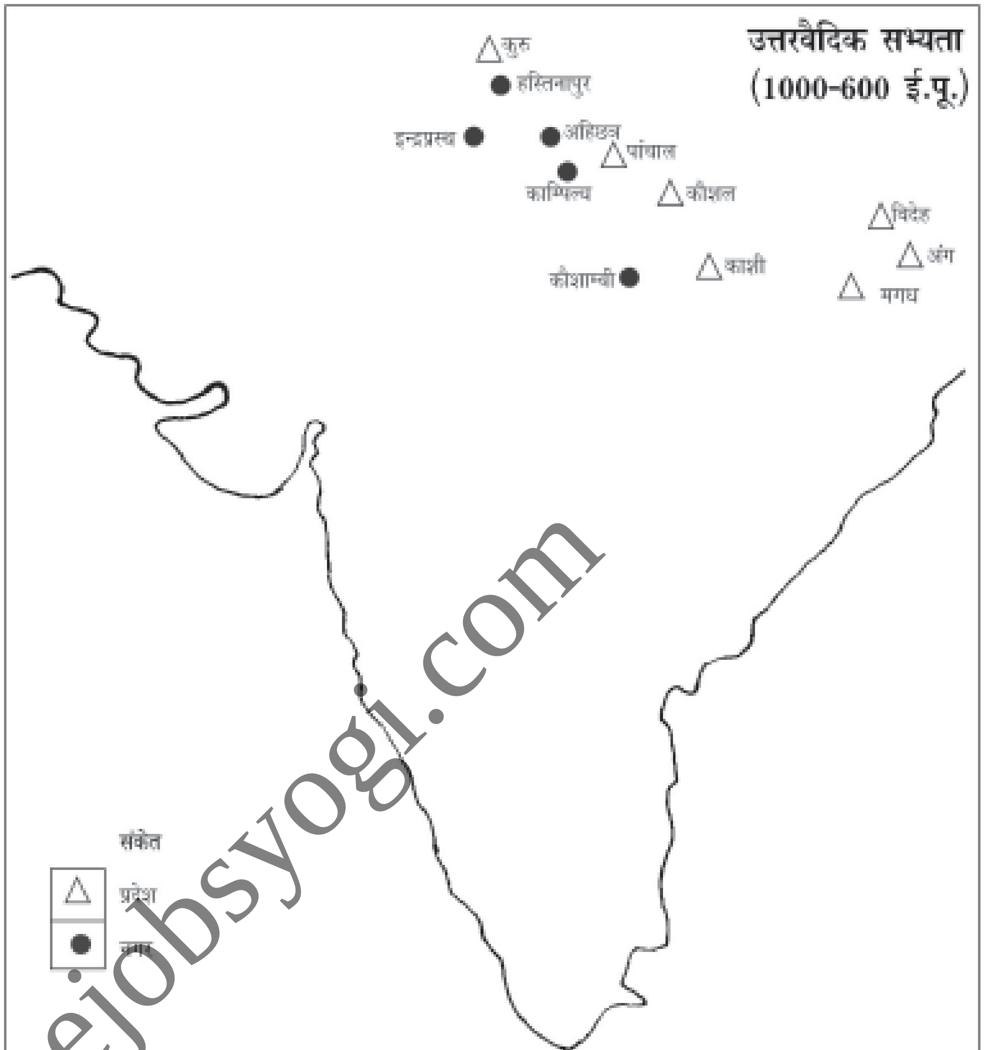

एवं आंतरिक व्यापार भी होता था। देश में वस्तु-विनिमय प्रथा विद्यमान थी तथा विनिमय की मापक इकाई गायें थीं। परिवार, छोटी एवं राजनीतिक इकाई थी, जिसमें परिवार का सबसे वरिष्ठ पुरुष सदस्य परिवार का मुखिया होता था। कई परिवारों से मिलकर ग्राम बनता था, जिसका प्रमुख 'ग्रामणी' होता था। कई ग्रामों का समूह 'विश' कहलाता था जिसका प्रमुख 'विशपति' था। कई विश मिलकर 'जन' का निर्माण करते थे जो 'राजन' द्वारा शासित किया जाता था। इस समय कई जनजातीय जन थे, जो आपस में एक-दूसरे के साथ विवाद एवं टकराव में उलझे रहते थे। 'पुरोहित', राजा का एक अत्यंत प्रमुख अधिकारी था। यह राजा का मुख्य परामर्शदात्रा एवं आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शक था। वैदिक आर्य प्रकृति के विभिन्न रूपों यथा—पृथ्वी, अग्नि, सूर्य, विष्णु एवं इंद्र आदि की उपासना करते थे।

उत्तर वैदिक काल का क्षेत्र, ज्यादा विस्तृत था। इस काल की मुख्य विशेषता चित्रित धूसर मृदभाण्डों का प्रयोग था। इस काल में आर्यों ने अनेक छोटे-बड़े जनों को मिलाकर बड़े-बड़े राज्यों की स्थापना की। इस काल की समाप्ति से पूर्व ही आर्यों ने गंगा, यमुना, सदानीरा नदियों द्वारा सिंचित उपजाऊ मैदानों को पूर्णतया जीत लिया। आर्य सभ्यता का केंद्र मध्य देश था, जो सरस्वती से लेकर गंगा के दोआब तक विस्तृत था। सरस्वती नदी इसकी पूर्वी सीमा थी, जबकि अहिछत्र, अतरंजीखेड़ा, कुरुक्षेत्र, जखेड़ा एवं हस्तिनापुर चित्रित धूसर मृदभाण्ड संस्कृति के अन्य महत्वपूर्ण स्थल थे। आर्यों को लोहे का ज्ञान उत्तर वैदिक काल में ही हुआ किंतु वे इसका प्रयोग लोहे की शीर्ष वाली बाणों एवं भालों जैसे शस्त्रास्त्रों के निर्माण मात्र में ही करते थे। जौ एवं चावल की खेती की जाती थी। मिश्रित कृषि, जिसमें कृषि के साथ पशुओं को भी पाला जाता था, की परम्परा प्रारंभ हो चुकी थी। 'वर्णों' में क्रमशः कठोरता आने लगी थी तथा वे 'जाति' समूहों के रूप में परिणित होने लगे थे। परिवार का स्वामी 'गृहपति' के नाम से जाना जाता था। पूर्व वैदिक काल में व्यवसाय पर आधारित, जो चतुर्वर्ण व्यवस्था थी, वह उत्तर-वैदिक काल में कठोर होने लगी तथा सामाजिक व्यवस्था के क्रम में इसने चार जाति समूह का रूप लेना प्रारंभ कर दिया था। उत्तरकालीन वैदिक समाज-चार मुख्य जाति समूहों—ब्राह्मण, राजन्य या क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्रों में विभक्त हो गया था। इस काल में व्यवसाय क्रमशः वंशानुगत होते जा रहे थे। इस काल में आभूषण निर्माण, लुहारी, धातुकर्म, टोकरियों का निर्माण एवं कुम्हारगीरी इत्यादि प्रमुख व्यवसाय थे। पुराने जनजातीय संगठन अब जनजातीय गणराज्यों में परिणित होने लगे थे तथा भौगोलिक आधार पर राजनीतिक शक्तियों का निर्धारण होने लगा था। उत्तरवैदिक काल में धर्म एवं दर्शन के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। ऋग्वैदिक देवताओं की महत्ता कम हो गई तथा नवीन देवता प्रतिष्ठापित हो गए। प्रजापति इस काल के सर्वप्रथम देवता थे। यज्ञीय विधान अत्यंत विस्तृत एवं जटिल हो गए थे। यद्यपि पूरे वैदिक काल में कहीं भी सिक्के, मुद्रा या लेखन के साक्ष्य प्राप्त नहीं होते।

thejobsyogi.com

दक्षिण भारत में महापाषाणकालीन स्थल-भारतीय प्रायद्वीप में लौह युग का आरम्भ

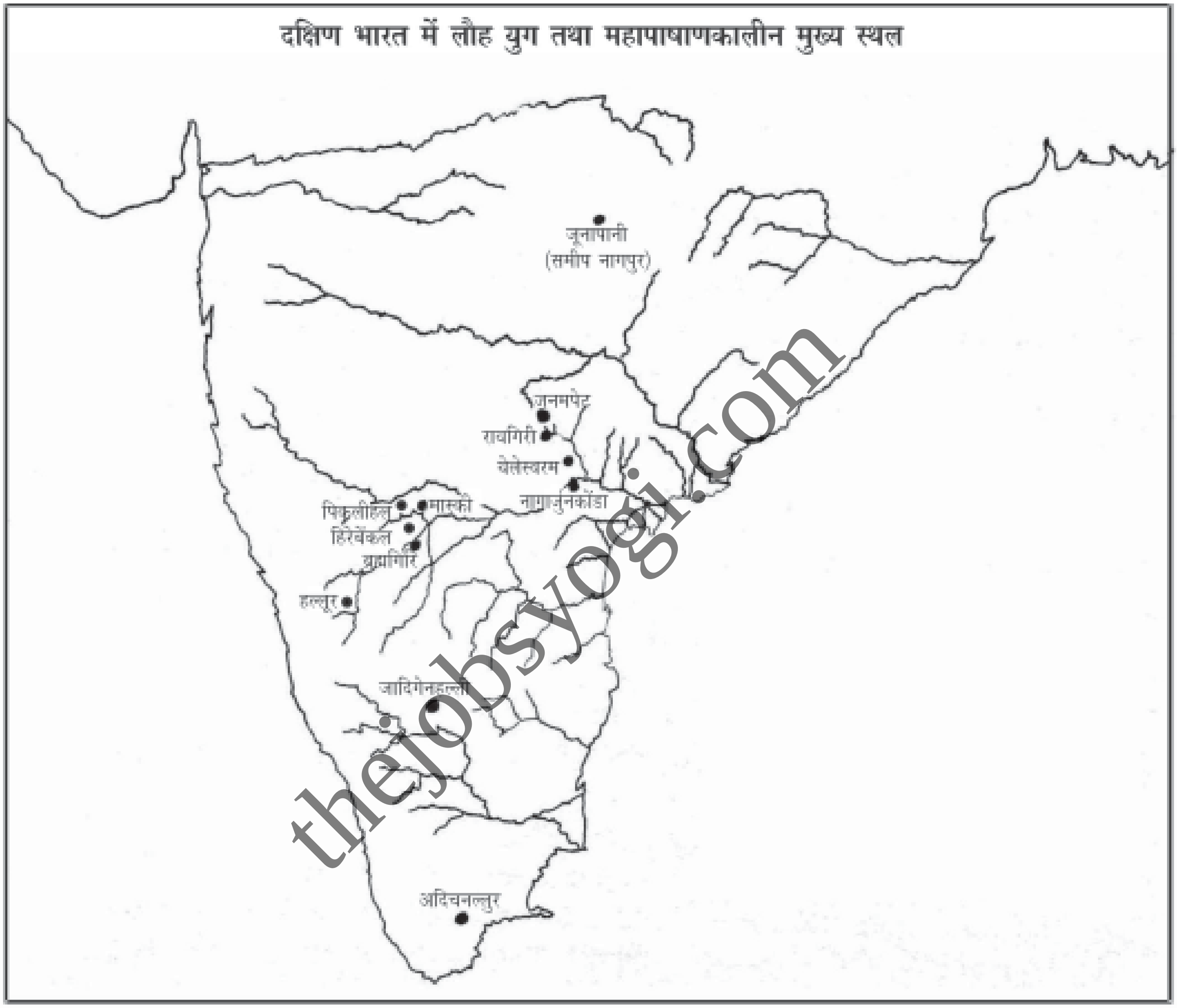

हल्लूर (कर्नाटक) में मिली वस्तुओं की कार्बन डेटिंग इंगित करती है कि प्रायद्वीपीय भारत में लौह का उपयोग 1100 ई.पू. के लगभग शुरू हुआ। दक्षिण भारत में लौह युग के सर्वाधिक प्रारंभिक चरण की प्राप्ति पिकलिहल व हल्लूर तथा संभवतः ब्रह्मगिरि की कब्रगाहों के उत्खनन से हुई है। कुछ स्थलों पर नवपाषाण-ताम्रपाषाण संस्कृति की सीमाएं लौह युग के साथ अतिव्याप्त होती हैं। उत्तरी दक्कन में, कुछ ताम्रपाषाण बस्तियां लौह युग में भी विद्यमान रही तथा यही स्थिति अन्य सभी स्थलों जैसे ब्रह्मगिरि, पिकलिहल, संगनकल्लु, मास्की, पैय्यमपल्ली आदि दक्षिणी दक्कन (सभी आधुनिक कर्नाटक में) में रही।

इतिहासकारों ने दक्षिण भारत के लौह युग के बारे में अधिकतर महापाषाणकालीन जानकारी कब्रों के उत्खननों से प्राप्त की है। अंग्रेजी में महापाषाण को 'मेगालिथ' कहते हैं जो दो ग्रीक शब्दों 'मेगास' तथा 'लिथोस' से बना है। 'मेगास' का अर्थ है बड़ा एवं लिथोस का अर्थ है पत्थर। मेगालिथ के अंतर्गत विभिन्न प्रकार के स्मारक आते हैं जिनमें एक चीज सामान्य है—ये बड़े पत्थरों तथा बड़े शैल खण्डों, जो स्थूल रूप से एक दूसरे के ऊपर रखे होते हैं, के बने होते हैं। ये स्मारक विश्व के कई हिस्सों यथा यूरोप, एशिया, मध्य तथा दक्षिणी अफ्रीका में पाए गए हैं। भारत में ये सुदूर दक्षिण, दक्कन पठार, विंध्याचल व अरावली पर्वत श्रेणियां, तथा उत्तर-पश्चिम में मिले हैं। भारत के प्रमुख महापाषाण स्थलों में से कुछ हैं—महाराष्ट्र के नागपुर के निकट जूनापानी, कर्नाटक में मास्की तथा हिरेबेंकल, आंध्र प्रदेश में नागार्जुनकोंडा, तथा तमिलनाडु में अदिचनल्लुर।

thejobsyogi.com

छठी से चौथी शताब्दी ईसा पूर्व तक राज्यों का निर्माण, शहरीकरण एवं धार्मिक आंदोलन

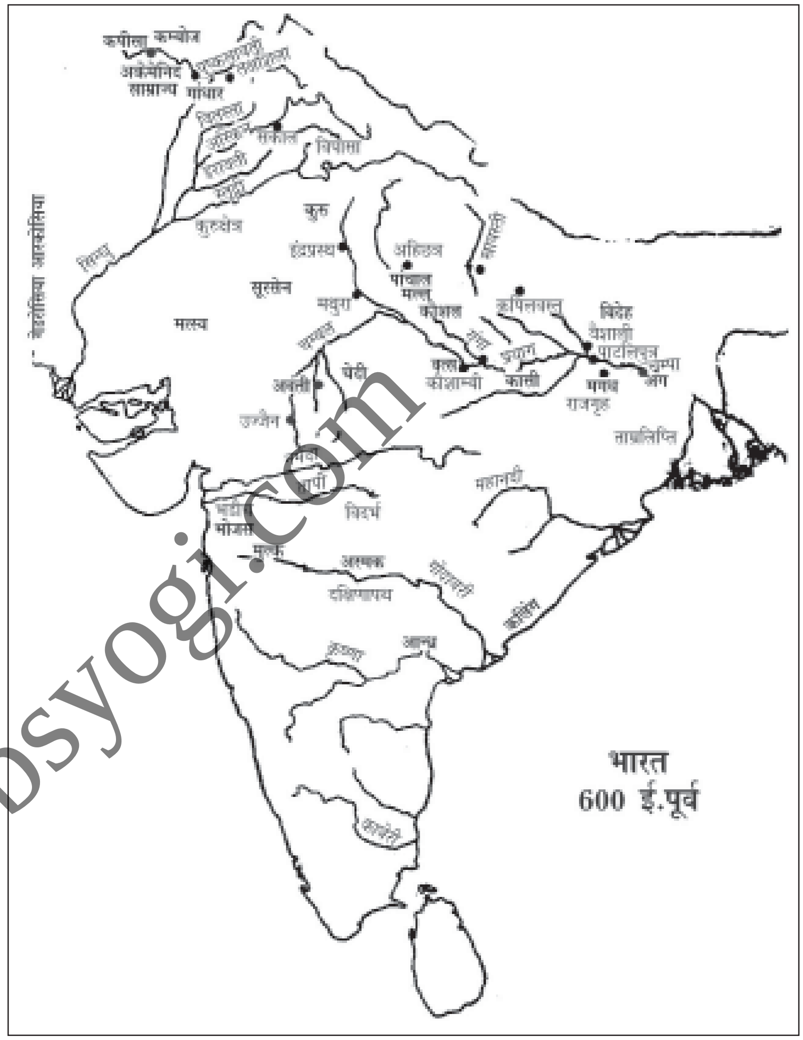

जीवन के पशुचारण से कृषि कार्य में स्थानांतरण से लोगों ने स्थायी रूप से रहना प्रारंभ कर दिया। 'जनपद' जिसका शाब्दिक अर्थ है—वह स्थान जहां जन (या लोग) अपने पैर रखते हैं, लोगों के स्थायी निवास स्थल बन गए। जनपद से आगे राजनीतिक-भौगोलिक इकाई, जिन्हें 'महाजनपद' की संज्ञा दी गई, इस काल में अस्तित्व में आए। ये विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र थे, जो शक्तिशाली राजाओं द्वारा शासित थे तथा इनमें कई गांव, शहर एवं नगर संगठित थे। कुछ महाजनपद कई जनपदों से मिलकर बने थे। उदाहरणार्थ—कोसल महाजनपद का निर्माण काशी एवं शाक्य जनपदों के विलीनीकरण से हुआ था। ग्राम इन महाजनपदों की आधारभूत राजनीतिक– भौगोलिक इकाई थे। हस्तकला के विशिष्टीकरण की तीव्र होती प्रक्रिया एवं व्यापार एवं वाणिज्य के प्रसार से विशुद्ध रूप से विस्तृत बाजार तंत्र के अस्तित्वमान होने के संकेत मिलते हैं। राजाओं एवं व्यापारियों के अतिरिक्त शहरी क्षेत्र में प्रभावशाली व्यक्तियों का एक अन्य बड़ा वर्ग भी था। इस काल में काशी (कासी), कोशल, मगध, अंग, वज्जी, मल्ल, चेदि, वत्स, कुरु, पांचाल, मत्स्य, सूरसेन, अस्सक, अवंति, गांधार एवं कंबोज प्रमुख महाजनपद थे।

600-400 ई. पूर्व का काल अन्य दृष्टियों से भी महत्वपूर्ण है। इस काल में भारतीयों ने लेखन कला सीखी तथा इसके लिए उन्होंने ब्राह्मी लिपि का आविष्कार किया। लेखन कला के उद्भव एवं विकास से ज्ञान का व्यापक रूप से प्रसार हुआ। इस काल में क्षत्रिय समाज सबसे शक्तिशाली वर्ग के रूप में उभरा। शासक परिवार मुख्यतः इसी क्षत्रिय वर्ग से संबंधित होते थे तथा लिच्छवी, मल्ल, शाक्य तथा अन्य वंशों ने इनकी सभाओं में प्रवेश करने के अपने अधिकारों का ईर्ष्यापूर्वक बचाव किया। काशी एवं कोसल के राजा भी क्षत्रिय ही थे। ब्राह्मणों के एकाधिकार को चुनौती देने के लिए क्षत्रियों एवं वैश्यों ने मिलकर नए धार्मिक सम्प्रदाय का गठन कर लिया था। कृषि पर आधारित अर्थव्यवस्था के उद्भव से वैदिक काल में प्रचलित पशुबलि की प्रथा पर रोक लगा दी गई। वैदिक ब्राह्मणवाद, सूदखोरी जैसी कई व्यापारिक गतिविधियों की निंदा के कारण, प्रगतिशील व्यापार एवं वाणिज्य के मार्ग की बाधा बन गया। बौद्ध एवं जैन धर्म इस काल के नए धार्मिक संप्रदाय थे, जो पशुबलि प्रथा के घोर विरोधी एवं व्यापार-वाणिज्य के समर्थक थे। इन धर्मों को सबसे अधिक वैश्यों का समर्थन मिला, जो मुख्यतया कृषक या व्यापारी थे। इन दोनों नए धार्मिक संप्रदायों ने लोगों के समक्ष एक सीधा-साधा आडंबररहित धर्म प्रस्तुत किया तथा ईश्वर भक्ति का अधिकार सभी को दिलाया। शीघ्र ही वे लोग जो ब्राह्मण धर्म के गूढ़ कर्मकांडवादी भक्ति प्रक्रिया से ऊब चुके थे, इन धर्मों की शरण में आ गए तथा इन्होंने अपना उद्दात समर्थन जैन एवं बौद्ध धर्म को प्रदान किया।

राजनीतिक परिदृश्य में भी छठी शताब्दी ईसा पूर्व में नए गणराज्यों के उदय से महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। मुख्यतः पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं बिहार या सिंधु बेसिन में स्थित इन गणराज्यों की सबसे मुख्य विशेषता इनकी साझा संस्कृति थी। इस काल में जो महत्वपूर्ण गणराज्य थे, उनमें सम्मिलित हैंः कपिलवस्तु (भगवान बुद्ध की जन्म स्थली) के शाक्य, बुली, कलाम, भग्ग, कोलिय, मल्ल, मोरिय, विदेह एवं लिच्छवी। यह काल राज्यों के विस्तार एवं निर्माण के प्रथम प्रयास का भी साक्षी है, जब बिम्बिसार के नेतृत्व में मगध ने अपनी साम्राज्य सीमाओं को विस्तृत करने की नीति अपनायी। प्रारंभ में मगध की राजधानी राजगृह थी। फिर हर्यक वंश के शासक उदायिन ने इसकी नई राजधानी पाटलिपुत्र को बनाया। हर्यक वंश के उपरांत मगध में शिशुनाग वंश प्रारंभ हुआ एवं शिशुनागों के पश्चात् मगध पर नंदों ने शासन किया। इस वंश के महापद्मनंद ने उत्तर भारत के एक विशाल भूभाग, मध्य भारत के कुछ क्षेत्रों तथा पूर्वी दिशा से कलिंग को अपने साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया तथा इस विशाल भू-क्षेत्र की जनता से सेना के निर्वाह हेतु अकूत भू-राजस्व एकत्रित किया। नंदों ने एक विशाल सेना एकत्रित की तथा वे पहले ऐसे शासक थे—जिन्होंने व्यापक पैमाने पर युद्धभूमि में हाथियों का उपयोग प्रारंभ किया।

thejobsyogi.com

मौर्य साम्राज्य

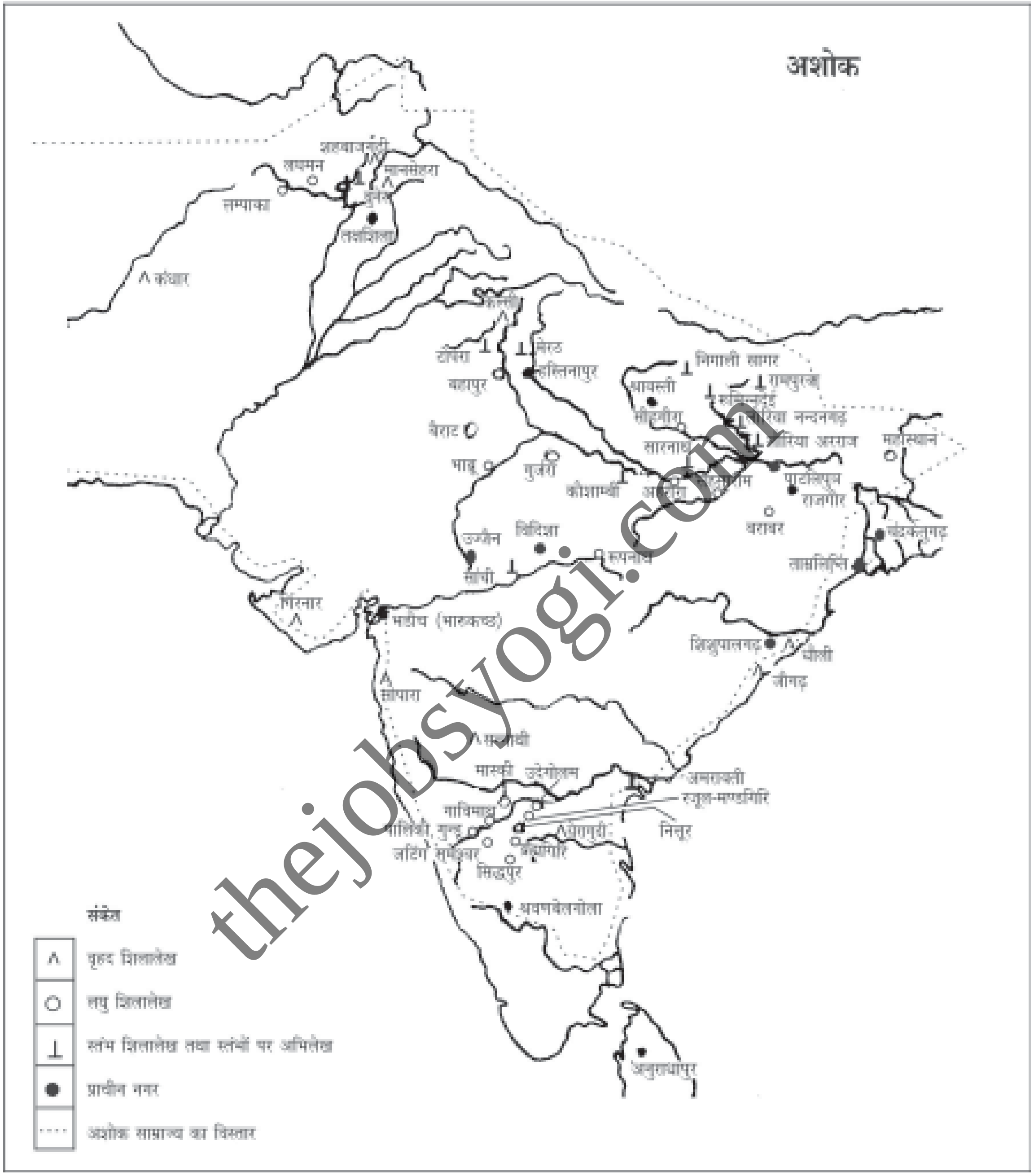

thejobsyogi.com

321 ईसा पूर्व में चंद्रगुप्त मौर्य ने मगध से नंदों के अत्याचारपूर्ण शासन को उखाड़ फेंका तथा मगध में एक नए राजवंश, मौर्य राजवंश का शासन स्थापित किया। बौद्ध परंपराओं के अनुसार, चंद्रगुप्त मौर्य, मोरिय क्षत्रिय वंश से संबंधित था, जो उत्तर प्रदेश के गोरखपुर क्षेत्र में निवास करते थे। यह मत मौर्य वंश की उत्पत्ति का सबसे स्वीकार्य मत है। नंदों को पराजित करने के उपरांत चंद्रगुप्त मौर्य ने भारत के एक विशाल भू-क्षेत्र को अपने अधीन कर लिया। यूनान के सैल्यूसिड वंश के विरुद्ध अपने अभियान में भी उसने प्रशंसनीय सफलता अर्जित की। चंद्रगुप्त द्वारा स्थापित साम्राज्य में बिहार, बंगाल एवं उड़ीसा (वर्तमान में ओडिशा) का बड़ा भूभाग तथा पश्चिमी एवं उत्तर पश्चिमी भारत का एक बड़ा भू-क्षेत्र सम्मिलित था।

अशोक मौर्य साम्राज्य का एक महान शासक था, जो 273 ईसा पूर्व गद्दी पर बैठा तथा उसने लगभग 36-37 वर्षों तक शासन किया। प्रारंभ में उसने अपने वंश के पूर्ववर्ती शासकों की आक्रामक साम्राज्यवादी नीति का अनुसरण किया। उसका साम्राज्य विशाल था। अशोक के अभिलेखों के आधार पर उसके साम्राज्य की सीमाओं का ज्ञान होता है। ऐसा माना जाता है कि उसका साम्राज्य उत्तर-पश्चिम में कंबोज तथा गंधार से गोदावरी-कृष्णा नदी घाटी में

आंध्र देश तक तथा मैसूर के उत्तर में इसिला जिला (अहार) तक था। इसमें बम्बई के समीप, सोपारा (महाराष्ट्र) तथा पश्चिम में गिरनार (सौराष्ट्र क्षेत्र, गुजरात) तथा पूर्व में जोगदा (पूर्वी तट के समीप) सम्मिलित थे। राजतरंगिणी के अनुसार, यहां तक कि कश्मीर भी मौर्य साम्राज्य का अंग था। मौर्य साम्राज्य का विस्तार दक्षिण में वर्तमान के कर्नाटक तक, तेलंगाना के कुछ अंग, आंध्र प्रदेश तथा महाराष्ट्र तक भी था। सिद्धपुर ब्रह्मगिरि, मैसूर में जटिंग रामेश्वर की पहाड़ियों से प्राप्त अशोक के शिलालेख, साथ-ही-साथ कुर्नूल जिले में गाविनाथ तथा पाल्कीगुन्ड के शिलालेख, मास्की के शिलालेख तथा यरागुण्डी के शिलालेख इस बात की पुष्टि करते हैं। यद्यपि बहुत से विद्वानों का मत है कि दक्षिण में मौर्य साम्राज्य का विस्तार चंद्रगुप्त के कार्यों से हुआ था न कि अशोक के।

अशोक के जीवन की एक प्रारंभिक घटना, जिसने उसका हृदय परिवर्तन कर दिया, कलिंग का युद्ध था। अनुमानतः यह युद्ध 260 ईसा पूर्व में हुआ था। यह एक अत्यंत भीषण एवं रक्तरंजित युद्ध था, जिसके हृदय विदारक दृश्यों ने अशोक का हृदय परिवर्तन कर दिया। वह बौद्ध बन गया तथा उसने भेरीघोष की जगह धम्मघोष को अपना लिया। इसके उपरांत समाज एवं जीवन के प्रति उसने अहिंसा के मार्ग का अनुसरण किया। उसने धम्म नीति अपना ली, जो सरल सामाजिक नियमों की एक उदार संहिता थी। अशोक ने प्रजा के नैतिक आचरण की देखभाल तथा बौद्ध धर्म के प्रचार हेतु धम्म महामात्तों की नियुक्ति की। यद्यपि वे किस सीमा तक सफल हुए, यह ज्ञात नहीं है। किंतु अशोक के अभिलेख उसके धर्म एवं प्रशासन संबंधी अनेक तथ्यों की सूचना देते हैं। वह प्रजा को अपने नैतिक आचरण का उत्थान करने, अहिंसा का मार्ग अपनाने, धर्म विरुद्ध आचरण नहीं करने तथा दयालुता एवं परोपकार का मार्ग अपनाने का संदेश देता है।

अपने विशाल साम्राज्य एवं अतुलनीय शक्ति के बावजूद मौर्य साम्राज्य अशोक की मृत्यु के उपरांत 50 वर्षों में ही धराशायी हो गया। मौर्य साम्राज्य की संरचना इस प्रकार थी, कि उसमें एक शक्तिशाली शासक की महती आवश्यकता थी, जो सम्पूर्ण शासन एवं राजकीय पदाधिकारियों को अपने नियंत्रण में रख सके। लेकिन अशोक के दुर्बल उत्तराधिकारी यह कार्य नहीं कर सके। साथ ही अशोक की धम्म नीति भी किसी हद तक मौर्य साम्राज्य के पतन के लिए उत्तरदायी रही। इसके लिए अशोक जैसा शासक ही उपयुक्त हो सकता था किंतु उसके दुर्बल उत्तराधिकारी यह कार्य नहीं कर सके। अशोक के उपरांत उत्तरवर्ती मौर्य शासकों के समय प्रांतीय पदाधिकारियों ने विद्रोह किए, समुचित संपर्क व्यवस्था का अभाव हो गया तथा साम्राज्य के संसाधनों में कमी आ गई। इन सभी कारकों ने मिलकर भारत के पहले विशाल साम्राज्य के पतन को सुनिश्चित बना दिया।

thejobsyogi.com

मौर्योत्तर काल

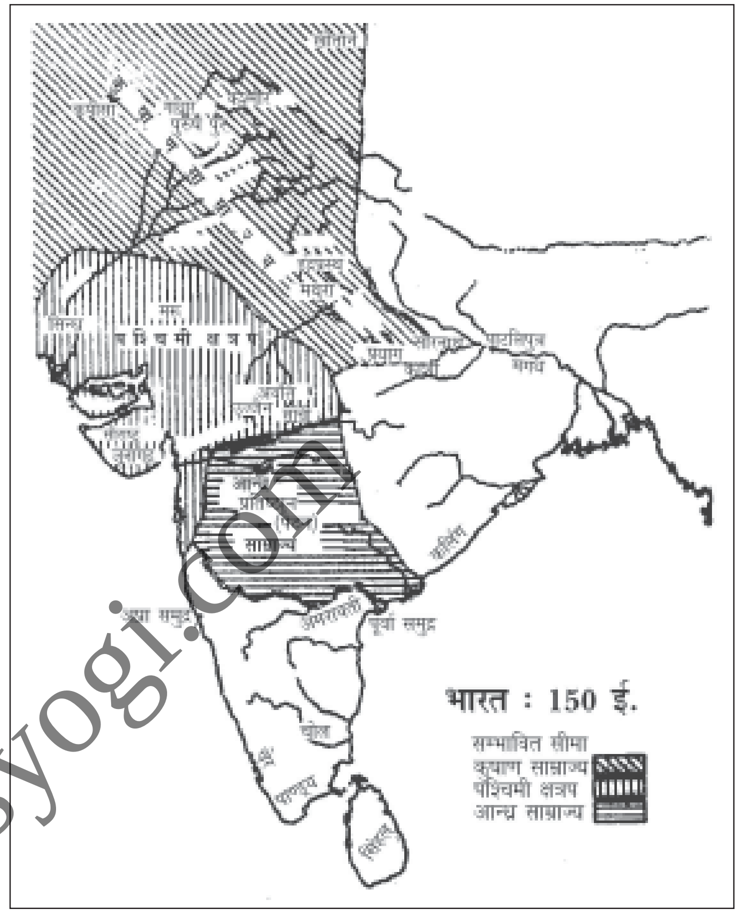

मौर्य साम्राज्य के पतन के साथ ही भारत में कुछ समय के लिए राजनीतिक शून्यता की स्थिति उत्पन्न हो गयी। उत्तर भारत, पूर्वी भारत, मध्य भारत एवं दक्कन में शुंग, कण्व एवं सातवाहन जैसे क्षेत्रीय राजवंशों ने मौर्य शासकों के उत्तराधिकारियों का स्थान ले लिया। शुंग ब्राह्मण थे, जो मौर्यों के अधीन राजकीय अधिकारी थे तथा संभवतः पश्चिमी भारत के उज्जैन क्षेत्र से संबंधित थे। शुंग वंश की स्थापना पुष्यमित्र शुंग ने की थी, जिसने अंतिम मौर्य सम्राट ब्रहद्रथ की हत्या कर दी थी। मौर्यों में उत्तर-पश्चिम में यूनानियों के विरुद्ध, उत्तरी दक्कन में विद्रोहियों के विरुद्ध एवं दक्षिण पूर्व में कलिंग के शासक के विरुद्ध युद्ध किया था। पुष्यमित्र शुंग 36 वर्षों तक सफलतापूर्वक शासन के उपरांत मृत्यु को प्राप्त हुआ तथा उसका पुत्र अग्निमित्र उसका उत्तराधिकारी बना। यही अग्निमित्र कालिदास के ग्रंथ 'मालविकाग्निमित्र' का नायक है। यद्यपि शुंग शासक ब्राह्मण धर्म के अनुयायी थे, किंतु उन्होंने धार्मिक-सहिष्णुता की नीति अपनाई। उनके शासनकाल में ही भरहुत के स्तूप का निर्माण हुआ तथा अशोक के समय निर्मित सांची के स्तूप में चार द्वारों का निर्माण कर उसे वृहद बनाया गया। शुंग शासक भागभद्र के समय तक्षशिला के एक यवन हेलियोडोरस ने वासुदेव के सम्मान में विदिशा के समीप बेसनगर (भिलसा) में गरुड़-स्तंभ का निर्माण कराया। यह यवन नरेश एन्टियालकीड्स का राजदूत था। इस अभिलेख में ब्राह्मी लिपि में संदेश उत्कीर्ण हैं।

समय के चक्र के साथ ही शुंगों का शासन केवल मगध एवं मध्य भारत के कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित रह गया। इन्हें कण्वों ने सत्ता से उखाड़ फेंका, जो स्वयं शुंगों के अधीन थे। संभवतः कण्वों ने केवल मगध पर ही नियंत्रण स्थापित करने में सफलता पाई। इस वंश ने लगभग 45 वर्षों तक शासन किया तथा इनके पश्चात् मगध पर आंध्रों का अधिकार हो गया।

आंध्र, सातवाहन शासकों के रूप में प्रसिद्ध हुए। इन्होंने लगभग 400 वर्षों तक शासन किया। पहली स्रहशताब्दी ई.पू. के उत्तरार्द्ध में, सातवाहन दक्कन में निवास करने वाले उन समुदायों में से एक थे, जो लोहे के प्रयोग से परिचित थे। सातवाहनों के प्रारंभिक अभिलेख प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व के हैं, जब उन्होंने स्वयं को मध्य भारत (पैठन या प्रतिष्ठान के समीप का क्षेत्र) के क्षेत्रों में स्थापित किया। इन्होंने सर्वप्रथम उत्तरी एवं दक्षिणी महाराष्ट्र, पूर्वी एवं पश्चिमी मालवा तथा आधुनिक मध्य प्रदेश तथा छत्तीसगढ़ के क्षेत्रों को जीता। सबसे प्रसिद्ध सातवाहन शासक यज्ञश्री शातकर्णी था, जिसने 165 से 194 ईस्वी तक शासन किया। इससे पूर्व गौतमीपुत्र शातकर्णी सातवाहनों का महान सम्राट था, जिसने संभवतः 106 से 130 ई. तक शासन किया था। गौतमीपुत्र शातकर्णी ने अपने उपनिवेशों के साम्राज्य के बड़े हिस्से पर आधिपत्य जमा लिया जिसमें नर्मदा घाटी, सौराष्ट्र, उत्तरी महाराष्ट्र, कोंकण, मालवा तथा पश्चिमी राजपुताना सम्मिलित थे। सातवाहनों ने मौर्य शासकों के आदर्श पर ही अपने प्रशासन का संगठन किया। शासन का स्वरूप राजतंत्रात्मक था, स्थानीय शासन का भार शासकीय अधिकारियों के कंधों पर डाल दिया गया था। श्रेणी या गिल्ड सातवाहन युग की सामान्य विशेषता थी। साम्राज्य चावल एवं कपास के उत्पादन के लिए प्रसिद्ध था। सातवाहन शासकों ने बौद्ध एवं ब्राह्मण दोनों धर्मों को तथा प्राकृत को संरक्षण दिया। किंतु लंबे युद्धों एवं अनुचित नीतियों के कारण सातवाहन साम्राज्य का विघटन हो गया तथा इसकी नींव पर पांच क्षेत्रीय शासक वंशों का उदय हुआ। अभीरों ने नासिक के क्षेत्र पर अधिकार कर लिया, इक्ष्वाकुओं ने कृष्णा-गुंटूर क्षेत्र को जीत लिया, दक्षिण-पश्चिम भाग पर शातकर्णी वंश का शासन स्थापित हो गया तथा दक्षिण-पूर्व पर पल्लवों ने अधिकार कर लिया।

दक्षिण भारत के प्रारंभिक इतिहास के विषय में अधिक जानकारी उपलब्ध नहीं है। दक्षिण भारत के संबंध में प्रारंभिक जानकारी यात्रियों के विवरणों एवं अशोक के अभिलेखों से ही प्राप्त होती है। यद्यपि ईसा की प्रारंभिक शताब्दियों में रचित संगम साहित्य, जिसमें गीति-काव्य, रमणीय काव्य तथा गीत सम्मिलित हैं, चोल, चेर तथा पांड्या राजवंशों का उल्लेख करता है। प्रथम शताब्दी ईस्वी के प्रारंभ से तृतीय शताब्दी ईस्वी तक चोल प्रमुख राजनीतिक शक्ति थी। बाद में पाण्ड्य एवं चेरों ने शासन किया।

thejobsyogi.com

भारत के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रों के साम्राज्य

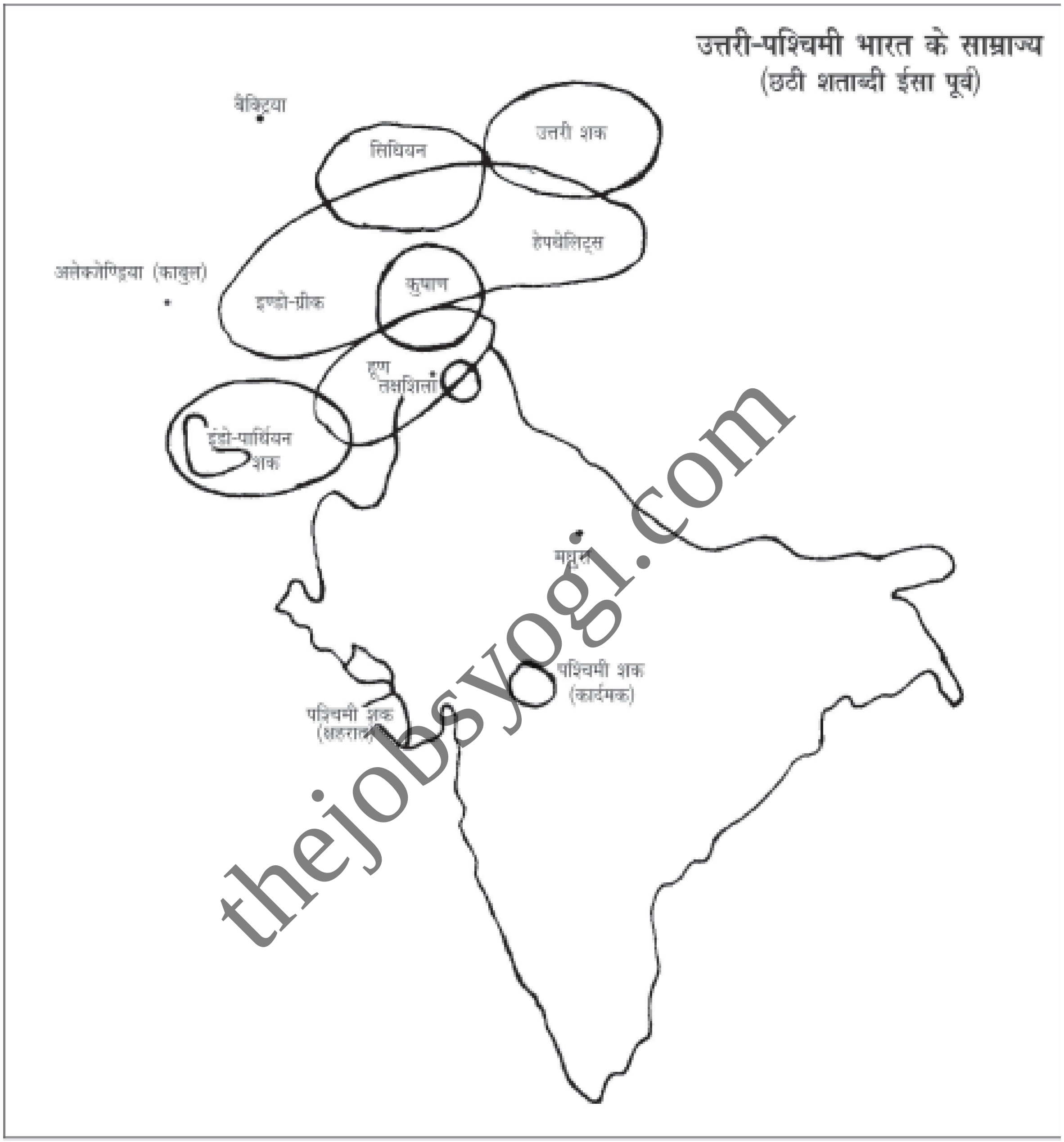

thejobsyogi.com

छठी शताब्दी ईसा पूर्व में भारत के उत्तर-पश्चिमी हिस्से में एक ओर जहां राजनीतिक उथल-पुथल की स्थिति थी। वहीं दूसरी ओर गांधार एवं कंबोज जैसे छोटे साम्राज्य राजनीतिक प्रभुत्व हेतु परस्पर संघर्षों में उलझे हुए थे। राजनीतिक व्यवस्था की इस स्थिति ने फारसियों को इस क्षेत्र पर आक्रमण हेतु प्रोत्साहित किया तथा भारत के उत्तर-पश्चिमी हिस्से में साम्राज्य स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया। छोटे राज्य चतुर्थ शताब्दी ईसा पूर्व के मध्य में उदित छोटे-छोटे स्वतंत्र शासकों द्वारा शासित हो रहे थे। उदाहरणार्थ—सिंधु नदी के पश्चिमी तट पर स्थित पुष्कलावती का साम्राज्य, सिंधु नदी के पूर्वी तट पर स्थित तक्षशिला इत्यादि। 326 ईसा पूर्व में, मेसीडोनिया के शासक सिकन्दर के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र पर आक्रमण के पश्चात् इस क्षेत्र में कई यूनानी बस्तियां बस गईं, यथा-अलेक्जेंड्रिया नगर (काबुल के क्षेत्र में), बऊकेफला (झेलम नदी के तट पर) एवं एक अन्य अलेक्जेंड्रिया सिंध क्षेत्र में। ये यूनानी क्षेत्र बाद में इस भाग के छोटे-छोटे राज्यों द्वारा पराजित करके अधिगृहित कर लिए गए। इस प्रकार विभिन्न राजनैतिक इकाइयां आपस में जुड़ कर एक हो गईं तथा एक प्रकार का संघ स्थापित हो गया। इस संघ ने इस क्षेत्र विशेष में मौर्य शक्ति को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

उत्तर-पश्चिमी भारत में परवर्ती मौर्य काल में, जब मौर्यों की केंद्रीय सत्ता दुर्बल हो गयी तथा इस क्षेत्र में राजनीतिक शून्यता की स्थिति उत्पन्न हो गयी तब मध्य एशिया के कई शासक वंशों ने इस स्थिति का लाभ उठाने का प्रयास किया। इस स्थिति में यहां कई बाह्य आक्रमण हुए। वैसे इन आक्रमणों का एक महत्वपूर्ण कारण पार्थिया एवं बैक्ट्रिया में सेल्यूसिड साम्राज्य का दुर्बल होना भी था। द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व में बैक्ट्रिया के यूनानी शासकों ने उत्तर-पश्चिमी भारत की ओर अभियान किया तथा ये इंडो-ग्रीक्स (हिन्द-यवन) पुकारे गए। हिन्द-यवन शासकों ने ही सर्वप्रथम भारत में सोने के सिक्के जारी किए। इनके चांदी के सिक्के भी अत्यंत गुणवत्तायुक्त थे। इसने भारत के स्थानीय शासकों की मुद्रा प्रणाली पर गहरा प्रभाव डाला। यूनानी विचारों ने भारतीय ज्योतिष विज्ञान एवं खगोल विज्ञान को भी प्रभावित किया। संस्कृत भाषा में खगोल विज्ञान के लिए प्रयुक्त शब्द 'होराशास्त्र' यूनानी भाषा के शब्द 'होरोस्कोप' से लिया गया है। खगोल शास्त्र में ग्रहणों की परिगणना की विधि भी यूनानियों की ही देन है। हिन्द-यवनों ने भारत के उत्तर-पश्चिमी भाग में कला की हेलेनिक शैली का भी प्रादुर्भाव किया, इसी से आगे चलकर गंधार कला शैली विकसित हुई मिनांडर या मिलिंद हिन्द-यवनों का प्रसिद्ध भारतीय शासक था, जिसकी राजधानी शाकल (वर्तमान स्यालकोट) थी।

उत्तर-पश्चिम भारत में आने वाली अन्य विदेशी जाति 'शक' थी। इन्हें 'सीथियन' के नाम से भी जाना जाता था। यह मध्य एशिया में निवास करने वाली खानाबदोश एवं बर्बर जाति थी। भारत में शकों की पांच मुख्य शाखाएं थीं: तक्षशिला के शक; मथुरा के शक; महाराष्ट्र के शक (क्षहरात वंश) एवं सौराष्ट्र के शक (कादर्मक वंश) शक महाक्षत्रप रुद्रदमन प्रथम (कार्दनक वंश) भारत का महान शक शासक था। इसने एक बड़े भू-भाग पर अपने साम्राज्य की स्थापना की। इसका साम्राज्य गुजरात, कोंकण, नर्मदा घाटी, मालवा एवं काठियावाड़ में फैला था। इसने संस्कृत का पहला अभिलेख—जूनागढ़ अभिलेख जारी किया था। रुद्रदमन की मृत्यु के पश्चात भी शक चौथी शताब्दी ईस्वी तक इस क्षेत्र में शासन करते रहे, जब तक कि गुप्तों ने उन्हें पराजित नहीं कर दिया।

उत्तर एवं उत्तर-पश्चिमी भारत में शासन करने वाली एक अन्य विदेशी जाति 'पार्थियन' थी, जिन्हें 'पहलवों' के नाम से ज्यादा जाना जाता है। ये मूलतः ईरान के निवासी थे। भारतीय-पहलव शासक गांडोफर्नीज एक महान शासक था। इसके साम्राज्य में पार्थियन साम्राज्य के कुछ ईरानी भू-क्षेत्र तथा काबुल से पंजाब तक का क्षेत्र सम्मिलित था। उसके शासन के दौरान, इजराइल से ईसाई धर्म प्रचारक संत थॉमस के नेतृत्व में एक धर्म-प्रचारक दल भारत आया था।

उत्तर-पश्चिमी भारत पर पहलवों के बाद कुषाणों ने अपना शासन स्थापित किया तथा धीरे-धीरे अपने साम्राज्य की सीमाओं को उत्तर भारत तक विस्तृत कर लिया। कुषाण, चीन की यू-ची जनजाति की पांच शाखाओं में से एक थे। कनिष्क, कुषाणों का एक महान शासक था, जिसकी राजधानी पुरुषपुर (पेशावर) थी। कनिष्क का साम्राज्य उत्तर में कश्मीर से लेकर दक्षिण में विन्ध्य पर्वत तक तथा पूर्व में पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं बिहार से लेकर, पश्चिम में उत्तरी अफगानिस्तान तक विस्तृत था। इन क्षेत्रों से विलासिता की कई वस्तुओं की प्राप्ति से यह अनुमान लगाया गया है कि कुषाणों के समय साम्राज्य में समृद्धि थी। कुषाणकालीन आभूषण सुंदर डिजाइन युक्त हैं, जिन पर जंतुओं एवं पौधों के चित्र बने हुए हैं। व्यापार अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा था तथा विभिन्न व्यापारिक निगमों को पर्याप्त संरक्षण एवं स्थिरता प्राप्त थी। कनिष्क एक महान निर्माता भी था तथा उसने मथुरा, तक्षशिला, पेशावर एवं कनिष्कपुर में कई सुंदर इमारतों एवं मूर्तियों का निर्माण कराया। उसने साहित्यिक गतिविधियों को भी पर्याप्त संरक्षण एवं प्रोत्साहन दिया।

thejobsyogi.com

भारत एवं पश्चिम के मध्य प्राचीन व्यापारिक मार्ग

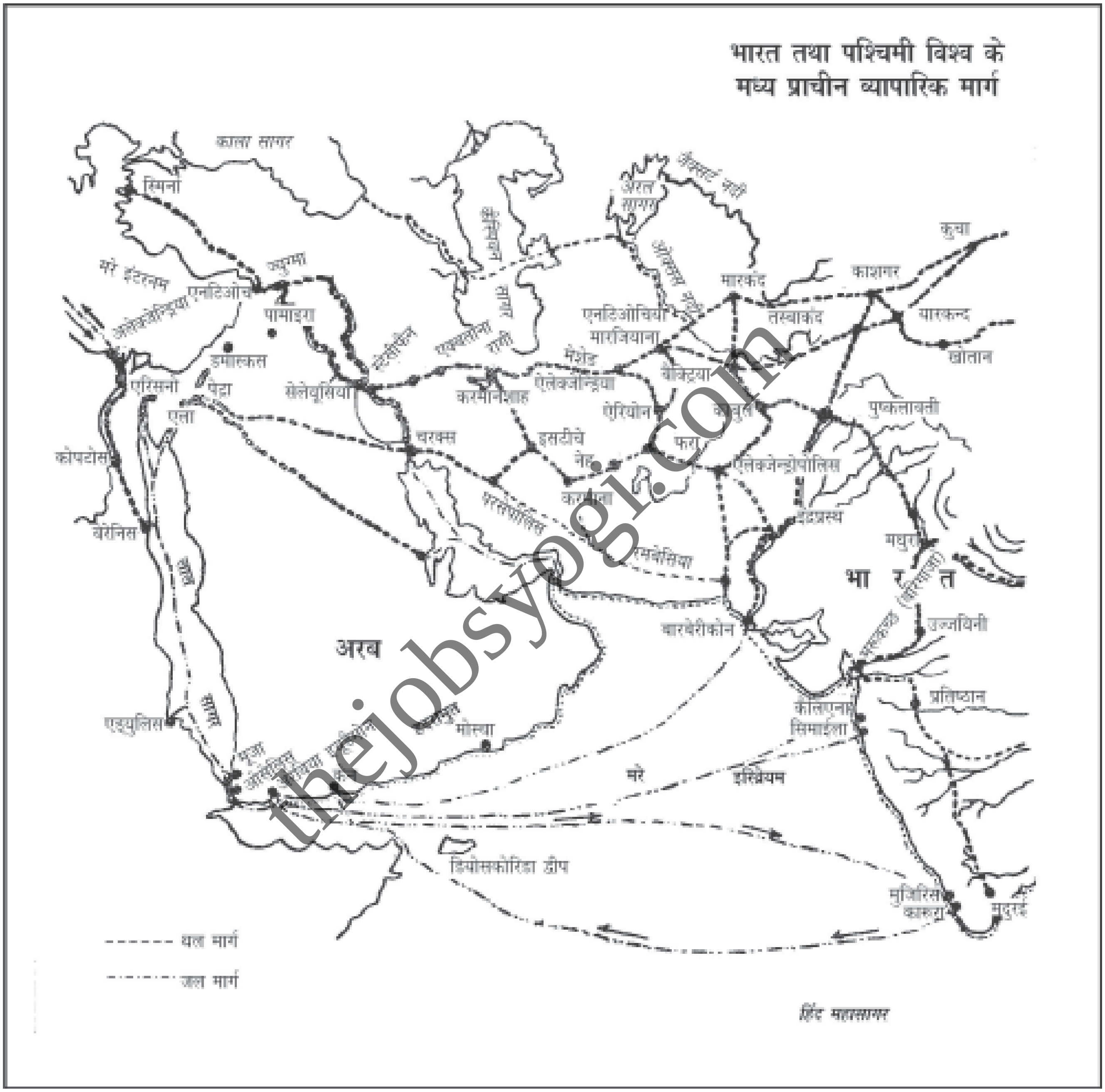

thejobsyogi.com

भारत एवं सुमेर, क्रीट, मिस्र तथा पश्चिम के देशों के मध्य प्रारंभिक व्यापारिक संपर्क सिंधु घाटी सभ्यता के समय लगभग 3000 ईसा पूर्व ही स्थापित हो गया था। पुरातात्विक प्रमाण (हड़प्पाई मुहरों एवं कार्नेलियन मनकों का मेसोपोटामिया की शाही कब्र में प्राप्ति, सिन्धु घाटी में मिस्र के मुहरों की प्राप्ति इत्यादि) भारत एवं मेसोपोटामिया, मिस्र, ओमान, बहरीन एवं अन्य देशों के साथ नियमित व्यापारिक संकेत की सूचना देते हैं। पंजाब में सिकंदर द्वारा 327-325 ईसा पूर्व के मध्य विभिन्न बस्तियां बसाने के पश्चात यहां के यूनानी निवासियों एवं यूनानी सेना ने पश्चिमी एशिया एवं ईरान की ओर अभियान किए। इससे उत्तर-पश्चिमी भारत के अफगानिस्तान एवं ईरान होते हुए तथा वहां से पूर्वी भूमध्यसागर की ओर नए मार्ग खुल गए। आहत सिक्कों के वितरण के साथ ही दक्षिण में उत्तरी काले ओपदार मृदभाण्डों की उपस्थिति से इस बात की जानकारी प्राप्त होती है कि व्यापारिक संपर्क प्रायद्वीपीय क्षेत्रों तक फैल चुका

था। उदाहरण के लिए, दक्कन में प्रतिष्ठान तक। मुख्य व्यापारिक मार्ग गंगा नदी के साथ था, जो राजगृह एवं कौशाम्बी से उज्जैन होते हुए भड़ौच तक जाता था। यद्यपि लंबी दूरी के इस व्यापार में अधिकांशतया विलासिता की वस्तुओं का ही व्यापार होता था। धातु के सिक्कों की मुद्रा से व्यापारिक विनिमय और आसान हो गया।

मौर्य प्रशासन द्वारा भारतीय उपमहाद्वीप में सड़कों का निर्माण करने एवं तुलनात्मक रूप से दूर-दराज के क्षेत्रों से सम्पर्क स्थापित करने के कारण समुद्रपारीय गतिविधियों को प्रोत्साहन मिला। हिन्द-यवन राजाओं की उपस्थिति, जो उत्तर-पश्चिम में आकर बस गए थे, से भी पश्चिमी एशिया एवं पूर्वी भूमध्यसागर में सम्पर्क बढ़ाने में मदद मिली। रोमन साम्राज्य में मसालों, कपड़ों, बहुमूल्य रत्नों एवं विलासिता की अन्य वस्तुओं की भारी मांग से दक्षिणी एवं पश्चिमी भारत से पूर्वी भूमध्यसागर को होने वाले व्यापार को अत्यधिक प्रोत्साहन मिला। इससे भारतीय व्यापारी दक्षिण-पूर्व एशिया की यात्रा के लिए प्रोत्साहित हुए। इस व्यापार से व्यापारी वर्ग अत्यंत समृद्ध हो गया। मौर्य शासकों का पश्चिम एवं पूर्वी भारत के अधिकांश स्थलीय एवं जलीय व्यापारिक मार्गों पर नियंत्रण था, जो देश से बाहर जाते थे। चंद्रगुप्त मौर्य की सेल्यूकस के साथ संधि से चंद्रगुप्त को उत्तर-पश्चिमी एवं पश्चिमी भारत के उन समस्त भू-क्षेत्र पर नियंत्रण स्थापित करने में सहायता मिली, जो भारत को भूमध्यसागरीय क्षेत्रों से जोड़ते थे। दक्कन की विजय से मौर्य साम्राज्य को कई महत्वपूर्ण बंदरगाह प्राप्त हो गए।

45 ईस्वी के लगभग हिन्द महासागर के पार बहने वाली मानसूनी हवाओं की खोज से पुनः समुद्रपारीय व्यापार को प्रोत्साहन मिला। इन हवाओं की खोज से समुद्र में यात्रा करने वाले व्यापारियों का भय कम हो गया तथा वे आसानी से अपने गंतव्य स्थलों तक पहुंचने लगे। यूनानी भाषा में लिखित 'पेरिप्लस ऑफ द इरीथ्रियन सी' (जो अज्ञात लेखक द्वारा 80-115 ईस्वी के मध्य लिखी गयी थी) में भारतीय तट पर स्थित विभिन्न बंदरगाहों का उल्लेख किया गया तथा भारत एवं रोमन साम्राज्य के मध्य विभिन्न व्यापारिक मदों की विस्तृत सूची दी गई। एक अन्य यूनानी रचना टॉल्मीकृत 'जियोग्राफी' (150 ईस्वी) में भी व्यापार-वाणिज्य की व्यापक चर्चा की गयी। प्लिनी की नेचुरेलिस हिस्टोरिया (प्रथम शताब्दी ईस्वी), जो लैटिन भाषा में लिखित है, में भारत एवं इटली के मध्य होने वाले व्यापार का उल्लेख किया गया है। भूमध्यसागर के एक नगर सिकंदरिया में भारतीय व्यापारियों का एक बड़ा वर्ग जाकर बस गया। यह नगर व्यापार की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण था।

संगम साहित्य में भी तत्कालीन व्यापार से संबधित कई जानकारियां प्राप्त होती हैं। रोमन साम्राज्य के साथ होने वाला भारतीय व्यापार रोम के सोने के सिक्कों की प्राप्ति का एक प्रमुख माध्यम था। ये रोमन सिक्के आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु एवं कर्नाटक में व्यापक रूप से पाए गए हैं। दक्कन में, व्यापारिक भागों एवं तटीय क्षेत्रों से कई शहरी केंद्रों का उद्भव हुआ। तमिलनाडु में पुहार (चोल) एवं मुजरिस (चेर) जैसे प्रसिद्ध बंदरगाह अस्तित्व में आए, जो भारत से होने वाले समुद्रपारीय व्यापार के प्रमुख केंद्र थे। इन बंदरगाहों से विदेशों को विलासिता की विभिन्न वस्तुओं का निर्यात किया जाता था।

जातक कथाओं एवं अर्थशास्त्र में भी भारतीयों द्वारा किए जाने वाले समुद्रपारीय व्यापार के संबंध में महत्वपूर्ण सूचनाएं प्राप्त होती हैं। उत्तरापथ एवं दक्षिणापथ भारत के दो सर्वप्रमुख व्यापारिक मार्ग थे। प्रथम मार्ग पुष्कलावती (वर्तमान चारसदा) से प्रारंभ होकर तक्षशिला, मथुरा, कौशाम्बी एवं वाराणसी होता हुआ पाटलिपुत्र तक एवं आगे चम्पा एवं चंद्रकेतुगढ़ तक जाता था। जबकि अन्य मार्ग मथुरा को उज्जैयिनी से जोड़ता था तथा आगे नर्मदा के मुहाने पर स्थित भड़ौच बंदरगाह तक जाता था। तीसरा मार्ग सिन्धु नदी के समानांतर स्थित था, जो सिंधु नदी के प्रारंभ में स्थित पाटल को तक्षशिला से जोड़ता था। यूनानी लोगों को उत्तरापथ के साथ-साथ दक्षिणापथ की जानकारी भी थी जो कि प्रायद्वीपीय भारत से संबद्ध था।

thejobsyogi.com

गुप्तकाल

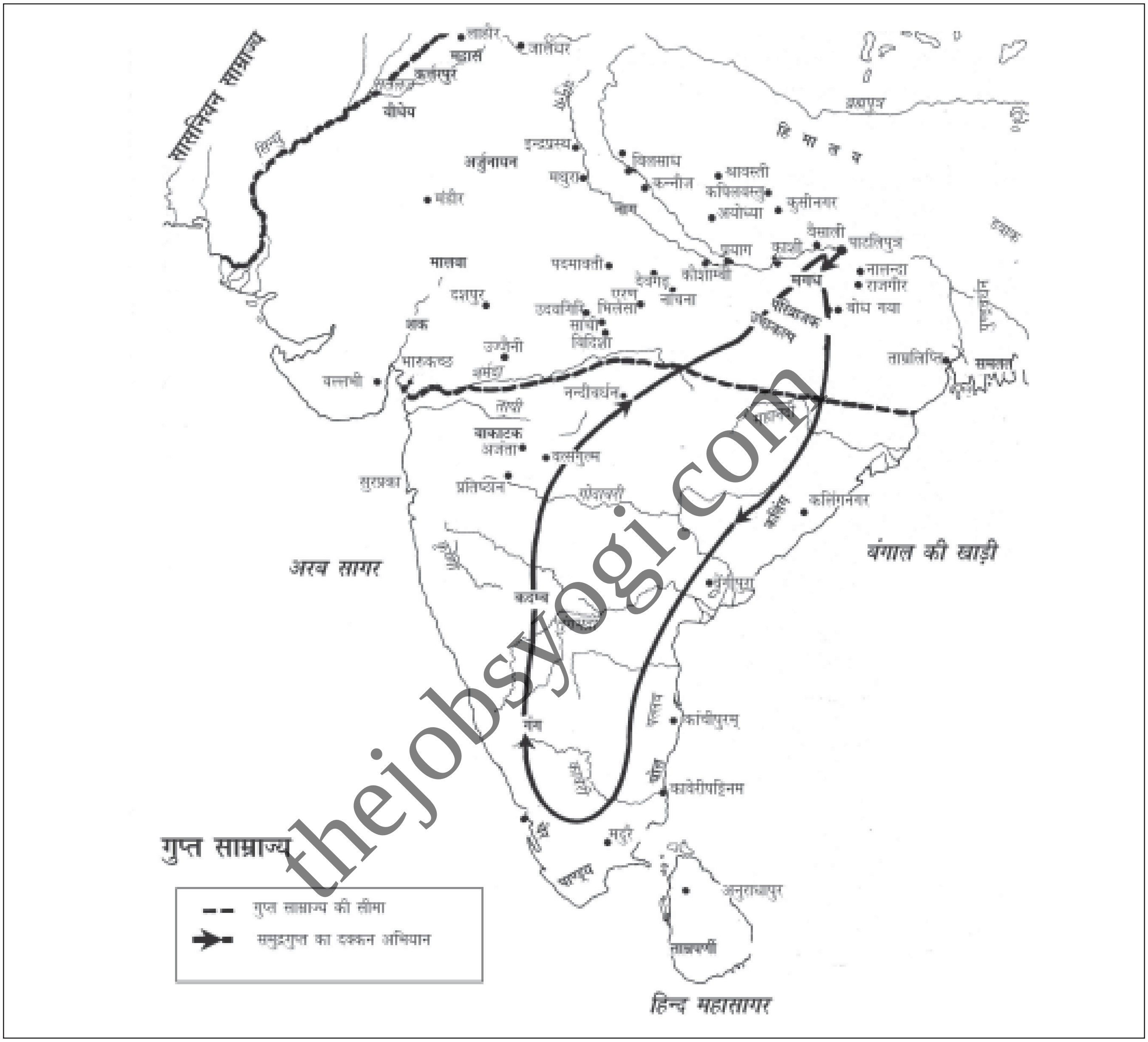

चतुर्थ शताब्दी के प्रारंभ में, उत्तरी भारत के क्षेत्रों पर कुषाण एवं शक राजाओं ने शासन किया, किंतु वे ज्यादा समय तक अपनी शक्ति को बनाए नहीं रख सके। इसी तरह दक्षिण भारत में, तृतीय शताब्दी ईस्वी के मध्य तक सातवाहन शासकों का शासन भी समाप्त हो गया। इन परिस्थितियों में चौथी सदी ईसा पूर्व के प्रारंभ से गुप्तों ने अपनी शक्ति को बढ़ाना प्रारंभ कर दिया। गुप्तों की उत्पत्ति का प्रश्न अज्ञात है। संभवतः वे मगध क्षेत्र के अत्यधिक संपन्न जमींदार वर्ग से संबंधित थे, जिसने कालांतर में अपनी शक्ति में अत्यधिक वृद्धि करके शासन ग्रहण कर लिया। पुराणों के अनुसार, गुप्तों का मूल साम्राज्य मगध एवं गंगा के क्षेत्रों में व्याप्त था, जो बाद में उत्तर-पश्चिमी बंगाल तक विस्तृत हो गया। चंद्रगुप्त प्रथम के शासनाधीश बनते ही यह वंश, राजवंश बन गया तथा चंद्रगुप्त प्रथम ने ही गुप्त साम्राज्य की नींव रखी। संभवतः उसका साम्राज्य साकेत (अवध), प्रयाग (इलाहाबाद) एवं मगध (द. बिहार) तक विस्तृत था। उसने सिंधु नदी के पार के कुछ क्षेत्रों को भी विजित किया था।

उसके पश्चात उसका पुत्र समुद्रगुप्त लगभग 335 ईस्वी में गुप्त साम्राज्य का शासक बना। उसके शासन के संबंध में जानकारी का सबसे प्रमुख स्रोत हरिषेण द्वारा लिखित प्रयाग प्रशस्ति है, जो इलाहाबाद के अशोक के शिलालेख पर उत्कीर्ण है। इस प्रशस्ति में समुद्रगुप्त के विजय अभियानों एवं उसके द्वारा पराजित राजाओं की सूची भी प्राप्त होती है। इस प्रशस्ति से प्राप्त सूचनाओं के अनुसार,

गुप्त साम्राज्य एक केंद्रीय साम्राज्य (उत्तर भारत में मध्य क्षेत्र) था, जिसका प्रमुख गुप्त सम्राट था। इसमें बहुत-सी गैर-राजनयिक एवं राजनयिक रियासतें भी सम्मिलित थीं।

गुप्त सम्राट द्वारा प्रत्यक्ष शासित क्षेत्र में एक बड़ा भू-भाग सम्मिलित था, जिसमें पूर्वी बंगाल एवं असम पूर्वी सीमा थे, जबकि हिमालय पर्वत उत्तरी सीमा का निर्धारण करता था। पश्चिमी सीमा पंजाब तक विस्तृत थी, जिसमें, सभंवतः लाहौर एवं करनाल से पहले के सभी जिले सम्मिलित थे। ऐसा माना जाता है कि समुद्रगुप्त ने आर्यावर्त या गंगा का पश्चिमी तटीय मैदान तथा मध्य प्रदेश के सागर जिले पर भी विजय प्राप्त की थी।

समुद्रगुप्त के उपरांत चंद्रगुप्त द्वितीय गुप्त साम्राज्य का शासक बना, जिसने 375 से 415 ईस्वी अर्थात लगभग 40 वर्षों तक शासन किया। उसने सम्पूर्ण पश्चिमी पंजाब, तथा वाहलिक क्षेत्र जिसकी पहचान बल्ख एवं बंग या पूर्वी बंगाल के रूप में की जाती है, को विजित कर लिया था। उसने पश्चिमी भारत पर भी विजय पाई थी तथा काठियावाड़ प्रायद्वीप के समस्त क्षेत्र को हस्तगत कर लिया था। प्रसिद्ध चीनी यात्री फाहयान चंद्रगुप्त द्वितीय के समय ही 405 ई. में भारत आया था तथा 411 ईस्वी तक यहां रहा। वह तत्कालीन भारत की विभिन्न दशाओं के संबंध में महत्वपूर्ण जानकारियां देता है। अन्य प्रसिद्ध गुप्त शासक गोविंद गुप्त था। कुमार गुप्त प्रथम एवं स्कंदगुप्त (जिसने हूणों के आक्रमण से भारत की रक्षा की) भी गुप्त राजवंश के प्रसिद्ध शासक थे। स्कंद गुप्त की मृत्यु के पश्चात परवर्ती गुप्त शासक अयोग्य एवं निर्बल थे। वे विशाल गुप्त साम्राज्य के शासन को सफलतापूर्वक संचालित नहीं कर सके तथा छठी शताब्दी के मध्य तक आते-आते इसका पतन हो गया। गुप्तों ने देश को राजनीतिक एकता के सूत्र में आबद्ध किया तथा अच्छा प्रशासन दिया। उनके काल में उत्तर भारत की अत्यधिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक उन्नति हुई। उनके शासनकाल में ही ब्राह्मण धर्म प्रतिष्ठापित हुआ तथा पूरे देश में उसका प्रचार-प्रसार हुआ और समाज की चतुर्वर्णिक व्यवस्था में कठोरता आई।

thejobsyogi.com

गुप्तोत्तर काल

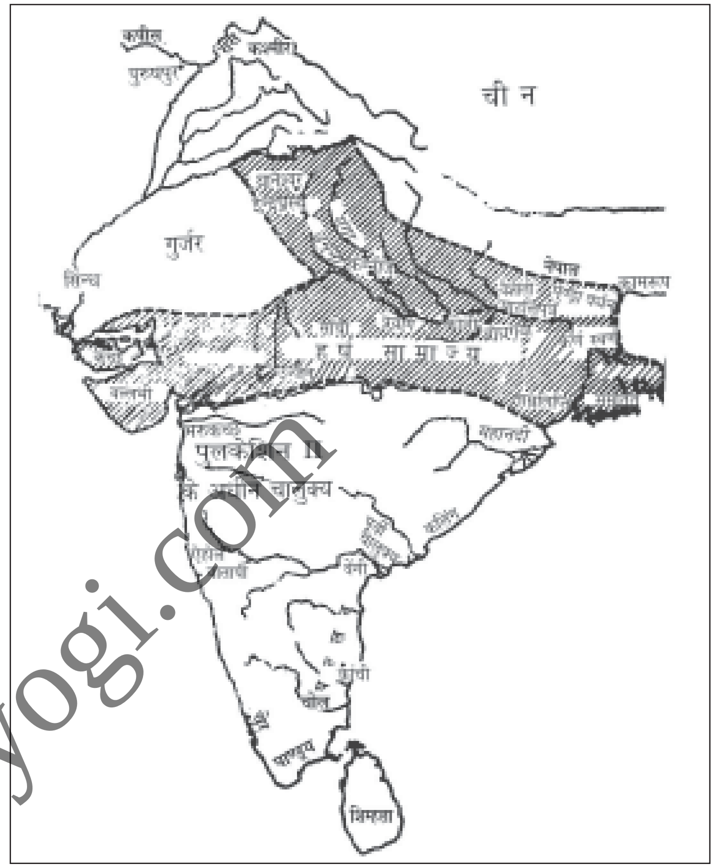

छठी शताब्दी ईस्वी में गुप्त साम्राज्य के पतनोपरांत विखंडन की प्रक्रिया प्रारंभ हो गई तथा कई छोटे एवं नवीन साम्राज्यों का उदय हुआ। ये छोटे साम्राज्य अधिकांशतः उन क्षेत्रों में खड़े हुए, जो या तो गुप्तों के अधीन थे, या ऐसे सामंत जो गुप्तों की अधीनता स्वीकार करते थे, उन्होंने अपनी स्वतंत्रता घोषित कर नए साम्राज्य बना लिए। इन विभिन्न नवीन उदित साम्राज्यों, यथा—मौखरियों, हूणों, उत्तरवर्ती मगधीय गुप्तों एवं गौड़ों के भविष्य में समय-समय पर उतार-चढ़ाव आता रहा। इस समय हर्ष जैसे कुछ शक्तिशाली शासकों ने लगभग सम्पूर्ण उत्तर भारत पर अपना नियंत्रण स्थापित कर लिया किंतु उनका शासन ज्यादा लंबे समय तक नहीं चल सका। दक्कन में, बादामी के चालुक्य तथा कांची के पल्लव सबसे शक्तिशाली राजवंश थे, जो लंबे समय तक आपसी संघर्ष में उलझे रहे।

मौखरी वंश की दो शाखाएं थीं। ये प्रारंभ में उत्तर प्रदेश एवं बिहार में गुप्तों के अधीन सामंत थे। इस वंश के चतुर्थ शासक ईशान वर्मा ने कालांतर में अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी तथा एक नए साम्राज्य की स्थापना कर ली। उसने 'महाराजाधिराज' की उपाधि धारण की तथा अपने नाम के सिक्के जारी किए। इसकी राजधानी कन्नौज थी। छठी शताब्दी ईस्वी के मध्य में शासन स्थापित करने वाली एक अन्य राजकीय शाखा परवर्ती गुप्तों की थी। ये भी गुप्त शासकों के सामंत थे तथा गुप्तों के पतनोपरांत इन्होंने अपनी स्वतंत्रता घोषित कर नया साम्राज्य स्थापित कर लिया था। इनका शासन 8वीं सदी के मध्य तक जारी रहा। प्रारंभ में इन्होंने मालवा फिर बाद में मगध में शासन किया।

thejobsyogi.com

पुष्यभूति वंश उस समय उत्तर भारत का सबसे शक्तिशाली वंश था। यह वंश पुष्यभूति परिवार से संबंधित था। पुष्यभूति वंश ने पहले हरियाणा में थानेश्वर फिर उत्तर प्रदेश में कन्नौज से शासन किया। इस वंश के प्रारंभिक शासक सूर्य के उपासक थे, जिन्होंने 525 से 575 ईस्वी के मध्य शासन किया। थानेश्वर के वर्धन शासकों के समान ही मौखरियों ने भी समय का लाभ उठाकर अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापित कर ली थी। पुष्यभूमि वंश का सबसे प्रसिद्ध शासक हर्षवर्धन था। इसके शासन काल के संबंध में बहुत सारे साहित्यिक स्रोत उपलब्ध हैं। इनमें से ह्वेनसांग तथा सी-यू-की हर्ष के समय के राजनीतिक तथा सामाजिक जीवन पर प्रकाश डालते हैं। सातवीं शताब्दी के चीनी यात्री ह्वेनसांग के यात्रा विवरणों में हर्षकालीन राजनीतिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर ज्यादा प्रकाश डाला गया है। ह्वेनसांग के अनुसार, अपने राज्याभिषेक के छहः वर्षो के भीतर ही हर्ष ने समस्त भारत पर अधिकार कर लिया। उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में समुद्र के मध्य का समस्त भू-क्षेत्र उसके अधिकार में था। वे क्षेत्र जो, उसके प्रत्यक्ष नियंत्रण में थे—थानेश्वर (पूर्वी पंजाब), कन्नौज, अहिच्छत्र (रोहिलखंड), श्रावस्ती (अवध), एवं प्रयाग, तथा 641 ई. के पश्चात् इसमें शामिल होने वाले क्षेत्र थे—मगध, उड़ीसा (वर्तमान ओडिशा) एवं काजंगल (राजमहल)। इन राज्यों के अतिरिक्त कई दूरदराज के क्षेत्र एवं सामंत भी उसके अधीन थे। हर्ष ने चीनी शासक के दरबार में अपना एक दूतमंडल भेजा था। ह्वेनसांग सातवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में भारत की समृद्धि की विस्तार से चर्चा करता है। उसके अनुसार कन्नौज एक विकसित होता शहर था, जबकि पाटलिपुत्र का पतन हो रहा था। विद्या अध्ययन की भाषा संस्कृत थी तथा ब्राह्मी लिपि का प्रयोग किया जाता था। इस समय बौद्ध धर्म की शिक्षा के लिए नालंदा विश्वविद्यालय विश्व प्रसिद्ध था। हर्ष वर्धन प्रारंभ में सूर्य एवं शिव का उपासक था किंतु ऐसा अनुमान है कि ह्वेनसांग के प्रभाव से बाद में उसने बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया था। उसने 643 ई. में कन्नौज में एक महासभा का आयोजन किया तथा अपने दरबार में कई प्रमुख साहित्यिक विभूतियों को प्रश्रय प्रदान किया।

छठी शताब्दी के मध्य में दक्षिण भारत में चालुक्य वंश एक शक्तिशाली वंश के रूप में उभरा। इस वंश की दो शाखाएं थीं—वातापी या बादामी एवं कल्याणी। वातापी के चालुक्यों ने 550-773 ई. के मध्य शासन किया। इनके पतनोपरांत लगभग 20 वर्षों तक राजनीतिक शून्यता बनी रही किंतु 793 ई. के समीप चालुक्यों की दूसरी शाखा कल्याणी के चालुक्यों का शासन प्रारंभ हो गया।

इस वंश के शासकों ने 793 ई. से 1190 ई. तक शासन किया। एहोल के एक जैन मंदिर की दीवारों में वातापी के चालुक्य शासकों का प्रारंभिक इतिहास एवं इस वंश के महान शासक पुलकेशिन द्वितीय (610-643 ई.) की विभिन्न विजयों की सूची उत्कीर्ण की गई है। यह एक प्रशस्ति रूप है, जिसे 'एहोल प्रशस्ति' या 'एहोल अभिलेख' कहा जाता है। इसकी रचना एक जैन कवि रविकीर्ति ने की थी। इस प्रशस्ति के अनुसार, पुलकेशिन द्वितीय ने दक्षिण में बनवासी के कदंबों एवं मैसूर के गंगों को हराया। उत्तर में उसने कोंकण के मौर्यों को हराया। उसने लाट, मालवा एवं गुर्जर प्रदेश पर भी विजय प्राप्त की तथा 625 ई. तक दक्कन के अधिपति की तरह उभर कर आया। किंतु उसकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण विजय हर्ष पर थी। नर्मदा नदी के तट पर एक भीषण युद्ध में उसने हर्ष को पराजित कर दिया। यह युद्ध 631 से 634 ई. के मध्य किसी समय हुआ था।

पल्लवों की उत्पत्ति के संबंध में सर्वाधिक स्वीकार्य मत यह है कि वे प्रारंभ में सातवाहनों के अधीन थे, किंतु जैसे ही सातवाहनों का पतन हुआ, वे स्वतंत्र हो गए तथा अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापित कर ली। प्राकृत भाषा में प्राप्त एक अभिलेख में कहा गया है कि पल्लव गैर-तमिल थे। प्रारंभिक पल्लव शासक सिंहविष्णु (575-600 ई.) कृष्णा एवं कावेरी नदियों के मध्य स्थित भूमि पर शासन करता था। नरसिंह वर्मन प्रथम (630-638 ई.) पल्लवों का महान शासक था, जिसने तीन लगातार युद्धों में चालुक्य नरेश पुलकेशिन द्वितीय को पराजित किया था। ह्वेनसांग ने 640 ईस्वी में पल्लवों की राजधानी कांची की यात्रा की थी तथा यहां उसने बुद्ध, जैन एवं ब्राह्मण तीनों धर्मों का प्रभाव देखा था। उसने पल्लवों का प्रसिद्ध बंदरगाह मामल्लपुरम (महाबलिपुरम) भी देखा था, जिसका नामकरण महान पल्लव शासक 'महामल्ल' के नाम पर किया गया था। महामल्ल ने कई प्रसिद्ध मंदिरों एवं सप्त पैगोडा का भी निर्माण कराया था।

thejobsyogi.com

दक्षिण-पूर्वी एशिया का भारतीयकरण

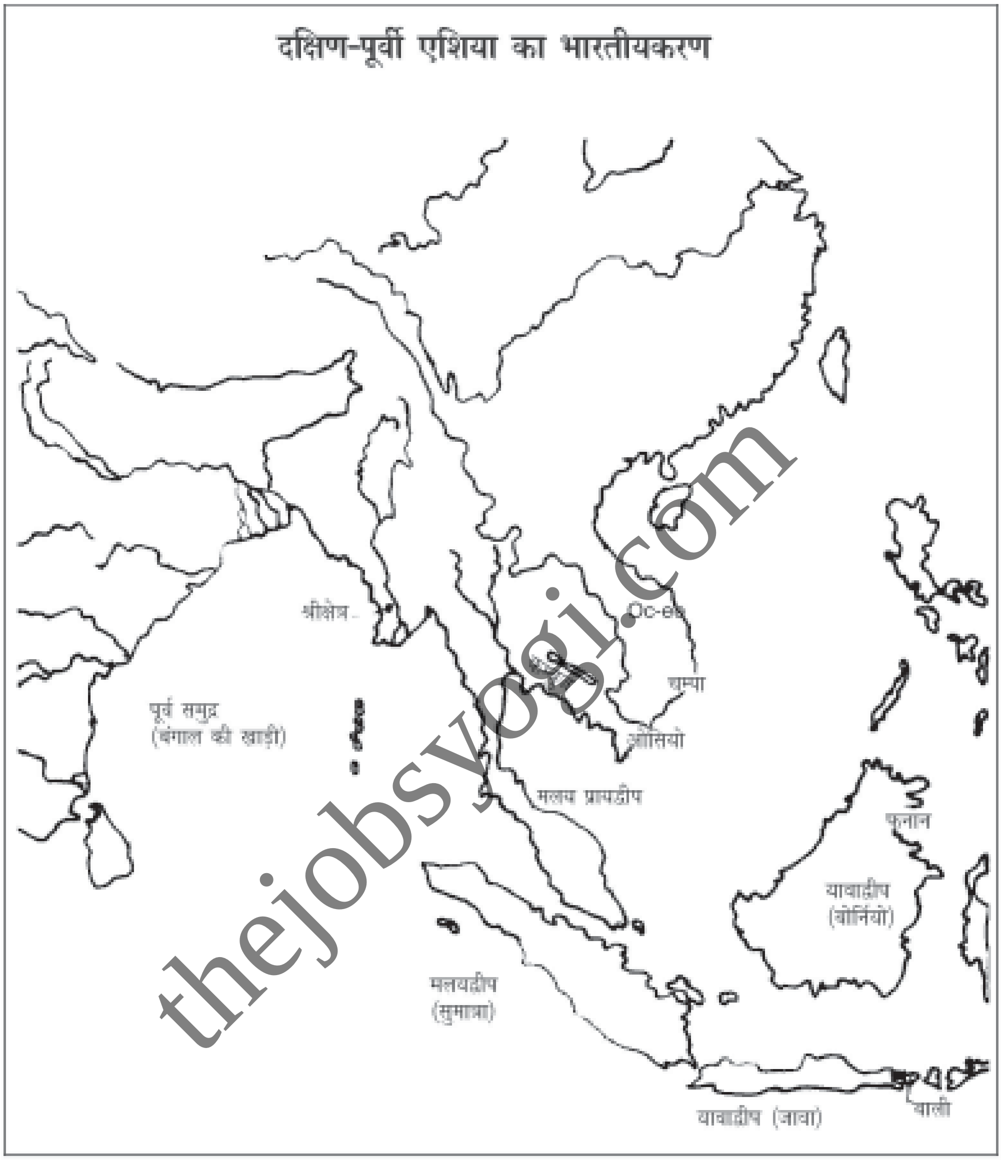

thejobsyogi.com

दक्षिण-पूर्व एशियाई क्षेत्र में नए व्यापारिक सम्पर्कों की स्थापना से भारत के वाणिज्यिक हितों में वृद्धि हुई। मसाले, भारत एवं रोम के व्यापार की सबसे प्रमुख वस्तु थी। यद्यपि सभी किस्म के मसाले भारत में उपलब्ध नहीं थे, फलतः भारतीय व्यापारी दक्षिण-पूर्व एशिया की ओर आकर्षित हुए, जहां सभी किस्म के मसालों की प्रचुरता थी। यहां पहुंचने का सबसे आसान मार्ग समुद्र था। यद्यपि इस समय समुद्री मार्ग से यात्रा करना एक जोखिम भरा कार्य था किंतु भारतीय व्यापारी साहसिक यात्राएं करके सुवर्णद्वीप पहुंचे तथा जावा, सुमात्रा एवं बाली द्वीपों की यात्रा की। जब रोम से भारतीय व्यापार कम होने लगा तो भारत का दक्षिण-पूर्व एशिया से व्यापार बढ़ने लगा। इस क्षेत्र में व्यापार कर भारतीय व्यापारियों ने अच्छा मुनाफा कमाया। इससे भारत का दक्षिण-पूर्व एशिया से व्यापार स्वतंत्र हो गया तथा पश्चिमी प्रभाव से मुक्ति मिल गई।

दक्षिण-पूर्व एशिया से भारत का प्रारंभिक संपर्क ईसा की प्रारंभिक शताब्दियों में ही स्थापित हो गया था। कई वस्तुओं, जैसे, हांथी दांत की बनी कंघी, कार्नेलियन पत्थर की अगूंठियों एवं ब्राह्मी लिपियुक्त मुहरों की प्राप्ति से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है। इस क्षेत्र के वे स्थान, जो भारत के ज्यादा संपर्क में थे– वहां इस प्रकार की वस्तुएं अधिक पाई गई हैं। जैसे–म्यांमार में श्रीक्षेत्र तथा कुछ तटीय बंदरगाह, सियाम की खाड़ी के समीप भारत एवं चीन के मध्य स्थित ओसियो (OC-EO) बंदरगाह। पुरातात्विक प्रमाणों से भी भारत एवं इस क्षेत्र के व्यापारिक संपर्कों की पुष्टि होती है। भारत में बंगाल की खाड़ी से जो व्यापारिक जहाज यहां पहुंचते थे, वहां भी विभिन्न

प्रकार की भारतीय वस्तुएं प्राप्त हुई हैं यथा—इरावदी डेल्टा, माले प्रायद्वीप, मीकोंग डेल्टा में ओसियो, एवं बाली द्वीप समूह। महास्थान, गंगा डेल्टा के समीप स्थित चंद्रकेतु गढ़ एवं पूर्वी तट पर स्थित विभिन्न नगरों की समृद्धि इस व्यापारिक संपर्क का प्रमाण थे।

दक्षिण-पूर्व एशिया में भारतीय राजकुमारों एवं राजाओं द्वारा स्थापित साम्राज्यों के संबंध में भी अनेक गाथाएं एवं कथाएं प्रचलित हैं। एक भारतीय ब्राह्मण कौंडिन्य, जिसके संबंध में कहा जाता है कि उसने कंबोडिया की राजकुमारी से विवाह किया था, उसे कंबोडिया में भारतीय संस्कृति का प्रचार-प्रसार करने का श्रेय दिया जाता है। कलिंग के कई व्यापारी भी म्यांमार के इरावडी डेल्टा में स्थायी रूप से बस गए थे। इसी प्रकार विभिन्न भारतीय साहित्यों यथा—जातक कथाओं में भारतीय व्यापारियों द्वारा इस क्षेत्र में किए गए साहसिक अभियानों का उल्लेख है। दक्षिण-पूर्व एशिया के स्थानीय स्रोतों से भी भारतीयों के व्यापारियों के रूप में इस क्षेत्र में जाने एवं निवास करने के प्रमाण प्राप्त होते हैं। कई भारतीय यहां धर्म पंडितों के रूप में भी गए थे। भारतीयों ने इस क्षेत्र के नगरों के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी तथा उनकी समृद्धि से यहां भारतीय संस्कृति फली-फूली। दक्षिण-पूर्व एशिया के भारतीयकरण का एक अन्य महत्वपूर्ण कारक व्यापारियों एवं मिशनरियों द्वारा भारत से इस क्षेत्र में धर्म का प्रचार-प्रसार भी रहा है। भारतीय धर्मों में यहां सबसे अधिक प्रचार हीनयान बौद्ध धर्म का हुआ।

thejobsyogi.com

आरम्भिक मध्यकालीन भारत के राज्य (750-1200 ई.)

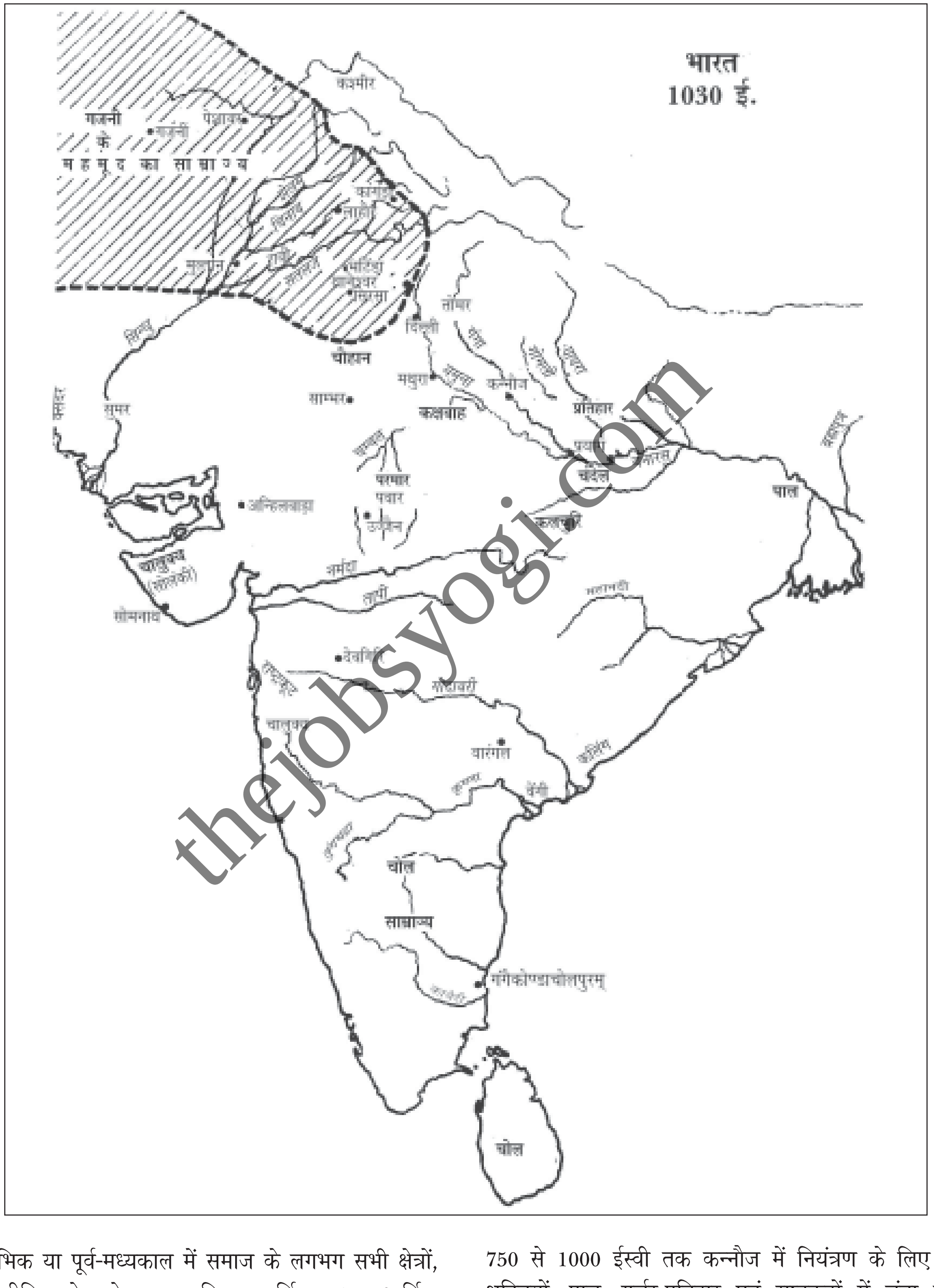

भारत में प्रारंभिक या पूर्व-मध्यकाल में समाज के लगभग सभी क्षेत्रों, चाहे यह राजनीतिक क्षेत्र हो या सामाजिक, आर्थिक अथवा धार्मिक सभी में इस काल में परिवर्तन दर्ज किए गए। हर्ष के साम्राज्य के पतन के उपरांत उत्तर भारत में दो शक्तिशाली साम्राज्यों का उदय हुआः बंगाल में पाल एवं उत्तरी एवं पश्चिमी भारत में प्रतिहार। 750 से 1000 ईस्वी तक कन्नौज में नियंत्रण के लिए तीन प्रमुख शक्तियों—पाल, गुर्जर-प्रतिहार एवं राष्ट्रकूटों में लंबा संघर्ष हुआ, जिसमें अंततः गुर्जर-प्रतिहारों को सफलता मिली।

प्रारंभ में राष्ट्रकूट केंद्रीय सरकार के अधीन क्षेत्रीय शासक के रूप में कार्य करते थे। बाद में इस वंश के दन्तिदुर्ग ने अपनी

स्वतंत्रता घोषित कर दी तथा लगभग आधी चालुक्य रियासतों पर अधिकार कर लिया। प्रारंभ में दन्तिदुर्ग भी चालुक्यों का ही सामंत था। गुर्जर-प्रतिहार शासक नागभट्ट द्वितीय ने पालों एवं प्रतिहारों को पराजित कर कन्नौज पर अधिकार कर लिया तथा उत्तर भारत में एक शक्तिशाली साम्राज्य स्थापित किया। गुर्जर-प्रतिहारों ने सर्वप्रथम अपना शासन जोधपुर के समीप मंडौर में स्थापित किया। इस वंश की वह शाखा, जिसने उज्जैन के साम्राज्य की स्थापना की थी, के शासक नागभट्ट द्वितीय ने जब कन्नौज पर अधिकार करने का प्रयास किया तो पाल शासक धर्मपाल से उसका मुकाबला हुआ। नागभट्ट द्वितीय ने धर्मपाल को पराजित कर दिया। गुर्जर प्रतिहारों के महान शासक भोज के साम्राज्य में उत्तर भारत का एक बड़ा भू-भाग सम्मिलित था। बंगाल में गुप्तों के पतन के बाद शंशांक ने गौड़ में एक स्वतंत्र साम्राज्य की स्थापना कर ली थी किंतु उसकी मृत्यु के उपरांत हर्ष ने उसके राज्य पर अधिकार कर लिया। पालवंश के शासक महिपाल ने उत्तर, पश्चिम एवं पूर्वी बंगाल में विजयें प्राप्त कीं तथा अपने साम्राज्य की सीमाओं को पश्चिम में बनारस तक पहुंचा दिया। पालों को सेनों ने सत्ताच्युत कर दिया तथा इस वंश शासक विजयसेन ने सम्पूर्ण बंगाल पर एकछत्र राज्य स्थापित किया।

कल्याणी के चालुक्य, जिन्होंने 793 से 1190 ई. तक शासन किया ने वातापी के चालुक्यों के वंशज होने का दावा किया। 973 ई. में इस साम्राज्य को तैलप द्वितीय ने पुनःस्थापित किया। इसने राष्ट्रकूट शासक अमोघवर्ष द्वितीय को पराजित किया तथा उसके साम्राज्य के एक बड़े हिस्से पर अधिकार कर लिया। इसमें मालवा का दक्षिण-पूर्वी हिस्सा भी सम्मिलित था। गंग वंश ने राजधानी तलकाड से शासन किया। इनका वेंगी के चालुक्यों, राष्ट्रकूट एवं चोलों से लंबा संघर्ष हुआ। इसमें ये अपनी राजधानी भी खो बैठे। कल्याणी के चालुक्यों के पतन के उपरांत यादवों का अभ्युदय हुआ। इसकी राजधानी देवगिरि पर 1294 ई. में अलाउद्दीन खिलजी ने अधिकार कर लिया। उत्तरवर्ती चालुक्यों के सामंत काकतीय तेलंगाना में एक प्रमुख शक्ति के रूप में उभरे किंतु बहमनी शासकों ने इन्हें पराजित कर दिया। 11वीं शताब्दी के प्रारंभ में होयसल एक प्रमुख शक्ति बन गए। इसके शासक बिट्टिग विष्णुवर्धन ने अपनी राजधानी बेलापुर से द्वारसमुद्र स्थानांतरित कर दी। होयसलों ने कई मंदिरों का निर्माण कराया

राजपूतों का उदय 8वीं शताब्दी के मध्य में हुआ। इनकी उत्पत्ति का मत विवादग्रस्त है किंतु ऐसा अनुमान है कि कालांतर में इन्होंने क्षत्रिय वंश धारण कर लिया था। इस काल के प्रमुख राजपूत राज्यों में सम्मिलित थे—शाकंमरी (अजमेर के निकट सांभर) के चौहान या चाहमान। 1191 में मुहम्मद गौरी के विरुद्ध चौहान वंश के पृथ्वीराज चौहान ने राजपूतों का एक संघ बनाया परंतु वह पराजित हो गया तथा उसके साम्राज्य को दिल्ली सल्तनत में सम्मिलित कर लिया गया। सोलंकी या चालुक्यों ने गुजरात एवं काठियावाड़ में शासन किया। इन्होंने 950 से 1300 ई. तक शासन किया। परमारों ने 9वीं शताब्दी में मालवा में शासन किया, जिनकी राजधानी धार थी। गहड़वालों ने कन्नौज से शासन किया।

इस काल में 712 ई. के लगभग मु. बिन कासिम के नेतृत्व में अरबों ने सिंध पर विजय प्राप्त कर ली तथा लगभग 200 वर्षों तक शासन किया। लेकिन भारत में मुस्लिम शासन की स्थापना तुर्कों ने की। मध्य एशिया के महमूद गजनवी ने 1000 से 1026 ई. के मध्य भारत पर अनेक आक्रमण किए तथा भारत के उत्तर-पश्चिम के कई क्षेत्रों को रौंद डाला, परंतु यह मोहम्मद गुर था जिसने 1173 ईस्वी में गजनी में अपनी सरकार स्थापित की तथा भारत में अनेक सैन्य अभियान चलाए। पृथ्वीराज चौहान के नेतृत्व में राजपूतों के संघ को पराजित कर उसने अपने प्रभुत्व के लिए सबसे बड़े संकट को समाप्त कर दिया तथा स्वयं और अपने सेनापतियों द्वारा जीते गए क्षेत्रों के संघटन का कार्य प्रारंभ कर दिया। तराइन के द्वितीय युद्ध में पृथ्वीराज चौहान को पराजित करने के उपरांत उसने भारत में तुर्क साम्राज्य की स्थापना का मार्ग प्रशस्त कर दिया।

thejobsyogi.com

प्रारंभिक मध्यकाल में चोल साम्राज्य

प्रारंभिक चोल, जिन्होंने संगम काल में शक्ति एवं प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली थी, नवीं शताब्दी के मध्य में पुनः शक्तिशाली हो गए तथा उन्होंने द्वितीय चोल साम्राज्य की नींव रखी। इस वंश के आदित्य प्रथम ने कांची के पल्लवों को परास्त कर दिया तथा दक्षिणी तमिल देश को अपने अधीन कर लिया। राजराजा (985-1014) ने भारत से बाहर भी कई क्षेत्रों पर विजय प्राप्त की। इनमें प्रमुख थे—श्रीलंका के उत्तरी भाग तथा मालदीव द्वीप समूह। उसके पुत्र राजेन्द्र प्रथम ने समुद्रपारीय विजय प्राप्त की, चोलों की समुद्रपारीय विजयों का सबसे प्रमुख कारण यह था कि उनके पास शक्तिशाली नौसेना थी। राजेंद्र के उत्तराधिकारी भी साम्राज्य को अक्षुण्ण बनाए रखने में सफल रहे।

चोल शासन अपनी स्थानीय स्वायत्तता की व्यवस्था के लिए प्रसिद्ध था। चोल साम्राज्य में 8 या 9 प्रांत थे, जिन्हें 'मंडलम' कहा जाता था। इनमें से प्रत्येक जिलों या 'वलनाडू' में विभक्त थे। जिले ग्रामों के कई समूहों से मिलकर बने होते थे, जिन्हें विभिन्न नामों, यथा—कुर्रम, नाडू या कोट्टम के नाम से जाना जाता था। कई बार, एक बड़ा गांव जिसे 'तानियार' कहते थे, एकल प्रशासनिक इकाई के रूप में गठित कर दिया जाता था। चोल साम्राज्य में सभी गांवों को स्वायत्तता प्राप्त थी। इन गांवों में सरकारी अधिकारी परामर्श दाता एवं निरीक्षक का कार्य करते थे न कि वे नियंत्रक एवं प्रशासक थे। इसके परिणामस्वरूप गांवों का अत्यधिक विकास हुआ एवं उनमें समृद्धि आयी। ये गांव ऊपरी स्तर पर होने वाले राजनीतिक परिवर्तनों से अछूते रहते थे। राजस्व का संग्रहण ग्रामसभा के माध्यम से ग्रामवासी स्वयं एकत्रित करते थे। जहां से जागीरदार राजा के राजस्व हिस्से को प्रेषित करते थे।

तंजौर, चोल साम्राज्य का एक प्रमुख नगर था, जो निचले कावेरी बेसिन में स्थित था। यह चोलों की राजधानी भी था तथा यहीं प्रसिद्ध राजराजेश्वरी मंदिर था। तिरुचिरापल्ली के निकट गंगैकोण्ड चोलपुरम को नयी राजधानी बनाने से राजेन्द्र चोल को उत्तरी भारत एवं कांचीपुरम में सफलतापूर्वक अभियान करने में अत्यधिक सहायता मिली। जब आदित्य चोल ने पल्लव क्षेत्रों पर विजय प्राप्त कर ली, उसके उपरांत चोलों ने कांचीपुरम को चोल साम्राज्य की दूसरी राजधानी बनाया। चोल शासक सेना का मुख्य सेनापति एवं नौसेना का प्रमुख भी होता था।

इस क्षेत्र की यात्रा करने वाले विभिन्न यात्रियों एवं पर्यटकों के विवरणों से भी इस क्षेत्र की समृद्धि की जानकारी प्राप्त होती है। यहां के बंदरगाहों से कपड़े, धातु का सामान, हाथी दांत की वस्तुओं एवं रेशम का बड़ी मात्रा में निर्यात किया जाता था। चोल व्यापारी पूर्वी तट में मामल्लपुरम, कावेरीपट्टनम, शलियूर एवं कोरकई तथा पश्चिम में मालाबार तट पर क्विलोन में स्थित विस्तृत एवं व्यापक अवस्थापनाओं से व्यापार करते थे। दसवीं शताब्दी में चीन के साथ व्यापार अत्यधिक बढ़ गया तथा व्यापारिक जहाज दक्षिणी मलय प्रायद्वीप एवं सुमात्रा तक पहुंचने लगे। व्यापारिक महत्व के कारण चोल शासकों ने इन क्षेत्रों के कई सामरिक महत्व के क्षेत्रों को भी अपने नियंत्रण में रखा। व्यापारिक निगम या श्रेणियां इस व्यापार को नियंत्रित एवं निगमित करती थीं।

thejobsyogi.com

दिल्ली सल्तनत

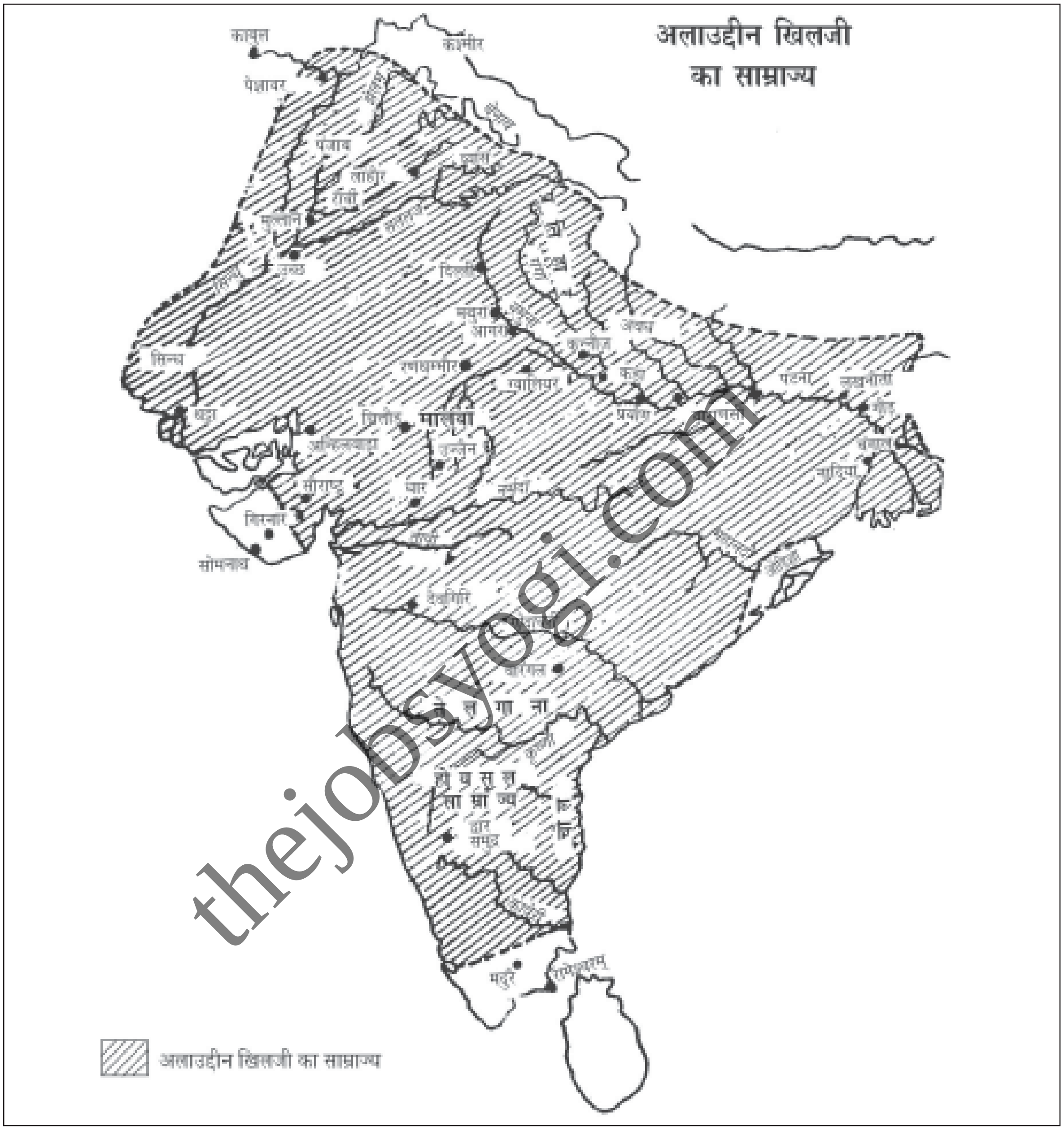

thejobsyogi.com

मुहम्मद गौरी की मृत्यु के उपरांत, उसके साम्राज्य को उसके तीन सर्वाधिक शक्तिशाली एवं महत्वाकांक्षी सेनापतियों के मध्य विभाजित कर दिया गया। ताजुद्दीन यल्दौज को अफगानिस्तान से ऊपरी सिंध के मध्य स्थित भू-क्षेत्र का नियंत्रण सौंपा गया; वसीरुद्दीन कुबाचा उच्छ एवं मुल्तान का शासक बना तथा कुतुबुद्दीन ऐबक, मु. गौरी के भारतीय साम्राज्य का शासक बना। भारत में तुर्की साम्राज्य का संस्थापक कहे जाने वाले ऐबक का जन्म तुर्किस्तान में हुआ था। उसके माता-पिता भी तुर्क थे। ऐबक ने मुहम्मद गौरी को उसके भारतीय अभियानों में सहायता दी थी तथा तराइन के द्वितीय युद्ध के उपरांत गौरी ने भारतीय विजित क्षेत्रों का दायित्व सौंप दिया। दिल्ली के समीप स्थित इंद्रप्रस्थ ऐबक का मुख्यालय था। 1206 तक ऐबक अपने शासक गौरी के प्रतिनिधि के रूप में उसके भारतीय प्रदेशों का शासन संभालता रहा। 1208 से 1210 ई. तक वह स्वतंत्र भारतीय साम्राज्य का सार्वभौम शासक रहा। ऐबक ने भारत में तुर्क विजयों को संगठित भी किया। यद्यपि ऐबक को प्रशासन को सुसंगठित करने का ज्यादा समय नहीं मिला इसीलिए उसके शासन में मुख्य दायित्व सेना द्वारा ही निभाया जाता रहा। लगभग सभी स्थानों पर उसने सेना की तैनाती की थी। स्थानीय प्रशासन लोगों के ही हाथों में था। 1210 में ऐबक की आकस्मिक मृत्यु से तुर्क अमीरों एवं सरदारों के मध्य उसके उत्तराधिकारी का प्रश्न उत्पन्न हो गया।

ऐबक का उत्तराधिकारी, उसका एक दास इल्तुतमिश बना। वह दिल्ली का पहला वास्तविक सुल्तान था। दिल्ली पहुंचकर इल्तुतमिश ने आरामशाह का वध कर दिया तथा ऐबक द्वारा शासित विभिन्न प्रदेशों—दिल्ली का क्षेत्र, अवध, बदायूं, बनारस एवं सम्पूर्ण शिवालिक क्षेत्र पर अपना नियंत्रण स्थापित कर लिया। 1210 से 1220 के मध्य अपनी सत्ता को चुनौती देने वाले यल्दौज को पराजित कर इल्तुतमिश ने गजनी से पूर्णतया संबंध विच्छेद कर लिया। यल्दौज गजनी का ही शासक था। इल्तुतमिश ने कई नए क्षेत्रों पर अधिकार भी किया। यथा बिहार के क्षेत्र—गंगा का दक्षिण भाग, लखनौती, राजस्थान में रणथम्भौर का किला एवं शिवालिक क्षेत्र में मंडौर। उसने भटिंडा पर भी अधिकार कर लिया तथा सरसुती एवं लाहौर को भी अपने कब्जे में ले लिया। 1229 ई. में उसे बगदाद के खलीफा से खिलअत प्राप्त हुई तथा इस प्रकार वह दिल्ली सल्तनत का स्वतंत्र शासक बन गया। इस प्रकार दिल्ली सल्तनत औपचारिक रूप से स्वतंत्र हो गई। 1236 में इल्तुतमिश की मृत्यु के उपरांत, विभिन्न महत्वाकांक्षी सरदारों के मध्य सुल्तान बनने के लिए आपसी संघर्ष प्रारंभ हो गया। यह संघर्ष तब समाप्त हुआ, जब 1266-67 ई. में बलबन सुल्तान बना। इस बीच कई अल्पावधिक शासक सल्तनत की गद्दी पर बैठते एवं उतरते रहे। बलबन ने शासक बनते ही राज्य व्यवस्था एवं प्रशासन को नए सिरे से संगठित किया। उसने सेना एवं पुलिस को भी संगठित किया। उसने ऐसी व्यवस्था भी की जिससे राज्य में समय-समय पर होने वाले हिन्दू विद्रोहों को दबाया जा सके तथा साम्राज्य की मंगोल आक्रमणों से सुरक्षा की जा सके। बलबन ने 'राजत्व का सिद्धांत' भी प्रतिपादित किया, जो फारस के ससानी साम्राज्य पर आधारित था। ससानी साम्राज्य में सुल्तान को ईश्वर का अवतार माना जाता था तथा इसका दैवत्व सार्वजनिक रूप से स्वीकार्य था। यह सुल्तान के निरंकुश शासन के कार्यों को परिष्कृत करने की धार्मिक पद्धति थी।

खिलजी, जो अफगानिस्तान की हेलमंड घाटी से संबंधित थे, उन्होंने तुर्कदास वंश की सत्ता समाप्त कर दी तथा दिल्ली सल्तनत में खिलजी वंश के शासन की स्थापना कर दी। खिलजियों का सबसे प्रसिद्ध शासक अलाउद्दीन खिलजी था, जिसने गुजरात, मालवा, रणथम्भौर, चित्तौड़ तथा दक्कन क्षेत्र के देवगिरी, वारंगल, द्वारसमुद्र एवं मदुरई पर आक्रमण किए तथा विजय प्राप्त की। अलाउद्दीन खिलजी ने विभिन्न विजयों के अतिरिक्त कई जनकल्याणकारी कार्य किए तथा बाजार नियंत्रण व्यवस्था लागू की। आंतरिक विद्रोहों एवं मंगोल आक्रमणों के कारण अलाउद्दीन ने आर्थिक सुधार तथा बाजार नियंत्रण व्यवस्था लागू की। उसकी भू-सुधार व्यवस्था राजस्व के तर्कसंगत एवं प्रभावी संग्रहण पर आधारित थी। भू-राजस्व कुल उपज का 50 प्रतिशत था तथा भू-राजस्व का निर्धारण पैमाइश के आधार पर किया जाता था।

अलाउद्दीन के उपरांत मुहम्मद बिन तुगलक ने सल्तनत की सीमाओं का विस्तार किया तथा एक बड़ा भू-भाग क्षेत्र अपने साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया। उसके साम्राज्य में—हिमालय से लेकर द्वारसमुद्र तक, थट्टा से लखनौती तक, सम्पूर्ण दक्कन, जिसमें दक्कन के दूरवर्ती क्षेत्र जैसे—वारंगल एवं मालाबार तट भी सम्मिलित थे। इससे सरकारी खजाना तेजी से राजस्व को भरने लगा। मु. तुगलक ने अपनी संगठनात्मक क्षमता, प्रशासकीय दक्षता एवं संसाधनों के बेहतर उपयोग के माध्यम से इस विशाल साम्राज्य को अपने प्रत्यक्ष नियंत्रण में रखा। जब कभी भी किसी नए राज्य का विजय एवं अधिग्रहण किया जाता था, तो वहां प्रशासनिक व्यवस्था एवं राजस्व संग्रहण का कार्य सुल्तान स्वयं व्यवस्थित करता था। उसने दक्षिण पर प्रभावी नियंत्रण के लिए अपने साम्राज्य की द्वितीय राजधानी दौलताबाद (देवगिरी) को बनाया, किंतु दुर्भाग्यवश उसकी यह योजना सफल नहीं हो सकी।

यद्यपि मु. बिन तुगलक से लेकर उसके भतीजे नसीरुद्दीन महमूद तक दिल्ली सल्तनत की सीमाएं धीरे-धीरे सिकुड़ती गईं तथा अंत में यह सिमटकर पालम तक रह गई। मु. बिन तुगलक के उपरांत कोई भी सुल्तान ऐसा नहीं हुआ जो विशाल सैन्य शक्ति को संचालित कर सके तथा इस वंश के पतन पर रोक लगा सके। शरियत पर आधारित प्रशासनिक व्यवस्था ने साम्राज्य को और कमजोर बना दिया तथा तैमूर का आक्रमण इस गिरते हुए वृक्ष के लिए अंतिम प्रहार साबित हुआ तथा शीघ्र ही तुगलक साम्राज्य धराशायी हो गया।

दिल्ली सल्तनत की स्थापना से कई समाजिक-आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन हुए तथा समय-समय पर होने वाले राजनीतिक परिवर्तनों के उपरांत भी ये अछूते बने रहे। कुतुबुद्दीन ऐबक द्वारा दिल्ली के सात नगरों में से एक की नींव रखने के साथ ही, उत्तरी भारत में नगरीय क्रांति का प्रारंभ हुआ। इसके अतिरिक्त, एक-दूसरे से प्रकृति में भिन्न धर्मों, इस्लाम तथा हिंदु के बीच साझी समझ तथा पुनर्मेल की धीमी प्रक्रिया आरंभ हुई। वास्तुकला, साहित्य तथा संगीत के क्षेत्र में यह प्रक्रिया काम कर रही थी तथा एक तरफ सूफी आंदोलन से तथा दूसरी ओर उत्तरी भारत के लोकप्रिय भक्ति आंदोलन द्वारा धर्म के क्षेत्र में भी यह प्रक्रिया कार्य कर रही थी।

thejobsyogi.com

उत्तरोत्तर सल्तनत काल में प्रांतीय राजवंश

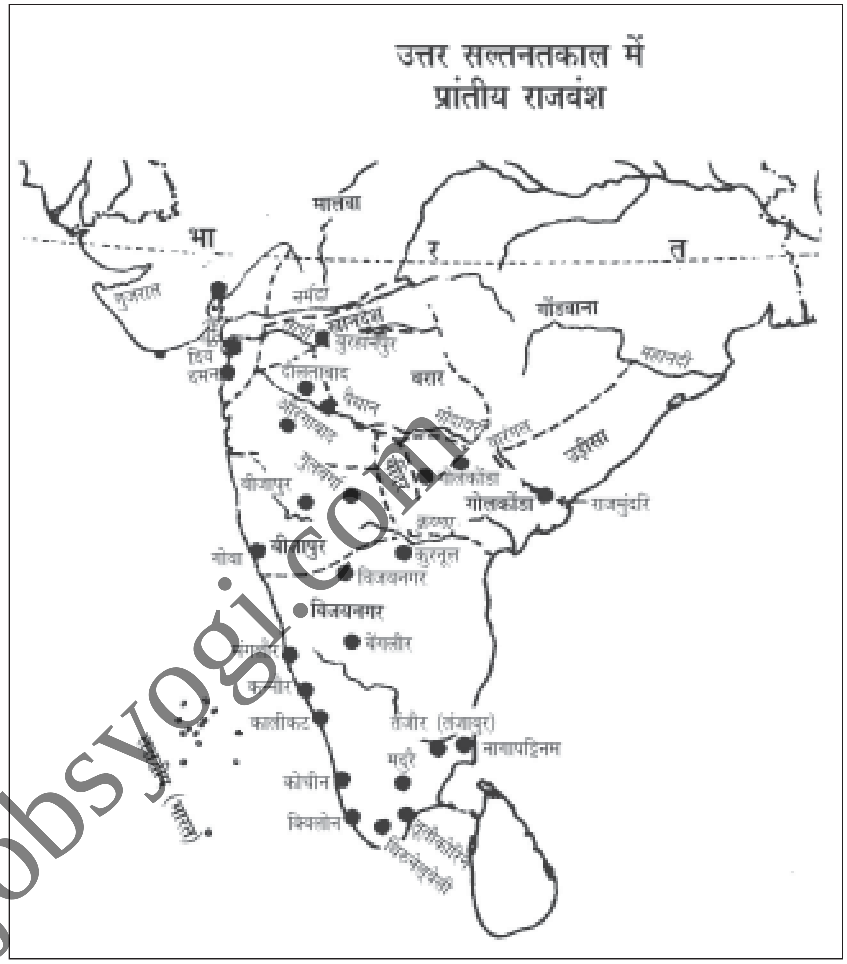

दिल्ली सल्तनत के पतनोपरांत कई क्षेत्रीय साम्राज्यों का उदय हुआ, जो दिल्ली सल्तनत के भू-क्षेत्र पर ही खड़े हुए। दक्कन में, विजयनगर एवं बहमनी दो बड़े साम्राज्य अस्तित्व में आए। दिल्ली सल्तनत के पतन के बाद देश के विभिन्न हिस्सों में कई छोटे-छोटे साम्राज्य भी उदित हुए। इनमें पूर्व में जौनपुर एवं बंगाल तथा पश्चिम में मालवा एवं गुजरात सबसे प्रमुख थे। इस काल की एक प्रमुख घटना पुर्तगाली यात्री वास्कोडिगामा की भारत यात्रा थी, जो 1498 ई. में भारत आया तथा मसालों की खोज के लिए की गयी इस यात्रा ने अंत में भारत में पुर्तगाली साम्राज्य की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया।

बहमनी साम्राज्य की स्थापना 1347 ई. में हसन गंगू ने की। इसने दिल्ली सल्तनत की अधीनता मानने से इंकार कर स्वयं को स्वतंत्र घोषित कर दिया। इसने बहमनशाह की उपाधि धारण की तथा गुलबर्गा को अपनी राजधानी बनाया।। बहमनी के सुल्तान भी उमरा वर्ग के सहयोग पर निर्भर थे। जैसा कि दिल्ली सल्तनत के सुल्तानों के समय था। बहमनी शासकों ने दिल्ली सल्तनत की प्रशासनिक व्यवस्था का अनुकरण किया। सुल्तान शासन का सर्वोच्च पदाधिकारी था तथा विभिन्न विभागों का दायित्व प्रमुखों को सौंपा गया था। सम्पूर्ण बहमनी साम्राज्य चार प्रांतों (अतरफ) में विभक्त था। ये प्रांत थे—गुलबर्गा, दौलताबाद, बीदर एवं बरार। साम्राज्य में एक नियमित सेना भी थी। बहमनी साम्राज्य की सामाजिक संरचना मिली-जुली थी। इससे साम्राज्य सांस्कृतिक विकास भी गहराई से प्रभावित हुआ। विभिन्न परिस्थितियों एवं आंतरिक असंतोष से साम्राज्य में विखंडन की प्रक्रिया का जन्म हुआ, जिससे आगे चलकर बहमनी साम्राज्य पांच भागों में विभक्त हो गया। इस साम्राज्य से अहमदनगर, बीजपुर, गोलकुंडा, बरार एवं बीदर, नामक पांच नए राज्यों का अभ्युदय हुआ। इनमें से बीजापुर सबसे प्रमुख था, जिसकी स्थापना यूसुफ आदिल शाह ने की थी। यह एक योग्य प्रशासक था तथा इसने पुर्तगालियों से मैत्रीपूर्ण संबंध बनाए।

विजयनगर साम्राज्य की स्थापना संगम के पांच पुत्रों में से दो, हरिहर एवं बुक्का ने की थी। इनकी राजधानी हस्तिनावती (हम्पी) थी। प्रारंभ में हरिहर एवं बुक्का दिल्ली सल्तनत के अधीन वारंगल के प्रशासक थे, जिन्होंने बाद में अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी तथा विजयनगर नामक एक नए साम्राज्य की स्थापना की। विजयनगर साम्राज्य का प्रायद्वीप पूर्वी एवं पश्चिमी दोनों ओर विस्तारित हुआ तथा दक्षिण की ओर यह तमिल प्रदेश तक पहुंच गया। यद्यपि विजयनगर साम्राज्य का बहमनियों के साथ निरंतर संघर्ष चलता रहा। इस संघर्ष का सबसे प्रमुख कारण कृष्णा एवं तुंगभद्रा नदियों के बीच में स्थित रायचूर दोआब पर नियंत्रण का मुद्दा था। यह क्षेत्र कृषि की दृष्टि से अत्यधिक उपजाऊ था।

कृष्णदेव राय (1509-1529 ई.) विजयनगर का एक महान शासक था। इसने कई महत्वपूर्ण सैन्य विजयें प्राप्त कीं तथा रायचूर-दोआब को बीजापुर से छीन लिया। 1565 ई. में विजयनगर साम्राज्य का उस समय अंत हो गया, जब बीदर, अहमदनगर, बीजापुर एवं गोलकुण्डा की सम्मिलित सेनाओं ने तालीकोटा के युद्ध में इसे पराजित कर दिया तथा सम्पूर्ण साम्राज्य को तहस-नहस कर दिया। विजयनगर साम्राज्य अत्यधिक समृद्ध था। खाद्यान्नों की दृष्टि से यह आत्मनिर्भर था तथा स्थानीय उपयोग की लगभग समस्त वस्तुओं का यहां उत्पादन होता था। इस साम्राज्य में कई महत्वपूर्ण बंदरगाह थे, जहां से विभिन्न देशों के साथ व्यापार किया जाता था।

प्रांतीय राजवंशों को सांस्कृतिक क्षेत्र में हुए कई महत्वपूर्ण विकासों के लिए जाना जाता है। जौनपुर के शर्की शासकों ने स्थापत्य कला की एक सुंदर शैली को जन्म दिया, साहित्यिक विभूतियों को

thejobsyogi.com

प्रश्रय प्रदान किया तथा भारतीय संगीत जगत को 'खयाल' जैसी नयी राग विधा प्रदान की। मालवा, जो 1435 में स्वतंत्र हुआ था, 1562 में मुगल साम्राज्य द्वारा अधिग्रहित कर लिया गया। मालवा ने भी वास्तुकला की एक नवीन शैली को जन्म दिया। जैनुल आबदीन कश्मीर का एक प्रसिद्ध शासक था। उसने महाभारत एवं राजतरंगिणी का फारसी में अनुवाद किया। राजस्थान में तीन प्रमुख राज्य उभरे—मेवाड़, मारवाड़ एवं आमेर। राजस्थान के राजाओं ने कई किलों एवं महलों का निर्माण करवाया। गुजरात के शासकों ने भी इस्लामी एवं जैन कला का सुंदर समन्वय किया। बंगाल 1345 में हाजी इलियास द्वारा स्वतंत्र हुआ, जो कि इस क्षेत्र का शासक बना। इस अवधि में बंगाली भाषा का विकास हुआ। इस काल में उड़ीसा (वर्तमान ओडिशा) में सूर्यवंशियों ने शासन किया। कामरूप एवं असम पर अहोमों का शासन था। खानदेश जो, 1388 में मलिक रजा द्वारा स्वतंत्र हुआ था, इसकी राजधानी बुरहानपुर थी।

इस बीच, पुर्तगाली भारत में धीरे-धीरे शक्तिशाली होते जा रहे थे। उन्होंने यहां कई दुर्गों का निर्माण कराया तथा हिन्द महासागर में एक स्थायी सेना रखी। इन्होंने कालीकट, कोचीन, गोवा, चौल, मलक्का तथा कई अन्य तटीय क्षेत्रों में अपनी व्यापारिक कोठियां स्थापित कीं, जो कालांतर में मसाले के अत्यधिक लाभप्रद व्यवसाय के लिए संचालन केंद्र का काम करेगी तथा एशियाई व्यापार तथा इस पर आरोपित कर से व्युत्पन्न आय को विनियमित करेगी। पुर्तगालियों ने अपना वर्चस्व स्थापित करने के लिए स्थानीय शासकों के साथ साम, दाम, दंड, भेद सभी तरह की नीतियां अपनाईं। उनकी नीतियों ने हिंद महासागर में स्वतंत्र एवं निशस्त्र व्यापार का अंत किया तथा भारत के पुर्तगाली राज्य की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया।

thejobsyogi.com

मुगल साम्राज्य

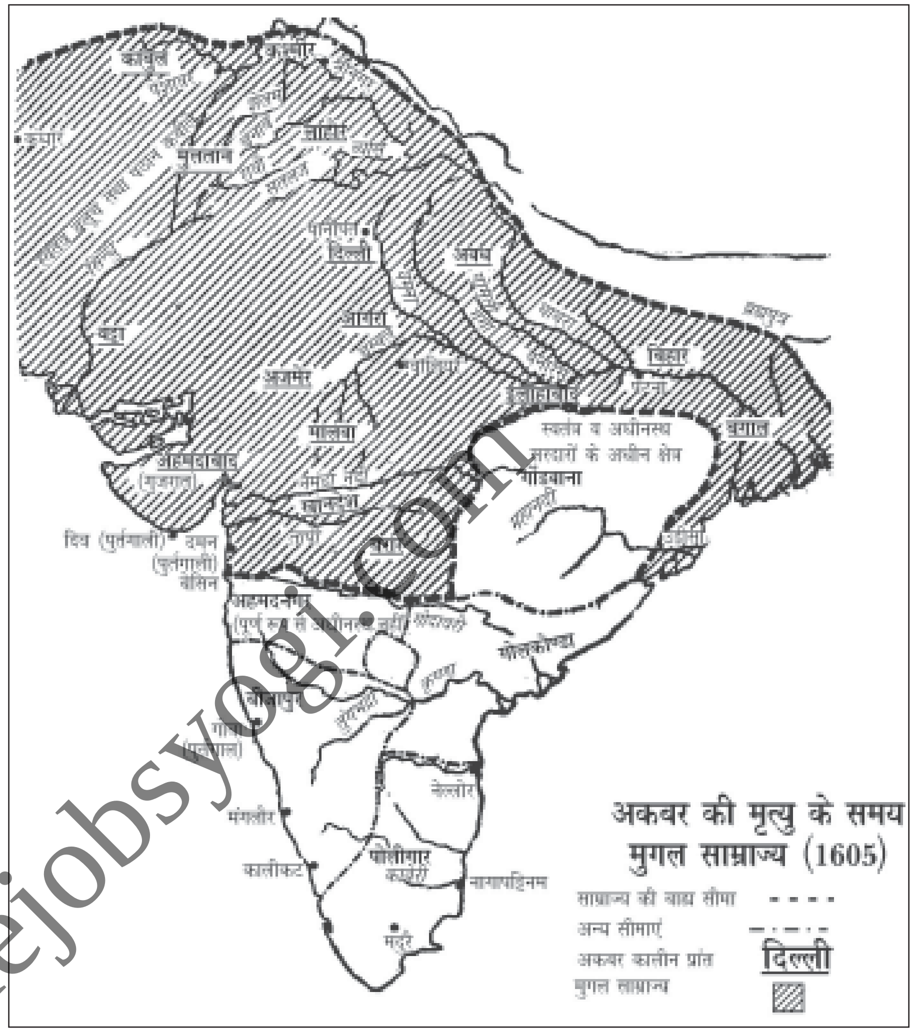

भारत में 16वीं शताब्दी के प्रारंभ में शासक वंशों के शीघ्रातिशीघ्र परिवर्तन एवं छोटे शासक समूहों के अभ्युदय से राजनीतिक अस्थिरता का माहौल था। दिल्ली सल्तनत के पतन के उपरांत लोदी वंश ने भारत में प्रथम अफगानी साम्राज्य की स्थापना की। बहलोल लोदी, लोदी वंश का संस्थापक एवं प्रभावशाली शासक था, जिसने आत्मसमर्पण कराकर प्रांतों के उग्र नायकों/प्रमुखों की संख्या में कमी की। उसका पुत्र सिकंदर लोदी सल्तनत की राजधानी को दिल्ली से आगरा ले गया। आगरा नगर की स्थापना भी उसी ने की। सिकंदर के बड़े पुत्र इब्राहीम लोदी के शासनकाल में, पंजाब के गवर्नर दौलत खां लोदी ने काबुल के शासक बाबर को भारत पर आक्रमण करने के लिए आमंत्रित किया। इस आमंत्रण से प्रोत्साहित होकर बाबर ने भारत पर आक्रमण किया तथा 1526 में पानीपत के प्रथम युद्ध में इब्राहीम लोदी को पराजित कर दिया। इस युद्ध में इब्राहिम लोदी मारा गया तथा उसकी मृत्यु के साथ ही दिल्ली सल्तनत की समाप्ति हो गई। लोदी शासक मुश्किल से 75 वर्षों तक ही शासन कर सके। इस अवधि में लोदियों का अपने शक्तिशाली पड़ोसी राज्यों, यथा—गुजरात, जौनपुर, मालवा एवं मेवाड़ से संघर्ष चलता रहा। ये सभी राज्य भी दिल्ली पर अधिकार के लिए लोदियों से निरंतर संघर्ष करते रहे। लोदी शासकों का दूसरा संघर्ष उन अमीरों तथा जमींदारों से था, जो दुर्बल सुल्तानों के समय अर्द्ध स्वतंत्र हो गए थे। किंतु लोदी सुल्तानों का तीसरा एवं मुख्य संघर्ष अपने अफगान सरदारों से ही हुआ। यही अफगान उत्तरोत्तर लोदी वंश की पराजय या पतन का कारण बने। इसके बावजूद भी सिकंदर लोदी एक महान लोदी सम्राट था, जिसने सुदृढ़ प्रशासनिक सिद्धांतों की नींव डाली तथा आगरा नामक एक नए शहर की स्थापना की।

बाबर, जिसने इब्राहीम लोदी को परास्त किया था, ने तेजी से दिल्ली एवं आगरा पर अधिकार कर लिया। यह तुर्क वंश की 'चगताई' शाखा से संबंधित था। जिसे सामान्यतया 'मुगल' के नाम से जाना जाता था। अपनी मृत्यु से पूर्व बाबर एक बड़ा साम्राज्य विरासत में छोड़ गया। इसमें बदख्शां से बिहार तक का एक बड़ा भू-प्रदेश था। इसमें अफगानिस्तान, पंजाब एवं दिल्ली सम्मिलित थे। दक्षिण की ओर यह राजस्थान तक विस्तृत था। बाबर ने समानता के अफगानी सिद्धांत को त्याग दिया तथा स्वयं को 'पादशाह' या सर्वोच्च प्राधिकारी घोषित किया। यद्यपि वह नए साम्राज्य के लिए नयी प्रशासनिक व्यवस्था की स्थापना नहीं कर सका। उसने प्रांतीय एवं क्षेत्रों के मुद्दों को पूरी तरह स्थानीय प्रशासकों के हाथों में ही छोड़ दिया। इन सभी मुद्दों को शेरशाह ने सुलझाया। शेरशाह अफगानी शासक था, जिसने 1540-45 ई. के मध्य शासन किया था। इतिहासकारों के मतानुसार वह 'महान प्रशासक एवं सैन्य संचालक' था। इसके राजस्व, वित्त एवं सैन्य सुधारों ने अकबर को स्वयं के सुधारों के लिए आधारभूत ढांचा प्रदान किया। यद्यपि उसने राजस्व के अफगानी सिद्धांत में कोई परिवर्तन नहीं किया।

अकबर जो 1556 ई. में मुगल सिंहासन पर बैठा, उसे प्रारंभ में हेमू का सामना करना पड़ा। हेमू ने आगरा तथा दिल्ली पर अधिकार कर लिया। अंततः 1556 ई. में पानीपत के द्वितीय युद्ध में अकबर, हेमू को परास्त कर पुनः सिंहासन प्राप्त कर सका। उसने अपनी सुदृढ़ एवं विशाल सेना की सहायता से कई और क्षेत्रों को जीता। 1576 ई. तक वह एक विशाल साम्राज्य का शासक था, जो अरब

thejobsyogi.com

सागर से बंगाल की खाड़ी तक एवं हिमालय से नर्मदा के तट तक फैला हुआ था। इसमें अर्द्ध-स्वायत्त काबुल का प्रांत भी सम्मिलित था। उसकी विजयों से भी महत्वपूर्ण उसकी संगठनात्मक क्षमता एवं प्रशासकीय दक्षता महत्वपूर्ण है, जिसने इस विशाल मुगल साम्राज्य के लिए सुदृढ़ प्रशासनिक एवं सैद्धांतिक आधार तैयार किया तथा, जिसके आधार पर यह लगभग 200 वर्षों तक चलता रहा। इसीलिए अकबर को मुगल साम्राज्य का वास्तविक संस्थापक कहा जाता है। उसका प्रशासन सैनिक आधार पर अवलंबित था, जिसमें प्रांतीय सूबेदारों/सिपहसालारों को तब तक पूर्ण शक्तियां प्राप्त रहती थीं, जब तक वे पद पर रहते थे। सूबेदारों को केंद्रीय सुल्तान के समान अपना दरबार आयोजित करने की भी स्वतंत्रता प्राप्त थी। अकबर ने भू-राजस्व व्यवस्था के निर्धारण के लिए भी कई प्रयोग किए। अंततः राजा टोडरमल के सहयोग से उसने आइने-दहसाला पद्धति अपनायी। अपनी प्रजा, जो अधिकांशतः गैर-मुस्लिम थी, पर शासन हेतु अकबर ने सुलह-ए-कुल या सार्वभौमिक सहिष्णुता के सिद्धांत को प्रस्तुत किया। अकबर ने दीन-ए-इलाही नामक एक नए धर्म का प्रतिपादन भी किया। यह सभी धर्मों का एक सार तत्व था। उसने हिन्दू राजकुमारियों से विवाह किया; तीर्थ यात्रा कर का उन्मूलन किया; जजिया समाप्त कर दिया तथा प्रशासन में योग्यता के आधार पर हिन्दुओं को भी मुसलमानों के समकक्ष पद प्रदान किए। अकबर के उत्तराधिकारियों, जहांगीर एवं शाहजहां ने भी उसकी नीतियों को जारी रखा।

मुगलकाल सांस्कृतिक क्षेत्र में कला एवं साहित्य की दृष्टि से उन्नति का काल था। इस काल में मुख्यतया वास्तुकला एवं स्थापत्य कला के क्षेत्र में विशेष प्रगति हुई। आगरा में इस काल में निर्मित कई सुंदर एवं भव्य इमारतें भारतीय एवं विदेशी कला के सुंदर समन्वय की परिचायक हैं। साहित्य के क्षेत्र में उर्दू एवं विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं का विकास हुआ तथा कई साहित्यिक कृतियों की रचना की गई। इस काल में होली, दीपावली एवं दशहरा जैसे विभिन्न हिन्दू त्योहार भी हिन्दू एवं मुसलमान दोनों धर्म के लोगों द्वारा पूरे उत्साह से मनाए जाते थे।

thejobsyogi.com

17वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मुगल साम्राज्य

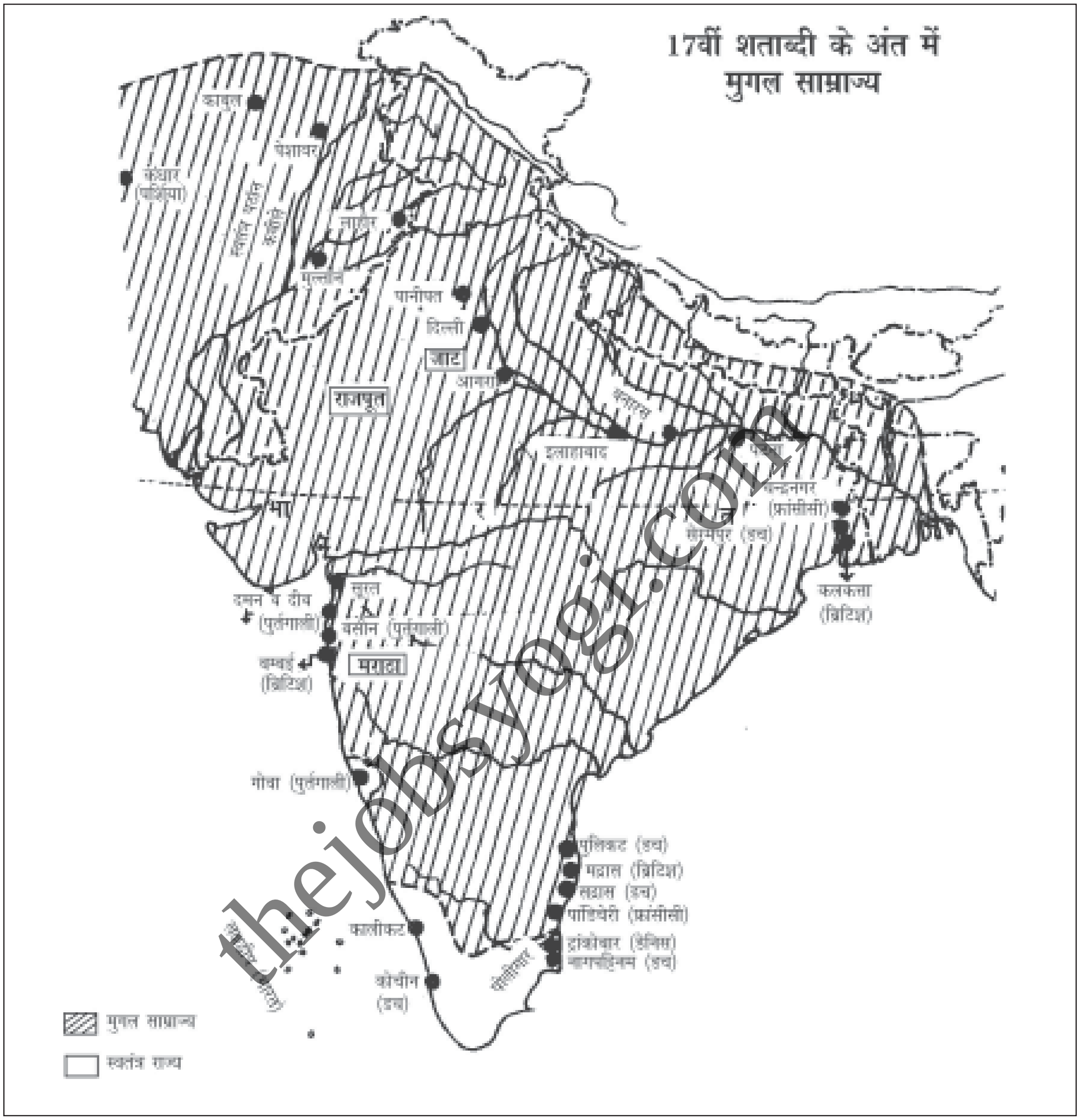

thejobsyogi.com

उत्तराधिकार के युद्ध में विजयी होने के उपरांत शाहजहां के पुत्र औरंगजेब ने 1658 में स्वयं को सुल्तान घोषित कर दिया तथा 'आलमगीर' (विश्व विजेता) की उपाधि के साथ गद्दी पर बैठा। विजय की नीतियों के आधार पर औरंगजेब के सम्पूर्ण शासनकाल को 25 वर्षों के लगभग दो समान भागों में विभक्त किया जा सकता हैः पहला 1658 से 1681 तक, जब उसने अपना सम्पूर्ण ध्यान उत्तर भारत पर केन्द्रित किया। दूसरा चरण 1682 से 1707 तक था जब उसने दक्कन की ओर ध्यान दिया। प्रथम चरण के दौरान उसने 1661 में कूच बिहार पर अधिकार कर लिया, गुवाहाटी समेत असम के कई क्षेत्र, बंगाल में चटगांव एवं उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र के कई विद्रोहों का दमन।

औरंगजेब ने अपने जीवन के अंतिम 25 वर्ष दक्कन में बिताए। यहां उसने मराठों, बीजापुर एवं गोलकुण्डा के दमन का प्रयास किया। बीजापुर के विरुद्ध तीन बार अभियान भेजने के उपरांत औरंगजेब ने स्वयं आक्रमण का नेतृत्व संभाला तथा 1686 में बीजापुर पर अधिकार कर लिया। बीजापुर के पतनोपरांत औरंगजेब ने गोलकुण्डा को निशाना बनाया तथा एक कड़े संघर्ष के बाद दुर्ग पर अधिकार कर लिया। किंतु दक्कन में मराठा शक्ति के दमन में औरंगजेब को नाकों चने चबाने पड़े। शिवाजी के योग्य नेतृत्व में मराठों ने अत्यधिक शक्ति प्राप्त कर ली तथा कोंकण, कल्याण, कोल्हापुर एवं माहौली जैसे अनेक क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया। शिवाजी ने दक्कन के मुगल गवर्नर को भी शिकस्त दी। औरंगजेब द्वारा मराठों के विरुद्ध

लंबा अभियान चलाने के उपरांत उसे मराठों के कई क्षेत्रों एवं दुर्गों को तो छीनने में सफलता अवश्य मिल गई। किंतु वह मराठा शक्ति को पूर्णतया समाप्त नहीं कर सका। औरंगजेब की दक्षिण नीति उसके लिए अत्यंत विनाशकारी सिद्ध हुई। लंबे समय तक उत्तर भारत से अनुपस्थित रहने के कारण प्रशासन में अव्यवस्था फैल गयी तथा उसके विरुद्ध बहुत से विद्रोही उठ खड़े हुए। लंबे दक्षिणी अभियान के कारण राजकोष खाली हो गया एवं दक्कन में भी उसे उद्देश्यों में पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं हो सकी।

औरंगजेब ने अपने पूर्ववर्ती शासकों की राजपूतों के प्रति मित्रता की नीति का भी परित्याग कर दिया तथा उनके दमन की नीति पर उतर आया। उसने मारवाड़ पर अधिकार कर लिया तथा उनका भी दमन किया। उसने मारवाड़ पर अधिकार कर लिया तथा मेवाड़ के विरुद्ध एक लंबे संघर्ष का सूत्रपात किया। औरंगजेब की इस नीति से मुगल-राजपूत संबंधों में कटुता आ गयी तथा इसके परिणाम साम्राज्य की एकता के लिए अत्यंत घातक सिद्ध हुए।

औरंगजेब की मृत्यु 1707 में हुई। उसके शासनकाल के दौरान, मुगल साम्राज्य विस्तार की पराकाष्ठा पर पहुंच गया। उसका विशाल साम्राज्य उत्तर में कश्मीर से दक्षिण में जिंजी तक तथा पूर्व में चटगांव से पश्चिम में हिन्दूकुश तक फैला था। ठीक इसी समय, एक ही केंद्र तथा एक ही व्यक्ति द्वारा शासित होने की दृष्टि से मुगल साम्राज्य अत्यंत विशाल हो चुका था। विभिन्न स्थानों पर विद्रोह हो रहे थे तथा उत्तरी एवं केंद्रीय भारत में कानूनी अव्यवस्था की स्थिति उत्पन्न हो चुकी थी। प्रशासन भ्रष्ट हो चुका था तथा अंतहीन दक्कन अभियान के कारण राजकोष पूर्णतया रिक्त हो चुका था। औरंगजेब की धार्मिक असहिष्णुता की नीति भी मुगल साम्राज्य के लिए घातक सिद्ध हुई। उसने हिन्दुओं के प्रति विद्वेष की नीति अपनायी तथा हिन्दुओं की स्थिति अपने साम्राज्य में दोयम दर्जे की कर दी।

thejobsyogi.com

मराठा साम्राज्य

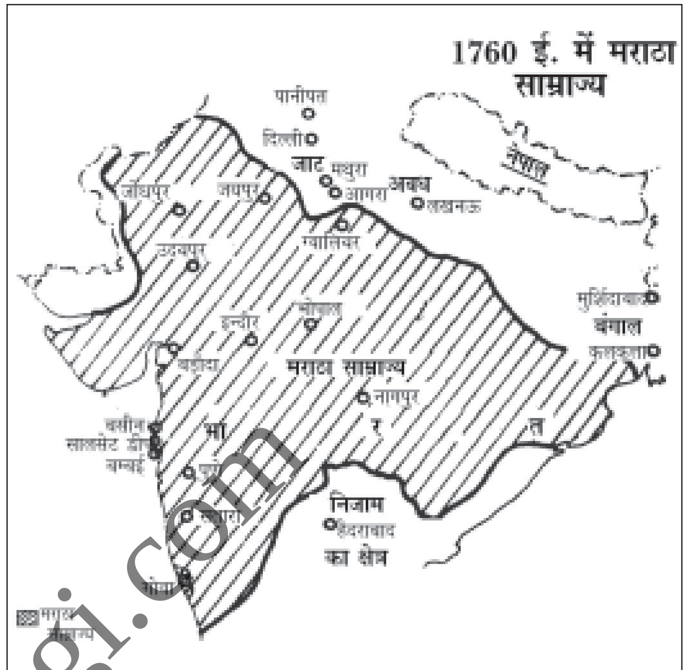

मुगल साम्राज्य के पतन के उपरांत जिन प्रांतीय राजवंशों का उदय हुआ, उनमें मराठे सबसे शक्तिशाली थे। पेशवाओं के योग्य नेतृत्व में मराठों ने मालवा एवं गुजरात से मुगलों के पैर उखाड़ दिए तथा वहां अपना शासन स्थापित कर लिया। प्रारंभ में मराठा छोटे भू-स्वामी थे, जिन्होंने अपने योग्य नेता शिवाजी के नेतृत्व में एक स्वतंत्र मराठा साम्राज्य स्थापित कर लिया। शिवाजी ने मराठों को साधारण कृषकों से निर्भीक सैनिकों में परिवर्तित कर दिया। भक्ति आंदोलन एवं भक्ति संतों के उपदेशों ने भी मराठों को आपसी एकता स्थापित करने एवं अपनी स्वतंत्रता प्राप्त करने हेतु प्रोत्साहित किया। शिवाजी का जन्म जुन्नार के निकट शिवनेर के दुर्ग में 1627 ई. में हुआ था। उन्होंने अपना सैन्य जीवन काफी युवावस्था में ही प्रारंभ कर दिया था। प्रारंभ में उन्होंने बीजापुर के सुल्तान की भांति आस-पास के क्षेत्रों में छापामार अभियान चलाया। इस क्रम में उन्होंने बीजापुर के विभिन्न क्षेत्रों को लूटा। जब उन्होंने मुगल क्षेत्रों में अतिक्रमण का प्रयास किया तो उनका मुगलों से भी संघर्ष हुआ। औरंगजेब ने शिवाजी को पुरंदर की संधि (1665) करने को बाध्य कर दिया। जिसके अंतर्गत उन्हें अपने बहुत से किले मुगलों को सौंपने पड़े। लेकिन शीघ्र ही शिवाजी ने अपनी शक्ति को बढ़ाकर इन किलों को वापस प्राप्त कर लिया। उन्होंने कर्नाटक में भी कई किलों पर विजय प्राप्त की। शिवाजी ने 1674 में अपना राज्याभिषेक समारोह आयोजित किया तथा 'छत्रपति' की उपाधि धारण की। उनके शासन में राजा सम्पूर्ण साम्राज्य का सर्वोच्च पदाधिकारी था। इसकी सहायता के लिए आठ मंत्रियों की एक समिति थी, जिसे 'अष्ट प्रधान' के नाम से जाना जाता था। उनकी आय के मुख्य स्रोत—भू-राजस्व, चौथ एवं सरदेशमुखी थे। शिवाजी ने एक स्थायी सेना भी रखी तथा उस पर कठोर अनुशासन स्थापित किया। यह सेना विभिन्न किलों की देखरेख भी करती थी।

शिवाजी के पौत्र साहू के शासनकाल में पेशवा या प्रधानमंत्री बालाजी विश्वनाथ राज्य के वास्तविक शासक बन गए। बालाजी विश्वनाथ की नीतियों ने साहू की स्थिति को महाराष्ट्र में अत्यधिक शक्तिशाली बना दिया। इसी समय साहू ने पेशवा को अत्यधिक शक्तियां दे दीं, इससे छत्रपति का महत्व कम हो गया। पेशवा के अभ्युदय से अन्य मराठा सरदारों की महत्वाकांक्षाएं जाग उठीं तथा साम्राज्य की एकता भंग हो गयी। 1761 ई. में पानीपत के तृतीय युद्ध के उपरांत, जिसमें कई प्रमुख मराठा सरदार मारे गए, मराठा साम्राज्य एक दुर्बल परिसंघ बनकर रह गया, जिसमें शासन का संचालन मराठा सरदार करते थे। इन मराठा सरदारों की महत्वाकांक्षा एवं आपसी संघर्ष से पूना स्थित पेशवा का मुख्यालय एवं मराठा साम्राज्य दोनों को हानि पहुंची। इससे मराठा साम्राज्य के विघटन की प्रक्रिया भी प्रारंभ हुई तथा वह पांच भागों में बंट गयाः बरार के रघुजी भोंसले; इंदौर के होल्कर; ग्वालियर के सिंधिया; बड़ौदा के गायकवाड़ एवं पूना के पेशवा।

thejobsyogi.com

1765 ई. में भारत

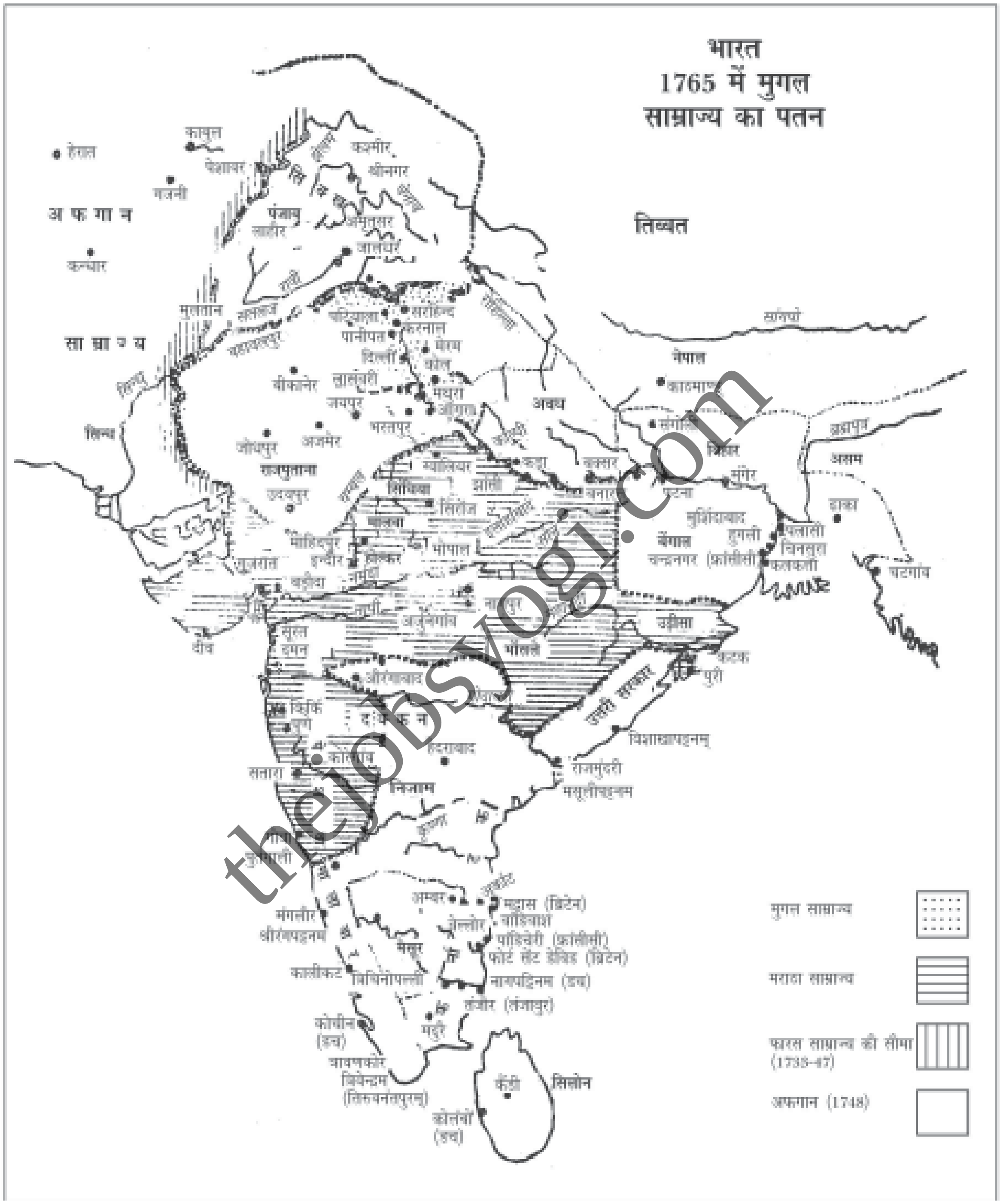

1707 ई. में औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात्, 18वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में मुगल साम्राज्य के विघटन की प्रक्रिया और तीव्र हो गई। औरंगजेब की नीतियों के अतिरिक्त कई अन्य कारण भी थे, जिनमें मुगल साम्राज्य का तेजी से पतन हुआ। इन कारणों में—दरबारी गुटबाजी, अत्यधिक केंद्रीयकृत मुगल प्रशासन, नादिरशाह एवं अहमदशाह अब्दाली के आक्रमण तथा मराठों जैसी स्थानीय शक्तियों का अभ्युदय तथा परवर्ती मुगल शासकों का आयोग्य होना सबसे प्रमुख थे।

मुगल साम्राज्य के पतन से कई क्षेत्रीय स्वायत्त राज्यों का उदय हुआ। इन राज्यों के शासकों ने न केवल अपने राज्य में कानून व्यवस्था स्थापित की बल्कि सुव्यवस्थित प्रशासन एवं आर्थिक व्यवस्था की स्थापना भी की। इस काल में मुगल साम्राज्य के विघटन से बनने वाले प्रमुख क्षेत्रीय राज्य थे—अवध, बंगाल एवं हैदराबाद। स्वतंत्र

thejobsyogi.com

राज्यों में मैसूर, राजपूत राज्य एवं केरल भी सम्मिलित थे। मराठा, सिख एवं जाटों के नए राज्य थे, जो मुगल साम्राज्य से विद्रोह के उपरांत निर्मित हुए थे।

1765 ई. का वर्ष भारत में यूरोपीय व्यापारिक कंपनियों के प्रभुत्व का वर्ष भी रहा। विशेष रूप से इस वर्ष अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी ने बक्सर के युद्ध में दूरगामी सफलता प्राप्त की। विदेशियों का भारतीय मामलों में आलिप्त होना तभी प्रारंभ हो गया था, जब पुर्तगाली व्यापारी वास्को डि गामा 1498 ई. में कालीकट के तट पर उतरा था। इससे भारत एवं यूरोप के मध्य आधुनिक वाणिज्यिक संबंधों की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हुआ। गोवा, दमन एवं दीव में अपने व्यापारिक केंद्रों की स्थापना के अतिरिक्त पुर्तगालियों ने मालाबार तट पर स्थित भारतीय रियासतों के राजनीतिक मामलों में रुचि प्रारंभ कर दी तथा भारत के पश्चिमी तट पर अपनी स्थिति को भी सुदृढ़ करने लगे। डच, जो भारत आने वाले दूसरे यूरोपीय थे, उन्होंने भारतीय व्यापार पर पुर्तगाली एकाधिकार को समाप्त करने के लिए अपनी नौसैनिक शक्ति का प्रयोग किया तथा कोरोमंडल तट में नागापट्टनम, मसूलीपट्टनम इत्यादि कई स्थानों पर अपनी फैक्ट्रियां भी स्थापित कीं।

फ्रांसीसी अगली यूरोपीय व्यापारिक शक्ति थी, जिसकी भारतीय व्यापार में रुचि उत्पन्न हुई। फ्रांसीसियों ने औरंगजेब से फरमान प्राप्त करने के उपरांत भारत में अपनी पहली फैक्ट्री सूरत में स्थापित की। 1674 में फ्रांसीसियों ने बीजापुर के सुल्तान से पांडिचेरी प्राप्त किया, जो आगे चलकर भारत में फ्रांसीसियों की व्यापारिक गतिविधियों का मुख्य केंद्र बन गया। चंद्रनगर जैसे स्थानों में फैक्ट्री की स्थापना कर फ्रांसीसी भारत में अपनी स्थिति को धीरे-धीरे सुदृढ़ करने लगे। इन्होंने राजनीतिक महत्वाकांक्षा के कारण भारतीय राज्यों के राजनीतिक मामलों में हस्तक्षेप भी प्रारंभ कर दिया तथा भारत में स्थायी साम्राज्य स्थापित करने का सपना देखने लगे। इससे अंग्रेजों से इनका संघर्ष प्रारंभ हो गया।

पुर्तगाली एवं डच व्यापारियों द्वारा भारतीय व्यापार से अत्यधिक मुनाफा कमाने के कारण अंग्रेज भी अपनी प्रथम व्यापारिक कंपनी स्थापित करने हेतु प्रेरित हुए। 1615 में सर टामस रो ने जहांगीर से फरमान प्राप्त किया तथा आगरा, अहमदाबाद एवं भड़ौच में फैक्ट्री स्थापित करने की अनुमति प्राप्त कर ली। मुगल साम्राज्य के पतन से इंग्लिश ईस्ट इंडिया कंपनी विस्तारवादी नीतियां अपनाने हेतु प्रोत्साहित हुई। 1717 में मुगल सम्राट फर्रुखसियार से कंपनी ने 3,000 रु. प्रति वर्ष के बदले बंगाल में कर मुक्त व्यापार करने की अनुमति प्राप्त कर ली। इसी तरह उसे गुजरात में भी 10,000 रु. के बदले कर मुक्त व्यापार की अनुमति मिल गयी। धीरे-धीरे कंपनी स्थानीय मुद्दों में रुचि लेने लगी, वह स्थानीय राजनीति से संलग्न हो गयी तथा भारत में अपना उपनिवेश स्थापित करने की दिशा में कार्य करने लगी। प्रभुत्व की इस होड़ में अंग्रेजों का फ्रांसीसियों से संघर्ष प्रारंभ हो गया, जिसके कारण 1740 से 1763 ई. के मध्य तीन कर्नाटक युद्ध लड़े गए। इन युद्धों में फ्रांसीसी निर्णायक रूप से पराजित हो गए तथा भारत से उनके भाग्य का अंत हो गया। तृतीय युद्ध के उपरांत हुई पेरिस की संधि में फ्रांसीसियों से अपनी फैक्ट्रियों के दुर्गीकरण का अधिकार भी छीन लिया गया। इसी बीच अंग्रेज स्थानीय मामलों से संबद्ध हो गए। व्यापारिक हितों की वजह से कंपनी का नवाब से भी संघर्ष प्रारंभ हो गया। जून 1757 की प्लासी की लड़ाई, जो अंग्रेजों तथा सिराजुद्दौला के मध्य लड़ी गई, में अंग्रेजों ने विजय प्राप्त की। इस युद्ध से तत्कालीन भारत के समृद्धतम बंगाल के समस्त संसाधनों पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया।

1764 ई. में बक्सर के युद्ध में अंग्रेजों ने बंगाल के नवाब, मुगल सम्राट एवं अवध के नवाब की संयुक्त सेनाओं को पराजित कर बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा की दीवानी प्राप्त कर ली तथा मुगल सम्राट को पेंशनयाफ़्ता बना दिया। 1765 में अंग्रेजों को हैदराबाद के निजाम से उत्तरी सरकार क्षेत्र प्राप्त हो गया।

thejobsyogi.com

1797-1805 की अवधि में भारत

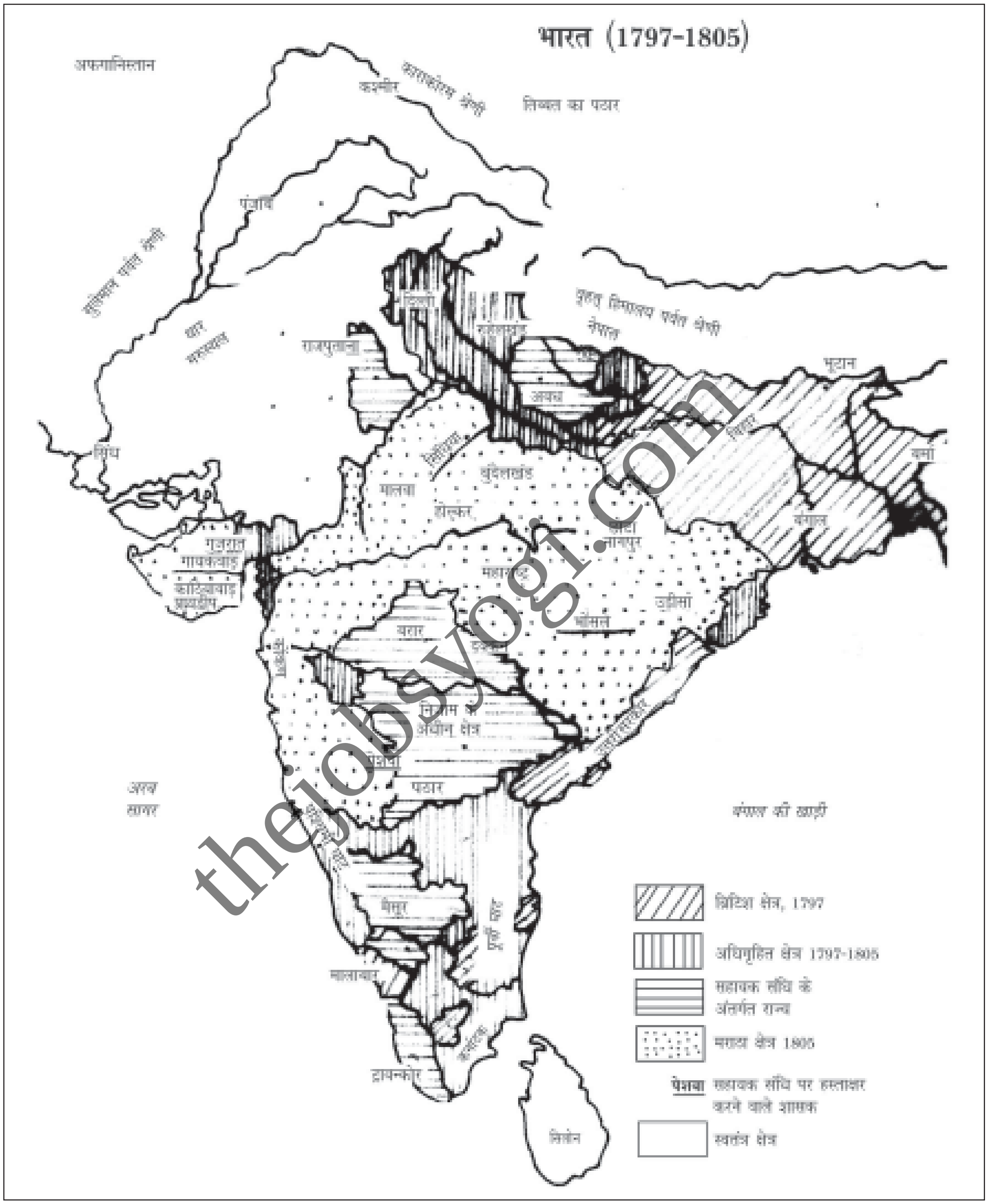

thejobsyogi.com

भारतीय व्यापार में पुर्तगाली एवं डचों द्वारा अत्यधिक लाभ कमाने से अंग्रेज भी भारत में स्वयं की व्यापारिक कंपनी स्थापित करने हेतु प्रोत्साहित हुए। 1707 में औरंगजेब की मृत्यु के उपरांत जब मुगल साम्राज्य धीरे-धीरे विघटित हो रहा था, उस समय तक प्रारंभ में अंग्रेज केवल व्यापारिक कार्यों तक सीमित थे। इस स्थिति से अंग्रेजों की महत्वाकांक्षाएं धीरे-धीरे जागृत होने लगीं। 1717 में अंग्रेजों ने मुगल सम्राट फर्रुखसियर से बंगाल में कर मुक्त व्यापार की अनुमति प्राप्त कर ली। इसके ऐवज में उसे केवल 3000 रु. सालाना अदा करने थे। इसी तरह गुजरात में उन्हें 1000 रु. सालाना के बदले करमुक्त व्यापार की छूट मिल गयी। इस तरह कंपनी धीरे-धीरे स्थानीय मुद्दों से संलग्न होने लगी। इस प्रक्रिया में अंग्रेजों का कई स्थानीय शक्तियों एवं यूरोपीय व्यापारिक शक्तियों, मुख्यतया फ्रांसीसियों से संघर्ष हुआ। अपने प्रतिद्वंदियों को सफलतापूर्वक समाप्त करने के उपरांत अंग्रेजों ने भारत में अपना शासन स्थापित कर

लिया। 1797 से 1805 की अवधि में भारत में अंग्रेजों के प्रभाव में तेजी से वृद्धि हुई।

कर्नाटक के तीन लगातार युद्धों में अंग्रेजों की तीन निरंतर विजयों ने भारत में उनके पांव जमा दिए तथा उनके सबसे मुख्य व्यापारिक प्रतिद्वंद्वी फ्रांसीसियों के व्यापारिक भविष्य की संभावनाएं सदैव के लिए समाप्त कर दीं। विगत् 20 वर्षों में, ये तीन कर्नाटक युद्ध 1740-48 ई., 1751-55 ई. एवं 1758-63 ई. में लड़े गए। तीसरे एवं अंतिम युद्ध की समाप्ति पेरिस की संधि (1763) से हुई। इस संधि से अंग्रेजों ने फ्रांसीसियों की छीनी गई फैक्ट्रियों को तो लौटा दिया किंतु उनसे फैक्ट्रियों के दुर्गीकरण का अधिकार छीन लिया गया, तथा वे केवल देश के व्यापार में भाग ले सकते थे।

1757 ई. में प्लासी के युद्ध के उपरांत, जिसमें अंग्रेजों ने बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला को पराजित किया तथा मार डाला, में अंग्रेजों ने अपने कठपुतली नवाब मीर जाफर को बंगाल का नवाब बनाया। मीर जाफर ने नवाब बनते ही अंग्रेजों को बंगाल के समृद्ध संसाधनों को लूटने की खुली छूट दे दी। 1764 ई. में बक्सर के युद्ध के उपरांत अंग्रेजों ने बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा की दीवानी प्राप्त कर ली तथा वहां द्वैध शासन लागू कर दिया। इसमें उन्होंने दीवानी अर्थात् राजस्व वसूली का अधिकार स्वयं के पास रखा, जबकि प्रशासन का उत्तरदायित्व नवाब के कंधों पर डाल दिया।

मैसूर का उदय 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हैदर अली एवं टीपू सुल्तान के नेतृत्व में हुआ। इनकी फ्रांसीसियों से निकटता से मैसूर के अंग्रेजों के साथ संबंध खराब हो गए। इससे भी अधिक मालाबार तट से होने वाले सम्पूर्ण व्यापार पर मैसूर का नियंत्रण था, इससे काली मिर्च एवं इलायची के अंग्रेजी व्यापार पर खतरा मंडराने लगा। 1767 से 1799 ई. के मध्य चार आंग्ल-मैसूर युद्ध लड़े गए। अंतिम एवं चतुर्थ मैसूर युद्ध लार्ड वैलेजली के नेतृत्व में अंग्रेजों एवं टीपू सुल्तान के मध्य हुआ, जिसमें मैसूर की पराजय हुई। इस युद्ध में टीपू सुल्तान मारा गया तथा अंग्रेजों ने उसकी राजधानी श्रीरंगापट्टनम पर अधिकार कर लिया। इसके पश्चात अंग्रेजों ने मैसूर को तीन भागों में विभाजित कर दिया। एक भाग निजाम को दे दिया गया, दूसरा हिस्सा मैसूर के पुराने वाडियार वंश को प्राप्त हुआ तथा तीसरा हिस्सा अंग्रेजों ने स्वयं अपने पास रख लिया। इसमें कनारा, वायनाड, कोयम्बटूर, दारापोरम एवं श्रीरंगापट्टनम सम्मिलित थे। इन नए राज्यों ने सहायक संधि स्वीकार कर ली तथा अंग्रेजों पर आश्रित राज्य बन गए। 1800 में, हैदराबाद के निजाम ने मैसूर से अपना अधिकार कंपनी को सौंप दिया।

अंग्रेजों ने 1775 से 1805 ई. के मध्य मराठों से दो युद्ध लड़े। इस अवधि में दोनों पक्षों ने अनेक संधियां कीं। इनमें से अंतिम संधि बसीम की संधि थी, जो 1802 में संपन्न हुई। इस संधि द्वारा पेशवा बाजीराव द्वितीय अंग्रेजों से सहायक संधि करने को बाध्य हो गया, जिससे मराठों को अपने 26 लाख आय के भू-क्षेत्र कंपनी को सौंपने पड़े, सूरत का शहर देना पड़ा तथा निजाम के प्रभुत्व वाले सभी क्षेत्रों से चौथ वसूली का अधिकार त्यागना पड़ा। आर्थर वैलेजली के नेतृत्व में एक अंग्रेजी सेना पूना में पेशवा की सहायता के लिए रख दी गयी तथा 1803 में अंग्रेजों ने पेशवा को उसके पद पर पुनः बहाल कर दिया। पेशवा द्वारा सहायक संधि स्वीकार करने के उपरांत सिंधिया एवं भोंसले ने मराठा परिसंघ को बचाने का प्रयास किया। किंतु वे अपने प्रयासों में सफल नहीं हो सके तथा उन्हें भी अंग्रेजों से सहायक संधियां करने को बाध्य होना पड़ा। इसी तरह यशवंत राव होल्कर ने भी 1804 में अंग्रेजों को पराजित करने का प्रयास किया किंतु वह भी सफल नहीं हो सका तथा उसे भी सहायक संधि स्वीकारने हेतु विवश होना पड़ा।

1805 तक, कंपनी के साम्राज्य में कई रियासतें सम्मिलित या उस पर आश्रित हो चुकी थींः इनमें थींः 1798 में एवं 1800 में हैदराबाद का निजाम; तंजौर—1799; अवध—1801; पेशवा—1802; भोंसले—1803; एवं ग्वालियर—1804 (सभी सहायक संधि के द्वारा); बिहार एवं बंगाल—1765; बनारस एवं गाजीपुर—1775; मालाबार एवं सालेम—1792; कोयंबटूर एवं तंजौर—1799; उत्तरी एवं दक्षिणी कनारा—1799; सूरत, बेल्लारी, अनंतपुर एवं गुडप्पा—1800; उत्तरी अर्काट, दक्षिणी अर्काट, त्रिचनापल्ली, बस्ती एवं गोरखपुर—1801; कटक—1803 (अन्य विधियों द्वारा कंपनी साम्राज्य में शामिल करना, जैसे कि, युद्धों को जारी रखना या पहले से ही अधीनस्थ शासकों के राज्यों पर पूर्ण अधिकार स्थापित करना)।

thejobsyogi.com

1858 में भारत

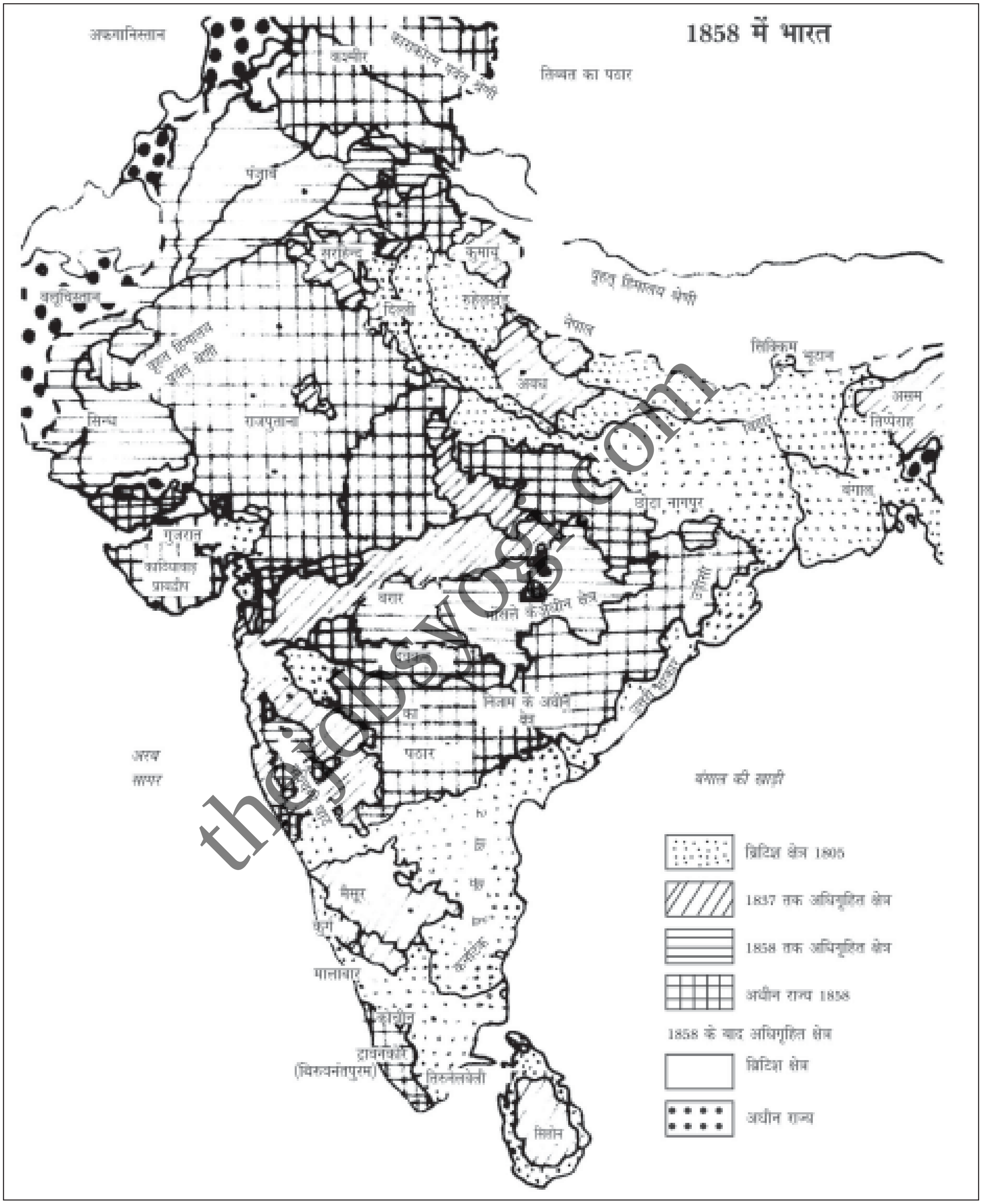

thejobsyogi.com

इस अवधि के दौरान अंग्रेजी ईस्ट कंपनी ने अखिल भारतीय साम्राज्य स्थापित करने की दिशा में पूरे जोर-शोर से कार्य किया। उसने अपने नियंत्रण में अधिकाधिक क्षेत्रों को लाने के लिए सभी प्रकार के साधनों को अपनाया। मराठे, जो अपना साम्राज्य खोने के अपमान को अभी भी भूले नहीं थे, उन्होंने 1817 में अपनी स्वतंत्रता के लिए एक बार पुनः प्रयास किया। पेशवा ने मराठा सरदारों के साथ एक संयुक्त मोर्चा बनाकर नवंबर 1817 में पूना स्थित ब्रिटिश रेसीडेंसी पर आक्रमण किया। किंतु पेशवा भोंसले एवं होल्कर की संयुक्त सेनाओं को अंग्रेजों ने पराजित कर दिया। इसके पश्चात पेशवा का पद समाप्त कर दिया गया तथा उसे पेंशनयाफ्ता बनाकर बिठूर भेज

दिया गया। पेशवा के क्षेत्र को ब्रिटिश साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया गया तथा बम्बई नामक एक नई प्रेसीडेंसी बनाई गई। होल्कर एवं भोंसले ने सहायक संधि स्वीकार कर ली। मराठों के पतनोपरांत सम्पूर्ण राजपूताना भी अंग्रेजों के प्रभाव क्षेत्र में आ गया। 1818 तक, पंजाब एवं सिंध को छोड़कर समस्त राष्ट्र अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी के नियंत्रण में आ चुका था। प्रारंभ में अंग्रेज या तो इन क्षेत्रों पर प्रत्यक्ष नियंत्रण करते थे या अपनी सेना रखकर सार्वभौम शक्ति का प्रयोग करते थे एवं उनके विदेशी संबंधों को नियंत्रित करते थे या वहां अपना रेजीडेंट रख देते थे।

वह प्रमुख क्षेत्र, जिस पर इस काल में अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया, वह सिंध था। सिंध कई दृष्टियों से अंग्रेजों के लिए महत्वपूर्ण था। एक तो इसका व्यापारिक महत्व था, दूसरा सिंधु नदी के मुख पर स्थित होने के कारण यह भारत की प्राकृतिक सीमा का निर्धारण करता था। इसका सामरिक महत्व भी था। 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में सिंध पर तीन अमीर शासन कर रहे थे, जिन्होंने अंग्रेजों को यह आश्वासन दिया था कि वे सिंध में फ्रांसीसियों या किसी अन्य यूरोपीय शक्ति को बसने की इजाजत नहीं देंगे। लेकिन अंग्रेज सिंध के अधिग्रहण की ओर धीरे-धीरे आगे बढ़ रहे थे। अंततः अंग्रेजों ने सिंध के अमीरों को अपदस्थ कर दिया तथा 1843 में सिंध का अधिग्रहण कर लिया।

पंजाब में रणजीत सिंह की मृत्यु के उपरांत उपजी राजनीतिक अव्यवस्था की स्थिति ने अंग्रेजों का ध्यान पंजाब की ओर आकर्षित किया। तत्पश्चात अंग्रेजों ने पंजाब को हस्तगत कर अपने साम्राज्य की सीमाओं को उत्तर-पश्चिम दिशा में विस्तृत करने का निर्णय किया। 1845 में अंग्रेजों ने सिखों को पराजित कर दिया तथा उन पर एक संधि के माध्यम से कई अपमानजनक शर्तें थोप दीं। इन शर्तों से सिखों की स्थिति अत्यंत कमजोर हो गयी। यद्यपि अभी भी पंजाब को अधिग्रहित नहीं किया गया था। 1848 में दोनों पक्षों के मध्य पुनः पहले रामनगर में फिर गुजरात में युद्ध हुआ। इन युद्धों में सिख पूर्णतयाः पराजित हो गए तथा उन्होंने अंग्रेजों के सम्मुख आत्मसमर्पण कर दिया। इसके उपरांत अंग्रेजों ने सम्पूर्ण पंजाब का कंपनी के क्षेत्र में विलय कर लिया।

भारत में ब्रिटिश साम्राज्य के विस्तार एवं उसके सुदृढ़ीकरण के संबंध में सबसे महत्वपूर्ण कदम लार्ड डलहौजी ने उठाया। डलहौजी ने व्यपगत के सिद्धांत का प्रतिपादन किया तथा भारतीय राज्यों पर कुशासन का आरोप लगाकर उन्हें हड़प लिया। उसके इस सिद्धांत के अंतर्गत यदि किसी राज्य का शासक, निःसंतान होता था तो उसे बच्चा गोद लेने का अधिकार नहीं था तथा ऐसे राजा की मृत्यु के बाद उसका राज्य स्वयंमेव ब्रिटिश साम्राज्य में मिल जाता था। डलहौजी ने व्यपगत के सिद्धांत द्वारा 1848 में सतारा, एवं 1853 में झांसी एवं 1854 में नागपुर का कंपनी साम्राज्य में विलय कर लिया। अवध का विलय कुशासन के आधार पर 1856 ई. में किया गया। डलहौजी के व्यपगत के सिद्धांत ने भारतीय शासकों में तीव्र असंतोष उत्पन्न कर दिया तथा यही असंतोष 1857 के विद्रोह का एक प्रमुख राजनैतिक कारण रहा। 1857 का विद्रोह जो भारतीयों द्वारा अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी के विरुद्ध किया गया प्रथम व्यापक संघर्ष था, जिसने कंपनी साम्राज्य की जड़ों को हिलाकर रख दिया। इस विद्रोह के उपरांत भारत से ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन समाप्त हो गया तथा इसका नियंत्रण ब्रिटिश शासक ने स्वयं अपने हाथों में ले लिया। इसके पश्चात् अधिग्रहण एवं विस्तार की नीति का परित्याग कर दिया गया तथा ब्रिटिश सरकार की सर्वोच्चता को मान लेने के बदले भारतीय रियासत के शासकों को उनके आंतरिक मसलों में हस्तक्षेप नहीं करने हेतु आश्वस्त किया गया।

व्यपगत के सिद्धांत के आधार पर सम्मिलित राज्यः सतारा–1848; जैतपुर एवं संभलपुर–1849; बघाट–1850; उदयपुर–1852; झांसी–1853; एवं नागपुर–1854।

सहायक संधिः इंदौर–1817, उदयपुर, जयपुर एवं जोधपुर–1818। प्रत्यक्ष विजय द्वारा भी कई राज्यों को कंपनी साम्राज्य में मिलाया गया तथा कुछ प्रांतीय अधीनस्थ शासक बना लिए गएः गड़वाल एवं कुमायूं–1815; पूना, जबलपुर, मंडला, अजमेर, नासिक–1818; अहमदनगर, शोलापुर एवं बीजापुर–1822; कुर्ग–1830; काशी–1833; दार्जीलिंग–1838; सिंध–1843; पटियाला–1845; पंजाब–1849; बरार–1853; बिलासपुर–1854; अवध–1856 एवं गारो पहाड़ियां–1872।

thejobsyogi.com

20वीं सदी के प्रारंभ में भारत

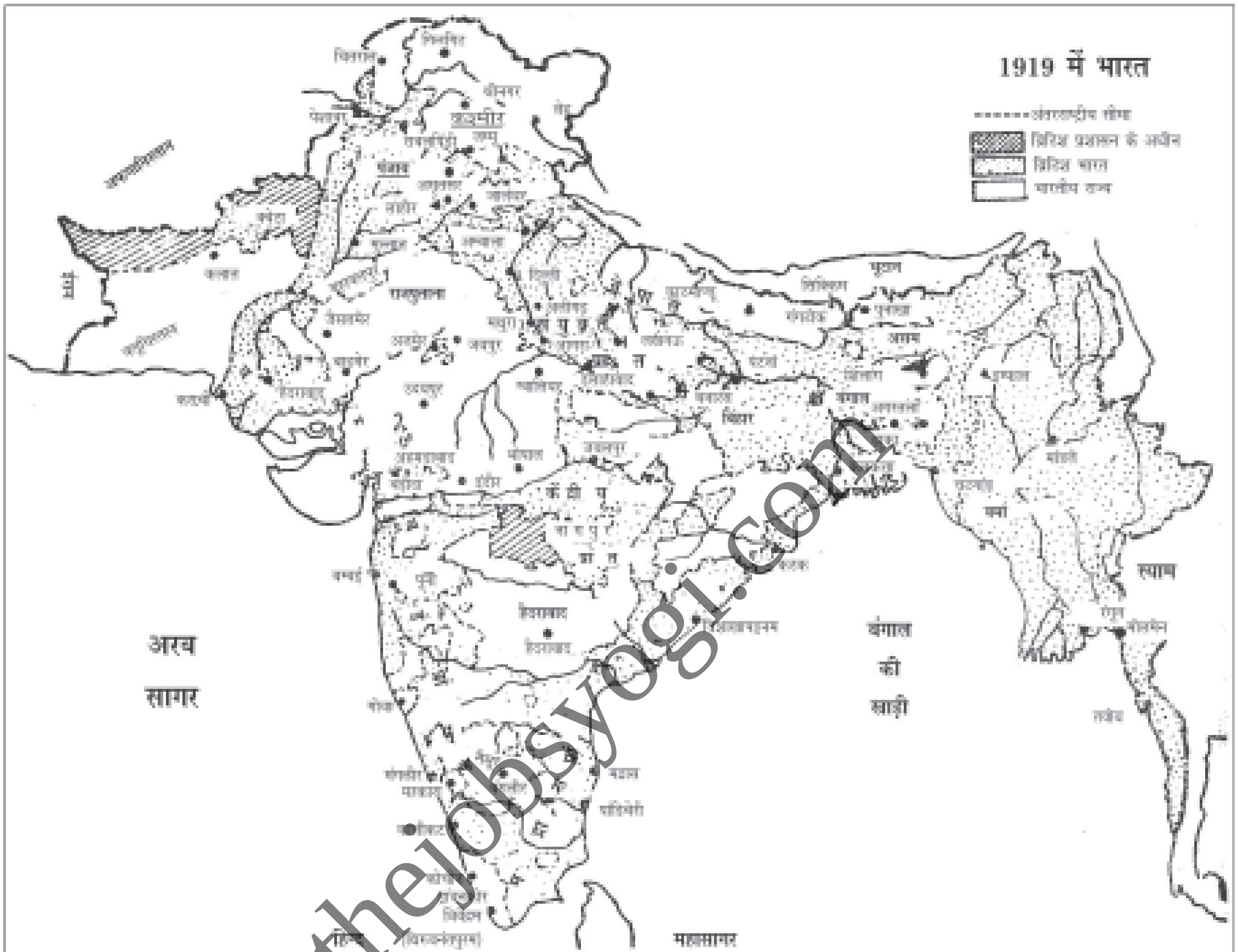

thejobsyogi.com

19वीं सदी में किए गए विभिन्न अधिग्रहणों से ब्रिटिश साम्राज्य की सीमाएं अत्यंत विस्तृत हो गयी थीं। कलत के खान से 1877 में अंग्रेजों ने एक संधि संपन्न की, जिसके आधार पर अफगानिस्तान में क्वेटा का अधिग्रहण कर लिया गया। क्वेटा सामरिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण था तथा इसके द्वारा कंधार से जाने वाले मार्ग पर नियंत्रण भी रखा जा सकता था। द्वितीय अफगान युद्ध (1878-79 ई.) के उपरांत कुर्रम, पिशिन एवं सिबी के जिले ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिए गए। इन परिवर्तनों से भारत एवं अफगानिस्तान की सीमाएं एक-दूसरे के करीब पहुंच गईं, जनजातीय क्षेत्र सरकार के सीधे नियंत्रण में आ गए तथा भारत की सीमाएं पश्चिम की ओर और बढ़ गयीं।

1893 में, चित्राल एवं गिलगिट के क्षेत्र ब्रिटिश नियंत्रण में आ गए। इससे पहले कुछ अन्य क्षेत्रों, जिसमें बलूचिस्तान सम्मिलित था, को 1876 में पहले ही अधिग्रहित किया जा चुका था। तृतीय बर्मा युद्ध के उपरांत 1886 ई. में ऊपरी बर्मा को हस्तगत कर लिया गया तथा 1864 में भूटान के साथ युद्ध के पश्चात दुआर भूमि पर कब्जा किया जा चुका था।

20वीं शताब्दी के प्रारंभ में भूटान अपने विदेशी संबंधों को भारत सरकार के परामर्शानुसार संचालित करने हेतु सहमत हो गया।

1913-14 में, असम तथा भूटान की सीमा का निर्धारण कर दिया गया तथा इसका नाम इसके निर्धारक मैकमोहन के नाम पर 'मैकमोहन रेखा' रखा गया। तिब्बत में गार्टोक, याटुंग एवं सिगात्से में भी भारतीय सरकार को अपनी सेना रखने तथा उसे संचालित करने का अधिकार मिल गया।

इस समय भारत की तीन राजनीतिक शाखाएं थीं। ब्रिटिश भारत जिसमें 9 प्रमुख प्रांतः बर्मा, असम, बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा (वर्तमान ओडिशा), आगरा एवं अवध के संयुक्त प्रांत, पंजाब, बम्बई, मद्रास एवं मध्य प्रांत का प्रशासन राज्यपालों द्वारा चलाया जाता था। उत्तर-पश्चिमी सीमांत प्रांतों के छह छोटे प्रांतों—बलूचिस्तान, अजमेर-मारवाड़, दिल्ली, कुर्ग एवं अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह का प्रशासन उप राज्यपाल या मुख्य आयुक्त चलाते थे। भारतीय रियासतें, जिनकी संख्या लगभग 600 थी, स्थानीय राजाओं द्वारा शासित थीं। सीमांत जिलों का प्रशासन राजनीतिक अभिकर्ताओं एवं अधिकारियों के माध्यम से सीधे गवर्नर-जनरल या वायसराय द्वारा संचालित किया जाता था।

1947 में भारत (स्वतंत्रता से पूर्व)

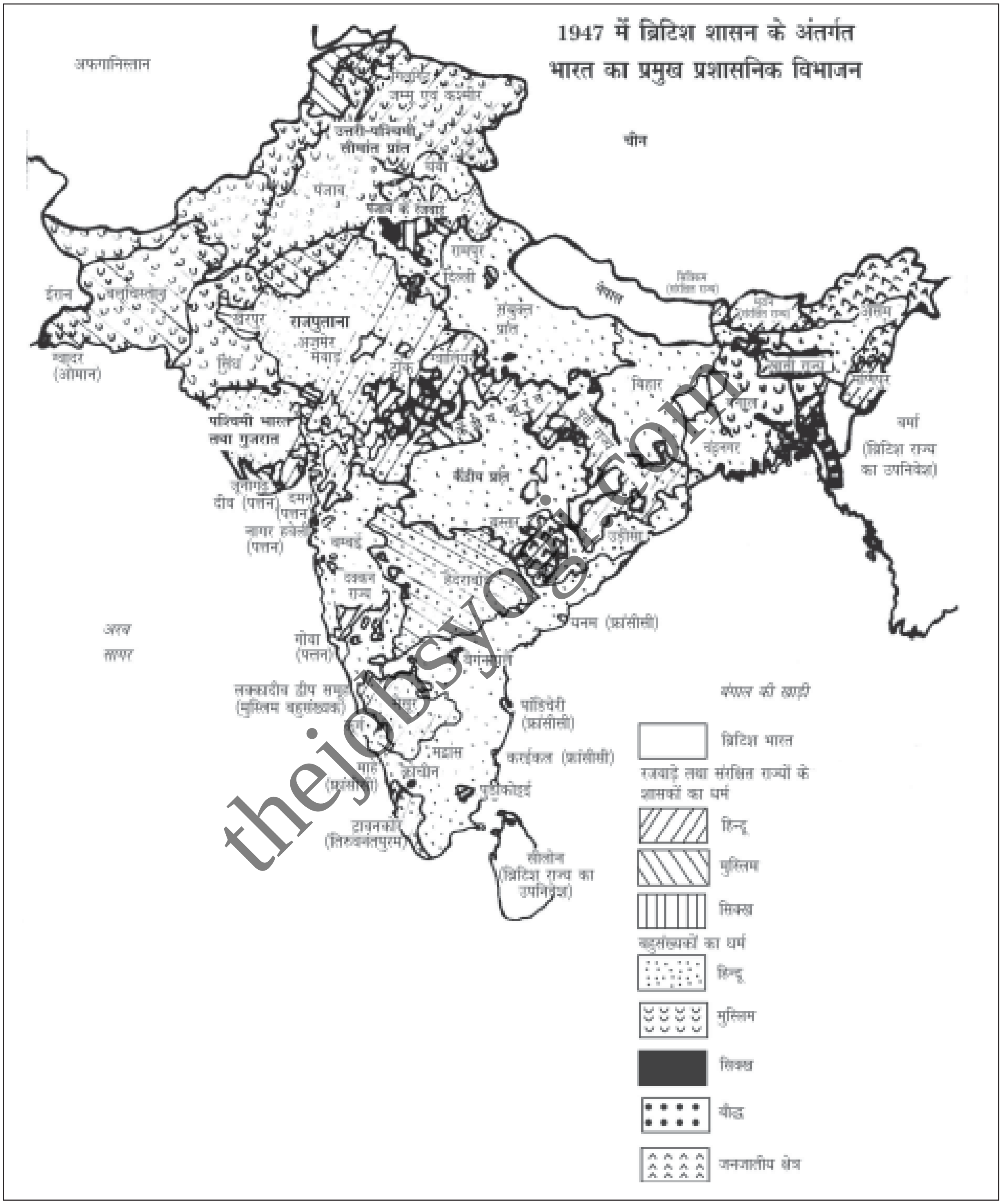

thejobsyogi.com

फरवरी 1946 में, ब्रिटेन की एटली सरकार ने भारत में एक उच्चस्तरीय कैबिनेट मिशन भारत भेजने की घोषणा की। इसके तीन सदस्य थे—सर स्टैफर्ड क्रिप्स, लार्ड पैथिक लारेंस एवं ए.बी. अलेक्जेंडर। सर स्टैफर्ड क्रिप्स मिशन के अध्यक्ष थे। इस मिशन का मुख्य कार्य उन साधनों एवं मार्गों की खोज करना था, जिनके द्वारा शांतिपूर्ण तरीके से भारत को सत्ता हस्तांतरित की जा सके। इस मिशन के प्रारूप का निर्धारण क्रिप्स द्वारा किया गया था। केबिनेट मिशन योजना के प्रारूप के लिए प्रारंभिक तौर पर क्रिप्स जिम्मेदार था, जिसने दिल्ली में एक न्यूनतम केंद्रीय सरकार द्वारा समन्वित, भारत के लिए एक त्रिस्तरीय संघ प्रस्तावित किया, जो वैदेशिक

मामलों, संचार, रक्षा कार्यों तक सीमित होगा एवं उन वित्तीय मामलों को देखेगा जिनकी उपरिलिखित राष्ट्रव्यापी मामलों की व्यवस्था हेतु अपेक्षा है। साम्प्रदायिक समस्याओं का समाधान उसी संप्रदाय के सदस्यों द्वारा किया जाए। भारतीय देशी नरेशों के राज्य भी संघ में सम्मिलित किए जाएं। केबिनेट मिशन योजना के अनुसार, भारत को प्रांतों के तीन मुख्य समूहों में विभाजित किया जाना थाः समूह 'क' में बम्बई प्रेसीडेंसी के हिंदु-बहुल प्रांत, मद्रास, संयुक्त प्रांत, बिहार, उड़ीसा एवं मध्य प्रांतों को शामिल किया गया; समूह 'ख' में मुस्लिम बहुल क्षेत्र, जिसमें पंजाब, सिंध, उत्तर-पश्चिमी सीमांत क्षेत्र तथा बलूचिस्तान सम्मिलित थे; समूह 'ग' में बंगाल के मुस्लिम बहुल क्षेत्र (जिसका एक भाग पाकिस्तान का पूर्वी भाग बना) तथा हिंदु बहुल असम थे। इसका सबसे महत्वपूर्ण प्रावधान यह था कि संविधान निर्माण के लिए एक संविधान सभा का गठन किया जाएगा, जिसमें राज्यों तथा प्रांतों के निर्वाचित प्रतिनिधि सम्मिलित होंगे। प्रांत के प्रतिनिधियों का चुनाव उनकी संविधान सभाएं करेंगी तथा राज्य के प्रतिनिधियों के चयन की प्रणाली वार्ता द्वारा तय की जाएगी। समूहों की सरकार वास्तव में हर प्रकार से स्वतंत्र थी परंतु केंद्रीय सरकार के पास सभी विषय आरक्षित थे तथा प्रत्येक समूह में शाही राज्यों के समूहों को अपने पड़ोसी राज्य के साथ संयोजित होना था। स्थानीय प्रांतीय सरकार को समूह को चुनने का अधिकार था, जिसके पक्ष में उसकी अधिकांश जनता मत दे।

6 जून, 1946 को मुस्लिम लीग एवं 24 जून, 1946 को कांग्रेस ने केबिनेट मिशन द्वारा अग्रेषित दीर्घावधिक योजना को स्वीकार किया। जुलाई 1946 में संविधान सभा के लिए प्रांतीय सभाओं में चुनाव आयोजित किए गए, जिसमें कांग्रेस ने 210 में से 199 स्थान प्राप्त किए। इसके बाद नेहरू ने कांग्रेस के पुनर्निर्वाचित अध्यक्ष के तौर पर अपनी प्रथम प्रेस कॉन्फ्रेंस में कहा कि कोई भी संविधान सभा पूर्व-निर्धारित संवैधानिक सूत्र/फॉर्मूला पर नहीं हो सकती। जब तक समूह व्यवस्था की अवधारणा वैकल्पिक है तब तक कैबिनेट मिशन योजना पाकिस्तान के निर्माण के विरुद्ध है। एकल संविधान सभा का गठन विचारणीय है तथा मुस्लिम लीग की वीटो शक्ति समाप्त हो गई है। समूह में सम्मिलित होने की अनिवार्यता भी प्रांतीय स्वायत्तता के सिद्धांत के विपरीत है। दूसरी ओर मुस्लिम लीग ने कहा कि समूहीकरण की शर्त समूह ख एवं ग के लिए अनिवार्य होनी चाहिए तभी भविष्य में पाकिस्तान का निर्माण हो सकेगा। लीग का सोचना था कि कांग्रेस कैबिनेट मिशन योजना को अस्वीकार कर देगी तब सरकार अंतरिम सरकार के गठन के लिए लीग को आमंत्रित करेगी।

नेहरू की टिप्पणी की योजना के सम्पूर्ण परित्याग के तौर पर व्याख्या करके, जिन्ना ने लीग की कार्यकारी समिति की बैठक आयोजित की, जिसने संघ योजना के साथ अपने पूर्व के समझौते को समाप्त कर लिया और 1946 में ''मुस्लिम राष्ट्र'' का आह्वान करने के स्थान पर ''प्रत्यक्ष कार्रवाई'' शुरू की। 16 अगस्त को लीग ने प्रत्यक्ष कार्यवाही दिवस मनाया। इस प्रकार कैबिनेट मिशन असफल हो गया तथा उसके सदस्य वापस चले गए। कैबिनेट मिशन के वापस जाते ही भारत में तीव्र सांप्रदायिक दंगे प्रारंभ हो गए। 1947 में लार्ड वेवल की जगह लार्ड माउंटबेटन को वायसराय बनाकर भेजा गया। जून 1948 तक ब्रिटेन भारत की सरकार को उत्तरदायी हाथों में सौंपने को तैयार हो गया। किंतु माउंटबेटन ने महसूस किया कि स्थिति अत्यंत नाजुक है, फलतः उन्होंने जल्दी ही सत्ता हस्तांतरण का फैसला कर लिया।

जुलाई 1947 में ब्रिटिश संसद ने भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम पारित किया। 14-15 अगस्त, 1947 को भारत दो अधीनस्थ राज्यों भारत एवं पाकिस्तान में बंट गया।

thejobsyogi.com

स्वातंत्र्योत्तर भारत में राज्यों एवं संघ-शासित प्रदेशों का पुनर्गठनः 1955 में भारत

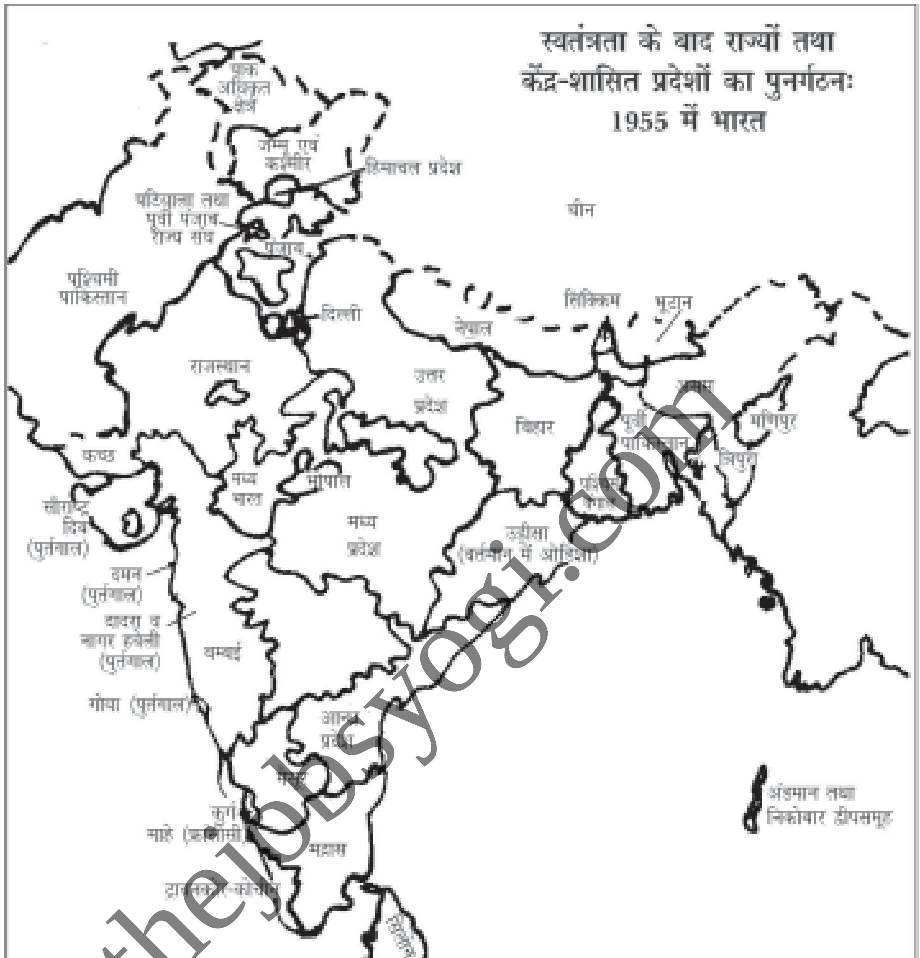

thejobsyogi.com

26 जनवरी, 1950 को राज्यों के संघ एवं संप्रभुता संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य के रूप में एक नए भारत का जन्म हुआ। यहां प्रत्येक पांच वर्ष में नए आम चुनाव संपन्न होते हैं। भारतीय संविधान में सरकार या शासन का मुख्य प्रारूप ब्रिटिश संसदीय नियमों के अनुसार है। इसमें द्विसदनीय व्यवस्था है, जिसमें लोकसभा संसद का निम्न सदन एवं राज्यसभा संसद का उच्च सदन है। भारतीय संघ में शक्तियों का विभाजन दिल्ली में केंद्र एवं राज्यों (पूर्व के ब्रिटिश प्रांत एवं देशी रियासतें) के मध्य किया गया है। प्रत्येक राज्य में राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत एक राज्यपाल तथा जनता द्वारा निर्वाचित एक मुख्यमंत्री (अप्रत्यक्ष निर्वाचन) होता है। प्रत्येक राज्य की अपनी विधानसभा होती है। 1953 में भारत की मुख्य 14 प्रादेशिक भाषाओं के आधार पर प्रांतों के पुनर्गठन हेतु एक आयोग का गठन किया गया, जिसने 1956 में अपनी सिफारिशें दीं। इन सिफारिशों के आधार पर बड़े प्रांतों का पुनर्गठन किया गया। विधान, विधि एवं प्रतियोगी परीक्षाओं का माध्यम हिन्दी एवं अंग्रेजी दोनों को रखने का निश्चय किया गया।

1953 में, 'मद्रास' के पूर्व प्रांत को तमिलनाडु एवं जहां तेलुगू बोली जाती थी, को आंध्र प्रदेश नामक दो बड़े राज्यों में विभाजित कर दिया गया। नेहरू ने भारत के आंतरिक मानचित्र के पुनर्अभिकल्पन हेतु एक राज्य पुनर्गठन आयोग नियुक्त किया। इसने 1956 में पारित राज्य पुनर्गठन अधिनियम के तहत् दक्षिण भारत की प्रशासनिक सीमाओं का पुनः आरेखन किया। 1960 में 'बम्बई' के पूर्व प्रांत को मराठी भाषी महाराष्ट्र एवं गुजराती भाषी—गुजरात में विभाजित कर दिया गया।

भारत की लगभग 570 देशी रियासतों में से जूनागढ़, हैदराबाद एवं कश्मीर को छोड़कर अन्य सभी ने भारत या पाकिस्तान में सम्मिलित होने के पक्ष में सहमति दी। बाद में ये तीनों रियासतें 1948 में भारत में सम्मिलित हुईं। प्रारंभ में कश्मीर के महाराजा हरीसिंह स्वतंत्र रहने के पक्ष में थे, किंतु अक्टूबर, 1947 में जब कश्मीर पर पश्तून कबाइलियों ने आक्रमण किया तो वे भारत में सम्मिलित होने के लिए सहमत हो गए। यद्यपि इस आक्रमण में कबाइलियों ने भारत की काफी भूमि पर कब्जा जमा लिया। इसे पाक अधिकृत कश्मीर के नाम से जाना जाता है। बाद में इसे ही नियंत्रण रेखा स्वीकार कर लिए जाने से विवाद उत्पन्न हो गया है। वर्तमान में कश्मीर भारत का उत्तरवर्ती राज्य है, जिसे 'जम्मू एवं कश्मीर' के नाम से जाना जाता है।

भाग दो

ऐतिहासिक महत्व के स्थान

इस भाग में संदर्भ हेतु पहले दो मानचित्र दिए गए हैं, जिससे कि राज्यों, राजधानियों तथा नदियों की अवस्थिति का अध्ययन किया जा सके। इन दो मानचित्रों के पश्चात 19 मानचित्र दिए गए हैं, जिनमें अंग्रेजी वर्णमाला के क्रम से भारत के ऐतिहासिक स्थलों को दर्शाया गया है। कुल मिलाकर लगभग 300 स्थानों का व्यापक समावेश किया गया है। प्रत्येक मानचित्र में चिन्हित स्थानों के संबंध में संक्षिप्त विवरण दिया गया है। मानचित्रों में चिन्हित ऐतिहासिक स्थलों में 'प्राचीन काल', 'मध्य काल' अथवा 'आधुनिक काल' से संबंधित विभेद नहीं किया गया है क्योंकि परीक्षा में आपको दिए गए स्थानों को दर्शाना होता है, चाहे उनका ऐतिहासिक महत्व किसी भी काल में रहा हो। इसके अतिरिक्त, कुछ स्थान ऐसे हैं जो प्राचीन काल में तो महत्वपूर्ण थे ही बाद के काल में भी उनकी महत्ता यथावत बनी रही। तथापि पुस्तक में दी गई अध्ययन सामग्री में प्रत्येक स्थल के बारे में काल को ध्यान में रखते हुए आवश्यक विवरण दिया गया है, जिससे कि आप स्थान-विशेष एवं उससे संबंधित तथ्यों को सरलता से जोड़ कर देख सकें।

thejobsyogi.com

विषय वस्तु

भारत राजनैतिक 2017 /56/
भारत नदियां /57/

A

मानचित्र /59/
आदमगढ़ /58/ अदिच्चनालुर /58/ आगरा /58/ अहार /58/ अहिच्छत्र /60/ अहमदाबाद /60/ अहमदनगर /60/
एहोल /60/ अजंता /61/ अजमेर /61/ आलमगीरपुर /62/ अलची गोम्पा /62/ इलाहाबाद/कोसाम /62/
अमरावती /63/ अमरकंटक /63/ अमरकोट /63/ आम्बेर/आमेर /63/ आमरी /64/ अमृतसर /64/
अनेगोंडी /64/ अंग /64/ अन्हिलवाड़ा /65/ अनूप /65/ अनुराधापुर /65/
ओर्नस /65/ अपराजितक/अपरांत /65/ अफसाद /65/ अरम्मलई /66/ अरिकामेडु /66/
असीरगढ़ /66/ अस्सक (असमक) /67/ अतरंजीखेड़ा /67/ अत्तिरमपक्कम /67/ अटक 68
औरंगाबाद /68/ अवन्ति /68/ अवन्तिपुर /69/ अयोध्या /69/

B

मानचित्र /71/
बादामी /70/ बदायूं /70/ बद्रीनाथ /70/ बाघ /70/ बागोर /72/ वैराट/बिराट/बैराट /72/ बालासोर /72/
बामियान /72/ बनारस/वाराणसी /72/ बनवाली /73/ बनवासी/वैजयन्ती /73/ बंगलौर/बंगलूरू /73/
बानगढ़ /73/ बारबरा/बराबर /74/ बारबेरिकम /74/ बरखेड़ा /74/ बड़ौदा /74/
बेरीगाजा/भृगुकच्छ /74/ बसोहली/बशोली/बसोली /75/ बेसीन /75/ बयाना /75/ बेदसा /75/ बेलूर /75/ बरार /76/
बेसनगर/विदिशा/भिलसा /76/ भगतराव /76/ भगवानपुरा /76/ भाजा /77/ भरहुत /77/
भटिंडा /77/ भटकल /79/ भटनेर /79/ भट्टीप्रोलू /79/ भीमबेटका /79/ भीटा /79/
भीतरगांव /80/ भीतरी /80/ भुवनेश्वर /80/ भूमरा /80/ बीदर /81/ बीजापुर /81/
बीकानेर /81/ बोधगया /82/ ब्रह्मगिरि /82/ बूंदी /82/ बुरहानपुर /82/ बुर्जहोम /83/

C

मानचित्र /85/

कालीकट /84/ खंभात /84/ कन्नौर/कन्नूर /84/ चम्पा /84/ चम्पानेर /86/ चंदेरी /86/
चंद्रगिरि /86/ चन्द्रकेतुगढ़ /86/ चन्हुदड़ो /87/ चौल /87/ चौसा /87/
चिदाम्बरम /87/ चिरांद /87/ चित्तौड़ /88/ चोपानी-मांडो /88/ चुनार /88/

D

मानचित्र /90/

डाभोल /89/ दैमाबाद /89/ दाओजली हडिंग /89/ दौलताबाद /89/ देबल /91/
दिल्ली /91/ देवगढ़ /91/ देसलपुर/गुन्थली /92/ धमनेर /92/ धार /92/ धौली /92/
धौलावीरा /92/ दीव /93/ द्वारका /93/

E & F

मानचित्र /95/

एलिफैन्टा /94/ एलिचपुर/अचलपुर /94/ एलौरा /94/ एरण /94/ फतेहपुर सीकरी /96/

G

मानचित्र /98/

गंधार /97/ गंगैकोण्डचोलपुरम /97/ गंजाम /97/ गंगोत्री /99/ गौड़/लखनौती /99/ घंटशाला/कंटकशिला /99/ गिलुण्ड /99/
जिंजी /99/ गिरनार /100/ गोलकुंडा /100/ गोली 100/ गोप मोती /100/ गुलबर्गा /100/ ग्वालियर /101/ ग्यारसपुर 101

H

मानचित्र /103/

हैलीबिड/द्वारसमुद्र /102/ हल्लुर /102/ हम्पी /102/ हांसी /104/ हनुमानगढ़ /104/ हड़प्पा /104/
हरिद्वार /104/ हरवान /104/ हस्तिनापुर /105/ हीरेबेंकल /105/ हुनासगी /105/

I & J

मानचित्र /107/

इंदौर /106/ इंद्रप्रस्थ /106/ इटानगर /106/ जदिगेनहल्ली /106/ जगदला/जगद्दला/जागदला /106/
जयपुर /108/ जैसलमेर /108/ जाजनगर /108/ जालौर /108/ जंजीरा /108/ जटिंग रामेश्वर /108/
जौगढ़ /109/ जौनपुर /109/ झांसी /109/ जोधपुर /110/ जोगीमारा /110/ जोरवे /110/ जुन्नार /110/

K

मानचित्र /113/

काबुल /112/ कलाड़ी /112/ कालीबंगा /112/ कालिंजर /112/ कल्लुर /114/ काल्पी /114/ कालसी /114/
कल्याणी /114/ कामरूप/कामरूपा /114/ कांपिल्य /115/ कन्नौज /115/ कांचीपुरम /115/
कंधार/कंदहार /115/ कांगड़ा /116/ कन्हेरी गुफाएं /116/ कपिलवस्तु /116/
कापुगल्लू/कुपगल्लू /116/ करसाम्बल/खादसमला /116/ कड़ा /117/ कारगिल /117/ कार्ले /117/
कावेरीपट्टनम/पुहार /117/ कीझडी पल्लई संघाईपुदुर /118/ खजुराहो /118/
किब्बनहल्ली /118/ किशनगढ़ /119/ कोणार्क /119/
कोप्पम /119/ कोरकई /119/ कौसाम्बी/कौशाम्बी /119/ कोटदिजी /120/
कुडा गुफाएं /120/ कुम्भरिया/कुम्भारिया /120/ कुरुक्षेत्र /120/ कुशीनगर (कसिया) /121/

L

मानचित्र /123/

लखुडियार /122/ ललितगिरी /122/ ललिथपाटन /122/ लेनयाद्रि गुफाएं /122/
लेपाक्षी /124/ लोथल /124/ लखनऊ /124/ लुम्बिनीग्राम /124/

M

मानचित्र /126/

मदुरई /125/ महाबलिपुरम/मामल्लपुरम /125/ महास्थान /127/ महेश्वर/महिष्मती /127/

thejobsyogi.com

महोबा /127/ मलयदिपत्ती गुफा /128/ मांडला /128/ मांडू /128/ मनमोड गुफाएं /129/
मानसेहरा /129/ मान्यखेत /129/ मास्की /129/ मसूलीपटनम /129/ मथुरा /130/ मेरठ /130/
मेहरगढ़ /130/ मोधेरा /130/ मोहनजोदड़ो /131/ मुंगेर /131/ मुखलिंगम /131/
मुल्तान /131/ मुंबई /132/ मुर्शिदाबाद /132/ मुजिरिस /132/

N

मानचित्र /134/
नचना-कुठार /133/ नागपट्टिनम /133/ नागार्जुनकोंडा /133/ नगरकोट /133/ नागौर /133/
नालंदा /135/ नापचिक /135/ नारनौल /135/ नासिक /135/ नेवदाटोली /136/

O, P & Q

मानचित्र /138/
ओदन्तपुर/ओदन्तपुरी/उड्डन्डपुरा /137/ ओहिंद /137/ ओरछा /137/ पैठन /137/ पांचाल /137/
पंढारपुर /139/ पांडु राजर धिबि /139/ पांडुआ /139/ पंगुदरिया/पंगुरारिया/पंगोररिया /139/ पानीपत /140/
पणजिम/पणजी /140/ पटना /140/ पट्टडकल /141/ पावापुरी /141/
पेनुकोंडा /141/ पेशावर /141/ पिकलिहाल /142/ पिपरहवा /142/ पीतलखोड़ा /142/
पांडिचेरी (वर्तमान में पुदुचेरी) /142/ पुलिकट /143/ पुणे /143/ पुरंदर /143/ पुरी/जगन्नाथपुरी /143/
पुष्कलावती /143/ पुष्कर /144/ क्विलोन कोल्लम /144/

R

मानचित्र /146/
रायगढ़ 145/ राजगीर /145/ राजिम /145/ राखीगढ़ी /145/ रामेश्वरम् /147/
रंगपुर /147/ रणथम्भौर /147/ रत्नागिरि/पुष्पागिरी /148/ रोहतास /148/
रोजड़ी /148/ रोपड़ /149/ रूपनाथ /149/

S

मानचित्र /151/
साकेत/अयोध्या /150/ सालसीट /150/ समाना /150/ संभल /150/ सांभर /150/ सामूगढ़ /152/
सांची /152/ संघोल /152/ संकाश्य/संकिसा /153/ सराय नाहर राय /153/ सारनाथ /153/
सासाराम /153/ ससप्तोल गुफाएं /154/ सतारा /154/ शाहबाजगढ़ी /154/ शारदा पीठ /154/ शत्रुंजय /154/
शिवनेर /155/ श्रवणबेलगोला /155/ स्यालकोट/शाकल /155/ सिद्धपुर /155/
सिगिरिया /155/ सिकन्दरा /156/ सरहिन्द /156/ सीरी /156/ सिरपुर/शिरपुर/श्रीपुरा /156/ सिरसा /157/
सित्तनवासल /157/ सोमापुर महाविहार /157/ सोमनाथ /157/ सोपारा /158/ श्रावस्ती /158/ श्रीनगर /158/
शृंगेरी /158/ श्रीरंगम /158/ श्रीरंगपटनम /159/ सुल्तानगंज /159/ सूरत /159/ सुरकोटदा /159/

T

मानचित्र /161/
तगार/तेर 160/ तालिकोटा /160/ ताम्रलिप्ति/तामलुक /160/ तराइन /160/
तक्षशिला/तक्शशिला/शाह-धेरी /162/ थानेसर/थानेश्वर /162/ तंजावुर /162/ थट्टा /162/
थिक्से गोम्पा /162/ तिगवा /163/ तिलौराकोट/तिलौरा कोट /163/ तिरुचिरापल्ली /163/ तिरुपति /163/

U

मानचित्र /165/
उच्छ /164/ उदयपुर /164/ उदयगिरि एवं खंदगिरि की गुफाएं /164/
उडुपी /164/ उज्जैन /166/ उदंवल्ली गुफाएं /166/ उरैयूर /166/ उत्तरामेरूर /166/

V & W

मानचित्र /169/
वैशाली /168/ वलभी /168/ वेंगी /168/ विजयनगर /168/
विक्रमशिला /170/ विलिनाम/विझीनजाम /170/ वारंगल /170/

thejobsyogi.com

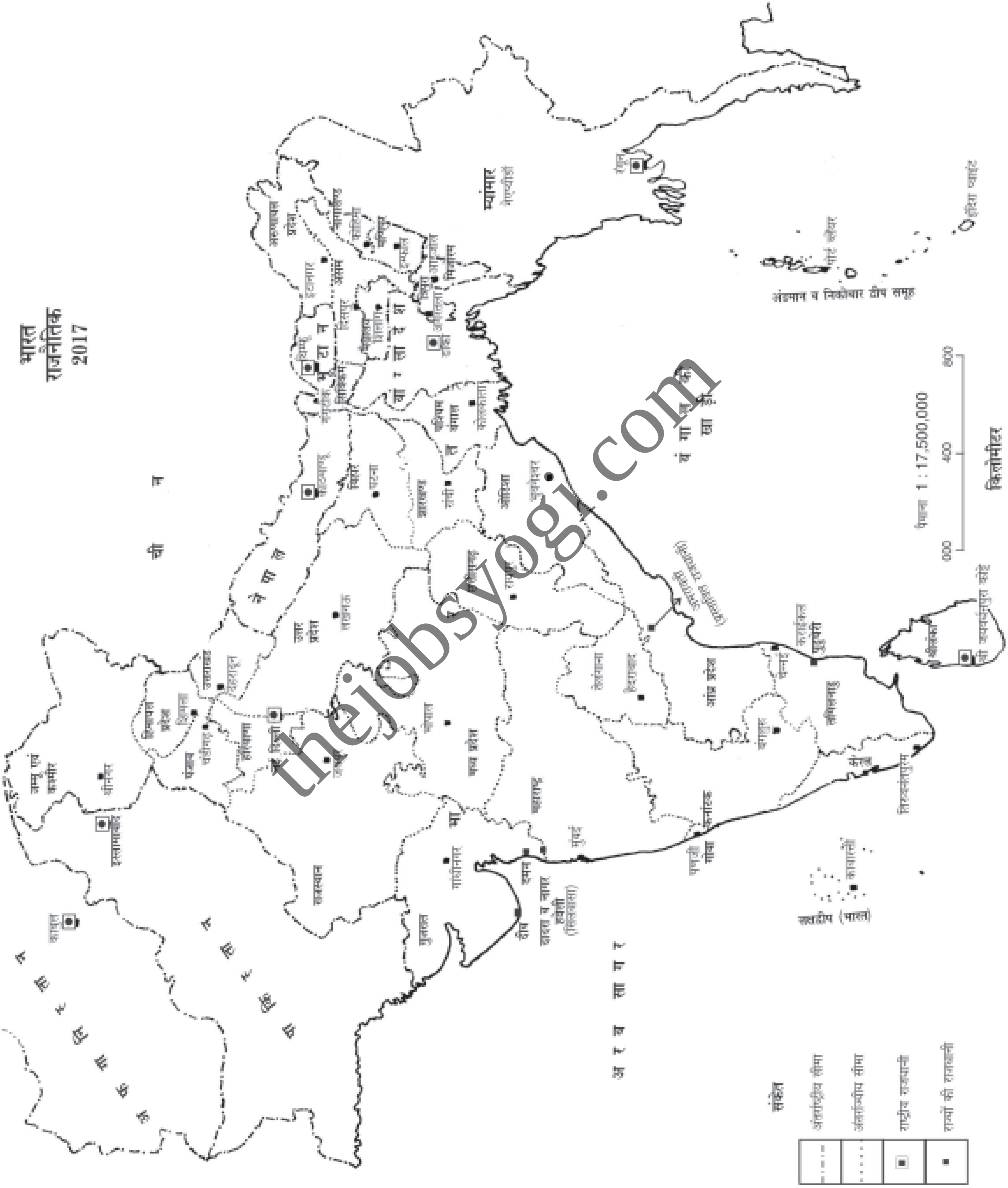

thejobsyogi.com

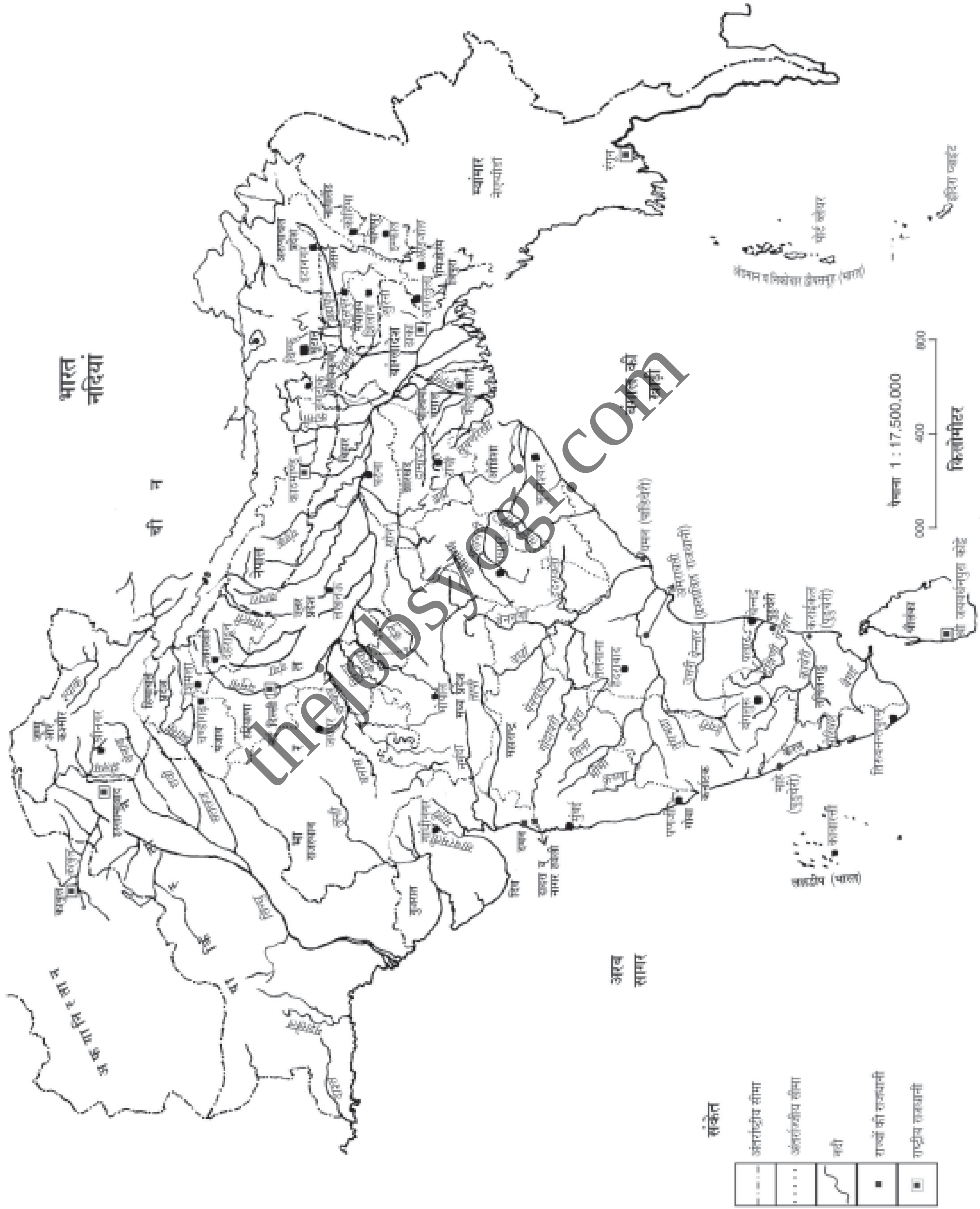

thejobsyogi.com

A

आदमगढ़
(लगभग 22.75° उत्तर, 77.72° पूर्व)

आदमगढ़ की पहाड़ियां मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले में स्थित हैं। यह स्थल प्रागैतिहासिक शैल आश्रय स्थलों व शैलचित्रों के लिए प्रसिद्ध है। यहां से पाषाणकालीन कलाकृतियां, पुरापाषाणकालीन व मध्यपाषाणकालीन सामग्री खुदाई में मिली हैं। आदमगढ़ उन स्थलों में से एक है जहां पशुपालन के प्राचीनतम साक्ष्य मिलते हैं।

अदिचनल्लुर
(8°37′ उत्तर, 77°52′ पूर्व)

अदिचनल्लुर (अथवा अधिचनल्लुर) ताम्रपणी नदी के दांये तट पर तमिलनाडु में तिरुनेलवेली शहर से लगभग 24 किलोमीटर दूर तूतीकोरिन जिले (पूर्व में तिरुनेलवेलि नाम से जाना जाने वाला) में स्थित है। (कोरकई, जो कि पूर्ववर्ती पांड्यों की राजधानी थी, अदिचनल्लुर से 15 कि.मी. की दूरी पर स्थित है।) अदिचनल्लुर ने सर्वप्रथम तब ध्यान आकर्षित किया जब जर्मनी के डॉ. जगोर ने 1876 में यहां उत्खनन किया। ब्रिटेन के एलेक्जेन्डर रिआ ने 1889 तथा 1905 के बीच इस लौहयुगीन अस्थि कलश कब्रगाह का उत्खनन किया। फ्रांस के लुई लैपीक ने भी 1904 में यहां खुदाई की। रिआ ने यहां उत्खनन में काफी अस्थि कलश निकाले तथा माइसेनिया के सदृश स्वर्ण मुकुट, ताम्र की वस्तुएं, जानवरों के रूपों का चित्रण कर रहे अति सुन्दर ढक्कन वाले कलश, बर्तन के टूटे हुए टुकड़े व लौह की वस्तुएं आदि भी खुदाई में निकालीं। भारतीय पुरातात्विक विभाग ने 2003-04 व 2004-05 में पुनः उत्खनन का कार्य आरम्भ किया। 600 वर्ग मी. के क्षेत्रफल में 160 अस्थि कलश पाए गए। अस्थि कलशों में अस्थियों के तिथि निर्धारण से पाया गया कि ये लगभग 3800 वर्ष पहले की हैं। काफी संख्या में अस्थि कलश एक दूसरे के ऊपर रखे थे जिसे 'द्वि-घट' प्रणाली कहा जाता है। त्रिस्तरीय कब्रगाह प्रणाली इंजीनियरिंग का एक चमत्कार है। भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण ने लौह युगीन लोगों के आवासीय स्थलों को चिन्हित किया। दुर्ग-प्राचीर तथा कुम्हार की भट्टी का पाया जाना इस बात की पुष्टि करता है कि इस स्थल पर बस्ती थी। तीन ताम्र चूड़ियों के अतिरिक्त, लोहे की वस्तुएं जैसे खंजर, टूटी हुई तलवार, एक अति सुन्दर भाला , तथा कुल्हाड़ी यहां मिली हैं। भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण (एएसआई) के अनुसार, ऐपलीक (रंगीन टुकड़े को सिल कर डिजाइन बनाना) कथा दृश्य के साथ बर्तन के टूटे हुए टुकड़े एक महत्वपूर्ण खोज है। यहां केले के वृक्ष के समीप खड़ी हुई लंबी व पतली स्त्री चित्रित है।

एक बगुला वृक्ष पर बैठा हुआ दर्शाया गया है जो मछली को अपनी चोंच में पकड़े हुए है। स्त्री के समीप एक हिरण तथा मगरमच्छ भी दर्शाया गया है। एक अस्थि कलश के आंतरिक भाग में अल्पविकसित तमिल ब्राह्मी लिपि उकेरी हुई है। लाल मृदभांड, काले तथा लाल मृदभांड, लाल स्लिप मृदभांड इत्यादि के टूटे हुए टुकड़े काफी मात्रा में प्राप्त हुए हैं।

आगरा (27.18° उत्तर, 78.02° पूर्व)

आगरा यमुना नदी के तट पर उ.प्र. में स्थित है। इस नगर ने 16वीं शताब्दी के पश्चात ऐतिहासिक महत्ता प्राप्त की। लोदी वंश के महान शासक सिकंदर लोदी ने इस स्थान के महत्व को समझते हुए पोया एवं भसीन के गांवों को एकीकृत करके 1504 में इस नगर की स्थापना की। उसने आगरा को अपनी राजधानी बनाया।

1526 में आगरा पर मुगलों ने आधिपत्य स्थापित कर लिया तथा इसे अपनी राजधानी घोषित किया। मुगल शासकों अकबर एवं शाहजहां ने यहां भव्य इमारतों का निर्माण किया। अकबर ने लाल पत्थरों से यहां एक भव्य किला निर्मित करवाया। विश्व के महानतम आश्चर्यों में से एक ताजमहल का निर्माण यहीं शाहजहां ने कराया। जहांगीरी महल एवं मोती मस्जिद यहां की अन्य महत्वपूर्ण इमारतें हैं। वर्तमान समय में ताजमहल को यूनेस्को की विश्व धरोहर सूची में सम्मिलित कर लिया गया है।

1761 में आगरा पर जाट शासक सूरजमल ने अधिकार कर लिया तथा बाद में यह मराठों के आधिपत्य में आ गया। ब्रिटिश शासन के दौरान आगरा नील उत्पादन का एक प्रमुख केंद्र बन गया।

आज आगरा एक प्रमुख पर्यटक स्थल है तथा चर्म उत्पादों एवं डीजल इंजन के निर्माण के लिए प्रसिद्ध है। सफेद संगमरमर से निर्मित तथा पीत्रादुरा शैली से सुसज्जित ताजमहल प्रतिवर्ष समस्त विश्व के हजारों पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करता है।

अहार (24.58° उत्तर, 73.68° पूर्व)

अहार राजस्थान के उदयपुर जिले के निकट बनास नदी के तट पर बनास घाटी में अवस्थित है। यहां अहार या बनास सभ्यता के प्राचीनकालीन प्रमाण एंव अवशेष पाए गए हैं। यह एक ताम्रपाषाणिक सभ्यता का स्थल था तथा 1600 ई.पू.–1200 ई.पू. के दौरान प्रसिद्ध रहा।

इस स्थल की महत्वपूर्ण विशेषता प्रस्तर औजारों की पूर्ण

theinbsyogi.com

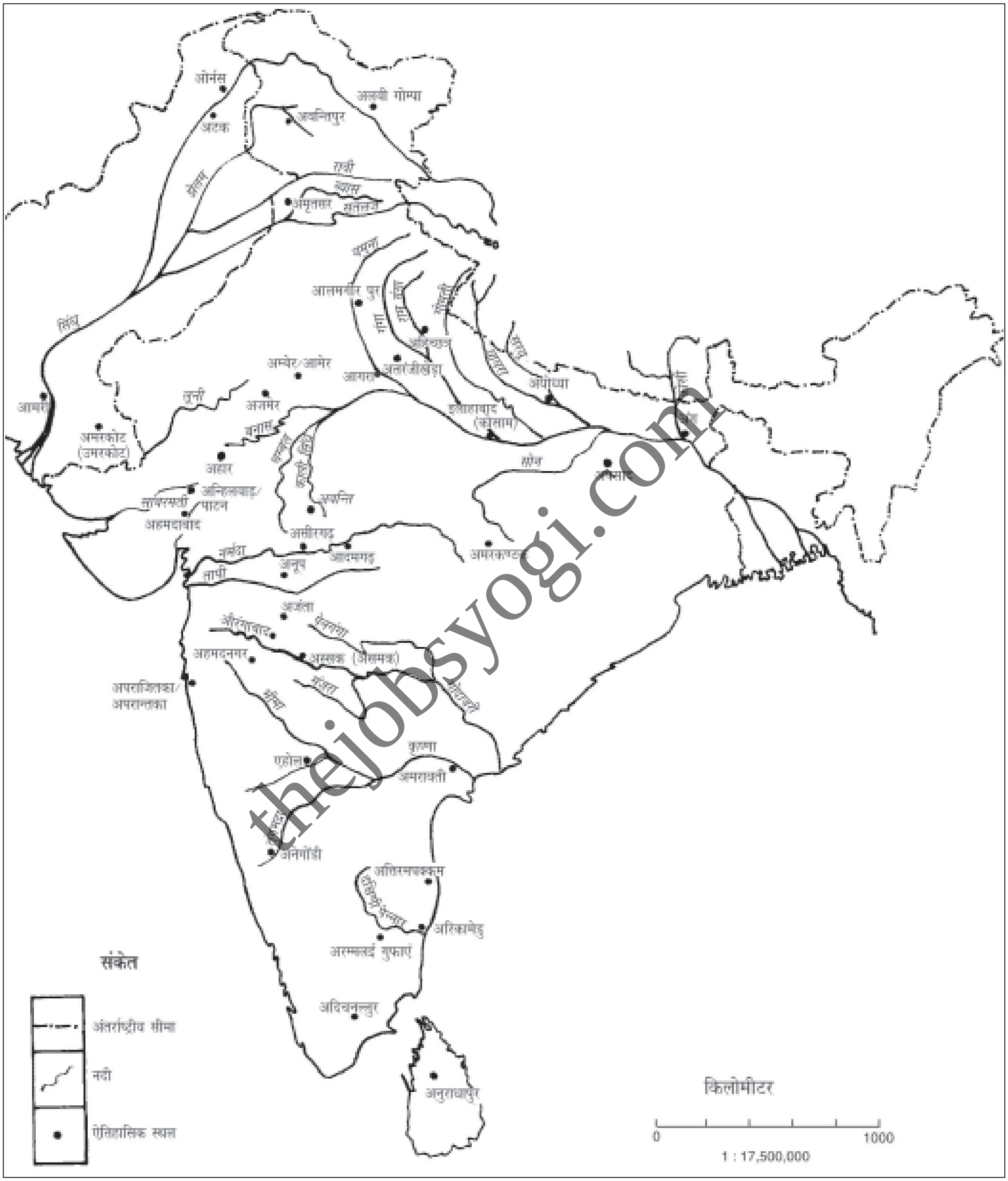
अटक
अवन्तिपुर
अलची गोम्पा
रावी
ब्यास
अमृतसर
सतलज
यमुना
आलमगीर पुर
सिंध
अम्बेर/आमेर
आगरा
अतरंजीखेड़ा
अयोध्या
इलाहाबाद
(कोसाम)
लूनी
अजमेर
अमरकोट
(उमरकोट)
बनास
अहार
अन्हिलवाड़/
पाटन
साबरमती
अहमदाबाद
सोन
अवन्ति
असीरगढ़
नर्मदा
अनूप
आदमगढ़
अमरकण्टक
ताप्ती
अजंता
औरंगाबाद
अहमदनगर
अस्सक (अश्मक)
अपराजितिका/
अपरान्तका
कृष्णा
एहोल
अमरावती
अनेगोंडी
अत्तिरम्पक्कम
अरिकामेडु
अरम्मलई गुफाएं
अविचनल्लूर
अनुराधापुर
संकेत
अंतर्राष्ट्रीय सीमा
नदी
ऐतिहासिक स्थल
किलोमीटर
0
1000
1 : 17,500,000

अनुपस्थिति है। यहां कुल्हाड़ी एवं ब्लेड भी पाए गए हैं। यद्यपि यहां से तांबे के अनेक महत्वपूर्ण औजार पाए गए हैं।

इस स्थल में घरों का निर्माण प्रस्तर एवं मिट्टी से किया गया था। यहां से मृदभाण्डों के दो चरण प्राप्त होते हैंः

(अ) काले एवं लाल मृदभांडः ये गुलाबी-सफेद रंगों से रंगे हैं तथा *(ब) चमकीले लाल मृदभाण्ड,* ये रंगपुर से प्राप्त उत्तर-हड़प्पाई मृदभाण्डों से साम्यता रखते हैं। यहां से अभी तक किसी हड़प्पाई स्थल के प्रमाण प्राप्त नहीं हुए हैं। इसीलिए बनास संस्कृति के इण्डो-ईरानी संस्कृति के साथ संबंधों के अर्थ में कुछ रोचकता उत्पन्न होती है।

बनास के लाल काले मृदभाण्ड, दोआब एवं अन्य क्षेत्रों के काले-लाल मृदभाण्डों से कई बातों में भिन्नता रखते हैं। ये भिन्नताएं निम्नवत हैंः

- दोआब क्षेत्र के काले-लाल मृदभाण्डों में किसी तरह की चित्रकारी नहीं पाई गई है, जबकि अहार संस्कृति के मृदभाण्डों की काली सतह पर सफेद चित्रकारी है।
- अहार के चित्रित काले-लाल मृदभाण्ड नतोदर किनारों युक्त हैं तथा इनकी सतह खुरदरी हैं, जबकि दोआब क्षेत्र से चिकने मृदभाण्ड पाए गए हैं।
- अहार एवं गिलुंड से स्टैंडयुक्त जो कटोरे, टोंटियां एवं प्याले पाए गए हैं, वैसे दोआब क्षेत्र से प्राप्त नहीं होते हैं।

कालांतर में अहार मेवाड़ की स्थापना करने वाले सिसोदिया शासकों की राजधानी बन गया।

अहिच्छत्र (28°22′ उत्तर, 79°8′ पूर्व)

अहिच्छत्र वर्तमान समय में उत्तर प्रदेश के बरेली जिले में रामनगर के समीप स्थित है। यह एक महाजनपदकालीन नगर है जो उत्तरी पांचाल नामक महाजनपद की राजधानी था। यह स्थल दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व से लेकर चौथी ईस्वी तक की विभिन्न विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करता है।

अहिच्छत्र प्राचीन काल में उत्तर भारत के व्यापारिक मार्ग का एक महत्वपूर्ण स्थल था, जो तक्षशिला एवं पाटलिपुत्र को आपस में जोड़ता था। यह एक महत्वपूर्ण जैन स्थल भी था तथा जैन तीर्थंकर पार्श्वनाथ ने यहां की यात्रा की थी। ऐसा अनुमान है कि मौर्य शासक अशोक ने यहां एक स्तूप भी निर्मित करवाया था। यहीं से पहली बार चित्रित धूसर मृदभाण्ड तथा उत्तरी काले चित्रित मृदभाण्ड प्राप्त किए गए थे।

तांबे एवं लोहे की विभिन्न निर्मित सामग्रियों के अतिरिक्त यहां से पांचालों, कुषाणों एवं अच्युतों (समुद्रगुप्त के शिलालेख में उल्लिखित) के तांबे के सिक्के भी प्राप्त किए गए हैं। यहां उत्खनन में 16वीं शताब्दी का भगवान शिव का एक मंदिर भी मिला है।

यहां से टेराकोटा की विभिन्न वस्तुएं मिली हैं तथा टेराकोटा (मिथुन आकृति एक अग्रणी वर्ग बनाती है।) के साथ ही शुंगकालीन वस्तुएं भी प्राप्त की गई हैं।

यहां से गुर्जर प्रतिहारों की आदिवाराह प्रकार की 200 मुद्राओं की प्राप्ति के साथ ही यह अनुमान लगाया जाता है कि प्रारंभिक मध्यकाल का यह एक महत्वपूर्ण स्थल रहा होगा।

अहमदाबाद (23.03° उत्तर, 72.58° पूर्व)

अहमदाबाद (वर्तमान गुजरात में) की स्थापना जफर खान के पौत्र अहमद शाह प्रथम (1411-42) ने की थी। जफर खान ने ही 1398 में तैमूर के आक्रमण के उपरांत गुजरात में क्षेत्रीय स्वतंत्र राज्य की स्थापना की थी।

अहमदाबाद की इमारतें इण्डो-इस्लामी प्रभावों से युक्त हैं तथा इनमें गुजराती-हिन्दू परम्पराओं का प्रशंसनीय सम्मिश्रण परिलक्षित होता है। जामी मस्जिद अहमदाबाद की एक महत्वपूर्ण इमारत (स्थापत्य) है, जिसका निर्माण अहमदशाह ने स्वंय कराया था। इस इमारत में मध्यकालीन स्थापत्य के सुंदर नमूने दिखाई देते हैं। 'तीन दरवाजा' भी एक महत्वपूर्ण स्मारक है, जो अहमदशाह के मकबरे के प्रवेश के ठीक पूर्व में निर्मित है। रानी सिपरिस की मस्जिद 1514 में बनी। यह एक छोटी किंतु खूबसूरत इमारत है।

1572 में अहमदाबाद पर अकबर ने आक्रमण कर आधिपत्य स्थापित कर लिया तथा मुगल साम्राज्य में सम्मिलित कर इसे 15वां सूबा बना दिया।

जहांगीर इस शहर को पसंद नहीं करता था तथा इसे 'गर्दाबाद' (धूल का शहर) कहकर पुकारता था। कालांतर में अहमदाबाद मराठों के आधिपत्य में आ गया। ब्रिटिश काल एवं स्वतंत्रयोत्तर काल में यह नगर सूती वस्त्र उत्पादन के प्रमुख केंद्र के रूप में उभरा।

अहमदनगर (19.05° उत्तर, 74.48° पूर्व)

अहमदनगर वर्तमान महाराष्ट्र में स्थित है, जिसकी स्थापना मलिक अहमद ने की थी। मलिक अहमद बहमनी शासकों के अधीन चुनार का राज्यपाल था। 1490 में यह स्वतंत्र राज्य बन गया तथा यहां निजामशाही वंश की स्थापना हुई। 1530 में निजामशाही वंश के शासकों ने इसे अपनी राजधानी बनाया तथा यह दक्षिण भारत के प्रमुख शक्तिशाली राज्य के रूप में उभरा।

दक्कन में प्रभाव एवं नियंत्रण की स्थापना के परिप्रेक्ष्य में अकबर ने इसके महत्व को समझा तथा इस पर आक्रमण कर इसे मुगल साम्राज्य में मिलाने का प्रयत्न किया किंतु यहां की शासक चांदबीबी के प्रशंसनीय प्रतिरोध के कारण से अकबर के प्रारंभिक प्रयास निष्फल हो गए। बाद में 1600 में पुनः मुगलों ने यहां आक्रमण किया तथा इसे अधिग्रहित करने में सफलता पाई।

यह एक प्रसिद्ध व्यापारिक केंद्र था तथा यहां से कई गुहा मंदिर भी प्राप्त किए गए हैं। अंतिम मुगल शासक औरंगजेब की 1707 में अहमदनगर में ही मृत्यु हुई थी।

एहोल (16°1′ उत्तर, 75°52′ पूर्व)

एहोल कर्नाटक राज्य के बीजापुर जिले में कृष्णा नदी के तट पर स्थित है। यह पश्चिमी चालुक्यों के अधीन कला व स्थापत्य के

thejobsyogi.com

केंद्र के रूप में विकसित हुआ। वातापी के राजधानी बनने से पहले एहोल ही पश्चिमी चालुक्यों की राजधानी थी। चालुक्य काल के ऐहोल मंदिर भारत के प्राचीनतम डिजाइन वाले मंदिरों का प्रतिनिधित्व करते हैं। यद्यपि वर्तमान में ये खंडहर बन गए हैं, फिर भी ये स्थापत्य की सुविकसित दक्कन शैली का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। इनमें से एक है लाड खान का मंदिर जो कि पंचायतन शैली में बना है। इस मंदिर का नाम एक मुस्लिम भक्त के नाम पर रखा गया है जो यहां रहता था और जिसे एक साथ फकीर व शहजादा दोनों उपनामों से जाना जाता था। इसमें मंदिर के आंतरिक भाग की ओर मुख किए हुए नंदी की पत्थर की मूर्ति है। एक पत्थर की बनी सीढ़ी है जो मंदिर की छत की ओर जाती है जिसमें शिव, सूर्य तथा विष्णु की क्षतिग्रस्त प्रतिमाएं हैं।

मेगुति मंदिर को प्रायः एहोल का प्राचीनतम मंदिर तथा भारत के प्राचीनतम मंदिरों में से एक माना जाता है। चालुक्य नरेश पुलकेशिन द्वितीय के दरबारी कवि रविकीर्ति का अभिलेख इस मंदिर की तिथि को 634 ई. इंगित करता है। रविकीर्ति के इस अभिलेख में पड़ोसी राजाओं के विरुद्ध पुलकेशिन द्वितीय के पराक्रमों का विस्तृत वर्णन है।

दुर्गा मंदिर (इसका नामकरण देवी दुर्गा के आधार पर नहीं बल्कि समीप स्थित एक किले के आधार पर हुआ है) में बौद्ध धर्म के चैत्य महाकक्ष प्रतिरूप का अनुसरण हुआ है। यह एक मेहराबदार संरचना है जिसके भीतरी भाग में स्तंभ पंक्तिबद्ध हैं।

एक और मंदिर है हच्छिमल्लीगुडी मंदिर, जिसमें पहली बार मंडप तथा गर्भगृह के बीच में अन्तराल (दहलीज) का प्रयोग हुआ है।

रावणपदी (अथवा रावलफदी) गुफा जो कि हच्छिमल्लीगुडी मंदिर के दक्षिण-पूर्व में स्थित है, एहोल के प्राचीनतम मंदिरों, जो शैल काटकर बनाए गए हैं, में से एक है। यह पत्थर से निर्मित गुफा मंदिर है जो शिव को समर्पित हैं। 550 ई. के लगभग निर्मित इस मंदिर में बादामी गुफा मंदिरों से भी बड़ा एक पवित्र द्रव्यागार है। प्रवेश द्वार के सामने एक ही पत्थर से बना स्तंभ है जिसका आधार वर्गाकार है। मंडप की छत पर एक विशाल तथा बारीकी से तराशा हुआ कमल का फूल बनाया गया है। एक पार्श्व भित्ति पर अर्द्ध-नारीश्वर की आकृति बनी हुई है। अर्द्ध-नारीश्वर को शिव का मूर्तरूप माना गया है। जिसमें उनका आधा शरीर पुरुष तथा आधा नारी (शिव की अर्धांगिनी पार्वती) का है। रावणपदी मंदिर परिसर में प्राप्त अन्य वस्तुओं में शिव की नटराज रूप में मूर्ति, जिसमें पार्वती तथा भागीरथ भी साथ हैं, विष्णु का वाराह अवतार, तथा अन्य देवता हैं।

अजंता (20°33′ उत्तर, 75°42′ पूर्व)

अजन्ता की गुफाएं (यूनेस्को की विश्व धरोहर स्थलों में सूचीबद्ध) औरंगाबाद जिले में महाराष्ट्र के पठार के उत्तरी सीमांत पर स्थित हैं। ये गुफाएं महिष्मति तथा उज्जैन के रास्ते पश्चिमी भारत व उत्तरी भारत को जोड़ने वाले महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्गों पर स्थित हैं। 550 मी. से भी अधिक क्षेत्र में विस्तृत ये गुफाएं घोड़े की नाल के आकार में बनी हैं।

ये गुफाएं स्थापत्य कला, मूर्तिकला तथा चित्रकला का एक बहुत उत्तम मिश्रण हैं, और बौद्ध भिक्षुओं के भिक्षुजीवन को दर्शाते हुए तराशी गई हैं। इन गुफाओं का उत्खनन लगभग दूसरी शताब्दी ई.पू. से सातवीं शताब्दी ई. तक हुआ। यहां कुल मिलाकर 30 गुफाएं हैं (कुछ अपूर्ण गुफाओं को सम्मिलित करके) जिनमें से 9, 10, 19, 26 तथा 29 संख्या वाली गुफाएं चैत्य गृह हैं तथा बाकी विहार हैं।

अजन्ता शैलों को काटने के कार्य के दो चरणों की ओर संकेत करती है। अपने प्रारंभिक चरण अथवा बौद्ध-पूर्व प्रतिमा चरण, जिसे दूसरी शताब्दी ई.पू. से चौथी शताब्दी ई. तक के काल से सम्बद्ध किया जा सकता है, में काष्ठ कला परम्परा पर जोर था। इसके साक्ष्य पत्थर की छत पर लकड़ी की धारियों और घोड़े की नाल की आकृतियों में मिलते हैं। बाद की अवस्था में बौद्ध मूर्तियों की प्रबलता है। भव्य स्थापत्य कला एवं मूर्तिकला के अतिरिक्त, गुप्तकाल से संबंधित अति सुन्दर चित्र भी सामने आए हैं।

अजन्ता चित्रों की विषयवस्तु अत्यधिक धार्मिक एवं अधिकांशतः बुद्ध, बोधिसत्व, बुद्ध के जीवन वृतांतों तथा जातक कथाओं के इर्द-गिर्द घूमती है। इन चित्रों में तत्कालीन महल, दरबार, शहर, ग्राम तथा आश्रमों का जीवन भी प्रतिबिंबित होता है तथा ये प्रारम्भिक भारतीय भित्ति चित्रों की परम्परा की झलक देते हैं।

अजमेर (26°45′ उत्तर, 74°94′ पूर्व)

अजमेर को सांभर तथा अजयमेरू के नाम से भी जाना जाता है। यह राजस्थान में जयपुर के दक्षिण में स्थित है। यह चौहान शासकों की राजधानी था।

परम्परानुसार, इसकी स्थापना प्रसिद्ध चौहान शासक राजा अजय देव द्वारा की गई थी। चौहानवंशीय शासक पृथ्वीराज तृतीय ने 1191 ई. में मुहम्मद गोरी के आक्रमण का सफलतापूर्वक प्रतिरोध किया था। तराईन के द्वितीय युद्ध में पृथ्वीराज की पराजय के उपरांत मो. गोरी ने अजमेर को तहस-नहस कर दिया। कुछ वर्षों पश्चात गुलामवंशीय शासक कुतुबुद्दीन ऐबक ने अजमेर पर अधिकार कर लिया।

मुगलों से पूर्व मेवाड़, मालवा एवं जोधपुर तीनों घरानों के शासकों ने अजमेर पर शासन किया। 1556 में अकबर ने अजमेर पर अधिकार कर लिया तथा यहां ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह का निर्माण कराया। यह दरगाह हिन्दू तथा मुसलमान दोनों धर्मों के लोगों द्वारा समान श्रद्धा से देखी जाती है तथा प्रतिवर्ष हजारों श्रद्धालु दरगाह के दर्शन के लिए आते हैं।

यहां की एक अन्य प्रसिद्ध इमारत 'अढ़ाई दिन का झोपड़ा' नामक मस्जिद है, जिसका निर्माण कुतुबुद्दीन ऐबक ने 1210 में करवाया था।

1720 में मारवाड़ के अजीत सिंह ने यहां के मुगल गवर्नर को परास्त कर इस नगर पर अधिकार कर लिया था। बाद में यह मराठों के प्रभाव क्षेत्र में आ गया तथा 1818 में मराठों ने इसे

thejobsyogi.com

अंग्रेजों को सौंप दिया। अजमेर ब्रिटिश साम्राज्य के अंतर्गत एक शाही राज्य बन गया।

अजमेर में सांस्कृतिक महत्व के अन्य महलों में अजयपाल चौहान द्वारा निर्मित तारागढ़ किला है जिसे तारा किला के नाम से भी जाना जाता है।

19वीं शताब्दी में निर्मित नासियां का जैन मंदिर या लाल मंदिर जैन धर्म के अनुयायियों का एक प्रमुख उपासना स्थल है।

आलमगीरपुर (29° उत्तर, 77°28' पूर्व)

आलमगीरपुर, उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले में स्थित है। यह नगर हड़प्पा सभ्यता की पूर्वी सीमा था। यहां से उत्तरकालीन हड़प्पा सभ्यता के अवशेष पाए गए हैं तथा यह हड़प्पा सभ्यता का एकमात्र स्थल है, जो यमुना के तट पर स्थित है। यहां के उत्खनन से मृतिपण्ड, मृद्भाण्ड, एवं मनके प्राप्त हुए हैं किंतु यहां से कोई मुहर नहीं मिली है। एक गर्त से कटोरे के बहुत से टुकड़े तथा रोटी बेलने की चौकी भी मिली है। कुछ के ऊपर सैंधव लिपि के दो अक्षर अंकित हैं। कुछ बर्तनों पर त्रिभुज, मोर, गिलहरी इत्यादि की चित्रकारियां भी प्राप्त हुईं हैं। यहां पर पाई गई प्राचीन वस्तुओं में टैराकोटा के छिद्रित जार, तिपाई पर बर्तन, बेलनाकार फूलदान, मोती, चूड़ियां तथा एक कूबड़ वाला बैल सम्मिलित है। ठीकरों के साथ एक ईंटों की श्रृंखला की दीवार वाला गहरा गड्ढा भी खोजा गया है जो कि भट्टी जैसा दिखता है। एक अन्य उल्लेखनीय खोज है ठीकरों के सादे बनावट में कपड़े की छाप।

आलमगीरपुर से सैंधव अवशेषों की प्राप्ति यह सिद्ध करती है कि यह सभ्यता गंगा-यमुना दोआब में भी फैली हुई थी। हड़प्पा काल के पश्चात् चित्रित धूसर मृदभांड अवस्था में कांस्य तथा लौह की वस्तुएं जैसे तीर तथा भाले प्राप्त हुए हैं। चिकनी मिट्टी के शल्कन तथा पंचमार्क सिक्के भी प्राप्त हुए हैं जो तीसरी अथवा दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व के प्रतीत होते हैं।

अलची गोम्पा (34°13' उत्तर, 77°10' पूर्व)

अलची मठ लद्दाख क्षेत्र का सबसे पुराना व प्रसिद्ध बौद्ध मठ माना जाता है। यह सिंधु नदी के दक्षिणी तट पर लेह जिले के अलची गांव में स्थित है तथा इसका प्रबंधन लिकरी बौद्धमठ द्वारा किया जाता है। अलची मठ का ढांचा 1000 ई. का है तथा इसका निर्माण एक अनुवादक रिनचेन जेंगपो द्वारा किया गया। जेंगपो को 'लोहत्सव' अथवा महान अनुवादक' के नाम से भी जाना जाता था। किवदंती के अनुसार, गोम्पा के निर्माण हेतु कश्मीर के 32 शिल्पियों को अभिनियोजित किया गया। हालांकि स्मारकों के अभिलेखों को 11वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के तिब्बती अभिजात 'काल-दान-शेस-रब' से संबंधित माना गया है।

इस बौद्धमठ में तीन प्रमुख पूजा स्थल—दुखांग (सभा कक्ष), समत्सेग, तथा मंजुश्री का मंदिर—हैं, जो 12वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध से 13वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध बीच के हैं। इन भवन समूहों के भित्ति चित्र, जिनमें से कुछ लद्दाख के प्राचीनतम संरक्षित चित्र हैं, में तत्कालीन कश्मीर के हिन्दू राजाओं एवं बौद्ध धर्म का कलात्मक व आध्यात्मिक विवरण प्रतिबिंबित होता है। मठ परिसर में बुद्ध की कुछ वृहद प्रतिमाएं भी विद्यमान हैं। कुछ स्तूप भी पाए गए हैं। 13वीं शताब्दी के ये प्राचीनतम स्तूप अलंकृत तोरण हैं, तथा इन्हें अलची की अद्वितीय विशेषता माना जाता है।

इलाहाबाद/कोसाम (25.45° उत्तर, 81.85' पूर्व)

इलाहाबाद को पहले प्रयाग के नाम से जाना जाता था। यह नगर गंगा, यमुना एवं सरस्वती (जिसे भूमिगत माना गया था) के त्रिवेणी संगम पर स्थित है।

यह नगर हिन्दुओं का एक प्रसिद्ध एवं धार्मिक स्थल है, जहां कुंभ, महाकुंभ एवं माघ मेले आयोजित होते हैं। यहां के पवित्र संगम में स्नान करने प्रतिवर्ष हजारों श्रद्धालु देश के कोने-कोने से आते हैं। ऐसी मान्यता है कि देवताओं ने अमृत के एक कलश को यहां छुपा दिया था, जिससे राक्षस इसे प्राप्त नहीं कर सकें किंतु कहते हैं कि इस कलश से अमृत की कुछ बूंदें यहां गिर गई थीं।

इस नगर के दक्षिण-पश्चिम में कोसाम नामक स्थान से अशोक का एक प्रस्तर स्तंभ लेख पाया गया है, कोसाम को ही कौशाम्बी के नाम से जाना जाता है। कौशाम्बी बुद्ध के समय महत्वपूर्ण धार्मिक स्थल रही तथा सोलह महाजनपदों में से एक थी। इस नगर में बुद्ध ने कई बार धर्मोपदेश दिये थे। महाजनपद काल में भी यह प्रसिद्ध नगर था। बौद्ध धर्म का केंद्र होने के साथ-साथ कौशाम्बी एक प्रसिद्ध व्यापारिक नगर भी था। जहां अनेक धनी व्यापारी निवास करते थे। यहां से प्राप्त अशोक के शिलालेख से समुद्र गुप्त एवं जहांगीर भी संबंधित हैं। गुप्त शासक समुद्रगुप्त ने इसी शिलालेख पर अपनी विजयों एवं उपलब्धियों को अंकित करवाया। इसे 'प्रयाग प्रशस्ति' के नाम से जाना जाता है। इसकी रचना समुद्रगुप्त के सांधिविग्रहिक सचिव हरिषेण ने की थी। जहांगीर के संबंध में ऐसा अनुमान है कि उसने ही इसे इसके मूल स्थान से हटाकर इलाहाबाद के किले में रखवाया था। यह बात एक अभिलेख में उल्लिखित है।

अकबर ने इलाहाबाद में एक भव्य एवं सुंदर किले का निर्माण करवाया। इसे 'इलाहाबाद का किला' के नाम से जाना जाता है। अकबर ने ही इसका नाम प्रयाग से बदलकर इलाहाबाद रखा था। 1722 में सआदत खां बुरहानुल मुल्क द्वारा अवध में स्वतंत्र राज्य की स्थापना के समय यह अवध का भाग बन गया। अंग्रेजी शासनकाल में 12 अगस्त, 1765 को इलाहाबाद की संधि से ही मुगल शासक शाहआलम ने अंग्रेजों को बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा की दीवानी दी थी।

लार्ड डलहौजी द्वारा 1856 में जब अवध का अधिग्रहण किया गया, तो इलाहाबाद ब्रिटिश साम्राज्य का हिस्सा बन गया। इलाहाबाद में ही प्रसिद्ध अल्फ्रेड पार्क है, जहां भारत के महान क्रांतिकारी

thejobsyogi.com

चंद्रशेखर आजाद ने अंग्रेजों के समक्ष आत्मसमर्पण करने की अपेक्षा स्वयं को गोली मार ली थी।

ब्रिटिश शासन काल में यह नगर शिक्षा के महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में उभरा। 15 अगस्त, 1947 को जब भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई, उसके पश्चात इलाहाबाद एक प्रसिद्ध व्यापारिक एवं सांस्कृतिक केंद्र के रूप में उभरा।

अमरावती (16.5° उत्तर, 80.51° पूर्व)

अमरावती, आंध्र प्रदेश के गुंटूर जिले, कृष्णा नदी के दक्षिणी तट पर, स्थित है, जो आंध्र प्रदेश राज्य के आधुनिक विजयवाड़ा के समीप है।

अमरावती बौद्ध धर्म की महायान शाखा का एक महान केंद्र था। यह नगर बौद्ध स्तूपों एवं संगमरमर के समान लाइमस्टोन स्थापत्य के लिए प्रसिद्ध है। ये स्तूप एवं स्थापत्य कृष्णा घाटी के बौद्ध अवशेषों से संबंधित हैं तथा इनकी प्राचीनता 200 ई.पू. से 300 ईस्वी तक मानी जाती है।

अमरावती में भगवान शिव का एक प्रसिद्ध मंदिर भी है, जिसे 'अमरेश्वर' के नाम से जाना जाता है। इनका प्राचीन नाम धान्यकटक था, जिसका अर्थ है—अन्न का शहर। इस प्रकार हिन्दुओं के लिए इसका विशेष महत्व है। गाथाओं के अनुसार, असुरों से पराजित होने के उपरांत देवता यहां निवास करने आए थे तथा इसके पश्चात् धान्यकटक को अमरावती नाम से पुकारा जाने लगा। इसका अर्थ है—अमर या अमर देवता।

अमरावती कला की अमरावती शैली के लिए भी प्रसिद्ध है। इसकी मुख्य विशेषताएं हैंः

- सफेद संगमरमर जैसे लाइमस्टोन या पत्थर का प्रयोग।
- प्रकृति का अंकन, जिसका मुख्य विषय मानव है।
- स्थापत्य कला में राजा, रानी एवं युवराजों को विशेष महत्व।

वास्तव में सातवाहन एवं इक्ष्वाकु शासकों के संरक्षण में अमरावती कला की अत्यधिक उन्नति हुई तथा यह अपने विकास के शीर्ष पर पहुंच गई।

वर्ष 2014 में आंध्र प्रदेश के विभाजन के पश्चात् हैदराबाद को नवनिर्मित राज्य तेलंगाना की राजधानी बनाया गया। अमरावती को आंध्र प्रदेश की नई राजधानी के रूप में प्रस्तावित किया गया जिसकी आधारशिला अक्टूबर 2015 में उद्नदरायुनिपलम गांव में रखी गई। प्रस्तावित राजधानी को सिंगापुर की मदद से एक स्मार्ट व ग्रीन सिटी में विकसित किया जा रहा है।

अमरकंटक (22.67° उत्तर, 81.75° पूर्व)

तीन पर्वतश्रेणियों—विंध्या, सतपुड़ा तथा मैकाल से घिरा अमरकंटक मध्य प्रदेश में स्थित एक काफी व्यस्त तीर्थस्थल है। यह 'तीर्थराज' या 'तीर्थस्थलों के राजा' के नाम से लोकप्रिय है। यह स्थान भारत की दो प्रमुख नदियों—नर्मदा व सोन, का उद्‌गम स्थल भी है। डॉ. बेगलर जिन्होंने 1873-74 में इस शहर की यात्रा की थी, ने अमरकंटक को कालिदास के मेघदूत में उल्लिखित अमरकूट के रूप में पहचाना है। पुराणों में भी इसका उल्लेख एक पर्वत के रूप में हुआ है जहां त्रिपुरा, पौराणिक रूप से महलों का शहर, के कुछ हिस्से गिरे जब भगवान शिव ने इसे जला दिया। पद्‌म पुराण के आदिखंड में कहा गया है कि जो भी अमरकंटक पर्वत की यात्रा करता है वह सैंतीस हजार करोड़ वर्षों तक चौदह विश्वों का आनंद लेगा। उसके पश्चात् वह पृथ्वी पर एक राजा के रूप में जन्म लेगा एवं सम्राट की भांति शासन करेगा। अमरकंटक की एक बार की यात्रा का एक अश्वमेघ से दस गुना अधिक महत्व है।

एक अन्य धारणा यह भी है कि अमरकंटक का अर्थ है वह जिसकी ईश्वर की वाणी हो। यह भी कहा गया है कि इस शहर को दसवीं से ग्यारहवीं शताब्दी ईस्वी के बीच चेदी नरेश ने कलचुरी नरेश को दहेज में दिया। कामदेव (1042-72 ई.) ने सूरजकुंड में मंदिरों का निर्माण कराया। 1808 ई. में अमरकंटक नागपुर के शासक के अधीन था परन्तु उसके बाद यहां अंग्रेजों का अधिपत्य हो गया।

अमरकोट (33.37° उत्तर, 73.17° पूर्व)

अमरकोट वर्तमान पाकिस्तान के सिंध प्रांत में स्थित है। यह मध्यकाल में प्रसिद्ध राजपूत राज्य था। जब हुमायूं, शेरशाह से पराजित होकर भागता फिर रहा था, उस समय अमरकोट के तत्कालीन शासक राणा वीरसाल ने ही उसे प्रश्रय दिया था। 1542 में यहीं अकबर का जन्म हुआ।

अमरकोट का किला मध्यकालीन स्थापत्य का एक सुंदर नमूना है। 1843 में चार्ल्स नेपियर के नेतृत्व में अंग्रेजी सेना ने यहां आक्रमण किया तथा इस पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया।

1947 में विभाजन के समय अमरकोट पाकिस्तान के हिस्से में चला गया।

आम्बेर/आमेर (26.98° उत्तर, 75.85° पूर्व)

आम्बेर (आमेर भी) राजस्थान में जयपुर के समीप स्थित है। इसका यह नाम संभवतः भगवान शिव के एक उपनाम अंबिकेश्वर से लिया गया जान पड़ता है। यह भी कहा जाता है कि इसका यह नाम अयोध्या के प्रसिद्ध शासक अम्बरीश के नाम पर पड़ा।

12वीं शताब्दी के मध्य कछवाहा शासकों ने इसे सुसावत मीणाओं से हस्तगत कर लिया। इसके पश्चात यह लगभग छः शताब्दियों तक उनकी राजधानी बना रहा। इसके उपरांत सवाई जयसिंह द्वितीय ने राजधानी आमेर से बदलकर जयपुर कर दी।

आमेर के शासक भारमल ने मुगलों की मित्रता के प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए 1562 में अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली तथा अपनी पुत्री का विवाह अकबर से कर दिया। आमेर के आगे के शासकों यथा—भगवान दास एवं मान सिंह को अकबर ने शाही सेवा में ले लिया तथा ऊंचे मनसबदारी ओहदे प्रदान किए।

आमेर में मध्यकालीन राजपूत स्थापत्य कला के कई सुंदर नमूने हैं। यहां मानसिंह एवं जयसिंह ने कई भव्य एवं सुंदर किलों का निर्माण कराया। यहां आमेर के किले में एक विशाल तोप रखी गई

thejobsyogi.com

है, जिसे आज भी यहां देखा जा सकता है। इन किलों के अतिरिक्त आमेर में कई अन्य सुंदर इमारतें भी हैं। जो बरबस ही पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित कर लेती हैं।

आमेर के किले में भव्य प्रवेश द्वार, प्रांगण तथा मंडप, एवं जड़ित दर्पणों के चमकदार कक्ष हैं। आमेर और जयपुर शहर संयुक्त रूप से हमें राजस्थान के सांस्कृतिक इतिहास के बारे में गहरी अंतदृष्टि प्रदान करते हैं।

आमरी (25°54′ उत्तर, 67°55′ पूर्व)

आमरी पाकिस्तान के सिंध प्रांत में स्थित है। यहां से विकसित हड़प्पा सभ्यता के अतिरिक्त हड़प्पा-पूर्व एवं उत्तर-हड़प्पा दो प्रकार की सभ्यताओं के अवशेष भी पाए गए हैं।

हड़प्पाई स्थलों के उत्खनन के क्रम में आमरी की खोज एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। 1929 में जब पुरातत्ववेत्ता मजुमदार के नेतृत्व में इस स्थल की खोज की गई तो यहां हड़प्पा चरण के ठीक नीचे हड़प्पा-पूर्व अवस्था के प्रमाण पाए गए हैं। बाद में जे. एम. कैसल ने यहां पूर्व-हड़प्पा सभ्यता के अवशेषों की बिल्कुल स्पष्ट एवं पुष्ट तस्वीर प्रस्तुत की। आमरी एक विशिष्ट बस्ती के रूप में विकसित हुआ तथा विकासमूलक चरणों की श्रृंखला ने इसे उस प्रकार का बनाया जिसे हड़प्पा सभ्यता के नाम से जाना जाता है।

आमरी के उत्खनन से इस बात के प्रमाण मिले हैं कि यहां के निवासी मिट्टी एवं पत्थरों के बने घरों में निवास करते थे। यहां धान्य कोठरों की उपस्थिति के प्रमाण भी पाए गए हैं। इनके मृदभाण्ड चित्रित होते थे तथा वे पहिएयुक्त भाण्डों का भी प्रयोग करते थे।

भारतीय दरियाई घोड़े का एकमात्र प्रमाण यहीं से पाया गया है, जो एक मुद्रा पर उत्कीर्ण है। आमरी से झूकर एवं झांगर संस्कृति के प्रमाण भी मिले हैं।

अमृतसर (31.64° उत्तर, 74.86° पूर्व)

भारत के पंजाब राज्य में स्थित अमृतसर, सिखों का सबसे पवित्र स्थल एवं पंजाब के बड़े नगरों में से एक है। अमृतसर का अर्थ है–'अमृत का सरोवर' (pool of nectar) अमृतसर का यह नाम, प्रसिद्ध स्वर्ण मंदिर में अमृत सरोवर की स्थापना के बाद पड़ा। इसी सरोवर के बगल की भूमि पर स्वर्ण मंदिर का निर्माण किया गया है। इसे श्री हरमंदिर साहिब या श्री दरबार साहिब कहा गया। इसके तांबे से बने गुम्बद को स्वर्णपत्रों से मढ़ने के पश्चात ही मंदिर को 'स्वर्ण मंदिर' के नाम से जाना जाने लगा है।

जिस स्थान पर स्वर्ण मंदिर निर्मित है, वह भूमि मुगल शासक अकबर ने सिखों के गुरु रामदास को दान में दी थी। इसके उपरांत रामदास ने 1577 में मंदिर की नींव रखी। 1604 में सिखों के पवित्र ग्रंथ 'आदिग्रंथ साहिब' को यहां रख दिया गया।

प्राचीन काल में अमृतसर फारस, यारकन्द एवं खोतान के व्यापारिक मार्ग का एक महत्वपूर्ण स्थल था तथा प्रसिद्ध रेशम मार्ग से जुड़ा होने के कारण ही यह एक प्रसिद्ध व्यापारिक केंद्र के रूप में उभरा।

आगे के समय में भी यह नगर महत्वपूर्ण गतिविधियों का केंद्र बना रहा। राष्ट्रीय स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान 13 अप्रैल, 1919 को यहां जलियांवाला बाग हत्याकांड की घटना हुई।

वर्तमान समय में यह नगर न केवल धार्मिक गतिविधियों एवं पर्यटन का एक प्रमुख केंद्र है, बल्कि लकड़ी के फर्नीचर एवं दस्तकारी के सामान के लिए भी ख्यातिलब्ध स्थल है।

अनेगोंडी (15.35° उत्तर, 76.49° पूर्व)

अनेगोंडी का अर्थ है–हाथियों का गड्ढा। यह वह स्थान था, जहां विजयनगर साम्राज्य के हाथियों को रखा जाता था। यह तुंगभद्रा नदी के उत्तरी तट पर स्थित एक दुर्गीकृत स्थान है। यह स्थान कर्नाटक के विजयनगर (वर्तमान में हम्पी) के समीप ही स्थित है, इसका निर्माण हरिहर तथा बुक्का ने कराया था।

मध्यकाल में अनेगोंडी कांपिल्य साम्राज्य का भाग था, जो कि 14वीं सदी में उभरते हुए तुगलक साम्राज्य के समय एक स्वतंत्र राज्य के रूप में जाना जाता था। कांपिल के शासक कांपिलदेव ने दिल्ली सल्तनत की सेनाओं से मुकाबला करते समय अनेगोंडी में ही प्रश्रय लिया था तथा यहीं से अपना अंतिम युद्ध लड़ा था। 1329 में तुगलक सेनाओं ने अनेगोंडी पर अधिकार कर लिया।

कालांतर में विजयनगर के शासकों ने इसे अपने साम्राज्य का भाग बना लिया। अनेगोंडी में 1565 तक विजयनगर का अधिकार बना रहा, जब तक कि वह तालीकोटा के युद्ध में बहमनी साम्राज्य के शासकों द्वारा परास्त नहीं हो गया।

इसके बाद अनेगोंडी बीजापुर साम्राज्य का हिस्सा बन गया तथा बाद में यह मराठों के अधीन आ गया। कालान्तर में इस स्थान की ऐतिहासिक महत्ता समाप्त हो गई।

अंग (लगभग 25° उत्तर, 86° पूर्व)

वर्तमान के बिहार के मुंगेर तथा भागलपुर जिले को मिलाकर बने प्रदेश को अंग कहा जाता है। इसका विस्तार उत्तर में कोसी नदी तक था तथा इसमें पूर्निया जिले के कुछ भाग भी सम्मिलित थे। अंग का उल्लेख महाभारत में भी है। कर्ण को दुर्योधन ने यहां के एक शासक के रूप में नियुक्त किया था।

छठी से चौथी शताब्दी ई.पू. में जिन 16 महाजनपदों का अविर्भाव हुआ उनमें से एक 'अंग' जनपद मगध के पूर्व तथा राजमहल पहाड़ियों के पश्चिम में स्थित था। अंग की राजधानी चंपा थी जिसकी गणना छठी शताब्दी ई.पू. के छः महान नगरों में होती थी। यह अपने व्यापार तथा वाणिज्यिक गतिविधियों के लिए प्रसिद्ध था तथा व्यापारी यहां से गंगा नदी में नाव द्वारा आगे पूर्व की ओर जाते थे। अंग के कुछ शासकों जैसे बहमभट्ट ने अपने समकालीन मगध शासकों को पराजित किया था, हालांकि, बाद में, मगध नरेश बिंबिसार ने अंग को जीत लिया था।

भागलपुर के निकट चंपा की खुदाई में उत्तरी काले चमकदार मृदभांड काफी संख्या में प्राप्त हुए हैं। यहीं पर धर्मपाल, जिसने 770-810 ई. के दौरान शासन किया था, द्वारा विक्रमशिला विश्वविद्यालय की स्थापना की गई थी।

thejobsyogi.com

अन्हिलवाड़ा (22°51′ उत्तर, 72°07′ पूर्व)

अन्हिलवाड़ा को वर्तमान में पाटन कहा जाता है जो उत्तरी गुजरात में स्थित है। कहा जाता है कि इसकी स्थापना 765 ई. में वनराज ने की थी। तत्पश्चात् यह चालुक्यों अथवा सोलंकियों के अधीन हो गया तथा इसको राजधानी बना दिया गया। चालुक्यों अथवा सोलंकियों ने गुजरात तथा काठियावाड़ पर लगभग साढ़े तीन शताब्दियों (950-1300 ई.) तक शासन किया। भीम प्रथम के शासनकाल (1022-64) में, महमूद गजनी ने गुजरात को बुरी तरह कुचलकर भीम प्रथम को कच्छ में शरण लेने पर विवश किया। महमूद गजनी के वापस चले जाने पर, भीम प्रथम ने चालुक्य शक्ति को पुनर्जीवित किया तथा परमारों के विरुद्ध लक्ष्मी-कर्ण कलचुरी के साथ मिलकर एक संघ बनाया। भीम द्वितीय के शासनकाल (1178-1241 ई.) में, मोहम्मद गौरी ने 1178 में गुजरात को जीतने का असफल प्रयास किया तथा कुतुबुद्दीन ऐबक ने भी अन्हिलवाड़ा पर दो बार चढ़ाई की। हालांकि, अलाउद्दीन खिलजी की सेनाएं अवश्य कुछ समय के लिए अन्हिलवाड़ा पर कब्जा करने तथा लूटने में सफल रही। सुल्तान अहमदशाह, जिसने गुजरात पर 1411-1442 ई. के बीच शासन किया, ने अन्हिलवाड़ा की जगह अहमदाबाद को अपनी राजधानी बनाया। बाद में, अन्हिलवाड़ा मुगलों के अधीन हो गया। पानीपत की तीसरी लड़ाई के बाद कुछ समय के लिए गायकवाड़ों ने अन्हिलवाड़ा को अपनी राजधानी बनाया था।

यहां के महेश्वर मंदिर एवं काली मंदिर 12वीं शताब्दी के सोलंकी स्थापत्य कला के सुंदर नमूने हैं। किंतु 11वीं शताब्दी में निर्मित कला रानी की वाव यहां की एक अत्यंत सुंदर स्थापत्य कृति है। इस कृति में सोलंकी स्थापत्य एवं प्रस्तर कारीगरी का सुंदर सम्मिश्रण परिलक्षित होता है। मध्यकालीन समय में अन्हिलवाड़ा शिक्षा एवं वाणिज्य का भी एक महत्वपूर्ण केन्द्र था। वर्तमान समय में यह एक छोटे नगर के रूप में विकसित किया गया है तथा पर्यटकों के आकर्षण का एक प्रमुख केंद्र है।

अनूप (22.11° उत्तर, 75.35° पूर्व)

अनूप एक प्राचीन नगर था, जो नर्मदा घाटी में नर्मदा एवं ताप्ती नदियों के मध्य स्थित था। यह सातवाहनों का एक प्रमुख प्रांत था किंतु बाद में इस पर शकों ने अधिकार कर लिया। यद्यपि गौतमीपुत्र शातकर्णी (72-95 ई.) के समय सातवाहनों ने इस पर पुनः अधिकार कर लिया। गौतमीपुत्र शातकर्णी की माता गौतमी बलसारी के नासिक अभिलेख (115 ई.) में भी अनूप का संदर्भ प्राप्त होता है। कालांतर में रुद्रदमन के साथ शकों ने अनूप पर पुनः अधिकार कर लिया।

अनुराधापुर (8°.21′ उत्तर, 80°23′ पूर्व)

अनुराधापुर श्रीलंका (सिलोन) के शासकों की राजधानी था। बाद में चोल आक्रमणों से बचने के लिए सिंहली शासकों ने अपनी राजधानी पोलोनारुवा में स्थानांतरित कर दी। 11वीं शताब्दी में अनुराधापुर ने चोल शासक राजराजा एवं उसके पुत्र राजेन्द्र प्रथम के भयंकर आक्रमणों का सामना किया।

प्राचीन काल के एक महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में अनुराधापुर में कई बौद्ध स्थल हैं। इस प्रकार यह बौद्ध धर्म का एक महत्वपूर्ण केंद्र था। श्रीलंका में स्तूप को 'दागोब' या 'धातुगर्भ' के नाम से जाना जाता है। 'थुपोरामो' एवं 'रुवेनवेली' अनुराधापुर के महत्वपूर्ण प्राचीन दागोब हैं। श्रीलंका के दागोबों की एक महत्वपूर्ण विशेषता उनमें चार निरंतर टुकड़ों की उपस्थिति है।

वर्तमान समय में अनुराधापुर श्रीलंका का एक महत्वपूर्ण नगर एवं पर्यटक स्थल है।

ओर्नस

ओर्नस या ओर्णस, पाणिनी द्वारा उल्लिखित प्राचीनकालीन वर्मा या वर्ण है। सिंधु एवं स्वात नदियों (अब पाकिस्तान) के मध्य स्थित ऊंची पहाड़ी ढाल पर बसा ओर्नस एक किलाबंद तथा पानी एवं खाद्यान्न में आत्मनिर्भर था। ओर्नस का पहाड़ी किला सामरिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण था तथा यहां के निवासी कृषि की पैदावार को इस किले में सुरक्षित रख देते थे, जिससे किसी भी विपरीत परिस्थिति का सामना किया जा सके। सिकंदर ने अपने भारतीय अभियान में ओर्नस पर आक्रमण किया तथा इस पर कब्जा कर लिया। वर्तमान में यह स्थान पाकिस्तान में है। 326 ई.पू. में उसका यह अंतिम अभियान था।

अपराजितक/अपरांत

महाराष्ट्र प्रांत का उत्तरी कोंकण क्षेत्र इसके अंतर्गत था। अपरान्त प्रारंभ से ही शकों एवं सातवाहनों के मध्य संघर्ष का एक कारण रहा है। 115 ई. के नासिक अभिलेख में, जोकि गौतमीपुत्र शातकर्णी का है, यह उल्लेख प्राप्त होता है कि इस शासक ने इसे शकों से छीना था।

महावंश के अनुसार, तृतीय बौद्ध संगीति के उपरांत अशोक ने बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ विभिन्न क्षेत्रों में जो प्रचारक भेजे थे उनमें धर्मरक्षित को अपरान्त क्षेत्र में भेजा गया था। अनुश्रुतियों के अनुसार, सिंहल के प्रथम राजा विजय इसी स्थान से सिंहल गया था।

साहित्यिक स्रोतों से यहां अभीरों की उपस्थिति के भी संकेत मिलते हैं। कालांतर में यह स्थान व्यापार एवं वाणिज्य की गतिविधियों का एक प्रमुख केंद्र बन गया। इसके वाणिज्यिक महत्व के कारण ही अपरान्त लंबे समय तक मराठों एवं अंग्रेजों के मध्य संघर्ष का एक कारण बना रहा। जब अंग्रेजों ने बंबई को एक प्रमुख बंदरगाह के रूप में विकसित किया तब पुनः इस स्थान का महत्व बढ़ गया।

अफसाद (24.75° उत्तर, 85.01° पूर्व)

यह बिहार के गया जिले में स्थित है। उत्तरकालीन गुप्त शासक आदित्यसेन (सातवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में) का एक तिथि रहित लेख यहां से पाया गया है। इस अभिलेख के अनुसार आदित्यसेन ने भगवान विष्णु के सम्मान में यहां एक मंदिर बनवाया, उसकी रानी ने एक तालाब खुदवाया तथा उसकी माता ने एक मठ बनवाया था। यद्यपि अब वहां मठ एवं तालाब के कोई अवशेष प्राप्त नहीं

thejobsyogi.com

होते किंतु वहां विष्णु मंदिर के अवशेष, पट्टियों के साथ जिन पर रामायण के दृश्य अंकित हैं तथा यह सातवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध का माना गया है, अवश्य पाए गए हैं। अनुमानतः यह समय परवर्ती गुप्त शासकों के शासनकाल का ही था।

यह प्रमाणित नहीं होता कि बाद के गुप्त वंश का राजसी गुप्त वंश से कोई रक्त संबंध था। वस्तुतः ये राजसी गुप्त वंश के सामंत थे जो स्वतंत्र हो गए और अपना शक्तिशाली राज्य स्थापित किया, जो कि आठवीं शताब्दी के मध्य तक चला। आदित्यसेन शृंखला में आठवां राजा, ने अपने पूर्वजों के नाम शिलालेख में दिए हैं तथा पहले तीन शासकों के सैन्य अभियान की सफलताओं की भी सूची दी है। शिलालेख के अनुसार, कृष्ण गुप्त ने राजवंश स्थापित किया। शिलालेख बाद के गुप्त शासकों के समकालीनों, जैसे कि मौखरी तथा पुष्यभूतियों पर भी प्रकाश डालता है।

अभिलेख के अनुसार, कृष्णगुप्त नाम का एक व्यक्ति उत्तरकालीन गुप्त राजवंश का संस्थापक था। हर्षगुप्त ने हूणों से युद्ध किया, जबकि जीवगुप्त, लिच्छवियों से लड़ा। कुमारगुप्त ने मौखरियों को परास्त कर दिया। एक अन्य उत्तरकालीन गुप्त शासक महासेनगुप्त ने पुष्यभूतियों के साथ वैवाहिक संबंधों की स्थापना की तथा उसके उत्तराधिकारी माधवगुप्त ने हर्षवर्धन के साथ मित्रवत संबंध कायम किए। अभिलेख के अनुसार आदित्यसेन, इस वंश का सबसे प्रतापी शासक था। उसके साम्राज्य में अंग एवं बंगाल सम्मिलित थे।

अरम्मलई (12°38′ उत्तर, 79°15′ पूर्व)

तमिलनाडु के वेल्लोर जिले के मलियमपट्टु गांव के निकट स्थित अरम्मलई गुफा जैन चित्रकारी, शैलचित्रों, शैलकला तथा जैन संतों के अवशेषों के लिए प्रसिद्ध है। यह गुफा भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण के संरक्षण में है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि आठवीं शताब्दी में जैन सम्प्रदाय के अनुयायियों द्वारा अरम्मलई में एक प्राकृतिक गुफा को जैन मंदिर में रूपांतरित किया गया। जैन धर्म की समृद्धि के काल में इस गुफा में जो जैन भिक्षु रहते थे उन्होंने गुफा की छतों तथा दीवारों को भित्ति चित्रों द्वारा अलंकृत कर दिया था। ये चित्र गारा मिट्टी की मोटी सतह पर चूने की पतली परत चढ़ाकर उसके ऊपर रंगों का उपयोग कर बनाए गए थे। अरम्मलई गुफा के चित्र सित्तानवसल गुफा तथा बाघ गुफा के जैसे ही हैं। इन चित्रों में दो विधियों—फ्रेस्को तथा टेम्पेरा, का उपयोग हुआ है। इनमें जैन धर्म की कथाओं का चित्रण किया गया है तथा यहां अष्टदिक्पालकों अर्थात् आठ प्रधान दिशाओं के संरक्षकों का चित्र भी है। यहां पर दीवारों पर पौधों व हंसों के भी चित्र बने हैं। गुफा की दीवारों पर तमिल ब्राह्मी लिपि में शिलालेख हैं। 1960 के दूसरे दशक में पुरातत्वविदों ने इस गुफा में शैल कलाओं को खोजा। इससे पहले जो विआऊ—दुबरेविल नामक एक शोधार्थी ने पल्लव नरेश वंदीवर्मन द्वितीय की उदयेनदिरम ताम्र पट्टियों में दी गई जानकारी के आधार पर इस गुफा की खोज का दावा किया था। उसने अपने शोध द्वारा मलयमपट्टु के पश्चिम में इस गुफा का पता लगाया।

अरिकामेडु (11.89° उत्तर, 79.81° पूर्व)

वर्तमान में अरिकामेडु केन्द्र-शासित प्रदेश पांडिचेरी में स्थित है। यह कोरोमंडल तट का एक प्रमुख बंदरगाह था तथा संगम काल में रोमन साम्राज्य के साथ व्यापारिक संबंधों के लिए प्रसिद्ध था। यही समय परवर्ती मौर्यकाल का था। अरिकामेडु, मलाया एवं चीन के मध्य एक प्रमुख व्यापारिक स्थल था। अज्ञात लेखक द्वारा लिखित 'पेरिप्लस ऑफ द इरीथ्रियन सी' एवं टालेमी (दूसरी शताब्दी ईस्वी) द्वारा लिखित 'जियोग्राफी' में इसका उल्लेख एक प्रसिद्ध बंदरगाह एवं व्यापारिक केंद्र के रूप में किया गया है।

सामान्यतया महापाषाणकाल से सम्बद्ध काले तथा लाल मृदभांडों की उपस्थिति, स्पष्ट रूप से स्थल की प्राचीनता सिद्ध करते हैं। यहां से प्राप्त अवशेषों में रोमन बर्तन, कांच के कटोरे, मिट्टी के दीपक, रत्न, मनके इत्यादि प्राप्त हुए हैं। यहां से एक दोहत्था जार भी प्राप्त हुआ है, जिसे संभवतः मंदिर में रखा जाता था। एक मनके के ऊपर रोमन सम्राट आगस्टस का चित्र भी प्राप्त हुआ है।

1945 ई. में व्हीलर के नेतृत्व में यहां व्यापक उत्खनन कार्य संपन्न हुआ, इससे प्राप्त अवशेषों से भारत एवं रोम के मध्य प्राचीन व्यापारिक संबंधों की अच्छी जानकारी प्राप्त होती है। अरिकामेडु में न केवल भारतीय सामान लाकर उसे जहाजों से विदेश भेजा जाता था बल्कि कुछ वस्तुओं (मलमल) का निर्माण भी यहां होता था।

इटली के मिट्टी के बर्तन—चमकदार मृदभांड, जिसमें कहीं-कहीं बनाने वाले का नाम अंकित होना—की कला वाले अरेटाइन फूलदानों के साथ दो रंजक टंकियों की खोज, यहां पर भारत-रोमन व्यापार की पुष्टि करते हैं। यह स्थल रोमन मनकों, सिक्कों तथा दक्षिण भारतीय मृदभांडों के खजाने से सुसज्जित है। रोमन दीपक तथा रोमन कांच भी यहां मिला है। विदेशी वस्तुओं के मिलने के आधार पर यह माना गया है कि इस स्थल पर 300 शताब्दी ईस्वी तक अधिवास रहा होगा, यद्यपि चोल साम्राज्य के सिक्कों तथा चीन के समुद्री रंग के मृदभांडों के टुकड़ों का मिलना यह सुझाते हैं कि यहां पर 1000 ई. के बाद अधिवास रहा होगा। रोम के साथ व्यापारिक संबंधों के परिणामस्वरूप यहां के निवासी अत्यंत समृद्ध भौतिक जीवन व्यतीत करते थे।

असीरगढ़ (21.47° उत्तर, 76.29° पूर्व)

असीरगढ़, खरगौन के निकट मध्यप्रदेश में स्थित है। मध्यकाल में असीरगढ़ सामरिक दृष्टि से एक अत्यंत महत्वपूर्ण स्थल था तथा अपने सशक्त एवं अभेद्य किले जो तापी एवं नर्मदा नदी के बीच स्थित था, के लिए प्रसिद्ध था। असीरगढ़ के किले के नीचे भगवान शिव का एक प्राचीन मंदिर यहां से प्राप्त किया गया है किंतु इसकी तिथि ज्ञात नहीं है।

13वीं शताब्दी के अंत में यह चौहान राजपूतों के अधीन था तथा अलाउद्दीन खिलजी ने अपने दक्षिण अभियान से लौटते समय यहां भयंकर आक्रमण किया था। 1370 से 1600 ई. तक फारुखी शासकों द्वारा शासित होता रहा तथा 1601 में इसे मुगलों ने अधिकृत

thejobsyogi.com

कर लिया। खानदेश के मीरन बहादुर ने असीरगढ़ में अकबर की सेनाओं का अत्यंत बहादुरीपूर्वक प्रतिरोध किया था फलतः अकबर को स्वयं आकर असीरगढ़ के अभियान का नेतृत्व संभालना पड़ा। लंबे संघर्ष एवं समुचित रणनीति के उपरांत ही मुगल असीरगढ़ को जीतने में सफल हो सके। असीरगढ़ की विजय अकबर की अंतिम सैन्य विजय थी। अकबर की सफलता ने दक्कन में मुगलों के अभियानों के लिए रास्ते खोल दिए।

मुगलों की केंद्रीय सत्ता दुर्बल होने के उपरांत असीरगढ़ मराठों के प्रभावाधीन हो गया। बाद में इस पर दो बार 1803 तथा 1819 में ब्रिटिश सरकार द्वारा आधिपत्य स्थापित किया गया।

अस्सक (असमक)

अस्सक गोदावरी के तट पर बसा हुआ प्राचीन समय में अवन्ति का पड़ोसी राज्य हुआ करता था। इसकी राजधानी पाटन थी। संभवतः काशी के राजाओं ने पाटन पर विजय प्राप्त की हो तथा इसके उपरांत कलिंग पर भी। बौद्ध धर्म के आगमन से पूर्व, अस्सकों ने अवंति पर आधिपत्य स्थापित करने के लिए कठिन युद्ध लड़ा। पुराणों में अस्सक राजाओं को इक्ष्वाकु वंश का क्षत्रिय कहा गया है। अस्सक वर्तमान में महाराष्ट्र के पैठन के समीप स्थित है।

अतरंजीखेड़ा (27°41′ उत्तर, 78°41′ पूर्व)

अंतरंजीखेड़ा पश्चिमी उत्तर प्रदेश के एटा जिले में स्थित है। इस स्थान की खुदाई से विभिन्न काल की अनेकानेक पुरातात्विक वस्तुएं प्राप्त हुईं हैं, जिससे विभिन्न संस्कृतियों के संबंध में महत्वपूर्ण जानकारियां प्राप्त होती हैं। उत्खनन से यह भी स्पष्ट होता है कि पूर्व-मध्यकाल तक यह एक महत्वपूर्ण स्थल था।

बर्तन, टेराकोटा के मनके, और चूड़ियों के रूप में गेरुए रंग के मृदभांड (ओसीपी) संस्कृति के अवशेष अतरंजीखेड़ा से प्राप्त हुए हैं। इस संस्कृति की समयावधि 2000 ईसा पूर्व से 1500 ईसा पूर्व मानी गई है।

अतरंजीखेड़ा में पहली बार ओसीपी तथा पीजीडब्ल्यू स्तरों के बीच बीआरडब्ल्यू सभ्यता प्राप्त हुई थी।

उत्खन्न ने यहां पर पीजीडब्ल्यू सभ्यता (1000 ई.पू.-600 ई.पू.) के समृद्ध निक्षेपों, जिसमें लोहे से बनी वस्तुएं जैसे भाले की नोक, तीर की नोक, चाकू, कुल्हाड़ी इत्यादि हैं, पर प्रकाश डाला है। यह संकेत करता है कि यहां पर लौह उद्योग भली प्रकार से विकसित था तथा लोहे के उपयोग के कारण ही गंगा की घाटी में वनों की कृषि हेतु साफ किया गया था। प्राप्त साक्ष्य नरकुल एवं मिट्टी से बने घरों के साथ-साथ फसलों की खेती की ओर संकेत करते हैं। एनबीपीडब्ल्यू अवधि में (छठी-दूसरी शताब्दी ई.पू.) खेती हेतु लोहे से बने औजारों का प्रयोग बढ़ गया। सिक्कों, मुहरों, टेराकोटा से बनी लघुमूर्तियों तथा जली ईंटों के प्रयोग के साक्ष्य भी इस अवधि में स्थल के नगरीय स्वरूप की ओर संकेत करते हैं। कुषाणकाल के सिक्के की प्राप्ति एक महत्वपूर्ण खोज है तथा इस बात की ओर संकेत करती है कि यहां पर कुषाण वंश का शासन था। जैन तीर्थंकर की मूर्ति के साथ अन्य उत्तम मूर्तियां गुप्त तथा उसके बाद के काल को दर्शाती हैं।

अतिरमपक्कम (13°13′ उत्तर, 79°53′ पूर्व)

तमिलनाडु की कोरटाल्लायर नदी घाटी में चेन्नई से लगभग 60 किमी. उत्तर पश्चिम में स्थित अतिरमपक्कम प्रदेश के पूर्व पुरापाषाणकालीन तथा मध्य पुरापाषाण कालीन स्थलों में से एक है। 1863 ई. ब्रिटिश भूवैज्ञानिक राबर्ट ब्रूस फूटे ने इसकी खोज की तथा इसके पश्चात् एक शताब्दी से भी अधिक समय तक यहां छिटपुट रूप से अन्वेषण होते रहे। राबर्ट फूटे की खोज ने भारत के प्राक् इतिहास के अध्ययन में एक क्रांति ला दी। इस खोज ने दिखाया कि प्रागऐतिहासिक शिकारी कैसे इन हथियारों व औजारों को बनाते थे और किस प्रकार इनका उपयोग जानवरों का शिकार करने, कंदों की खोद निकालने, पौधों का रस निकालने इत्यादि में करते थे।

शांति पप्पू के नेतृत्व में पुरातत्व वैज्ञानिकों ने इस स्थल में हाल ही में (वर्ष 2002) भारत के प्राचीनतम पाषाणकालीन औजारों की खोज की जो 1.5 मिलियन वर्ष तक पुराने हैं। ये औजार मानवीय शिल्प की श्रेणी, जिन्हें 'ऐश्युलियन' (Acheulian) कहा जाता है, में आते हैं। वैज्ञानिकों का मानना है कि इन औजारों का अविष्कार होमो इरेक्टस—आधुनिक मानवों के पूर्वजों, द्वारा अफ्रीका में लगभग 1.6 मिलियन वर्ष पहले किया गया।

अतीत में कुछ शोधार्थियों ने 'ऐश्युलियन' औजारों का दक्षिण एशिया तथा यूरोप में मिलने के लिए 'होमो हिडेलबरजेन्सिस' को जिम्मेदार माना। ये भी आधुनिक मानव के ही पूर्वज थे परन्तु ये होमो इरेक्टस के बहुत बाद में प्रकट हुए। अतिरमपक्कम औजारों का तिथि निर्धारण 1.5 मिलियन वर्ष होना इस बात का संकेत करता है कि होमो इटेक्टस औजार निर्माण कला को भारत में लेकर आए। इस स्थल से मिले 3500 से भी अधिक क्वार्टजाइट औजारों में से अधिकांश अंडाकार दुमुही कुल्हाड़ी, चाकू तथा घिसकर चिकने किए हुए पत्थर थे। बहुत सारे औजारों का 'ऐश्युलियन' के सबसे निचले स्तर पर मिलना यह संकेत देता है कि इनको कहीं और से लाया गया था तथा अतिरमपक्कम में उसे केवल अंतिम आकार दिया गया। इस बात की संभावना इसलिए भी है कि 'ऐश्युलियन' औजारों का उपयोग करने वाले मानव अत्यधिक घुमंतू थे। अतिरमपक्कम से प्राप्त औजार इस बात की ओर भी संकेत करते हैं कि होमो इरेक्टस भारत में एरोलियन संस्कृति को होमो हिडेलबरजेन्सिस के इसे यूरोप में ले जाने से पहले ही ले आए थे। यूरोप में इनसे संबंधित प्राचीनतम स्थल 600,000 वर्ष पुराने हैं।

भारतीय व फ्रांसीसी पुरातत्वविदों के एक दल ने तिथि निर्धारण की दो विधियों द्वारा यह दर्शाया कि अतिरमपक्कम से प्राप्त पाषाण की कुल्हाड़ी व छुरे कम से कम 1.07 मिलियन वर्ष पुराने तो हैं

thejobsyogi.com

ही, ये संभवतः 1.5 मिलियन पुराने भी हो सकते हैं। दातों के तीन जीवाश्मों की खोज भी बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि ये पूर्व पुरापाषाण स्थल व मध्य पुरापाषाण स्थलों पर पाई जाने वाली दुर्लभ वस्तुएं हैं। इनसे कम से कम तीन विभिन्न जीवाश्म प्रजातियों का संकेत मिलता है।

अटक (33°46′ उत्तर, 72°22′ पूर्व)

अटक, सिंधु नदी के पूर्वी तट पर स्थित है तथा वर्तमान समय में पाकिस्तान में है। 9वीं शताब्दी ईस्वी में यह काबुल साम्राज्य का एक भाग था, जहां हिंदशाही वंश का शासन था। यद्यपि, यहां गजनवी एवं गौरी ने कई बार भयंकर आक्रमण किए। दिल्ली सल्तनत के शासक बलबन तथा अलाउद्दीन खिलजी ने इसके सामरिक महत्व को समझा तथा इस स्थान का प्रयोग मंगोल आक्रमणों से बचाव के लिए किया। जब शेरशाह भारत का शासक बना तो उसने व्यापार-वाणिज्य को प्रोत्साहित करने के निमित्त सोनारगांव से अटक तक ग्रांड-ट्रंक रोड का निर्माण कराया।

यह मुगल साम्राज्य का भी हिस्सा रहा तथा मुगलों ने यहां एक मजबूत किले का निर्माण कराया। रघुनाथ राव एवं माधव राव के नेतृत्व में मराठों ने अपनी हिन्दू पद-पादशाही की नीति को अटक तक विस्तृत किया। बाद में अटक पर अहमद शाह अब्दाली ने कब्जा कर लिया। 1813 में यह सिख शासक महाराजा रणजीत सिंह के प्रभाव क्षेत्र में आ गया। जिसने इसमें अत्यधिक रक्षक सेनाओं को नियुक्त किया।

रणजीत सिंह की मृत्यु के उपरांत आंग्ल-सिख युद्ध में सिख, अंग्रेजों से पराजित हो गए तथा अटक पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया। अंग्रेजों के पूरे शासनकाल में अटक सामरिक महत्व का एक महत्वपूर्ण स्थल बना रहा तथा अंग्रेजों ने इसका उपयोग मध्य एशिया के साथ संबंधों के लिए एक कड़ी के रूप में किया।

अंग्रेजों के वापस जाने के उपरांत तथा 1947 में भारत के विभाजन के पश्चात अटक पाकिस्तान में चला गया तथा इस स्थल ने अपने भू-रणनीतिक महत्व को बनाए रखा।

औरंगाबाद (19.88° उत्तर, 75.32° पूर्व)

औरंगाबाद की स्थापना 1610 ई. में मुतर्जा निजामशाह द्वितीय के प्रधानमंत्री मलिक अम्बर ने खिर्की नामक गांव के स्थान पर की थी तथा यह दक्कन के निजामशाही वंश की राजधानी था। मुगलों द्वारा इस वंश की पराजय के उपरांत यह मुगलों के साम्राज्य का 15वां सूबा बना। बाद में 1653 में, जब औरंगजेब दक्कन का राज्यपाल बना तो उसने इस नगर को अपनी राजधानी बनाया तथा इसका नामकरण 'औरंगाबाद' कर दिया।

इस नगर के मध्य भाग में स्थित सशक्त चारदीवारी का निर्माण औरंगजेब द्वारा मराठों के आक्रमण से बचने के लिए 1686 में कराया गया था। इस नगर में प्रवेश के चार मुख्य द्वार थे—दिल्ली दरवाजा, जालना दरवाजा, पैठन दरवाजा तथा मक्का दरवाजा। नगर की सुरक्षा हेतु नौ अन्य छोटे सुरक्षात्मक द्वारों का निर्माण भी कराया गया था।

औरंगजेब का विशाल साम्राज्य जो समस्त भारतीय उप-महाद्वीप में फैला था, उसकी मृत्यु के साथ ही विखंडित होने लगा तथा कई छोटे-छोटे टुकड़ों में बंट गया। इसके पश्चात औरंगाबाद, हैदराबाद राज्य का एक खूबसूरत शहर बना रहा तथा 1948 में देशी राज्यों के विलीनीकरण के समय इसे भी हैदराबाद राज्य के साथ ही भारत में सम्मिलित कर लिया गया।

वर्तमान समय में औरंगाबाद, महाराष्ट्र प्रांत का एक प्रमुख शहर है। यह लघु एवं बड़े उद्योगों का एक प्रमुख केंद्र है। यह रेशम के परिधानों एवं हस्तनिर्मित चांदी की जड़ाई एवं दस्तकारी के लिए पूरे विश्व में प्रसिद्ध है। कला एवं संस्कृति के प्रेमियों तथा शोधकर्ताओं के लिए भी यह एक महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि यहीं अजंता एवं एलोरा के प्रसिद्ध स्थान पाए जाते हैं। यहां प्रस्तर का एक गुहा मंदिर, एवं बौद्ध मठ भी है। इस बौद्ध मठ का समय 4-8 ईस्वी सदी माना जाता है। पुण्य स्थल जहां उपदेश देते बुद्ध संगीतज्ञों तथा अप्सराओं से घिरे हुए हैं, एक अन्य गुहा, जहां बुद्ध शिष्यों से घिरे हुए हैं तथा एक और गुफा, जिसमें बुद्ध गणेश से मिल रहे हैं, प्रसिद्ध हैं। यहां बौद्ध मठ आज भी बौद्ध धर्मावलंबियों का एक प्रसिद्ध स्थल है तथा यहां बौद्ध धर्म के अनुयायी एवं भिक्षु बड़ी संख्या में देखे जा सकते हैं।

इसके अतिरिक्त औरंगाबाद में ही प्रसिद्ध 'बीबी का मकबरा' है, जिसे औरंगजेब ने अपनी पत्नी राबिया-उद-दौरानी की याद में 1679 में निर्मित कराया था। यह दक्षिण भारत में मुगल स्थापत्य का सुंदरतम उदाहरण है तथा आगरा के ताजमहल से अत्यधिक समानता रखने के कारण इसे 'दक्षिण का ताजमहल' कहा जाता है। इन सभी के अतिरिक्त यहां कई मस्जिदें भी हैं। यथा—काली मस्जिद (औरंगाबाद की स्थापना के समय निर्मित) 55 गुम्बदों वाली जामा मस्जिद एवं 18वीं सदी की शाहगंज मस्जिद।

यहां की सुंदर स्थापत्य कारीगरी का एक अन्य नमूना 'पनचक्की' है। यह जल के वितरण एवं जलचक्की की एक विलक्षण व्यवस्था है, जिसे 1695 में बनवाया गया था। यह हाइड्रोलिक व्यवस्था का एक श्रेष्ठ उदाहरण है, जिसमें 3 किमी. दूर से स्थित एक झील से पानी खींचा जाता है। फिर उसे अन्यत्र वितरित किया जाता है। इसे औरंगाबाद शहर का वास्तुकार कहे जाने वाले मलिक अंबर की अभियांत्रिकी कला का एक अनुपम उदाहरण माना जाता है। 1624 में इसी पनचक्की के समीप स्थित बाग जिसमें मछलियों के अनेक हौज हैं, में औरंगजेब के आध्यात्मिक गुरु एवं प्रसिद्ध सूफी संत बाबा शाह मुसाफिर को दफनाया गया था।

औरंगाबाद के समीप ही दौलताबाद का प्रसिद्ध किला भी है।

अवन्ति

अवन्ति छठी शताब्दी ईसा पूर्व का एक शक्तिशाली महाजनपद था। इस महाजनपद का प्रमुख क्षेत्र वर्तमान में मध्य प्रदेश के उज्जैन जिले में स्थित है तथा यह नर्मदा के तट तक विस्तृत है। इसकी एक प्रसिद्ध नगरी महिष्मती थी, जिसे कभी-कभी इसकी राजधानी के रूप में भी उल्लिखित किया जाता है।

thejobsyogi.com

अवंति क्षेत्र में अनेक छोटे तथा बड़े नगर सम्मिलित हैं। पुराणों में इसका आधार यदुवंश में से एक हैहय का माना गया है। छठी शताब्दी ई.पू. महात्मा बुद्ध के समय यहां प्रद्योत का शासन था। हैहय वंश, अवंति के उपजाऊ भूमि में स्थित होने तथा इसके दक्षिण से आने वाले व्यापार पर नियंत्रण होने के कारण केंद्रीकृत राजतंत्र के रूप में विकसित हो सका। अवंति ने मगध के साम्राज्यवाद के विरोध में कड़ा संघर्ष किया परंतु वह सफल न हो सका। संभवतः यह मगध राजवंश के शिशुनाग के समय मगध के भीषण आक्रमण में हार गया हो।

बौद्ध परंपरा के अनुसार, अशोक ने अवंति के वायसराय के रूप में सेवा की, जब वह सिर्फ एक राजकुमार थे। क्योंकि मालवा क्षेत्र, जिसमें अवंति स्थित है, राजनैतिक तथा आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण था, प्राचीन समय में यह शकों तथा सातवाहनों के बीच संघर्ष का कारण बना तथा मध्य काल में राष्ट्रकूट तथा प्रतिहारों के मध्य झगड़े का कारण बना। इसी क्षेत्र से पूर्वी तथा पश्चिमी भारत के प्रमुख व्यापारिक मार्ग गुजरते थे। उज्जैन, अवन्ति की राजधानी, ने अब तक इसके ऐतिहासिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक महत्व को बनाए रखा।

अवन्तिपुर (33.92° उत्तर, 75.02° पूर्व)

अवन्तिपुर, कश्मीर राज्य की नई राजधानी थी। इसकी स्थापना उत्पल वंश के शासक अवंतिवर्मन ने 9वीं शताब्दी ईस्वी में की थी। वर्तमान समय में यह श्रीनगर से 30 किमी. दक्षिण-पूर्व में स्थित है। यहां अवंतिवर्मन द्वारा निर्मित एक शिव मंदिर अवंतेश्वर एवं अवंतिस्वामी द्वारा निर्मित एक विष्णु मंदिर के भग्नावशेष ही मध्य काल से अब तक हैं।

अयोध्या (26.80° उत्तर, 82.20° पूर्व)

अयोध्या, उत्तर प्रदेश के फैजाबाद जिले में सरयू नदी के दाहिनी तट पर स्थित है। अयोध्या का अर्थ है जिसे युद्ध से नियंत्रित न किया जा सके। यह नगर भगवान राम की पुण्य-भूमि होने के कारण 6ठी-7वीं शताब्दी ईसा पूर्व से ही इतिहास एवं साहित्य में अत्यंत प्रसिद्ध है।

छठी शताब्दी ईसा पूर्व में अयोध्या (जिसे साकेत के नाम से भी जाना जाता था) कौशल महाजनपद की प्रारंभिक राजधानी थी। पुराणों में इस नगरी का उल्लेख हिन्दुओं की सात पवित्र नगरियों (सप्तपुरी) में से एक के रूप में किया गया है, जबकि वाल्मीकीकृत रामायण में इसका उल्लेख भगवान राम की राजधानी के रूप में प्राप्त होता है। इस प्रकार हिन्दू इसे भगवान राम के जन्मस्थल के रूप में मानते हैं।

जैन एवं बौद्ध साहित्य में भी अयोध्या का उल्लेख प्राप्त होता है। जैन इसे अपने पहले तीर्थंकर ऋषभनाथ एवं चौथे तीर्थंकर आदिनाथ का जन्म स्थान मानते हैं, तो बौद्ध धर्म के अनुयायी इस बात पर विश्वास करते हैं कि महात्मा बुद्ध ने यहां लंबे समय तक वास किया था। इस प्रकार अयोध्या हिन्दू, बौद्ध एवं जैन तीनों धर्म के अनुयायियों के लिए एक महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में जाना जाता है। पुरातात्विक उत्खनन दर्शाते हैं कि यह स्थल ई.पू. सातवीं शताब्दी के दौरान बसा हुआ था, जैसाकि बेहद उच्च कोटि के एवं विभिन्न रंगों के उत्तरी काले चमकदार मृदभांड संस्कृति (एनबीपीडब्ल्यू) की खोजों और साथ ही साथ नरकुल एवं मिट्टी के घरों तथा लौह एवं तांबे के प्रयोग से स्पष्ट होता है।

हमें चौथी-तीसरी शताब्दी ई.पू. की एक जैन मूर्ति भी मिली है, संभवतः वह भारत की प्राचीनतम जैन मूर्ति हो।

बुद्ध काल में कोसल उत्तरी तथा दक्षिणी दो भागों में विभक्त हो गया। अयोध्या, उत्तरी भाग की तथा श्रावस्ती दक्षिणी भाग की राजधानी बनी। इस समय श्रावस्ती के महत्व में वृद्धि हुई।

अयोध्या से कोसल के शुंग शासक धनदेव का एक लेख मिला है, जिससे ज्ञात होता है कि प्रसिद्ध शुंग शासक पुष्यमित्र शुंग ने दो अश्वमेघ यज्ञ किए थे।

प्रथम-द्वितीय शताब्दी की कुछ रोमन प्रकार की वस्तुओं की प्राप्ति से इस बात के संकेत मिलते हैं कि अयोध्या के ताम्रलिप्ति जैसे प्रसिद्ध बंदरगाह से व्यापारिक संपर्क भी थे। इस प्रकार यह एक प्रमुख व्यापारिक केंद्र भी था।

प्रसिद्ध चीनी यात्रियों फाह्यान एवं ह्वेनसांग ने क्रमशः पांचवीं शताब्दी एवं सातवीं शताब्दी में यहां की यात्रा की थी। फाह्यान इसे सा-चा (साकेत) कहता है, जबकि ह्वेनसांग के अनुसार यहां सौ मठ एवं दस देवमंदिर थे। यद्यपि इनके पुरातात्विक प्रमाण नहीं पाए गए हैं।

अयोध्या ने मुस्लिम शासक जैसे—बाबर का ध्यान भी अपनी ओर आकर्षित किया, जिसने यहां एक मस्जिद का निर्माण कराया। 6 दिसंबर, 1992 को बाबरी मस्जिद के विध्वंस से पूरा राष्ट्र हतप्रभ रह गया। इस घटना से हिन्दू-मुस्लिम सौहार्द को गहरा धक्का लगा तथा भारत की धर्म-निरपेक्ष राज्य की छवि खराब हुई। वर्तमान में यह स्थान अत्यंत संवेदनशील बन गया है। हिन्दू धर्म के अनुयायी यहां राम मंदिर बनाने की मांग कर रहे हैं, जबकि मुस्लिम धर्मावलंबी मस्जिद बनाना चाहते हैं। यह मामला न्यायालय में लंबित है।

thejobsyogi.com

B

बादामी (15°55′ उत्तर, 75°40′ पूर्व)

बादामी, जिसे वातापी के नाम से भी जाना जाता है, 543-757 ई. तक चालुक्यों की राजधानी रहा। वर्तमान समय में यह कर्नाटक के बीजापुर राज्य में स्थित है।

ऐसी मान्यता है कि बादामी की स्थापना प्रसिद्ध चालुक्य शासक पुलकेशियन प्रथम ने की थी। कालांतर में उसके उत्तराधिकारियों ने इस नगर को प्रसिद्ध सांस्कृतिक नगर के रूप में विकसित किया। प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेनसांग ने सातवीं शताब्दी में यहां की यात्रा की थी एवं इसका उल्लेख एक फलते-फूलते नगर के रूप में किया था। पल्लव शासक नरसिंहवर्मन प्रथम ने बादामी पर आक्रमण कर पुलकेशियन द्वितीय को परास्त कर दिया तथा बादामी को तहस-नहस कर दिया। इस विजय के उपरांत नरसिंहवर्मन ने 'वातापी कोण्डा' (वातापी का विजेता) की उपाधि धारण की।

इस नगर में एक ब्राह्मण गुफा, एक जैन मंदिर एवं एक बौद्ध गुफा पाई गई है। बादामी की ब्राह्मण गुफा, पत्थर को काटकर बनाई गई दक्षिण भारत की पहली गुफा है तथा इसकी प्राचीनता उदयगिरी की गुफाओं से भी अधिक है। इन गुफाओं में एक साम्यता दृष्टिगोचर होती है, तथा जिसमें एक खुला आंगन, स्तंभयुक्त बरामदा तथा कालमयुक्त बड़ा कमरा (हाल) है। बादामी की गुफाओं के भित्ति चित्र काफी हद तक अजन्ता की गुफाओं से समानता रखते हैं।

सातवीं शताब्दी में निर्मित मेलेगती शिवालय मंदिर, प्रारंभिक दक्षिण भारतीय मंदिर शैली का एक अच्छा उदाहरण है। इसमें एक छोटा छज्जा, एक मंडप एवं एक संकरा विमान है, जो कि पश्चिमी चालुक्य स्थापत्य कला का एक विशिष्ट लक्षण है।

बादामी पर कई शक्तिशाली राजवंशों ने शासन किया, जैसे—राष्ट्रकूट, यादव, विजय नगर एवं मराठा। 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में यह ब्रिटिश साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया गया।

बदायूं (28° उत्तर, 78° पूर्व)

दिल्ली सल्तनत के समय बदायूं एक प्रांत या इक्ता था। सुल्तान बनने से पहले इल्तुतमिश बदायूं का ही इक्तादार था। इसके पश्चात बदायूं का इक्ता एक महत्वपूर्ण इक्ता बन गया। अलाउद्दीन खिलजी ने यहीं पर व्यापारियों से अपनी फसल लाने का आदेश दिया था, जिससे बाजार के नियमों को लागू किया जा सके और बड़ी सेना के रख-रखाव हेतु सस्ती कीमत पर अनाज राजधानी को दिया जा सके।

मुगल काल के प्रारंभ में रुहेलखण्ड की राजधानी बदायूं से बरेली स्थानांतरित कर दी गई। उसके बाद ही रामपुर का महत्व बढ़ने लगा।

अकबर के दरबार का प्रमुख मुस्लिम लेखक अब्दुल कादिर बदायूंनी यहीं जन्मा था। इसने मुन्तखाब-अल-तवारीख नामक ग्रंथ की रचना की, जिससे अकबर के शासन काल की महत्वपूर्ण घटनाओं की जानकारी प्राप्त होती है।

बाद के वर्षों में भी बदायूं प्रमुख गतिविधियों का केंद्र बिन्दु बना रहा। आगे चलकर यह अवध के राज्य का हिस्सा बन गया फिर अंततः इसे अंग्रेजों ने हस्तगत कर लिया।

वर्तमान में बदायूं उत्तर प्रदेश का एक जिला है।

बद्रीनाथ (30.74° उत्तर, 79.49° पूर्व)

बद्रीनाथ, अलकनंदा नदी के दाहिने तट पर स्थित है तथा वर्तमान समय में यह उत्तराखण्ड राज्य में स्थित है। साधु-संतों एवं तपस्वियों के प्रमुख स्थल के रूप में बद्रीनाथ हिन्दुओं के चार धामों में से एक है। ऐसी मान्यता है कि मोक्ष प्राप्त करने के लिए हिन्दुओं को इन चारों धामों की यात्रा अवश्य करनी चाहिए।

मान्यताओं के अनुसार, जब भगवान विष्णु नारायण के रूप में पृथ्वी पर अवतरित हुए तब बद्रीनाथ ही उनका निवास स्थान था। इसे 'तपोभूमि' के नाम से भी जाना जाता है। तपोभूमि का अर्थ है—वह स्थान जहां ध्यान एवं तप किया जा सके। इसका एक अन्य नाम है—'भू-बैकुंठ अर्थात पृथ्वी पर स्वर्ग। यह नर तथा नारायण नामक दो पर्वतश्रेणियों से घिरा है तथा पृष्ठभूमि में भव्य नीलकंठ शिखर दिखाई देता है। बद्रीनाथ मंदिर के सामने एक गर्म पानी का झरना भी है जिसे तप्त कुंड कहा जाता है। नारदकुंड तथा सूर्यकुंड यहां पाए जाने वाले अन्य झरने हैं।

बद्रीनाथ, पंचबद्रियों में से एक है तथा इसे विशाल बद्री भी कहा जाता है। मंदिर का मुख्य प्रवेश द्वार 15 मी. ऊंचा है तथा एक प्रमुख आकर्षण है। मंदिर प्रांगण में 15 मूर्तियां हैं। काले पत्थर पर बारीकी से तराशी गई बद्रीनाथ की एक मीटर ऊंची मूर्ति भी है। इसमें विष्णु भगवान को ध्यान मुद्रा में दर्शाया गया है। यह मंदिर अक्टूबर से अप्रैल माह के बीच अत्यधिक सर्दी के कारण बंद रहता है। बद्रीनाथ में आदि शंकराचार्य ने 9वीं शताब्दी में एक मठ की स्थापना की थी, जिसे ज्योर्तिमठ कहा जाता है।

बाघ (22.37° उत्तर, 74.77° पूर्व)

बाघ, अजंता के उत्तर-पश्चिम में मध्य प्रदेश के धार जिले में स्थित है। यह नर्मदा की सहायक नदी बाघ के किनारे स्थित है। यह स्थल बौद्धकालीन गुफाओं के लिए प्रसिद्ध है, जिनका उपयोग विहारों के रूप में किया जाता था। स्थापत्यकला, भूमिकला एवं चित्रकला की शैली के आधार पर इन गुफाओं का समय 500 से 600 ई. के मध्य निर्धारित किया जाता है। यद्यपि योजना एवं विन्यास में ये गुफाएं, अजंता की गुफाओं से घनिष्ठता से संबंधित हैं। किंतु इनमें कुछ आधारभूत भिन्नताएं भी हैं। उदाहरणार्थ—बाघ की गुफाओं में स्तूप प्रमुख हैं, जबकि अजंता की गुफाओं की मूल विषय-वस्तु बुद्ध

thejobsyogi.com

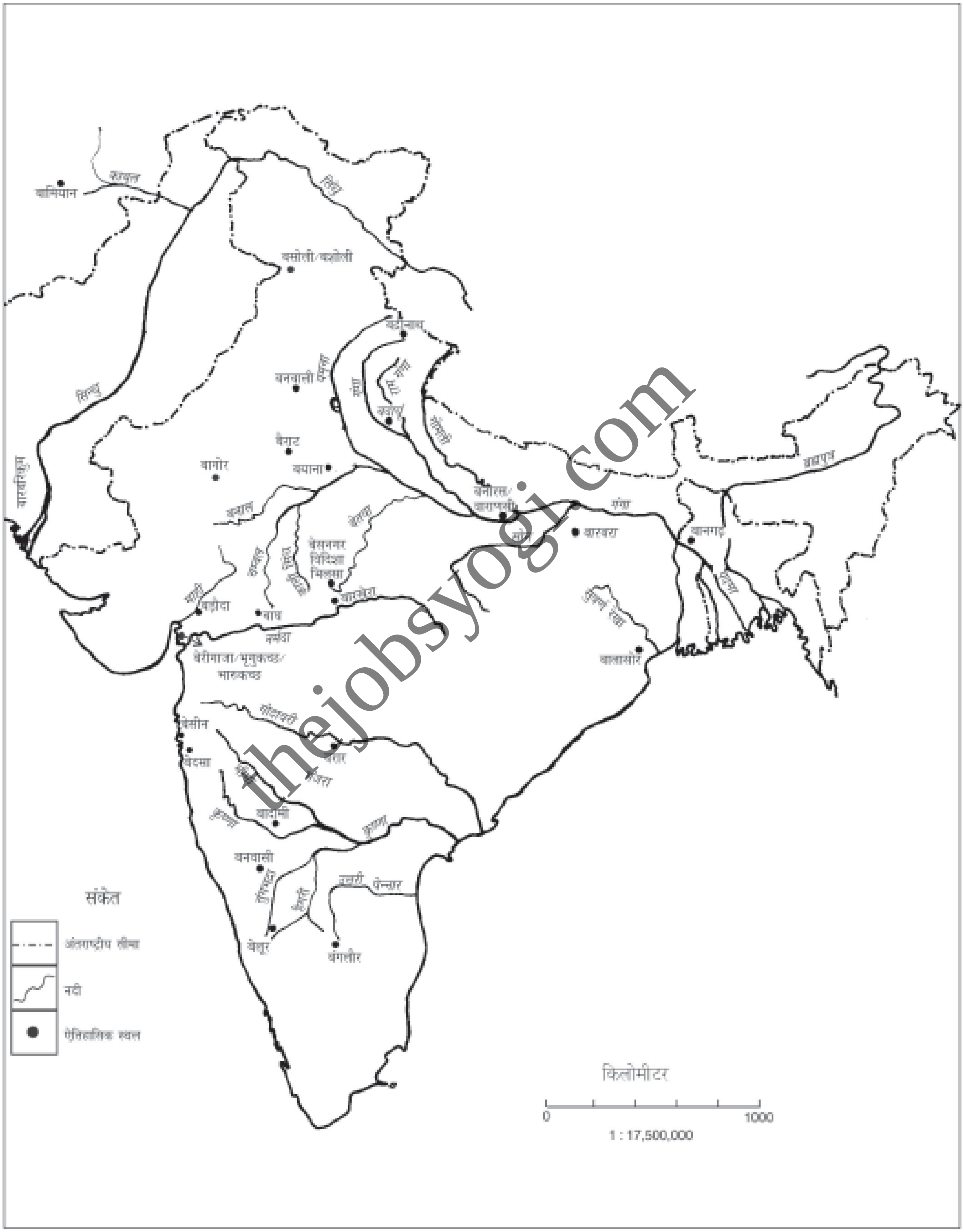

thejobsyogi.com

हैं। इसके अतिरिक्त सामान्य स्तंभों की दृष्टि से बाघ की गुफाओं में कमरों में केंद्र में चार स्तंभों की व्यवस्था है, जो छत को अतिरिक्त सहारा प्रदान करते हैं।

बाघ में कुल नौ गुफाएं हैं किंतु दूसरी एवं छठवीं गुफा ही संरक्षित अवस्था में हैं। इन गुफाओं में सबसे महत्वपूर्ण चौथी गुफा है, जिसे रंगमहल के नाम से जाना जाता है। इस गुफा की दीवारों पर अत्यंत सुंदर चित्रकारी की गई है, जिसका मूल विषय बौद्ध एवं जातक कथाएं हैं। ये चित्र यद्यपि सदियों पुराने हैं किंतु अपनी प्रकृति में ये अत्यधिक धर्मनिरपेक्ष हैं। इन चित्रों से तत्कालीन लोगों की जीवन शैली पर भी प्रकाश पड़ता है।

बागोर (25°22′ उत्तर, 74°23′ पूर्व)

बागोर राजस्थान के भीलवाड़ा जिले में कोठारी नदी पर स्थित उत्तर मध्यपाषाणकालीन (पूर्व-हड़प्पा) पुरातात्विक स्थल है। 1960 और 1970 के दशक में बागोर की खुदाई हुई थी तथा यहां 5000 से 3000 ई.पू. के खानाबदोश चरवाहों द्वारा भेड़, मवेशी तथा बकरियों के पालतू बनाने के प्रमाण मिले थे।

वैराट/बिराट/बैराट (27.45° उत्तर, 76.18° पूर्व)

वैराट, जयपुर के निकट राजस्थान में स्थित है। यहां से एक धार्मिक अवशेष पाया गया है, जिसे भारत के प्राचीनतम धार्मिक अवशेषों में से एक माना जाता है। इस संरचना का निर्माण ईंटों एवं काष्ठ से किया गया था। यद्यपि इसकी काष्ठ का अधिकांश हिस्सा नष्ट हो चुका है किंतु उसके कुछ अवशेष अभी भी देखे जा सकते हैं। ये अवशेष एक बड़े कक्ष में हैं। संभवतः इस कक्ष में तीसरी शताब्दी ई.पू. का एक बौद्ध स्तूप था।

वैराट को विराटनगर के नाम से भी जाना जाता है, जो मत्स्य महाजनपद की राजधानी था। यह इंद्रप्रस्थ के दक्षिण या दक्षिण पश्चिम में तथा सुरसेना के दक्षिण में स्थित था। क्योंकि यह मत्स्य के राजा की राजधानी विराटा थी, इसलिए यह वैराटनगर कहलाता था। विराटनगर वर्तमान समय में, जयपुर की एक तहसील का मुख्यालय है। विराटनगर चारों ओर से पहाड़ियों से घिरा हुआ है, जो तांबे की खानों के लिए प्रसिद्ध हैं। यह अशोक के रूपनाथ तथा साताराम के बैराट संस्करण के लिए भी प्रसिद्ध है। यहां एक जैन मंदिर भी पाया गया है।

महाभारत के अनुसार पांडवों ने अपने निर्वासन का एक वर्ष यहां व्यतीत किया था। कीचक वध नामक प्रसिद्ध कथा इसी स्थान से संबंधित है।

वैराट पुरातात्विक दृष्टि से भी एक महत्वपूर्ण स्थल है। यहां के पुरातात्विक उत्खनन से मौर्यकालीन अवशेष प्राप्त किए गए हैं। यहां से प्राप्त निर्माण अवशेषों की एक महत्वपूर्ण एवं रोचक विशेषता उनका पकी ईंटों से निर्मित होना है, जबकि इस स्थान में प्रस्तर की बहुतायत है।

यहां से प्राप्त पुरातात्विक महत्व की वस्तुओं में सर्वाधिक उल्लेखनीय अशोक का एक लघु शिलालेख एवं अशोक निर्मित एक बौद्ध मठ है। इस अभिलेख में अशोक बौद्ध, धम्म एवं संघ के प्रति आदर प्रकट करता है तथा उसका बौद्ध होना सुनिश्चित होता है। इसके अतिरिक्त यहां से कई आहत सिक्के प्राप्त किए गए हैं, ये चांदी के हैं। तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व का एक भाण्ड एवं प्रथम सदी ईस्वी का सूती कपड़े का एक टुकड़ा भी मिला है।

इस प्रकार बैराट एक धार्मिक महत्व का नगर था तथा विशाल जनसंख्या युक्त इस क्षेत्र का प्रमुख स्थल था।

बालासोर (21.49° उत्तर, 86.93° पूर्व)

बालासोर, वर्तमान समय में उड़ीसा का एक जिला है। मध्यकाल में यह प्रमुख व्यापारिक पत्तन था तथा बरहाबालंग नदी से संबंधित था। यह नदी यहां से 11 किमी. चलकर बंगाल की खाड़ी में गिरती है।

इस नगर के कुछ भाग पर फ्रांसीसियों एवं डचों ने अधिकार कर लिया तथा इसका नाम फरासिडिंगा एवं डीनामारडिंगा रख दिया। फ्रांसीसी तथा डचों दोनों ने यहां अपनी व्यापारिक फैक्ट्रियां स्थापित कीं तथा यहां से अपनी महत्वपूर्ण व्यापारिक गतिविधियां संपन्न कीं। बाद में यह नगर अंग्रेजों के प्रभाव में आ गया।

महादेव बाणेश्वर का मंदिर बालसोर का एक प्रमुख धार्मिक स्थल है।

बामियान (34°49′ उत्तर, 67°49′ पूर्व)

बामियान, अफगानिस्तान में हिन्दूकुश पहाड़ियों की तलहटी में स्थित है। उत्तर तथा उत्तर-पश्चिमी भारत एवं बल्ख (बैक्ट्रिया) के व्यापारिक मार्ग में यह एक महत्वपूर्ण पड़ाव था तथा चीन एवं पश्चिमी विश्व के प्रसिद्ध रेशम मार्ग से जुड़ा हुआ था।

कुषाणकाल में, यह बौद्ध धर्म के एक प्रमुख केंद्र के रूप में विकसित हुआ। गांधार कला शैली के अनेक नमूने यहां से प्राप्त किए गए हैं। यहां कई प्राकृतिक एवं मानवनिर्मित गुफाएं हैं, जिसका उपयोग बौद्ध भिक्षु निवास स्थान के रूप में करते थे। ईसा की प्रारंभिक शताब्दी में यहां हिन्दूकुश पर्वत की चट्टानों को तराश कर बुद्ध की एक विशाल प्रतिमा का निर्माण किया गया था। यह बुद्ध की सबसे बड़ी प्रतिमा थी। सातवीं शताब्दी तक यहां बौद्ध धर्म अच्छी तरह फलता-फूलता रहा।

हाल के वर्षों में यह क्षेत्र उस समय सुर्खियों में आया था, जब अफगानिस्तान के तालिबान शासकों ने इन सभी बौद्ध प्रतिमाओं को, जिनमें बुद्ध की सबसे बड़ी मूर्ति भी शामिल थी, बम विस्फोट से नष्ट कर दिया। तालिबान का शासन समाप्त होने के उपरांत, देश के नए राष्ट्रपति हामिद करजाई ने इन बौद्ध प्रतिमाओं को पुनः स्थापित करने की घोषणा की है।

बनारस/वाराणसी (25.28° उत्तर, 82.96° पूर्व)

बनारस, जिसे वाराणसी के नाम से भी जाना जाता है। गंगा नदी के पश्चिमी तट पर पूर्वी उत्तर प्रदेश में स्थित है। बनारस विश्व

thejobsyogi.com

के प्राचीनतम नगरों में से एक है तथा हिन्दू धर्म में इस नगरी का अत्यधिक सांस्कृतिक एवं धार्मिक महत्व है।

बनारस का प्राचीनतम उल्लेख बौद्ध धर्म के ग्रंथों एवं महाभारत में प्राप्त होता है। वाराणसी पालि भाषा के 'बानारासी' का रूपांतरण है एवं इसी से इसका नाम 'बनारस' पड़ा। वामन पुराण के अनुसार, अत्यंत प्राचीन समय में एक आदि पुरुष के शरीर से वरुणा एवं आसी नदियों का उदभव हुआ। इन नदियों के मध्य स्थित भूमि को तीर्थयात्रा के लिए अत्यंत पवित्र माना गया। बनारस का एक नाम 'काशी' भी है, जिसका अर्थ है—'आध्यात्मिक प्रकाश की नगरी'।

जैन धर्म के अनुयायी वाराणसी को अपने तीन तीर्थंकरों की जन्मस्थली मानते हैं। ये तीर्थंकर हैं—सुपाश्र्व (7वें), श्रयौस (11वें) एवं पार्श्वनाथ (23वें)।

वाराणसी, शिक्षा, कला, दस्तकारी एवं संगीत की समृद्ध परंपरा हेतु भी प्रसिद्ध है। वाराणसी सिल्क उत्पादन का भी एक प्रसिद्ध केंद्र है। वाराणसी की सिल्क साड़ियां एवं अन्य सामान पूरे विश्व में प्रसिद्ध हैं।

प्रसिद्ध बौद्ध स्थल सारनाथ, यहां से मात्र 10 किमी. की दूरी पर स्थित है। सारनाथ में ही बुद्ध ने अपना पहला धर्मोपदेश दिया था, जिसे बौद्ध धर्म में 'धर्मचक्र प्रवर्तन' के नाम से जाना जाता है। वाराणसी अपने घाटों के लिए भी प्रसिद्ध है। दशोश्वमेध घाट एवं मणिकर्णिका घाट यहां के प्रसिद्ध घाट हैं।

बनवाली (29°32′ उत्तर, 75°17′ पूर्व)

बनवाली एक सैंधव सभ्यताकालीन स्थल है, जो आधुनिक हरियाणा के हिसार जिले में या विलुप्त सरस्वती के सूखे तल में स्थित है। आर.एस. बिष्ट के निर्देशन में किए गए उत्खनन से यहां सैंधव सभ्यता के तीन स्तर प्राप्त हुए हैं—हड़प्पा पूर्व, हड़प्पा एवं परवर्ती हड़प्पा। इन तीन स्तरों के कारण यह कालीबंगा से साम्यता रखता है। सबसे पहले चरण में बस्ती को मिट्टी की ईंटों के साथ 3 : 2 : 1 के अनुपात में मजबूत किया गया था, इसके बाद के चरण में ईंटों के उपयोग का अनुपात 4 : 2 : 1 था। बनवाली में भी शहर को दो मुख्य भागों—ऊंचे स्थान पर दुर्ग और निचला शहर, जिन्हें एक बड़ी दीवार से पृथक् किया गया था—में विभाजित शहर सहित हड़प्पा जैसा शहर नियोजन था। ऊंचे स्तर के दुर्ग तथा निचले स्तर के नगर, दोनों को एक ही दीवार से घेरा गया है। नगर हड़प्पा जैसे जाल व्यवस्था में है। जिसमें सड़कें एक दूसरे को समकोण पर काटती हैं। यहां पर उत्कृष्टता से बनाई गई नालियों के साक्ष्य भी हैं, हालांकि मोहनजोदड़ो की तुलना में सड़कों की व्यवस्था बेतरतीब है।

बनवाली से प्राप्त सामग्रियों में सर्वाधिक उल्लेखनीय मिट्टी का बना एक हल है। इसके अतिरिक्त यहां के उत्खनन से मृदभाण्ड, ठप्पे, मुहरें, चूड़ियां, कीमती पत्थर इत्यादि भी पाए गए हैं। बनवाली से मिलने वाले वस्तुओं के अवशेष तथा अनाज विविधता दर्शाते हैं।

उत्तर सैंधव काल में मकानों का निर्माण ईंटों की जगह मिट्टी या कीचड़ एवं भूसी के मिश्रण से किया जाने लगा था। हड़प्पा काल की उत्तम विशेषताएं इस काल में कम ही दिखाई देती हैं।

बनवासी/वैजयन्ती (14.53° उत्तर, 75° पूर्व)

कर्नाटक के सिमोगा जिले में स्थित बनवासी को 'वैजयन्ती' के नाम से भी जाना जाता था। यह कदंबों की राजधानी थी। कदंब शासकों को 8वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में चालुक्य नरेश कीर्तिवर्मन ने पराजित कर दिया था।

श्रीलंकाई इतिवृत्तियों के अनुसार दक्षिण भारत में बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ अशोक द्वारा जो मिशन रक्षित के नेतृत्व में भेजा गया था, वह बनवासी भी गया था।

बंगलौर/बंगलुरू (12°58′ उत्तर, 77°34′ पूर्व)

एक ब्रिटिश इतिहासकार जोसेफ माइकैंड के शब्दों में ''प्रकृति की अनुपम खूबसूरती एवं मंत्रमुग्ध कर देने वाली छठा के लुत्फ को उठाना है तो बंगलौर को देखें।'' कर्नाटक की राजधानी बंगलौर को कई उपनामों से अभिहीत किया जाता है। जैसे—'गार्डन सिटी', (बागों का शहर), 'लेक सिटी' (झीलों का शहर), ब्लॉसम सिटी (खिलता शहर), 'पेंशनर्स पैराडाइज' (वृद्धों का स्वर्ग), सिलिकन वैली ऑफ इंडिया (भारत की सिलिकन घाटी) एवं भारत की सूचना प्रौद्योगिकी नगरी' इत्यादि।

बंगलौर शहर की स्थापना 1537 ई. में कम्पेगौड़ा प्रथम ने की थी, जो विजयनगर साम्राज्य का एक जागीरदार था। बाद में बंगलौर कम्पेगौड़ा द्वितीय के अधीन आया फिर मराठों ने, फिर मुगलों एवं फिर मैसूर के वाडुयार शासकों ने इस पर कब्जा कर लिया। इसके उपरांत इस पर हैदर अली-टीपू ने अधिकार कर लिया एवं अंततोगत्वा 1831 में यह अंग्रेजों के हाथों में चला गया। 1881 में, महारानी विक्टोरिया ने मैसूर के शासकों की राजगद्दी बहाल कर दी। भारत की स्वतंत्रता के उपरांत यह शहर कर्नाटक में चला गया तथा उसकी राजधानी बन गया।

यहां कई ऐतिहासिक एवं आधुनिक स्थापत्य कृतियां हैं। इनमें कई मंदिर भी हैं, जैसे—सोमेश्वरी मंदिर, रंगनाथ स्वामी मंदिर, कुटुमालेश्वर मंदिर एवं गंगधारेश्वर मंदिर।

बंगलौर की कई प्रशासकीय इमारतें वैसी ही भव्य हैं, जैसी कि यहां की धार्मिक इमारतें। पर्यटकों के लिए आकर्षण का एक प्रमुख केंद्र यहां का विधानसभा भवन है। यह भवन भारत की सबसे बड़ी व्यवस्थापिका इमारत है। इसके अतिरिक्त संग्रहालय, बंगलौर पैलेस, जवाहरलाल नेहरू तारामंडल इत्यादि भी यहां की अत्यंत सुंदर इमारतें हैं।

बानगढ़ (25°24′ उत्तर, 88°31′ पूर्व)

बानगढ़, पद्मा नदी के तट पर बांग्लादेश के दिनाजपुर जिले में स्थित है। प्राचीनकाल में इसे कोटिवर्ष एवं देवी कोटी के नाम से जाना जाता था। के.जी. गोस्वामी के निर्देशन में किए गए उत्खनन

thejobsyogi.com

से यहां मौर्यकाल से लेकर प्राक् मध्यकाल तक के पांच स्तर प्राप्त किए गए हैं। सबसे निचले स्तर में एक गोलाकार सोखता गड्ढे का प्रमाण मिला है।

पाल युग का एक लघु एवं कमलाकार जलाशय भी यहां पाया गया है। बानगढ़ के उत्खनन में कई टैराकोटा की वस्तुएं—जैसे कि घर में पूजा हेतु घरों को सजाने हेतु तथा धार्मिक अनुष्ठान हेतु प्राप्त हुई हैं।

बारबरा/बराबर (25° उत्तर, 85° पूर्व)

बराबर बिहार के गया से 25 किमी. उत्तर में स्थित है तथा यह अशोक द्वारा निर्मित चार प्रस्तर गुफाओं के लिए प्रसिद्ध है। बाद में अशोक ने इन्हें आजीवक एवं गैर-बौद्ध सम्प्रदाय को दान दे दिया, जिन्हें अशोक के सहिष्णु शासनाधीन अपने धर्म का अनुपालन करने की अनुमति थी।

ये गुफाएं भारत की प्रारंभिक गुहा-स्थापत्य का सुंदर उदाहरण हैं तथा प्रारंभिक काल की काष्ठ स्थापत्य से अत्यधिक साम्यता प्रदर्शित करती हैं। व्हेल की पीठ के समान, क्वार्ट्ज खनिज के शैल एक जंगली तथा ऊबड़-खाबड़ स्थान में स्थित है। अभिलेख दर्शाते हैं कि अशोक के आदेश पर चार कक्षों की खुदाई, कटाई तथा पत्थर के कारीगरों द्वारा इसको तराशा गया, एक ऐसे स्थान के रूप में, जो सन्यासियों के लिए आश्रय स्थल हो।

यहां की दो मुख्य गुफाएं सुदामा तथा लोमसा ऋषि के नाम से जानी जाती हैं। यद्यपि लोमसा एवं ऋषि गुफा अदिनांकित तथा अपूर्ण हैं, सुदामा गुफा से समानता के कारण इसे मौर्य काल का माना जाता है। इसकी मुख्य विशेषता इसका अलंकरण वाला अग्रभाग तथा लकड़ी की संरचना में गोलाकार चाप है। दरवाजे तथा छत के बीच नीचे की ओर हाथियों के चित्र वाला एक अर्ध-वृत्ताकार फलक है, तथा उसके ऊपर की ओर एक जालीदार पर्दा है। अग्रभाग को इसलिए महत्वपूर्ण माना जाता है क्योंकि यह अलंकरण की विस्तृत योजना का प्रारंभ प्रदर्शित करता है तथा यह अग्रभागों का विशेष अलंकरण दक्कन में चैत्यों के अलंकरण की विशेषता प्रदान करता है।

बारबेरिकम (24°51′ उत्तर, 67° पूर्व)

बारबेरिकम सिंधु डेल्टा का महत्वपूर्ण पत्तन था, जहां बैक्ट्रिया से चीनी फर एवं सिल्क आता था तथा इन्हें यहां से पश्चिमी देशों को भेजा जाता था। प्रथम सदी ईस्वी में यह भारत की व्यापारिक गतिविधियों का एक महत्वपूर्ण केंद्र था।

बरखेड़ा (22°56′ उत्तर, 77°36′ पूर्व)

बरखेड़ा, मध्य प्रदेश में भीमबेटका से 7 किमी. दूर दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। यह दक्षिण एशिया का एक प्रमुख खुले स्थान वाला पाषाणयुगीन स्थल है। यह आखेटकों एवं संग्राहकों का एक महत्वपूर्ण स्थल भी था।

बड़ौदा (22°18′ उत्तर, 73°12′ पूर्व)

बड़ौदा को 'बड़ोदरा' के नाम से भी जाना जाता है। बड़ौदा का अर्थ है—'बरगद का पेड़'। बड़ौदा वर्तमान गुजरात में स्थित है। अकबर ने विद्रोहों का दमन करने के लिए दो बार गुजरात का अभियान किया तथा अंततः बड़ौदा सहित गुजरात को मुगल साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया। औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात बड़ौदा गायकवाड़ों के शासनाधीन हो गया।

गायकवाड़ शासकों ने बड़ौदा को अपनी राजधानी बनाया, जिन्होंने यहां एक स्वतंत्र राज्य की स्थापना की थी। मध्यकाल में यह सूती वस्त्र उत्पादन का एक प्रमुख केंद्र था तथा 17वीं शताब्दी में अंग्रेजों ने व्यापारिक कारखाना प्रारंभ किया। यहां कई हिन्दू एवं जैन मंदिर भी हैं।

बड़ौदा को गुजरात की 'गार्डन सिटी' भी कहा जाता है। यहां कई खूबसूरत एवं भव्य महल, मंदिर, उद्यान एवं संग्रहालय हैं इसीलिए इसे गुजरात की सांस्कृतिक राजधानी भी कहा जाता है। बड़ौदा शक्तिशाली राजवंशों की नगरी भी रही है।

महाराजा सियाजीराव गायकवाड़ द्वारा निर्मित लक्ष्मी मंदिर एवं लक्ष्मी विलास पैलेस बड़ौदा की सुंदर इमारतें हैं।

बेरीगाजा/भृगुकच्छ (21.71° उत्तर, 72.77° पूर्व)

नर्मदा के तट पर स्थित प्राचीन भारत का यह एक महत्वपूर्ण पत्तन एवं वाणिज्यिक केंद्र है, जो गुजरात में स्थित है। पेरिप्लस ऑफ द इरीथ्रियन सी एवं टॉलेमी के विवरणों के अनुसार, भारूकच्छ/भृगुकच्छ/बेरीगाजा बंदरगाह नर्मदा के मुहाने पर आधुनिक भड़ौच जिले में स्थित था। पेरिप्लस (प्रथम शताब्दी ईस्वी) में इस बंदरगाह से होने वाली विभिन्न मदों का आयात एवं निर्यात का विवरण दिया गया है। इसमें प्राप्त विवरण के अनुसार, यहां से निर्यात के लिए विभिन्न प्रकार का सामान न केवल पैठन एवं टेर से आता था, बल्कि यह उत्तर में उज्जैन तथा काबुल एवं कश्मीर तक से लाया जाता था। बौद्ध धर्म के जातक ग्रंथों के अनुसार, यहां से सुवर्णद्वीप (दक्षिण-पूर्व एशिया) से व्यापारिक वस्तुओं का आदान-प्रदान होता था।

बेरीगाजा नाम ऐसे उच्चस्तरीय स्थान की सूचना देता है जो पश्चिमी विश्व के साथ व्यापार हेतु अपनी महत्वपूर्ण स्थिति का लाभ उठाता है। यह बंदरगाह प्राचीन भारत में समुद्री व्यापार का एक अत्यंत प्रमुख केंद्र था तथा भारत की व्यापारिक समृद्धि में इसका महत्वपूर्ण योगदान था। महाभारत के अनुसार, इसका संबंध ऋषि भृगु से था। इनके शिष्य यहां आकर बस गए, तभी से इस स्थान को भृगु कच्छ के नाम से जाना जाने लगा।

जैन अनुश्रुतियों के अनुसार, यह शक साम्राज्य की राजधानी था तथा शक शासक यहीं से अपने साम्राज्य में शासन करते थे।

आगे चलकर यह अरबों का मुख्यालय बन गया तथा पुलकेशियन द्वितीय से पराजित होने से पहले तक वे इस स्थान का प्रयोग दक्षिण, पश्चिम जाने में एक महत्वपूर्ण पड़ाव के रूप में करते थे।

thejobsyogi.com

बसोहली/बसोली/बशोली (32.50° उत्तर, 75.82° पूर्व)

बसोहली या बसोली अथवा बशोली—जैसाकि इसे विभिन्न रूप से कहा एवं लिखा गया है— जम्मू-कश्मीर के कठुआ जिले में एक शहर है, जो रावी नदी के दाहिने किनारे पर स्थित है, यह कहा जाता है कि राजा भूपत पाल ने 1635 में इसे स्थापित किया था। अतीत में, यह शहर अपने शानदार महलों के लिए जाना जाता था, हालांकि, अब यह खंडहर अवस्था में है। आज इसे व्यापक रूप से इसके साथ जुड़ी लघु चित्रकला शैली के लिए जाना जाता है। बसोहली चित्रों को पहाड़ी चित्रों का पहला संप्रदाय माना जाता है, जो अट्ठारहवीं शताब्दी के मध्य तक कांगड़ा चित्रकला संप्रदाय के रूप में बहुत अधिक विकसित हुआ था। यद्यपि चित्रकला के इस स्कूल का नाम छोटे से स्वतंत्र राज्य बसोहली (इस शैली का मुख्य केंद्र) से लिया जाता है, परंतु ये चित्र पूरे क्षेत्र में पाए जाते हैं।

चित्रकला की बसोहली शैली में प्राथमिक रंगों का भरपूर उपयोग और सत्रहवीं तथा अट्ठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में प्रचलित एक स्टाइलिश चेहरे का उपयोग विशेष रूप से हुआ है। बसोहली चित्रकला का प्रथम उल्लेख 1918-19 की भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की वार्षिक रिपोर्ट, जो 1921 में प्रकाशित हुई थी, में हुआ था। इसके अनुसार बसोहली स्कूल का उद्भव पूर्व-मुगल काल का हो सकता है।

बेसीन (19.47° उत्तर, 72.8° पूर्व)

बेसीन मुंबई के समीप महाराष्ट्र में स्थित है। गुजरात के शासक बहादुरशाह ने पहले इसे अपनी साम्राज्य सीमा में सम्मिलित कर लिया फिर 1534 में पुर्तगालियों को सौंप दिया।

बेसीन का द्वीप गुजरात के सुलतान बहादुर शाह द्वारा पुर्तगाल को दिया गया तथा उसके बदले में उन्हें हुमायूं द्वारा होने वाले आक्रमण के भय से मुक्ति मिली। पुर्तगालियों के अधीन, यह एक महत्वपूर्ण वाणिज्यिक एवं व्यापारिक केंद्र के रूप में विकसित हुआ। तथा पुर्तगालियों के लिए राजस्व प्राप्ति का एक महत्वपूर्ण केंद्र बन गया। 1739 में, मराठा सरदार चिमनाजी अप्पा ने इसे पुर्तगालियों से छीन लिया तथा इस प्रकार यह पेशवाओं के अधीन हो गया। बेसीन बाजीराव II, पूना के मराठा पेशवा, तथा ब्रिटिश के बीच 31 दिसम्बर 1802 की संधि के कारण भी प्रसिद्ध है।

मराठों के अधीन भी यह महत्वपूर्ण व्यापारिक केंद्र बना रहा। बम्बई की अंग्रेजी सरकार की प्रारंभ से ही बेसीन पर नजर थी तथा 1774 में प्रथम आंग्ल-मराठा युद्ध के उपरांत उन्होंने मराठों से इसकी मांग प्रारंभ कर दी।

पेशवा बाजीराव द्वितीय ने 1802 में बेसीन में ही अंग्रेजों के साथ सहायक संधि की। 1818 में अंतिम आंग्ल-मराठा युद्ध के उपरांत बेसीन अंग्रेजों के अधीन आ गया तथा ब्रिटिश साम्राज्य का एक हिस्सा बन गया। यह संधि द्वितीय मराठा युद्ध (1803-05), मराठों तथा ब्रिटिश के बीच, का कारण भी बनी तथा तीन अन्य मराठा शक्तियों की पराजय का भी। सालसीट के साथ बेसीन बम्बई के लिए सामरिक महत्व का एक महत्वपूर्ण स्थान था।

बयाना (26.9° उत्तर, 77.28° पूर्व)

बयाना, राजस्थान के भरतपुर जिले में स्थित है। प्राचीन काल में इसका नाम 'बाणपुर' था। 1196 ई. में मु. गौरी ने इस पर अधिकार कर लिया किंतु बाद में यह अफगानों के अधिकार में चला गया। बाबर ने इसे अफगानी प्रभुत्व से मुक्त कर दिया। उत्तरवर्ती मुगलकाल में यह भरतपुर के शासकों के अधीन जाट राज्य बन गया। आगरा, जो कि मुगल शासकों की राजधानी के रूप में विकसित हुआ, पहले बयाना में ही था।

बयाना कृषि एवं नील की खेती का एक प्रसिद्ध केंद्र था। सरफेज यहां का एक प्रसिद्ध उत्पाद था, इसके उत्पादन के कारण बयाना मध्यकाल से लेकर ब्रिटिश काल तक प्रसिद्ध रहा।

बेदसा (18°44′ उत्तर, 73°31′ पूर्व)

बेदसा पूना जिले में स्थित है। यह प्रथम सदी ई.पू. की बौद्ध गुफाओं एवं चैत्यों के लिए प्रसिद्ध है। बेदसा की गुफाओं में, भाजा की गुफाओं की तुलना में कुछ उन्नत कला के दर्शन होते हैं। क्योंकि इसमें लकड़ी के प्रयोग तथा अग्रभाग के अलंकरण के लिए अधिक प्रयत्न की परंपरा से क्रमिक स्वतंत्रता दिखाई देती है।

बेदसा में, प्रथम बार हमें ऐसे चैत्य निर्माण के प्रमाण प्राप्त होते हैं, जो आगे के चैत्य स्थापत्य के लिए अनुकरणीय बने। ये चैत्य समानांतर रूप में दो बराबर मंजिलों में विभक्त थेः निचली मंजिल चतुर्भुजाकार प्रवेश द्वार था जो चाप से घिरा हुआ था जबकि ऊपरी मंजिल में बड़ी चाप की खिड़की थी जो, अश्वाकार थी। इसे 'चैत्य खिड़की' के नाम से जाना जाता था। चैत्य के प्रमुख हाल (बड़े कमरे) के सामने छज्जा था, जिसे चार स्तंभ आधार प्रदान करते थे। इन स्तंभों में मानव एवं विभिन्न पशुओं की आकृतियां उकेरी गई थीं।

इन चित्रों की स्थिति यद्यपि परिलक्षित होती है किंतु अब ये काफी जीर्ण-क्षीर्ण हो चुकी हैं। चैत्य हॉल के समीप गुहा विहार बने हुए हैं, जहां भिक्षु निवास करते थे। मठवासी हॉल, यद्यपि, आकार में अर्धवृत्ताकार है तथा सामान्य चौकोर या आयत से भिन्न है।

बेलूर (13.16° उत्तर, 75.85° पूर्व)

बेलूर यगासी नदी के तट पर कर्नाटक के हासन जिले में स्थित है। यह क्षेत्र मालनद क्षेत्र है तथा यहीं बाबाबुदां की प्रसिद्ध पहाड़ियां पाईं जाती हैं। यह होयसल शासक विष्णुवर्धन (1108-1142 ई.) द्वारा बनवाए गए विष्णु नारायण या केशव मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। विष्णुवर्धन ने यह मंदिर 1116 में तालकाड में चोलों पर विजय की स्मृति में बनवाया था। विष्णुवर्धन जो 'विट्टिग' नाम से भी जाना जाता था, उसने प्रसिद्ध वैष्णव संत रामानुज के प्रभाव में आकर जैन धर्म त्याग दिया तथा वैष्णव धर्म का अनुयायी बन गया। अपने धर्मांतरण के उपलक्ष्य में उसने प्रसिद्ध चिन्नकेशव मंदिर का निर्माण कराया। यह मंदिर पारम्परिक होयसल वास्तुकला का एक सुंदर नमूना है जिसमें हाथीदांत के कारीगर की या सुनार की तकनीक को पत्थर पर प्रयोग किया जाता है।

thejobsyogi.com

बेलूर मंदिर की सबसे मुख्य विशेषता उच्च धरातलीय तारारूपी सतह है, जिस पर भड़कीले फलक वाले भवन बनाए गए हैं। उत्तम मूर्तियां बाहरी दीवार को चित्रवल्लरी द्वारा पूर्णतः ढक देती हैं, जोकि अन्य होयसल मंदिरों में नहीं पाई जाती। दीवारों में 650 हाथी (प्रत्येक दूसरे से भिन्न) बने हुए हैं तथा प्रवेश द्वार पर द्वारपालों के चित्र हैं।

प्रसिद्ध वास्तुकार जकन्ना हजारी के निर्देशन में निर्मित ये मंदिर होयसल राजवंश की सुंदर स्थापत्य शैली को अभिव्यक्त करते हैं।

बरार

बरार दक्षिण के बहमनी साम्राज्य का एक भाग था। प्रारंभ में यह बहमनी साम्राज्य के धुर उत्तरी हिस्से में सम्मिलित था।

बरार महाराष्ट्र में स्थित है। दक्कन में बहमनी साम्राज्य के प्रशाखा में से एक बरार साम्राज्य से अलग होने वाला पहला राज्य था। 1484 ई. में फतुल्ला, गोविलगढ़ के गवर्नर ने महमूद बहमनी के विरुद्ध विद्रोह कर दिया, तथा इमाम शाही राजवंश की स्थापना की क्योंकि उसने इमाद उल मुल्क की पदवी धारण की थी। उसकी राजधानी एलिचपुर थी।

बाद में अहमदनगर ने बरार पर अधिकार कर लिया। मुगलकाल में, बरार को दक्षिण का एक सूबा बना दिया गया। मुगल साम्राज्य के टूटने पर यह हैदराबाद के निजाम के पास चला गया। 1853 ई. में यह ब्रिटिश साम्राज्य के नियंत्रण में आ गया तथा प्रशासनिक रूप से 1948 में इसका प्रदेश के तौर पर उन्मूलन कर दिया गया।

बरार के दक्षिणतम क्षेत्र सामान्यतया पूर्णा नदी बेसिन के समृद्ध कपास क्षेत्रों की अपेक्षा कम विकसित हैं।

बरार में विभिन्न इमारतें एवं स्थापत्य हैं, जो दक्षिण भारतीय शैली का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनमें से गवीलीगढ़, एलिचपुर एवं मल्कापुर की मस्जिदें सबसे महत्वपूर्ण हैं। एलिचपुर की हौजा कटोरा (जिसके एलिचपुर में भग्नावशेष बाकी रह गए हैं।) दक्षिण भारतीय स्थापत्य शैली का एक सुंदर नमूना है।

बेसनगर/विदिशा/भिलसा (23.52° उत्तर, 72.81° पूर्व)

मध्य प्रदेश का विदिशा या भिलसा जिला ही प्राचीन बेसनगर था, जो वर्तमान में भोपाल से 45 किमी. उत्तर-पश्चिम में स्थित है। प्राचीन साहित्यिक साक्ष्यों के अनुसार, यह दसहरना शासन व्यवस्था की राजधानी था। यह सांची से 10 किमी. दूर बेतवा एवं व्यास नदियों के मध्य स्थित था। छठी तथा पांचवीं शताब्दी ई.पू. विदिशा नगर की गणना प्रचीन भारत के प्रसिद्ध नगरों में होती थी। शुंग, नाग, सातवाहन एवं गुप्त सभी के शासनकाल में विदिशा संस्कृति एवं व्यापार का एक महत्वपूर्ण केंद्र बना रहा।

इससे पहले मौर्य शासक अशोक यहीं का राज्यपाल रह चुका था। इस नगर का उल्लेख कालिदास के मेघदूत एवं वाल्मीकीकृत रामायण में भी प्राप्त होता है। यह शुंग साम्राज्य की राजधानी था। पुराणों में इसे तीर्थ कहा गया है। यह नगर पाटलिपुत्र से उज्जैन जाने वाले मार्ग पर स्थित था। बौद्ध स्तूप के अन्य अनेकों अवशेष, सामान्यतया भिलाना टॉप के नाम से जाने जाते हैं तथा तीसरी शताब्दी ई.पू. तथा पहली ईस्वी के बीच के भी यहां पर पाये जाते हैं। बेसनगर पाटलिपुत्र से पश्चिमी भारत के बंदरगाहों तथा दक्षिणापथ के मार्ग पर स्थित है। छठी शताब्दी के बाद तीन शताब्दियों तक परित्यक्त, इस स्थान को मुस्लिमों द्वारा पुनः भिलसा नाम दिया गया, जिन्होंने बीज-मण्डल (अब ध्वस्त), एक मस्जिद जिसे एक हिंदू मंदिर के अवशेषों से बनाया गया, का निर्माण किया। गुप्त साम्राज्य के गुफा मंदिरों के अवशेष भी यहां प्राप्त हुए हैं। भिलसा पर अंतिम रूप से अंग्रेजों के नियंत्रण से पूर्व, इस पर मालवा सुल्तानों, मुगलों एवं सिंधिया राजवंशों का आधिपत्य रहा।

विदिशा उत्तर भारत में हाथी दांत की नक्काशी से बनी वस्तुओं के लिए प्रसिद्ध था। सांची के स्तूपों के तोरण द्वारों में भी यहां की नक्काशी शैली के दर्शन प्राप्त होते हैं।

विदिशा से पुरातात्विक महत्व की अनेक वस्तुएं प्राप्त हुई हैं। यहां के प्राचीन अवशेषों में हेलियोडोरस का गरुड़-स्तंभ सर्वाधिक उल्लेखनीय है। हेलियोडोरस यवन शासक एन्टियालफीड्स का राजदूत था एवं शुंगवंशीय शासक भागभद्र के विदिशा स्थित दरबार में था। उसने यहां एक गरुड़-स्तंभ स्थापित करवाया तथा भागवत धर्म ग्रहण कर लिया। पाषाण निर्मित स्तंभ कला की दृष्टि से यह स्तंभ अत्यधिक महत्वपूर्ण है। यह स्तंभ मध्यप्रदेश में भागवत धर्म के लोकप्रिय होने का प्रमाण है। यह ब्राह्मण धर्म से संबंधित पहला प्रस्तर स्मारक है। वर्ष 1956 में विदिशा का पुनः नामकरण किया गया और आज यह एक कृषि व्यापार केंद्र है।

भगतराव (21°33′ उत्तर, 72°45′ पूर्व)

भगतराव एक सैंधव सभ्यताकालीन स्थल है, जिसका उत्खनन धौलावीरा के साथ स्वतंत्रयोत्तर काल में किया गया।

यह स्थल हड़प्पा सभ्यता के परवर्ती काल का प्रतिनिधित्व करता है। यह किम नदी के तट पर धौलावीरा से लगभग 500 किमी. की दूरी पर स्थित है। भगतराव, नर्मदा-ताप्ती घाटी में प्रवेश का एक आसान एवं अच्छा स्थल था। ऐसा अनुमान है कि बहुत से हड़प्पावासियों ने कच्छ की ओर प्रस्थान किया था तथा अंततः वे इसी क्षेत्र में बस गए थे।

कुछ इतिहासकार दायमाबाद के स्थान पर भगतराव को ही सिंधु घाटी सभ्यता की दक्षिणी सीमा मानते हैं।

भगवानपुरा (30° उत्तर, 76° पूर्व)

भगवानपुरा, हरियाणा के कुरुक्षेत्र जिले में स्थित है। सरस्वती नदी के दक्षिणी किनारे पर स्थित इस सैंधव सभ्यता कालीन स्थल से इस सभ्यता के पतनोन्मुख काल के अवशेष मिले हैं। जे.पी. जोशी

thejobsyogi.com

के निर्देशन में किए उत्खनन से यहां पुरातात्विक महत्व की अनेक वस्तुएं पाई गई हैं, जिनमें तांबे की चूड़ियां, काली तथा सफेद रंग की चूड़ियां तथा कांच की मिट्टी के चित्रित काले रंग के मनके इत्यादि प्रमुख हैं। यहां के उत्खनन से परिवर्तित हड़प्पा काल के अवशेषों के साथ ही चित्रित धूसर मृदभाण्ड प्राप्त हुए हैं, जिससे अनुमान है कि इन दोनों सभ्यताओं के लोग यहां साथ-साथ निवास करते थे। यह समय संभवतः 1600-1000 ई.पू. के मध्य था। परवर्ती हड़प्पा सभ्यता के प्रमुख प्रमाण एक कमरे के मकान हैं, जो मिट्टी तथा ईंटों के बने हैं। इसके आगे के काल में यहां के निवासी चित्रित धूसर मृदभाण्डों का प्रयोग करने लगे तथा बड़े आकार के आवास पुनः निर्मित होने लगे।

भगवानपुरा से 13 कमरों का एक विशाल आवास भी प्राप्त हुआ है, इसमें आंगन भी है। इस आवास की दीवारें मिट्टी से बनी थीं। यह या तो किसी बड़े संयुक्त परिवार का या ऋग्वैदिक कालीन किसी जनजातीय प्रमुख का आवास था। यहां से प्राप्त वस्तुओं में 1400 ई.पू. की विभिन्न रंगों की चूड़ियां तथा टेराकोटा की लघु मूर्तियां प्राप्त हुई हैं। लेकिन यहां से लोहे या किसी अनाज के साक्ष्य प्राप्त नहीं हुए हैं। इस प्रकार भगवानपुरा चित्रित धूसर मृदभाण्डों के पूर्व-लौहकरण (पीजीडब्ल्यू) संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता था।

भाजा (18°43′ उत्तर, 73°28′ पूर्व)

भाजा, पूना के निकट स्थित है तथा बौद्ध चैत्य गृहों एवं गुहा विहारों के लिए प्रसिद्ध है। लोनवली के समीप 18 गुफाएं, बौद्ध धर्म की हीनयान शाखा से संबंधित हैं और दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व के दौरान उत्खनित की गई हैं।

भाजा की ये गुफाएं पश्चिम भारत में गुहा स्थापत्य का प्रारंभिक उदाहरण हैं तथा काष्ठ स्थापत्य से काफी साम्यता रखती हैं। भाजा के चैत्य से संबद्ध एक विहार भी है। इससे पत्थर को काटकर एक विशाल कक्ष का निर्माण किया गया है, जिसका उपयोग बौद्ध भिक्षु आवास के लिए करते थे।

गुफाओं के दो रिलीफ स्थापत्य भी उल्लेखनीय हैं—एक में किसी राजा को रथ की सवारी करते हुए दिखाया गया है, जिसे चार घोड़े खींच रहे हैं, जबकि दूसरे में एक युवराज हाथी पर बैठा हुआ है।

इन गुफाओं की विशेषता यह है कि सूर्य की किरणें इन गुफाओं के अंदर प्रवेश करती हैं। गुफाओं के दक्षिणी हिस्से में देवी-देवताओं की आकृतियां उकेरी गई हैं।

भरहुत (24.16° उत्तर, 80.51° पूर्व)

भरहुत मध्य भारत में इलाहाबाद के 150 कि.मी. दक्षिण-पश्चिम में संकीर्ण माहियर घाटी के मुख पर स्थित है। प्राचीन व्यापार मार्ग पश्चिमी तटीय क्षेत्र से पाटलिपुत्र की पूर्वी राजधानी उत्तरी श्रावस्ती का मार्ग भरहुत के द्वारा जोड़ता है। मौर्य शासक अशोक के समय में एक ईंटों से बना स्तूप जिसका व्यास 68 फीट था तथा प्लास्टर से ढका हुआ था, का निर्माण भरहुत में किया गया था। शुंग के शासनकाल में, जो कि दूसरी शताब्दी ई.पू. सत्ता में था तथा 72 ई.पू. तक शासन किया, अत्यधिक अलंकृत पाषाण से बना बाड़ा लगवाया गया, जिसका व्यास 88 फुट था। बुद्ध का प्रदर्शन मानव रूप के साथ ही साथ सांकेतिक रूप में होना भरहुत कला की एक विशेषता है। भरहुत कला की एक और विशेषता यह है कि इसमें चित्रों के साथ कथा वर्णन भी मिलता है जिससे दृश्य को पहचानना तथा समझना आसान हो जाता है—यह अभ्यास कालान्तर में प्रयोग नहीं किया गया। यद्यपि चित्रों की संख्या इतनी अधिक है कि सामान्यतया इसमें भावाभिव्यक्ति की कमी रहती है। भरहुत कला मौर्यों की एक सरल कला के विकास को प्रकट करती है। अब मैदान में एक छिछले अवसाद के अलावा इस बौद्ध स्थल के विख्यात स्तूप संबंधी कुछ भी दृष्टिगोचर नहीं होता। ईंटें तथा बलुआ पत्थर के टुकड़े चारों ओर बिखरे पड़े हैं तथा बलुआ पत्थर से बना बाड़ा, स्तंभ तथा प्रवेश द्वार, जिन्होंने स्तंभ को घेरा हुआ था, को हटाया जा चुका है। इन कलाकृतियों में से अधिकतर को भारतीय संग्रहालय कोलकाता में प्रदर्शित किया गया है।

भटिंडा (30°13′ उत्तर, 74°57′ पूर्व)

सल्तनत काल में भटिंडा उत्तर-पश्चिम पंजाब का एक महत्वपूर्ण दुर्ग था। भारत में मंगोल आक्रमणों से प्रतिरक्षा के निमित्त इस दुर्ग का निर्माण कराया गया था। इसके साथ ही यह दुर्ग भारतीय शासकों के लिए मध्य एशिया एवं अफगानिस्तान में आक्रमण करने में भी द्वार का काम करता था। इस प्रकार इस दुर्ग का दोहरा महत्व था।

धीरे-धीरे इस दुर्ग के आसपास एक नगर बस गया, तथा इस दुर्ग के नाम के कारण उसका नाम भी भटिंडा पड़ गया। इस प्रकार इस नगर का ऐतिहासिक महत्व है। ऐसा माना जाता है कि इस दुर्ग का निर्माण दूसरी सदी ई. में हिन्दू राजा दाब ने करवाया था। अतः भटिंडा शहर लगभग 1900 वर्ष प्राचीन है। इस प्रकार यह पंजाब के प्राचीनतम शहरों में से एक है। 'भटिंडा' शब्द की उत्पत्ति के संबंध में भिन्न-भिन्न धारणाएं हैं। यद्यपि इसे भाटी वंश के शासकों द्वारा जीतने के बाद ही भटिंडा कहा जाने लगा।

भटिंडा के किले का निर्माण लाहौर के किले के साथ ही प्रसिद्ध ब्राह्मण लालियाशाही वंश द्वारा कराया गया था। क्योंकि ये दोनों ही नगर इस वंश की जुड़वा राजधानियां थीं। दिल्ली सल्तनत के आक्रमण के पश्चात् यह इल्तुतमिश के अधीन आ गया। भटिंडा का किला रजिया सुल्तान के शासनकाल की दृष्टि से अत्यधिक महत्व रखता है। इसके बाद यह मुगलों के अधिकार में आ गया तथा मुगल वंश के पतनोपरांत इस पर पटियाला के महाराजा का अधिकार हो गया।

भटिंडा का यह महत्वपूर्ण किला आज भी ज्यों का त्यों खड़ा हुआ है तथा अपने ऐतिहासिक महत्व की याद दिलाता है।

thejobsyogi.com

thejobsyogi.com

भटकल (13.96° उत्तर, 74.56° पूर्व)

भटकल एक छोटा नगर है, जो कर्नाटक में अरब सागर के पश्चिमी तट हाइवे पर स्थित है। ऐतिहासिक दृष्टि से भटकल एक महत्वपूर्ण बंदरगाह था तथा विजयनगर साम्राज्य के दिनों में अंतरराष्ट्रीय व्यापार का एक प्रमुख केंद्र था।

सारस्वतों (जिन्हें कोंकणीयों के नाम से भी जाना जाता है) ने तटीय व्यापार को भरपूर प्रोत्साहन दिया तथा कला एवं निर्माण कार्यों में अकूत संपदा व्यय की। सातुप्पा नायक ने तिरुमाला मंदिर का निर्माण कराया। यहां व्यापारियों द्वारा भी कई मंदिर बनवाए गए, जिनमें केटप्पा नारायण मंदिर, आदिक नारायन मंदिर एवं लक्ष्मी नारायण मंदिर प्रमुख हैं।

1546 ई. में निर्मित केटप्पा नारायण मंदिर दक्षिण भारतीय स्थापत्य कला शैली का एक सुंदर नमूना है। यहां के अधिकांश मंदिर कठोर ग्रेनाइट चट्टानों से बने हैं तथा उन पर तांबे या लोहे का पत्र चढ़ाया गया है।

विजयनगर के शासक कृष्णदेव राय (1509-1530 ई.) की अनुमति से पुर्तगालियों ने यहां एक दुर्ग का निर्माण भी कराया था।

भटनेर (29.58° उत्तर, 74.32° पूर्व)

भटनेर, राजस्थान में हनुमानगढ़ के समीप स्थित है। 12-13वीं शताब्दी ईस्वी के दौरान यह जैसलमेर के भाटियों के अधीन था तथा यह अपने लंबे एवं विशाल किले के लिए प्रसिद्ध था।

भटनेर, जो कि वास्तव में राजस्थान में स्थित है, अविभाजित पंजाब की सामरिक जरूरतों के अनुसार ज्यादा महत्वपूर्ण था। 1399 में यहां अपने भारतीय अभियान के क्रम में तैमूर ने भयंकर आक्रमण किया। फिर मिर्जा कामरान ने इसे बल द्वारा जीत लिया। बाद में यह किला उस समय अंग्रेजों के अधिकार में चला गया, जब 1800 ई. में जार्ज थामस ने इस पर अधिकार कर लिया।

यद्यपि वर्तमान समय में यहां पर इस दुर्ग एवं स्थान के अवशेष ही दिखाई देते हैं जिससे हम प्राचीन समय में इस स्थान का महत्व जान सकते हैं।

भट्टीप्रोलू (16.10° उत्तर, 80.78° पूर्व)

भट्टीप्रोलू, आंध्र प्रदेश के गुंटूर जिले में स्थित है तथा एक प्रसिद्ध बौद्ध स्थल है। यहां बौद्ध धर्म से संबंधित एक 'महास्तूप' है। यह स्तूप मजबूत ईंटों से निर्मित है तथा इसके गुम्बद का व्यास लगभग 40 मीटर है। उत्खनन में स्तूप के केंद्रीय कक्ष के समीप तीन प्रस्तर के पात्र प्राप्त हुए हैं। एक पात्र में काले पत्थर की शवाधान पत्रिका, तांबे के मनके, मोती एवं विभिन्न प्रकार के आभूषण भरे हुए हैं। जबकि एक अन्य में हरितमणि से निर्मित एक क्रिस्टल टोकरी है, जिसमें अस्थियों के तीन टुकड़े एवं आभूषण भरे हुए हैं।

भट्टीप्रोलु दक्कन एवं तमिलनाडु के मध्य के व्यापारिक मार्ग का एक प्रमुख स्थल था तथा इस क्षेत्र में कई अन्य बौद्ध स्थापत्य रचनाएं होने का अनुमान है। यहां पाए गए स्तूप इस क्षेत्र के व्यापारियों की बौद्ध धर्म में गहरी आस्था को परिलक्षित करते हैं। हाल के उत्खनन में यहां से एक बौद्ध मठ के होने के प्रमाण भी पाए गए हैं।

भीमबेटका (22°56′ उत्तर, 77°36′ पूर्व)

मध्य प्रदेश में स्थित भीमबेटका, द. एशिया में प्रागैतिहासिक शैल चित्रकारी का सबसे समृद्ध संग्रह है तथा यहां भारत में शैल चित्रकारी का एकमात्र उदाहरण है। यहां कई गुफाएं हैं, जिसमें सुंदर चित्रकारी की गई है। इन गुफाओं की सम्पूर्ण आंतरिक दीवारें इन चित्रों से भरी पड़ी हैं, जिनकी संख्या 133 है। यह देश की शैल चित्रकारी का सबसे बड़ा खजाना है। भारत में शैल चित्रकला का इतिहास लगभग 10 हजार वर्ष प्राचीन है। प्राचीन स्थलों के पुरातात्विक उत्खननों से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि भारत शैल चित्रकला को मान्यता एवं संरक्षण देने वाला विश्व का पहला देश है।

विन्ध्य पर्वत मालाओं के उत्तरी छोर से घिरा हुआ भीमबेटका भोपाल से लगभग 46 किमी. की दूरी पर स्थित है। घने जंगल एवं ऊबड़-खाबड़ मैदान से युक्त इस क्षेत्र में 600 से अधिक शैल गुफाएं हैं, जिनका उपयोग आदि मानव अपने निवास स्थान के लिए करते थे। भीमबेटका की गुफाओं में बने ये चित्र प्रागैतिहासिक मानव जीवन की विभिन्न क्रियाओं का सुंदर प्रतिदर्शन कराते हैं। इस प्रकार ये उस काल के मानव के संबंध में जानकारी प्राप्त करने का एक महत्वपूर्ण स्रोत भी हैं। अधिकांश भित्ति चित्र सफेद एवं लाल रंग से बने हुए हैं किंतु यदाकदा हरे एवं पीले रंगों का प्रयोग भी किया गया है। इन चित्रों की विषयवस्तु तत्कालीन मानव की दैनिक क्रियाओं से संबंधित है। चित्रों का बारीकी से अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि एक ही कैनवास का प्रयोग कई लोगों द्वारा अलग-अलग समय में किया गया।

वर्तमान में भीमबेटका की गुफाएं यूनेस्को की विश्व विरासत स्थल सूची में दर्ज हैं।

भीटा (25.45° उत्तर, 81.85° पूर्व)

भीटा, यमुना नदी के दाहिने तट पर उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद जिले में स्थित है। यहां के पुरातात्विक उत्खनन से इस बात के प्रमाण प्राप्त हुए हैं कि प्राचीन काल में यह स्थान व्यापारियों एवं कलाकारों का एक छोटा नगरीय स्थान था। यहां से 200 ईसा पूर्व से 200 ई. तक के समय के अनेक सिक्के प्राप्त हुए हैं। अधिकांश सिक्के तांबे के बने हैं तथा कुषाण शासकों एवं उनके अधीनस्थ शासकों से संबंधित हैं। यद्यपि यहां से अभी तक गुप्त काल का कोई सिक्का प्राप्त नहीं हुआ है फिर भी यहां से गुप्तकाल की सीलें एवं टेराकोटा की वस्तुएं बड़ी मात्रा में प्राप्त की गई हैं। यहां से 13 सांचे प्राप्त हुए हैं, जिनमें से 5 हाथी दांत के बने हुए हैं। बड़ी संख्या में यहां

thejobsyogi.com

से सीलों या मुहरों की प्राप्ति से यहां व्यापारिक निगमों या श्रेणियों के अस्तित्वमान होने का अनुमान है।

भीटा से प्राप्त स्थलों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण एक सीध में कई दुकानों का पाया जाना है, जिनके सामने एक लंबी गली है। अट्ठारहवीं शताब्दी (अनुमानित) के मंदिर के होने प्रमाण भी यहां के उत्खनन से प्राप्त हुए हैं।

भीतरगांव (26°12′ उत्तर, 80°16′ पूर्व)

कानपुर नगर से 60 किमी. की दूरी पर दक्षिण-पश्चिम की ओर यह गांव बसा हुआ है, जो कि भारत में मंदिर शिल्पकला के उत्कृष्ट नमूनों में से एक है। यहां पर गुप्तकाल में निर्मित एक सुंदर मंदिर प्राप्त हुआ है। लगभग छठी शताब्दी में निर्मित यह मंदिर ईंटो से निर्मित है, जिसका निर्माण एक गोल चबूतरे पर किया गया था। यह मंदिर भगवान विष्णु से संबंधित है। इसका बाहरी भाग कलापूर्ण है। भारतीय मंदिरों में 'शिखर' सर्वप्रथम इसी मंदिर में पाया गया है। बड़ी ईंटों को मिट्टी के गारे पर व्यवस्थित करके मंदिर का निर्माण किया गया है। यद्यपि मंदिर के अंदर के भाग में केवल गर्भगृह तथा द्वारमंडप हैं, बाहरी दीवारों पर ईंटों की नक्काशी तथा अलंकृत टेराकोटा के फलक हैं। गर्भगृह के ऊपर एक ऊपरी कक्ष भी था जिसे 18वीं शताब्दी में जला कर नष्ट कर दिया गया। मंदिर में चतुर्दिक मिट्टी की अनेक मूर्तियां रखी गई हैं, जो महाभारत, रामायण एवं पुराणों से संबंधित हैं।

यह मंदिर शिखर शैली या नागर शैली के मंदिरों के प्रारंभिक उदाहरणों में से एक है, तथा समतल छत वाले वर्गाकार तीर्थ-मंदिरों की प्रारंभिक गुप्त शैली से बेहद भिन्न है। कई टैराकोटा के फलक तथा वास्तुकला की सुंदरता हेतु बनाए गए भित्ति चित्र इस मंदिर की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। यह एक तथ्य है कि टैराकोटा की मूर्तियां मंदिर का एक अभिन्न अंग बनाती हैं। फलकों को मकरों (जल राक्षसों) द्वारा विनष्ट कर दिया गया तथा परनाले जैसे मुख शेष हैं। एल एल बाशम के अनुसार, यह शैली बौद्ध कलाकारों द्वारा विकसित शैली से पहले की है। जोकि तदनंतर दक्षिण-पूर्व एशिया के कई भागों तक पहुंची।

भीतरी (25.58° उत्तर, 83.57° पूर्व)

भीतरी, पूर्वी उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जिले में स्थित है तथा प्रसिद्ध सम्राट स्कंदगुप्त (455-467 ई.) के स्तंभलेख के लिए प्रसिद्ध है। यह स्तंभलेख लाल बलुए पत्थर से निर्मित है। इस स्तंभलेख पर गुप्त शासकों के विजय अभियानों का उल्लेख है तथा यह गुप्तों की हूणों पर विजय की सूचना भी देता है। इस लेख के अनुसार, स्कंदगुप्त ने पुष्यमित्रों पर विजय प्राप्त की थी, हूणों को पराजित किया था तथा वंश की प्रतिष्ठा को पुनर्स्थापित किया था।

नरसिंह गुप्त के पुत्र कुमार गुप्त द्वितीय का एक मुहरयुक्त लेख भी यहां से प्राप्त किया गया है। इस लेख से भी प्रारंभिक गुप्त शासकों के संबंध में महत्वपूर्ण जानकारियां प्राप्त होती हैं। इस मुहर लेख के अनुसार नरसिंह गुप्त ने बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया था तथा अपने सिंहासन को अपने पुत्र के लिए छोड़ दिया था। इस लेख में उल्लिखित तथ्यों की पुष्टि ह्वेनसांग के विवरणों से भी होती है।

भीतरी से प्राप्त अन्य अवशेषों में स्कंदगुप्त द्वारा ही निर्मित एक विष्णु मंदिर के अवशेष भी हैं। इस मंदिर का निर्माण बलुआ पत्थर एवं ईंटों से किया गया था। यह मंदिर पत्थर एवं ईंट दोनों के सम्मिश्रण से मंदिर निर्माण का एक सुंदर नमूना है। साथ ही यह दोनों के सम्मिश्रण का एक नया प्रयोग भी था। क्योंकि इससे पहले धार्मिक स्थलों के निर्माण में या तो बलुआ पत्थर का उपयोग होता था या फिर ईंटों का। यहां उत्खनन से एक मंदिर में श्रीकुमार गुप्त का भी एक लेख पाया गया है तथा कृष्ण एवं यशोदा की आकृति युक्त एक अन्य अवशेष भी पाया गया है। लेख में स्कंद गुप्त का कृष्ण तथा उनकी मां का देवकी के रूप में उल्लेख किया गया है।

thejobsyogi.com

भुवनेश्वर (20.27° उत्तर, 85.84° पूर्व)

मंदिरों का शहर भुवनेश्वर, वर्तमान में उड़ीसा की राजधानी भी है। यहां कलिंग काल से संबंधित 30 से अधिक मंदिर आज भी विद्यमान हैं। यहां का परशुरामेश्वर मंदिर प्रारंभिक उड़िया कला शैली (750-900 ई.) का एक सुंदर नमूना है। शहर के बाहरी भाग में स्थित मुक्तेश्वर का छोटा मंदिर 900-1100 ई. काल का सुंदर प्रतिनिधित्व करता है। विशालकाय लिंगराज मंदिर भी इसी काल से संबंधित है। लिंगराज मंदिर भारत का सबसे बड़ा शिवलिंग मंदिर है। इसका निर्माण सोम शासक ययाति ने प्रारंभ करवाया था। मध्यम आकार के कई अन्य मंदिर 1100-1250 ई. के काल अर्थात् तृतीय चरण का प्रतिनिधित्व करते हैं। स्वतंत्रता से कुछ समय पूर्व तक ओडिशा की राजधानी कटक थी।

भूमरा (24°24′ उत्तर, 80°43′ पूर्व)

भूमरा मध्य प्रदेश के बघेलखंड क्षेत्र में स्थित है तथा पांचवीं-छठवीं ईस्वी के गुप्त युग के शिव मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। यह मंदिर वास्तुकला के परवर्ती चरण का एक सुंदर नमूना है। गुप्तकालीन प्रारंभिक मंदिरों के विपरीत इस मंदिर में एक बड़ा गर्भगृह है, तथा इसकी छत भी भिन्न है। जबकि गुप्तकाल के प्रारंभिक मंदिरों की छत सपाट है एवं उनमें छोटे छज्जे पाए जाते हैं। इसमें एक बड़ा वर्गाकार गर्भगृह है। इसके साथ देवता हेतु अपेक्षाकृत छोटा वर्गाकार कक्ष है। बड़े गर्भगृह में प्रवेश हेतु एक बड़ा द्वार है तथा उसके चारों ओर प्रदक्षिणापथ बना हुआ है। जिसे तदनंतर संधार प्रासाद कहा गया। भूमरा मंदिर की एक अन्य विशेषता है अग्रभाग की सीढ़ियों के दोनों ओर छोटे तीर्थ मंदिरों की उपस्थिति। इस शैली ने कालांतर में मंदिर के चार कोनों में चार तीर्थ मंदिरों के निर्माण का नेतृत्व किया। वास्तुकला के लेखों में इस प्रकार की व्यवस्था को 'पंचायतन' कहा गया।

अवशेष दर्शाते हैं कि मंदिरों को विभिन्न प्रकार की मूर्तियों द्वारा सजाया गया है, जिनमें गंगा-यमुना की मूर्तियां सम्मिलित हैं। यद्यपि सबसे महत्वपूर्ण मूर्ति गणेश की है जोकि, सामान्यतया, पाए जाने वाले चूहे (वाहन) के बिना है। माना गया है कि भगवान गणेश की यह मूर्ति प्राचीनतम मूर्तियों में से एक है।

बीदर (17.9° उत्तर, 77.5° पूर्व)

वर्तमान समय में कर्नाटक में स्थित बीदर, बहमनी साम्राज्य का एक हिस्सा था। अहमदशाह प्रथम ने 1425 में राजधानी को गुलबर्गा से बीदर स्थानांतरित किया था। बहमनी साम्राज्य के विखंडन के पश्चात यह बीदर के बरीदशाही वंश के अंतर्गत आ गया। 1619 में बीजापुर के आदिलशाही वंश द्वारा इस पर अधिकार कर लिया गया। 1657 में औरंगजेब ने बीदर पर अधिकार कर लिया। तथा इसके उपरांत यह हैदराबाद के निजाम के साम्राज्य का एक हिस्सा बन गया। स्वतंत्र भारत में कर्नाटक राज्य बनने के उपरांत यह स्थायी रूप से कर्नाटक में सम्मिलित हो गया।

बीदर में बासव के नेतृत्व में लिंगायतों का धार्मिक आंदोलन भी हुआ। बासव कल्याण, जहां शैववाद का काफी प्रचार-प्रसार हुआ, बीदर जिले का ही एक तालुका है।

बीदर धार्मिक इमारतों एवं दक्कनी शैली की कला एवं स्थापत्य के लिए प्रसिद्ध है।

जैसे ही हम शहर में प्रवेश करते हैं, हमें बीदर का ऐतिहासिक किला दिखाई पड़ता है। यह किला 14-15वीं शताब्दी में बहमनी शासकों की शक्ति का केंद्र था। वर्तमान समय में इसका अधिकांश हिस्सा नष्ट हो चुका है। यहां बहमनी शासकों के 12 मकबरे हैं। इनमें से सबसे प्रसिद्ध अहमदशाह प्रथम का मकबरा है। महमूद गवां का मदरसा एक अन्य महत्वपूर्ण इमारत है, जिसे ईरानी शैली में निर्मित किया गया है। महमूद गवां बहमनी साम्राज्य का प्रसिद्ध प्रधानमंत्री था। किसी जमाने में यह मदरसा न केवल भारत अपितु पूरे विश्व में इस्लाम की शिक्षा का एक महत्वपूर्ण केंद्र था तथा पूरे संसार से छात्र यहां अध्ययन हेतु आते थे। सोला खंबा मस्जिद बीदर की सबसे प्राचीन इस्लामी इमारत है तथा भारत की सबसे बड़ी मस्जिदों में से एक है। नानक झूरा, गगनमहल एवं रंगीन महल भी यहां की दर्शनीय इमारते हैं

यद्यपि वर्तमान समय में बीदर, कर्नाटक के गंभीर सूखा प्रभावित क्षेत्र में आता है।

बीजापुर (16.83° उत्तर, 75.71° पूर्व)

बीजापुर कर्नाटक में है। इस प्रसिद्ध शहर की नींव कल्याणी के चालुक्य शासकों ने 10वीं-11वीं शताब्दी के मध्य रखी थी। चालुक्य इसे 'विजयपुर' कहकर पुकारते थे तथा इसी से आगे चलकर इसका नाम 'बीजापुर' पड़ गया।

13वीं शताब्दी में बीजापुर, खिलजी वंश के शासक अलाउद्दीन खिलजी के अंतर्गत आ गया। 1347 में इस पर बहमनी साम्राज्य के बीदर के शासकों ने अधिकार कर लिया। बीदर में बहमनी साम्राज्य के पतनोपरांत, एक राज्यपाल यूसुफ आदिलशाह ने यहां 1489 में अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी तथा बीजापुर में आदिलशाही वंश की स्थापना की। बीजापुर का यह स्वतंत्र अस्तित्व 1686 में तब तक बना रहा, जब तक कि मुगल शासक औरंगजेब ने इसे अधिग्रहित कर मुगल साम्राज्य में सम्मिलित नहीं कर लिया।

आदिलशाही वंश के शासनकाल में यहां कला एवं स्थापत्य के क्षेत्र में अत्यधिक उन्नति हुई तथा शीघ्र ही यह कला एंव संस्कृति का एक महत्वपूर्ण केंन्द्र बन गया। आदिलशाही शासकों ने स्थापत्य कला को भरपूर प्रोत्साहन दिया, इसीलिए बीजापुर में कई प्रसिद्ध इमारतों का निर्माण हुआ। यहां 50 से अधिक मस्जिदों, 20 से अधिक मकबरों एवं कई अन्य महत्वपूर्ण इमारतों का निर्माण किया गया।

मो. आदिलशाह का 'गोल गुम्बद' पूरे विश्व में प्रसिद्ध है। यह एक भव्य इमारत है तथा प्रतिवर्ष हजारों पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करता है।

यहां स्थित जामा मस्जिद दक्षिण भारतीय स्थापत्य कला शैली का एक अन्य सुंदर उदाहरण है। इसमें एक बड़ा उल्टे कटोरे के आकार का गुंबद है एवं एक बड़ा बरामदा है इसका निर्माण अली आदिलशाह प्रथम (1557-1579) ने कराया था।

इब्राहीम रौजा, 17वीं शताब्दी में निर्मित प्रसिद्ध मकबरा है। यह शहर के पश्चिमी ओर स्थित एक सुंदर इमारत है। इसमें ढलवांदार मीनारें हैं तथा इसके पैनल कमल की आकृतियुक्त वक्राकार तरीके से निर्मित हैं। यह भी आदिलशाही वंश की वास्तुकला का एक सुंदर नमूना है।

बीकानेर (28° उत्तर, 73° पूर्व)

चारों ओर से ऊंची सुरक्षात्मक दीवार से घिरे हुए बीकानेर शहर की स्थापना 1465 ई. में जोधपुर के राठौर शासक राव बीकाजी ने की थी। बीका ने यह क्षेत्र 1465 से जीतना शुरू कर दिया तथा 1488 में उसने बीकानेर नगर बनाना आरंभ किया—जिसका अर्थ है 'बीका का अधिवास', आगे चलकर बीकानेर राजपूताना का एक शक्तिशाली राज्य बना। आज भी बीकानेर में मध्यकालीन जीवन की झलक देखी जा सकती है। बीकानेर, ऊंटों की सवारी के लिए पूरे विश्व में प्रसिद्ध है तथा 'ऊंटों के देश' या 'ऊटों के शहर' के नामों से प्रसिद्ध है। यहां कई सुंदर किले, महल एवं मंदिर हैं, जो यहां की, भव्यता की झलक देते हैं। हर साल लगने वाला ऊंट मेला इस शहर की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। वर्तमान समय में बीकानेर ऊंट अनुसंधान का एक प्रमुख केंद्र है।

1570 में, बीकानेर के कल्याणमल ने आमेर के राजा भगवान दास के माध्यम से अकबर से मित्रता कायम कर ली तथा अपने पूरे जीवन में वह अकबर के प्रति निष्ठावान बना रहा। भारत में ब्रिटिश शासन की स्थापना के पश्चात बीकानेर के शासकों ने ब्रिटिश आधिपत्य स्वीकार कर लिया।

thejobsyogi.com

बीकानेर में ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्व के अनेक स्थान हैं। इनमें प्रमुख हैं—जूनागढ़ किला, लालगढ़ किला एवं देशनोक का करणी माता मंदिर। यह मंदिर 600 वर्ष पुराना है तथा इसमें चांदी एवं संगमरमर की सुंदर नक्काशी की गई है। ऐसी मान्यता है कि माता के भक्तों की आत्मा चूहों में निवास करती है, इसीलिए चूहों को यहां पवित्र माना जाता है। यहां गजनेर वन्य जीव अभयारण्य तथा कपिल मुनि का पवित्र स्थल भी है।

यहां कई जैन मंदिर भी हैं, जिनमें बंदेश्वर जैन मंदिर सबसे प्रसिद्ध है।

बोध गया (24.69° उत्तर, 84.99° पूर्व)

बिहार में फाल्गु नदी के तट पर स्थित, बोध गया बौद्ध धर्म के अनुयायियों का एक महत्वपूर्ण धार्मिक स्थल है। यह वही स्थान है, जहां शाक्यमुनि (गौतम बुद्ध) ने मानव जीवन के करुणामयी दृश्यों से प्रभावित होकर तपस्या प्रारंभ की थी। यहां आज भी वह विशाल बोधिवृक्ष विद्यमान है, जिसके नीचे बुद्ध ने अपनी तपस्या प्रारंभ की थी तथा निर्वाण प्राप्त किया था। बोध गया का महाबोधि मंदिर विभिन्न संस्कृतियों के मिलन का एक अच्छा उदाहरण है। इस मंदिर में गुप्तवंश एवं उसके बाद के वंशों के विभिन्न प्रमाण प्राप्त होते हैं। मंदिर की दीवारों पर महात्मा बुद्ध की विभिन्न अवस्थाओं एवं रूपों की झलक दिखाई देती है तथा परम पावन स्थल में विशाल बुद्ध पृथ्वी का स्पर्श करते दिखाई देते हैं, जिसका बौद्ध कथाओं में महत्व है। मंदिर में अभिलेख हैं जिनमें श्रीलंका, चीन, म्यांमार के सातवीं से दसवीं शताब्दी के तीर्थयात्रियों के विषय में लिखा है। इसे बौद्ध धर्म का उद्गम स्थल माना गया है अशोक के अभिलेख में इसे सम्बोधि कहा गया है जहां अशोक का अभिषेक हुआ। फाह्यान तथा ह्वेनसांग ने भी यहां की यात्रा की थी। सिंघल के राजा मेघवर्ण ने यहां एक संघ का निर्माण कराया था। यहां से कई महत्वपूर्ण लेख भी प्राप्त हुए हैं।

1947 के पश्चात् चीन, तिब्बत एवं म्यांमार ने यहां कई बौद्ध मठों का निर्माण करवाया है।

ब्रह्मगिरि (11°57′ उत्तर, 75°57′ पूर्व)

ब्रह्मगिरि कर्नाटक के चित्रदुर्ग जिले में स्थित है। इस स्थल पर हुई खुदाई में मिले पुरातात्विक साक्ष्यों से पता चला है कि ब्रह्मगिरि मौर्यकाल के पहले से ही दक्षिण भारत का एक प्रमुख केंद्र रहा है। प्रथम चरण में हमें अच्छी तरह से पॉलिश की हुई पाषाण से बनी कुल्हाड़ी तथा तांबे एवं कांसे की वस्तुएं प्राप्त होती हैं। महापाषाण काल लोहे की वस्तुओं एवं काले व लाल अचित्रित बर्तनों द्वारा पहचाने जाते हैं। सैकड़ों वर्षों तक यहां निरन्तर बस्तीकरण के कारण यह एक प्रभावशाली नगर बन गया, विशेषतः मौर्य साम्राज्य की पश्चिमी चौकी बनने के बाद तो यह और भी प्रभावशाली हो गया। यह कृष्णा तथा गोदावरी नदियों के उद्गम स्थल की तीर्थ यात्राओं का आरम्भ स्थल भी था।

इस पर सातवाहनों ने प्रथम शताब्दी ईस्वी में कब्जा कर लिया। यहां से सातवाहन काल की प्राचीन वस्तुएं मिली हैं जिसमें सम्मिलित हैं—मनके, कांच, अर्द्ध-मूल्यवान पत्थर तथा मिट्टी, कांसे व सोने की चूड़ियां इत्यादि। रोमन सभ्यता से संबंधित रूले मृदभांडों (Roulette Pottery) का पाया जाना सातवाहन काल में पश्चिमी देशों के साथ व्यापार संबंधों को इंगित करता है। सम्राट अशोक के दो लघु शिलालेखों में से एक ब्रह्मगिरि में पाया गया है। यह शिलालेख इस संभावना की ओर संकेत करता है कि बौद्ध धर्म अपनाने के अढ़ाई वर्ष पश्चात् अशोक ने बौद्ध 'संघ' में पूर्ण भिक्षु के रूप में प्रवेश कर लिया था।

बूंदी (25.44° उत्तर, 75.64° पूर्व)

बूंदी, राजस्थान का एक जिला है, जिसका इतिहास 12वीं शताब्दी ई. तक प्राचीन है। 12वीं सदी में राव देवा ने इस क्षेत्र को विजित कर लिया तथा बूंदी एवं हड़ौती की स्थापना की। इसका संस्थापक परिवार हाड़ा चौहान शासकों से संबंधित था। 17वीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में, जब मुगल साम्राज्य पर जहांगीर का शासन था, बूंदी के शासक राव रतन सिंह ने अपने पुत्र माधव सिंह को कोटा की जागीर प्रदान की। इसके पश्चात कोटा राजपूत कला एवं संस्कृति का एक महत्वपूर्ण केंद्र बन गया। तारागढ़ का किला हाड़ा राजपूत शासकों की वास्तुकला का एक सुंदर एवं भव्य उदाहरण है।

बूंदी शहर में कई बावड़ियां (बावली या छोटी झीलें) हैं। इनमें रानी की बावड़ी सबसे सुंदर है। बूंदी के शासकों ने चित्रकला को भी भरपूर संरक्षण एवं प्रोत्साहन दिया। वे कला एवं संस्कृति की अन्य विधाओं के भी संरक्षक थे।

चित्रकला की बूंदी शैली की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएं हैं: जैसे—विविध रंगों एवं सोने का प्रयोग, चित्रकला की मेवाड़ शैली का प्रभाव, गोलाकार मुखाकृति, लाल एवं गुलाबी रंगों से अलंकृत चेहरे एवं सुंदर रंगों से युक्त केले के वृक्ष। इस शैली के चित्रों में आकाश को भी विभिन्न रंगों से रंगा गया है तथा कई चित्रों में आकाश में लाल रंग की एक फीतेनुमा आकृति भी परिलक्षित होती है।

राजा सूरजमल हाड़ा ने मुगल शासक अकबर का आधिपत्य स्वीकार कर लिया था। इसके पश्चात बूंदी के शासकों ने मुगल साम्राज्य के प्रति सदैव निष्ठा बनाए रखी।

बुरहानपुर (21.3° उत्तर, 76.23° पूर्व)

मध्य प्रदेश के दक्षिण-पश्चिम में ताती नदी के उत्तरी तट पर स्थित बुरहानपुर का नाम शेख बुरहानुद्दीन के नाम पर पड़ा। नासिर खान फारुकी, जो कि खानदेश के फारुकी वंश का प्रथम स्वतंत्र शासक था, ने 1399 में बुरहानपुर की स्थापना की। यहां पहले बसाना खेड़ा अथवा वसाना नाम का पुराना शहर था। 1601 में मुगल सम्राट ने इसे जीता और इससे पहले अहमदनगर, मालवा तथा गुजरात के शासकों ने इसे कई बार रौंदा।

thejobsyogi.com

विशाल द्वारों वाले बुरहानपुर ने मुगलकाल में दक्कन मुख्यालय का काम किया जब तक कि 1636 में औरंगजेब ने राजधानी को औरंगाबाद स्थानांतरित न कर लिया। मेजर जनरल आर्थर वेलेस्ले, जो कि बाद में वेल्गिटन का प्रथम ड्यूक भी बना था, ने 1803 में बुरहानपुर पर कब्जा कर यहां मराठा-मुगल संघर्ष को समाप्त किया। 1805 में पुनः इसे सिंधियाओं ने हथिया लिया एवं 1861 में ब्रिटिश साम्राज्य को सौंप दिया गया। 1600 के बाद बुरहानपुर मुगल साम्राज्य का दूसरा प्रमुख शहर बन गया।

बुरहानपुर में ऐतिहासिक महत्व के स्थलों में एक तहस-नहस हो चुका गढ़ तथा बादशाही किला (1400 ई.), बीबी मस्जिद जिसका निर्माण 1585 में हुआ, तथा जामा मस्जिद जिसका निर्माण 1588 ई. में हुआ, शामिल हैं। *आइने अकबरी* में भी बुरहानपुर का उल्लेख हुआ है। इस शहर की यात्रा सर थामस रो (1614), विलियम फिंच (1608-11) तथा फ्रांसीसी यात्री, टेवेरनियर (1641) ने की। यहां बैरम खान के पोते शाह नवाज खान का मकबरा आदि जैसे प्रमुख मुगल स्मारक हैं।

बुरहानपुर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपने उत्कृष्ट वस्त्र, स्वर्ण के तार की चित्रकारी, अन्य संबंधित कला व उद्योगों, अपनी बैंकिंग व व्यापार संबंधित गतिविधियों के कारण प्रसिद्ध है। यहां मलमल, स्वर्ण तथा चांदी, जरी वस्त्र तथा लाख का विस्तृत व्यापार विकसित हुआ। हालांकि 18वीं शताब्दी के दौरान व्यापार में कमी आई। वर्तमान में यह कपास उत्पादकों के लिए एक बाजार के रूप में विकसित हो गया है तथा यहां काफी कपड़ा मिल, पावरलूम, हथकरघा से संबंधित उद्योग हैं।

बुर्जहोम (34°10′ उत्तर, 73°54′ पूर्व)

बुर्जहोम, श्रीनगर से 20 किमी. दूर उत्तर-पश्चिम की ओर कश्मीर घाटी में स्थित है। यह स्थल कश्मीर का इतिहास 2000 ईसा पूर्व तक पीछे ले जाता है। इस स्थल की प्राप्ति से, कुछ पश्चिमी इतिहासकारों का यह मत गलत सिद्ध हो जाता है कि आर्य, कश्मीर घाटी से आए थे तथा भारत में आर्यों के आगमन से पूर्व कश्मीर की कोई सांस्कृतिक पृष्ठभूमि नहीं थी।

पुरातात्विक उत्खननों से यह स्पष्ट होता है कि यहां नवपाषाणकालीन बस्ती थी तथा इसकी कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएं थीं, जो इसे भारत की तत्कालीन अन्य सभ्यताओं से एक अलग पहचान प्रदान करती है। यहां लोग गर्त या गड्ढों में निवास करते थे जो गोलाकार या अंडाकार होते थे। इनका गर्त निवास संभवतः ठंड से बचाव के लिए होता था। गुफ्फरकल के समान ही बुर्जहोम, कश्मीर घाटी में गर्त निवास का एक अच्छा उदाहरण है। बुर्जहोम के निवासी संभवतः कृषि कार्य से परिचित नहीं थे तथा उनके जीवनयापन का मुख्य आधार मत्स्यन एवं आखेट था। मछली पकड़ने के कांटों एवं पाषाण हथियारों की प्राप्ति से इस धारणा की पुष्टि होती है। इन लोगों की एक अन्य प्रमुख विशेषता पाषाण हथियारों के साथ ही बड़ी मात्रा में हड्डियों से बने हथियारों का उपयोग किया जाना भी है। यहां से तीर, सुइयां, दरातियां इत्यादि प्राप्त हुए हैं, जो हड्डियों के बने हुए हैं। यहां से मानव के साथ पालतू पशुओं के शवाधान का साक्ष्य मिलना भी एक उल्लेखनीय विशेषता है। एक स्थान पर मानव के साथ कुत्ते को दफनाने के प्रमाण मिले हैं। यह विशेषता मध्य एशियाई नवपाषाण संस्कृति से साम्यता रखती है। यद्यपि, इस बात से इस तरह का कोई निष्कर्ष निकालना तर्कसंगत नहीं होगा की ये लोग मध्य एशिया से यहां आए थे।

thejobsyogi.com

C

कालीकट (11.25° उत्तर, 75.77° पूर्व)

कालीकट केरल के मालाबार तट पर स्थित है। प्राचीन एवं मध्यकालीन भारत में यह एक प्रमुख बंदरगाह नगर था। कालीकट फारस की खाड़ी में पेगू एवं मलक्का तथा पश्चिम में लालसागर के बीच सामुद्रिक व्यापारिक गतिविधियों का एक महत्वपूर्ण केंद्र था।

प्रसिद्ध पुर्तगाली व्यापारी वास्को-डि-गामा 27 मई 1498 को कालीकट के तट पर पहुंचा। भारत तथा यूरोप के मध्य व्यापारिक मार्ग खोलने के लिए उसने एक बार पुनः वर्ष 1502 में भारत की यात्रा की। वास्को-डि-गामा ने अपनी प्रथम यात्रा में व्यापार के निमित्त जितना धन निवेश किया था, उसे उससे 52 गुने से भी अधिक लाभ प्राप्त हुआ। जब पुर्तगाली नाविक कालीकट आए, उस समय कालीकट हिन्दू शासक जमोरिन के अधीन था। 1502 में पुर्तगालियों ने अपनी प्रथम व्यापारिक फैक्ट्री कालीकट में ही स्थापित की। कोचीन तथा अंततः गोवा में अपना मुख्यालय स्थानांतरित करने से पूर्व तक कालीकट ही पुर्तगालियों की व्यापारिक गतिविधियों का मुख्यालय रहा। काली मिर्च कालीकट से निर्यात की सबसे प्रमुख वस्तु थी। कालीकट सूती वस्त्र उत्पादन का भी महत्वपूर्ण केंद्र था।

17वीं एवं 18वीं शताब्दी के दौरान कालीकट पर नियंत्रण को लेकर अंग्रेज एवं पुर्तगालियों के मध्य कई बार संघर्ष हुआ। 1790 में अंग्रेजों ने कालीकट पर अधिकार कर लिया तथा उसके पश्चात यह 1947 तक अंग्रेजों के अधीन ही बना रहा। वर्तमान समय में कालीकट केरल का एक छोटा बंदरगाह एवं प्रमुख वाणिज्यिक केंद्र है।

खंभात (22.3° उत्तर, 72.62° पूर्व)

खंभात, खंभात की खाड़ी में सौराष्ट्र तट पर स्थित है। प्राचीन एवं मध्यकालीन भारत में पश्चिमी क्षेत्र का यह महत्वपूर्ण बंदरगाह था। विभिन्न समयों में यह भिन्न-भिन्न नामों से जाना जाता रहा। जैन साहित्यिक कृतियों में इसे 'स्तंभतीर्थ' कहा गया है, जबकि अरबी भूगोलवेत्ता इसे 'खंभात' या 'खंबायत' या 'कन्बाया' नाम से पुकारते थे।

अरबी भूगोलवेत्ता सुलेमान (851 ई.) अपने विवरणों में खंभात का उल्लेख करता है। इसी प्रकार भारत यात्रा पर आने वाला एक अन्य अरबी भूगोलवेत्ता अल-मसूदी इसे चमड़ा उद्योग का एक प्रमुख केंद्र तथा प्रमुख बंदरगाह नगर बताता है। अल-मसूदी के अनुसार, खंभात में निर्मित चमड़े के जूते एवं अन्य उत्पाद अरबी देशों में अत्यधिक लोकप्रिय थे। खंभात में कई मुस्लिम व्यापारी भी रहते थे। इन्हें यहां पूर्ण धार्मिक स्वतंत्रता प्राप्त थी तथा ये निर्बाध ढंग से अपनी व्यापारिक गतिविधियां संचालित करते थे।

वेनिस का यात्री मार्कोपोलो हमें यह सूचना देता है कि 13वीं शताब्दी में जो जहाज खंभात आते थे, उनमें बड़ी मात्रा में सोना, चांदी एवं घोड़े लाए जाते थे।

अलाउद्दीन खिलजी का प्रसिद्ध सेनापति मलिक काफूर, जिसने अलाउद्दीन के दक्षिण भारतीय अभियानों का नेतृत्व किया था, खंभात का ही था तथा उसे यहां नुसरत शाह ने 1 हजार दीनार में खरीदा था।

- पहले मुगल फिर बाद में मराठों ने खंभात पर शासन किया। 1802 में पेशवा बाजीराव द्वितीय ने बसीन की संधि में खंभात अंग्रेजों को सौंप दिया।

कन्नूर/कन्नौर (11.86° उत्तर, 75.35° पूर्व)

कन्नौर, जिसे वर्तमान में कन्नूर कहा जाता है, केरल में स्थित है। भारतीय इतिहास के मध्यकाल में यह एक महत्वपूर्ण व्यापारिक केंद्र रहा था। जमोरिन शासकों, जिन्होंने 15वीं शताब्दी में मालाबार पर शासन किया था, के अधीन यह स्थल एक महत्वपूर्ण बंदरगाह बन गया था। इस बंदरगाह का अन्य बन्दरगाहों जैसे मद्रास, कोलम्बो, तुतीकोरिन, ऐलेप्पी, मंगलौर, मुम्बई तथा कराची से सक्रिय व्यापारिक संबंध थे। 16वीं शताब्दी के प्रारम्भ में, पुर्तगालियों ने कन्नूर में सेंट ऐंजेलो दुर्ग की स्थापना की। इसके लगभग दो शताब्दियों के पश्चात्, 1790 में, यह प्रदेश ब्रिटिश उपनिवेशकों के अधीन आ गया जिन्होंने 19वीं शताब्दी में यहां एक छावनी बनाई।

चम्पा (25°15′ उत्तर, 87°0′ पूर्व)

चम्पा, वर्तमान समय का चंपानगर है, जो बिहार के भागलपुर जिले में स्थित है। चम्पा, अंग महाजनपद की राजधानी था तथा बौद्ध साहित्यों में इसका उल्लेख 6 प्रमुख महानगरों में से एक के रूप में किया गया है। बौद्ध काल में यह व्यापारिक एवं वाणिज्यिक गतिविधियों का एक प्रमुख केंद्र था। खुदाई से प्राप्त वस्तुएं दर्शाती हैं कि यहां पर छठी शताब्दी ई.पू. बस्ती हुआ करती थी तथा इसका दुर्गीकरण किया गया था जो कि खंदक से घिरा था। वहां से एनबीपी के ठीकरे, जौहरी के सैलखड़ी के सांचे, पत्थर के मनके तथा उस युग के हाथी दांत की बनी महिलाओं की मूर्तियां प्राप्त हुई हैं। महाभारत के समय कर्ण, पांडवों के छठे भाई, ने अंग पर राज्य किया और उसकी राजधानी चम्पा थी। कर्ण के महल चम्पा तथा

thejobsyogi.com

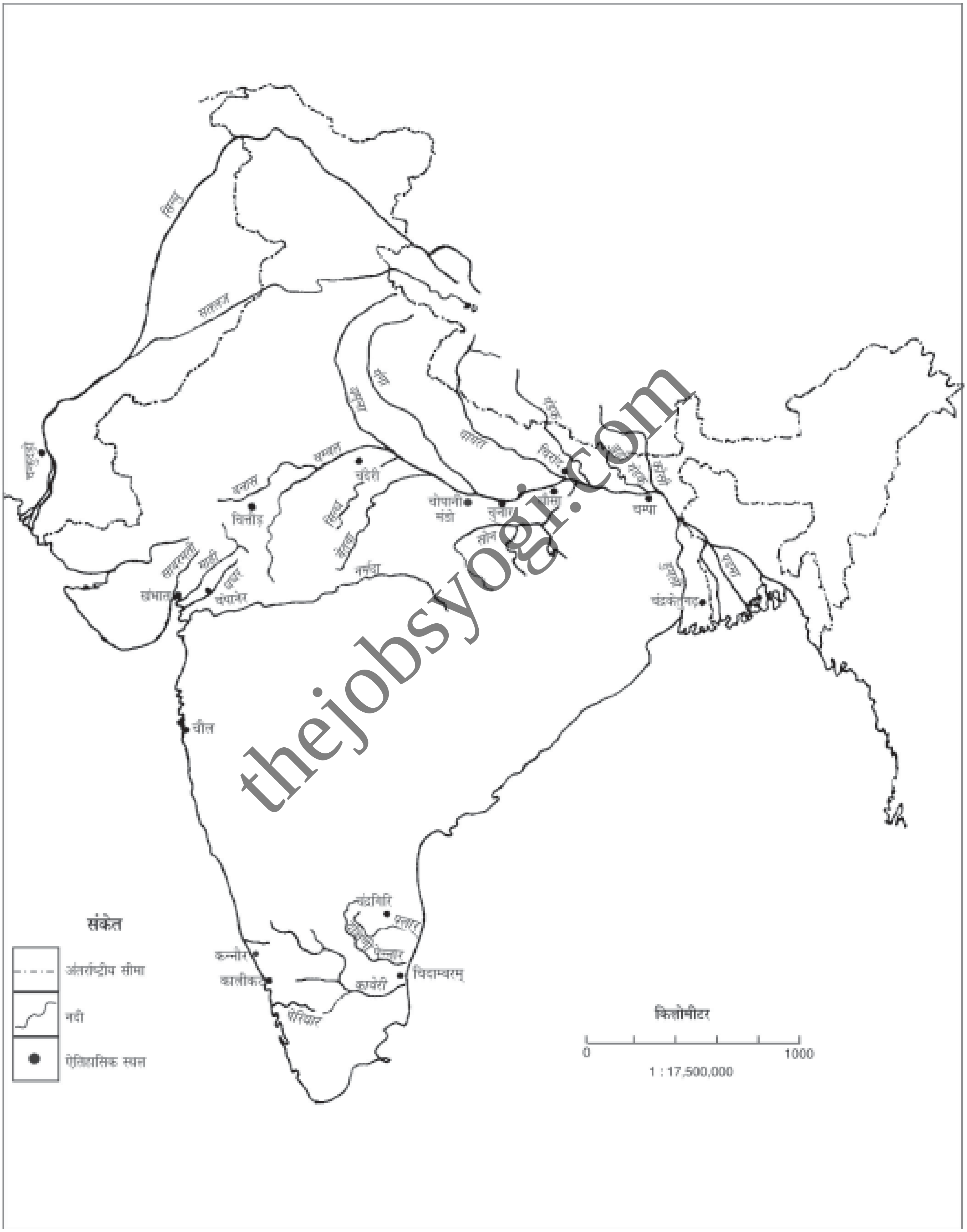

thejobsyogi.com

जाहनुगिरि (आधुनिक सुल्तानगंज) में थे। आज चम्पानगर, कर्ण के महल का स्थल, कर्णगढ़ के नाम से प्रसिद्ध है। पुराणों में इसका एक नाम मालिनी भी प्राप्त होता है। जातक ग्रंथों से ज्ञात होता है कि यह एक समृद्धशाली नगर था, जहां अनेक व्यापारी निवास करते थे। रेशमी वस्त्रों के उत्पादन का यह एक प्रमुख केंद्र था तथा दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों में यहां के बुने हुए रेशमी वस्त्र अत्यधिक लोकप्रिय थे। जैन ग्रंथ विविधतीतार्थकल्प में चम्पा को एक तीर्थ बताया गया है, जहां जैन तीर्थंकर वासुपूज्य का जन्म हुआ था। महावीर ने भी इस नगर में वास किया था।

चम्पा के व्यापारियों ने हिन्द-चीन में जाकर एक उपनिवेश स्थापित किया था। बुद्धकाल में यहां ब्रह्मदत्त नाम का शासक शासन करता था। बाद में मगध के शासक बिम्बिसार ने चम्पा को जीत लिया था। चीनी यात्री ह्वेनसांग के विवरणों में भी चम्पा का उल्लेख प्राप्त होता है।

चम्पा से शुंग-कुषाण काल के ईंटों से निर्मित आवास, मनके एवं आहत सिक्के प्राप्त किए गए हैं। टेराकोटा की कुछ वस्तुएं एवं कांसे के सामान से गुप्त एवं पाल शासकों के संबंध में भी जानकारी प्राप्त होती है किंतु समग्र रूप से चम्पा की आर्थिक स्थिति में पराभव आया था। ह्वेनसांग ने भी अपने विवरण में चम्पा की गिरती हुई आर्थिक स्थिति का उल्लेख किया है। वह यह भी बताता है कि सातवीं शताब्दी में यहां के कई बौद्ध मठों को नष्ट कर दिया गया था।

चम्पानेर (22.48° उत्तर, 73.53° पूर्व)

चम्पानेर, गुजरात में बड़ोदरा शहर से मात्र 21 मील की दूरी पर स्थित है। वर्तमान समय में यह शहर पावागढ़ नाम से जाना जाता है। मध्य काल में इसका नाम चम्पानेर था।

यह व्यापार का एक प्रमुख केंद्र था तथा रेशम बुनाई के लिए प्रसिद्ध था। इसकी समृद्धि ने मुगल शासक हुमायूं को आकर्षित किया तथा 1535 में हुमायूं ने चम्पानेर पर आक्रमण कर यहां से भारी धन लूटा। इस समय यह गुजरात के शासक के अधीन था। कालान्तर में, सुल्तान बहादुर शाह की मृत्यु के पश्चात् दरबार एवं राजधानी को चम्पानेर से अहमदाबाद स्थानांतरित कर दिया गया।

चम्पानेर में ही मालवा एवं गुजरात के शासकों ने चित्तौड़ के राणा कुंभा के विरुद्ध संयुक्त मोर्चा बनाने संबंधी प्रस्ताव पर हस्ताक्षर किए थे।

अंततोगत्वा 1573 में अकबर ने चम्पानेर पर अधिकार कर लिया तथा इसे मुगल साम्राज्य का एक हिस्सा बना लिया।

चम्पानेर में कई ऐतिहासिक इमारतें हैं। इनमें गुजरात के शासक महमूद शाह बेगड़ा द्वारा निर्मित मस्जिद सबसे प्रमुख है।

चंदेरी (24.72° उत्तर, 78.13° पूर्व)

मध्यकाल में चंदेरी, मालवा एवं बुंदेलखंड के मध्य में स्थित था। वर्तमान में यह मध्य प्रदेश के गुना जिले में है।

मालवा के मांडू शासकों के अधीन चंदेरी एक महत्वपूर्ण नगर था, जिन्होंने इसे एक महत्वपूर्ण व्यापारिक एवं वाणिज्यिक केंद्र के रूप में विकसित किया। इसकी पुष्टि खंडित महलों, बाजारों, मकबरों तथा दसवीं शताब्दी के एक जैन मंदिर द्वारा होती है। इससे शीघ्र ही चंदेरी भारत की महत्वपूर्ण व्यावसायिक गतिविधियों का एक केंद्र बन गया।

1251 में चंदेरी पर बलबन ने अधिकार कर लिया तथा यह दिल्ली सल्तनत का हिस्सा बन गया। 15वीं शताब्दी में यह मालवा के खिलजी शासकों के अधीन आ गया और फिर 1520 में राणा सांगा ने इस पर अधिकार कर लिया। चंदेरी के शासक मेदिनी राय ने राणा सांगा की अधीनता स्वीकार कर ली तथा 1527 में खानवा का युद्ध लड़ा। 1529 में चंदेरी के युद्ध में बाबर ने मेदिनी राय को पराजित किया तथा मार डाला। इसके उपरांत चंदेरी मुगल साम्राज्य का हिस्सा बन गया।

16वीं शताब्दी के अंत तक चंदेरी, बुंदेल नरेश छत्रसाल के अधिकार में चला गया तथा इसके बाद उस पर मराठों ने अधिकार कर लिया। 19वीं शताब्दी में चंदेरी पर अंग्रेजों ने कब्जा कर लिया तथा कुछ समय बाद इसे सिंधिया को सौंप दिया।

चंदेरी स्थित शहजादी का रौजा, सात मंजिला कुशक महल तथा बादल महल आदि कुछ महत्वपूर्ण इमारतें हैं, जो इण्डो-इस्लामी वास्तुकला की झलक देती हैं।

चंद्रगिरि (13.58° उत्तर, 79.31° पूर्व)

मध्यकालीन नगर चंद्रगिरि, मंदिरों के शहर तिरुपति के समीप स्थित है। वर्तमान में यह आंध्रप्रदेश के चित्तूर जिले में है। विजयनगर साम्राज्य के आरविडु वंश के मुख्य एवं अंतिम शासक वेंकट द्वितीय ने सर्वप्रथम चंद्रगिरि को अपना मुख्यालय बनाया था। 1565 में तालीकोटा के युद्ध के उपरांत बहमनी साम्राज्य के मुस्लिम शासकों ने विजयनगर को तहस-नहस कर दिया। इसके उपरांत विजय नगर के शासकों ने पहले अपनी राजधानी पेनूकोंडा एवं अंत में चन्द्रगिरि में स्थानांतरित कर दी। विजयनगर साम्राज्य के प्रतिनिधि के रूप में चंद्रगिरि के राजा ने ही अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी के फ्रांसिस डे को 1640 में मद्रास पट्टे पर दिया था। फ्रांसिस डे ने मद्रास में एक दुर्गीकृत कारखाना स्थापित किया, जो फोर्ट सेंट जार्ज कहलाया।

चन्द्रगिरि, चन्द्रगिरि किले के लिए भी प्रसिद्ध है, जिसे विजयनगर के शासकों ने 17वीं शताब्दी में बनवाया था। यह किला हिन्दू एवं मुस्लिम शैली के सम्मिश्रण का एक अच्छा उदाहरण है।

चन्द्रकेतुगढ़ (22°41′ उत्तर, 88°41′ पूर्व)

वर्तमान समय में चन्द्रकेतुगढ़, प. बंगाल के 24 परगना जिले में स्थित है। इस स्थान के विकास का संबंध, मौर्यों के अधीन पूर्व की ओर लौह आधारित संस्कृति के प्रसार से है। यहां के उत्खनन से एनबीपीडब्ल्यू गोलाकार कुएं, पूर्व मौर्यकाल के टाइलयुक्त छतों

thejobsyogi.com

वाले घर टैराकोटा के मनके एवं चांदी के आहत सिक्के प्राप्त हुए हैं।

यहां से प्राप्त कुछ आहत सिक्कों में जहाज का चित्र अंकित है। इससे यह अनुमान लगाया जाता है कि यह स्थान संभवतः एक बंदरगाह नगर रहा होगा।

पकी ईंटों के बने गोलाकार कुओं एवं घरों से, जो शुंग-कुषाण से संबंधित हैं, यह सूचना मिलती है कि इस नगर की आर्थिक दशा उन्नत अवस्था में थी। यहां से गुप्तकालीन एक मंदिर के अवशेष भी प्राप्त हुए हैं। किंतु इतिहासकारों का मत है कि यह नगर धीरे-धीरे अपनी महत्ता खोता जा रहा था।

यहां के उत्खनन से यह भी ज्ञात होता है कि यहां उत्तरकालीन गुप्त काल में बौद्ध धर्म का प्रचार-प्रसार हुआ था, क्योंकि यहां दो स्तूपों के प्रमाण भी पाए गए हैं।

चन्हुदड़ो (26°10′ उत्तर, 68°19′ पूर्व)

चन्हुदड़ो, मोहनजोदड़ो से 130 कि.मी. दक्षिण में सिंधु नदी (सिंध, पाकिस्तान) के बाएं तट पर स्थित, हड़प्पा समय का एक प्रमुख औद्योगिक नगर था। यह सिंधु घाटी सभ्यता के लोगों के लिए मनका निर्माण, सीपी पर शिल्प, मुहर निर्माण तथा हड्डियों के औजार निर्माण का प्रमुख केंद्र था। चन्हुदड़ो में कारीगरों की दुकानों की श्रृंखला मिली है, जो कि स्पष्टतः सिद्ध करती है कि यह औद्योगिक नगर था।

इस नगर की विशेषता है कि यह नगर परिपक्व हड़प्पा सभ्यता के विलुप्त होने के बाद भी विकसित होता रहा तथा इसका साक्ष्य है झुकर तथा झांगर सभ्यताएं जो कि हड़प्पा सभ्यता से भिन्न हैं। यहां पर मृदभांड कम पके हुए तथा मोटे हैं, जैसे कि यहां की मुहरें, जो कि सैलखड़ी से निर्मित हैं तथा उस पर चमकते सूरज का सामान्य रूपांकन की तरह प्रयोग हड़प्पा की मुहरों में नहीं देखा जाता।

परिपक्व हड़प्पा चरण की एक प्रमुख खोजों में, एक मुहर, जो कि पंचतंत्र की चतुर लोमड़ी की कहानी दर्शाती है, एक पीतल का रथ, जो हड़प्पा से मिले रथ से बहुत मिलता-जुलता है, एक मूर्ति में एक कुत्ता बिल्ली का पीछे करते हुए है तथा एक दवात शामिल है। तीन छोटे मिट्टी के टीले भी एनजी मजूमदार तथा मैके द्वारा खुदाई कर निकाले गए हैं।

चौल (18.54° उत्तर, 72.92° पूर्व)

वर्तमान समय में चौल, महाराष्ट्र के रायगढ़ जिले में स्थित है। चौल, भारत के पश्चिमी तट का एक बंदरगाह था तथा 1505 ई. में यहां पुर्तगालियों के आगमन के उपरांत इसका महत्व बढ़ गया। पुर्तगालियों ने इसे एक प्रमुख वाणिज्यिक केंद्र एवं प्रमुख बंदरगाह के रूप में विकसित किया। इस पर आधिपत्य को लेकर बीजापुर के शासकों का पुर्तगालियों से संघर्ष भी हुआ। यद्यपि इस संघर्ष में पुर्तगालियों की ही विजय हुई तथा उन्होंने 1516 में यहां एक फैक्टरी की स्थापना की।

कालांतर में चौल पर मुगलों फिर मराठों एवं अंत में अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया।

चौल की प्रमुख इमारतें हैं—कोरलाई का किला एवं पुर्तगालियों द्वारा निर्मित पालम गार्डन किला।

चौसा (25.56° उत्तर, 83.97° पूर्व)

चौसा बक्सर के समीप बिहार में है। चौसा में ही सन् 1539 ई. में शेरशाह सूरी, एक अफगान जनरल, ने हुमायूं को पराजित किया था। हुमायूं बड़ी मुश्किल से अपनी जान बचाकर भागा था। चौसा के युद्ध में विजयोपरांत शेरशाह ने स्वयं को भारत का सम्राट घोषित कर दिया था। इसके उपरांत शेरशाह ने राजकीय उपाधि धारण की, अपने नाम के सिक्के चलवाए तथा अपने नाम का खुतबा पढ़वाया। 1540 में हुमायूं ने अपना भारतीय साम्राज्य खोने से पहले शेरशाह से कन्नौज का युद्ध भी किया किंतु इस युद्ध में भी हुमायूं की पराजय हुई। यद्यपि शेरशाह की यह विजय औपचारिकता मात्र थी, क्योंकि वह चौसा के युद्ध में ही निर्णायक विजय प्राप्त कर चुका था। इस प्रकार यह चौसा ही था, जहां के युद्ध में विजय प्राप्त कर शेरशाह ने भारत में द्वितीय अफगान साम्राज्य (प्रथम अफगान साम्राज्य की नींव लोदी द्वारा रखी गई थी) की नींव रखी।

चिदाम्बरम (11.4° उत्तर, 79.7° पूर्व)

चिदाम्बरम, तमिलनाडु में चेन्नई से लगभग 240 किमी. दूर कुड्डालोर जिले में स्थित है। चिदाम्बरम में नटराज (शिव) का एक भव्य एवं अत्यंत सुंदर मंदिर है, जहां भगवान शिव को लौकिक नर्तक के रूप में दर्शाया गया है। इस मंदिर का निर्माण पल्लवों ने प्रारंभ करवाया था तथा इसे चोलों ने पूरा करवाया। यह उन गिने-चुने मंदिरों में से एक है, जहां भगवान शिव एवं विष्णु को एक साथ दर्शाया गया है। मंदिर की दीवारों पर की गई सुंदर नक्काशी एवं कलात्मक कार्य मंत्रमुग्ध कर देते हैं। यह मंदिर इस दृष्टि से भी विलक्षण है कि यह न केवल भरतनाट्यम की कला के प्रति समर्पित है बल्कि इसमें शिव को मूर्ति रूप में दर्शाया गया है न कि परम्परागत शिव लिंग रूप में। चिदाम्बरम मंदिर की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता इसके प्रभावशाली गोपुरम है, जो सात मंजिलों तक ऊंचे हैं। शिवगंगा जलाशय एवं हजार खंभों वाला मंडप इस मंदिर की एक अन्य विशेषता है। चिदाम्बरम मंदिर में एक विशाल नृत्य हाल भी है, जहां प्रति वर्ष महाशिवरात्रि के अवसर पर वार्षिक नृत्यांजली महोत्सव का आयोजन किया जाता है। मंदिर के दक्षिणी हिस्से में देश का सबसे बड़ा गणेश मंदिर स्थित है।

प्रसिद्ध पर्यटक स्थल पिछावरम, जहां पर अप्रवाही जल तथा मैंन्ग्रोव हैं, चिदाम्बरम से मात्र 16 किमी. दूर स्थित है।

चिरांद (25.78° उत्तर, 84.72° पूर्व)

चिरांद, छपरा से 11 किमी. पूर्व गंगा नदी के तट पर बिहार राज्य में स्थित है। यहां के उत्खनन से इस बात के प्रमाण प्राप्त हुए

thejobsyogi.com

हैं कि यह तीसरी शताब्दी ई. का एक महत्वपूर्ण पाषाणयुगीन स्थल है तथा कालांतर में मध्य युग के पूर्वार्द्ध में।

पाषाण युग में प्रस्तर की कुल्हाड़ियों, ब्लेड्स, तीरों एवं दरातियों जैसे पाषाण उपकरणों का प्रयोग किया जाता था। चावल, गेहूं, जौ, मूंग एवं मसूर के प्रमाण पाए गए हैं तथा कुछ अन्य वस्तुओं से भी यहां कृषि किए जाने के प्रमाण मिलते हैं। रेडियो कार्बन तिथि से यह अनुमान लगाया जाता है कि यह काल उत्तर हड़प्पा सभ्यता का समकालीन था किंतु दोनों के मध्य वैसा संबंध था, यह ज्ञात नहीं हो सका है। एनबीपीडब्ल्यू चरण के लोग लोहे के बने उपकरणों एवं औजारों का प्रयोग करते थे।

यद्यपि प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व से लेकर तीसरी शताब्दी ईस्वी तक सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यधिक प्रगति हुई, जिसे मुख्यतया कुषाण काल में देखा जा सकता है। यहां से प्राप्त अधिकांश स्थलों से ईंटों के अवशेष ही प्राप्त किए गए हैं। यहां से तीन खंडों वाला एक बौद्ध मठ भी पाया गया है, जिसके प्रत्येक खंड में तीन-तीन कोठरियां बनी हुई हैं। कुषाणकालीन तांबे के सिक्कों की प्राप्ति से इस बात के संकेत मिलते हैं कि प्रथम शताब्दी ईस्वी में यह एक प्रमुख वाणिज्यिक केंद्र था। इसका तक्षशिला से ताम्रलिप्ति के मध्य के व्यापारिक मार्ग से जुड़ा होना भी इसका प्रमुख कारण था।

ऐसा अनुमान है कि प्रथम शताब्दी ईस्वी में चिरांद उजड़ गया था किंतु 11वीं एवं 12वीं शताब्दी के दौरान यह पुनः बस गया। यहां से कल्चुरी शासक गांगेयदेव के (11वीं शताब्दी) के सोने के सिक्के प्राप्त हुए हैं। साथ ही तारा एवं त्रिमूर्ति की आकृति वाले पालों के समय के सिक्के भी प्राप्त किए गए हैं।

चित्तौड़ (24.88° उत्तर, 74.63° पूर्व)

चित्तौड़, जिसे चित्तौड़गढ़ के नाम से जाना जाता है, राजस्थान में है। चित्तौड़ लंबे समय तक मेवाड़ के शासकों की राजधानी बना रहा। यह सातवीं शताब्दी से तब तक राजधानी नगर रहा, जब तक राजधानी को उदयपुर स्थानांतरित नहीं कर दिया गया।

मध्यकाल में चित्तौड़ अपने अभेद्य एवं अति सशक्त किले के लिए प्रसिद्ध था। इसकी ख्याति यहां के राजपूत शासकों के शौर्य एवं पराक्रम के लिए भी थी। इन शासकों ने सभी आक्रमणकारियों को अपनी बहादुरी के जौहर दिखाए।

चित्तौड़ के प्रसिद्ध किले का निर्माण 7वीं शताब्दी के आसपास हुआ था। राणा कुंभा ने यहां एक विजय स्तंभ बनवाया, जिसे 'कीर्तिस्तंभ' के नाम से जाना जाता है। यह स्तंभ मांडू के होशांगी शाह पर विजय के उपलक्ष्य में बनवाया गया था।

अलाउद्दीन खिलजी ने 1305 में चित्तौड़ पर आक्रमण कर इसे काफी क्षति पहुंचाई। अलाउद्दीन के इसी अभियान में राणा रतन सिंह की पत्नी रानी पद्मावती ने जौहर किया था। गौरा एवं बादल की कहानी भी इसी घटना से संबंधित है।

बाबर ने पानीपत के प्रथम युद्ध (1526) में इब्राहीम लोदी को पराजित कर दिया किंतु उसका भारतीय विजय अभियान तभी पूर्ण हो सका जब उसने 1527 में खानवा के युद्ध में राणा सांगा को हराया।

अकबर ने 1567 में इस किले पर अधिकार कर लिया यद्यपि अकबर को इस सफलता के लिए नाकों चने चबाने पड़े। अकबर जयमल एवं पत्ता नामक राजपूत सरदारों की बहादुरी से अत्यधिक प्रभावित हुआ तथा उसने इन महान राजपूत सरदारों के सम्मान में इनकी मूर्तियां आगरे के किले के सामने स्थापित करवाई। किले के हाथ से निकल जाने के उपरांत भी राजपूत राणा प्रताप के नेतृत्व में मुगलों से संघर्ष करते रहे। अंततः जहांगीर ही मेवाड़ में शांति स्थापित करने में सफल हो सका।

चोपानी-मंडो (24°55′ उत्तर, 82°4′ पूर्व)

चोपानी-मंडो उत्तर प्रदेश में दक्षिण-पूर्वी दिशा में इलाहाबाद से 70 किमी. दूरी पर स्थित है। यह स्थल बेलन घाटी के बेलन नदी के तट पर स्थित है। भिन्न-भिन्न आकार के पाषाण खंड यहां पर प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। कुल मिलाकर उत्खननकर्ताओं ने इस स्थल का तिथि निर्धारण सत्तरहवीं सहस्राब्दी ई.पू. से सातवीं सहस्राब्दी ई. पू. के बीच की है। इसके अलावा चोपानी मंडो में मिले साक्ष्य संकेत करते हैं कि संभवतः थोड़ी बहुत कृषि के साथ ही यहां घुमंतु जीवन से स्थिर जीवन की ओर शुरुआत हो चुकी थी।

चोपानी मंडो में उच्च पुरापाषाण काल से नवपाषाण काल की ओर जाने का क्रम मिलता है। बेलन नदी के चारों निक्षेप चक्रों से प्राप्त कंकड़ों में जीवाश्म अस्थियों की प्राप्ति हुई है। यहां कंकड़ों में भेड़ तथा बकरियों की अस्थियां मिली हैं, जो इस क्षेत्र की न होकर प्रवासी मानव समूहों द्वारा हिमालय अथवा पश्चिमी सीमावर्ती क्षेत्रों द्वारा लाई गई प्रतीत होती हैं। उत्खनन में मिली झोपड़ियों के तल पत्थरों के टुकड़ों, लघुपाषाणों, पत्थर के हथौड़े, निहाई, सपाट चक्की, बट्टा, लटकने वाले पत्थर, चिकनी मिट्टी के जले हुए पिण्ड, टूटे हुए मिट्टी के बर्तनों द्वारा ढके हुए हैं। तीसरे चरण की झोपड़ियां अत्यधिक पास-पास स्थित थीं एवं मधुमक्खियों के छत्ते की भांति प्रतीत होती हैं। इसी चरण की मिट्टी की बनी एक जली हुई वस्तु प्राप्त हुई जिसमें जले हुए चावल गढ़े हुए हैं। इस पर बांस की छाप भी पड़ी हुई है।

चुनार (25.13° उत्तर, 82.9° पूर्व)

चुनार बनारस के दक्षिण पश्चिम दिशा में गंगा के तट पर मिर्जापुर जिले (उत्तर प्रदेश) में स्थित है। यहां अफगानों का एक सशक्त किला था। अफगान शासक शेरशाह ने चुनार की लाड मलिका से विवाह कर इस किले को प्राप्त कर लिया तथा यह उसके सैन्य अभियानों का मुख्य स्थल बन गया।

मुगल शासक हुमायूं ने 1532 में चुनार के किले का घेरा डाल दिया तथा शेरशाह से चुनार के किले को सौंपने की मांग की। यद्यपि 1537-38 के चुनार के दूसरे घेरे में हुमायूं ने अपना बहुमूल्य समय बर्बाद कर दिया तथा यही उसकी शेरशाह से पराजय का एक प्रमुख कारण बना।

कालांतर में चुनार के किले का प्रयोग अंग्रेजों ने त्रिम्बकाजी, जो पेशवा बाजीराव द्वितीय का विश्वासपात्र था, को कैद में रखने के लिए किया।

thejobsyogi.com

D

डाभोल (17°35′ उत्तर, 73°10′ पूर्व)

डाभोल, महाराष्ट्र में पश्चिमी तट पर स्थित है। मध्यकालीन भारत में यह बहमनी साम्राज्य का एक हिस्सा था। बहमनी साम्राज्य के पतन के पश्चात यह आदिलशाही वंश द्वारा शासित बीजापुर राज्य की राजधानी बन गया। बीजापुर में आदिलशाही वंश की स्थापना युसुफ आदिलशाह ने की थी।

मध्यकालीन समय में यह कोंकण तट का सबसे प्रमुख बंदरगाह था तथा यहां से फारस एवं लाल सागर के बंदरगाहों के साथ व्यापारिक वस्तुओं का आदान-प्रदान किया जाता था।

बाद में डाभोल, मराठों के नियंत्रण में आ गया एवं मराठों ने इसे प्रमुख बंदरगाह केंद्र के रूप में विकसित किया।

हाल के समय में, डाभोल एनरॉन विद्युत परियोजना या डाभोल की विद्युत परियोजना के कारण विवादों के घेरे में रहा था तथा लंबे समय तक चर्चा का विषय बना रहा। इस परियोजना से पर्यावरण को गंभीर खतरा उत्पन्न हो गया था, इसके बाद पर्यावरणविदों ने इसका विरोध प्रारंभ कर दिया। अंत में कंपनी ने इस परियोजना को अधूरा ही छोड़ दिया तथा इससे अलग हो गई।

डाभोल में स्थित ऐतिहासिक स्थलों पर दृष्टिपात करें तो यहां चण्डीकुबाई को समर्पित एक भूमिगत मंदिर है, जिसका निर्माण 550-578 ई. के मध्य हुआ था। यहां एक सुंदर मस्जिद भी है।

दैमाबाद (19°31′ उत्तर, 74°42′ पूर्व)

दैमाबाद, महाराष्ट्र के अहमदनगर जिले में स्थित है। यह तीन विभिन्न कालों—नवपाषाणयुग, हड़प्पा एवं जोरवे की मिश्रित सांस्कृतिक विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करता है।

यहां से दक्षिण भारतीय प्रस्तर उपकरणों के निर्माण के साक्ष्य प्राप्त हुए हैं। ये पाषाण उपकरण पाषाण काल से ही संबंधित हैं। काले रंग के मृदभाण्डों की प्राप्ति यहां की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता है।

हड़प्पा युग में यह हड़प्पा सभ्यता की दक्षिणी सीमा का निर्धारण करता था। यहां से इस चरण की पकी मिट्टी की मूर्तियां, मुहरें एवं पकी हुई ईंटों के साक्ष्य मिले हैं, जो इसका हड़प्पाई संस्कृति से तादात्म्य स्थापित करते हैं। ये ईंटें दफनाने के स्थल में 4 : 2 : 1 के अनुपात में बनी हुईं थीं परंतु हड़प्पा सभ्यता की सबसे महत्वपूर्ण खोज है कांसे से बनी कलाकृतियां, जैसे कि गैंडा, भैंस, एक हाथी तथा एक रथ जिसमें एक जोड़ी बैल हैं, जिन्हें मनुष्य द्वारा हांका जा रहा है। ये कलाकृतियां 60 किग्रा. से अधिक भार की हैं। दैमाबाद जोरवे सभ्यता का भी एक महत्वपूर्ण स्थल था। यह जोरवे स्थलों के अब तक खोजे गए 200 स्थलों में से सबसे बड़ा है। यह 20 हेक्टेयर तक फैला था तथा यहां 4000 लोग तक रह सकते थे। ऐसा भी लगता है कि इस स्थल का दुर्गीकरण पत्थर तथा कंकड़ों के बुर्ज वाली मिट्टी की दीवार से किया गया था।

दाओजली हडिंग (लगभग 25° उत्तर, 93° पूर्व)

दाओजली-हडिंग असम में दिमा हसाओ जिले (जिसे पहले उत्तर कछार पहाड़ियां जिला नाम से जाना जाता था) में स्थित है। यह एक नवपाषाण स्थल है जहां से उत्खनन में पाषाण तथा लकड़ी की कुल्हाड़ियां, कुदाल, छेनी, पीसने वाली सिल्ली, हाथ की चक्कियां, हाथ का बना वस्त्र, भोथरा लाल सेल्ट, बर्तन के टूटे हुए टुकड़े आदि मिले हैं। यहां से मिले औजार शैल, जीवाश्म लकड़ी तथा बलुआ पत्थर के बने हैं।

दौलताबाद (19.94° उत्तर, 75.21° पूर्व)

महाराष्ट्र के औरंगाबाद जिले में स्थित, दौलताबाद को पहले दिओगिरी या देवगिरि (ईश्वर की पहाड़ी) नाम से जाना जाता था। यदुवंशियों के राजा भिल्लामा पंचम ने देवगिरि को अपनी राजधानी बनाया था। यदुवंशी, कल्याण के चालुक्यों के सामंत थे, जो चालुक्यों के पतन के बाद उत्कर्ष पर पहुंचे। ऐसा माना जाता है कि ये यदुवंशियों के वंशज रहे होंगे जिससे पौराणिक नायक कृष्ण संबंधित थे।

मध्य काल में देवगिरि एक प्रमुख किला तथा प्रशासनिक केंद्र था। यह दुर्ग एक बड़ी उभरी हुई चट्टान पर इस प्रकार से स्थित था कि यह अपराजेय था, केवल किसी षड्यंत्र द्वारा ही इसे विजित किया जा सकता था, बल द्वारा नहीं। यहां तक कि मुगल भी इसे रिश्वत दे कर ही जीत सके। 14वीं शताब्दी में यह नगर दिल्ली के सुल्तान, अलाउद्दीन खिलजी तथा तदोपरांत मुहम्मद-बिन-तुगलक के अंतर्गत आया। 1327-30 तक, मुहम्मद बिन तुगलक ने अपनी राजधानी भी दिल्ली से देवगिरी स्थानांतरित कर दी थी जिसका नाम उसने दौलताबाद रखा, ताकि उसे अपने दक्कनी अभियानों में सहायता मिल सके। यद्यपि उसका प्रयोग असफल रहा, उसके द्वारा दौलताबाद को राजधानी के रूप में स्थापित करने के लिए बनवाए गए भवन इस स्थान के लिए वरदान साबित हुए। दौलताबाद ने, दिल्ली सल्तनत

thejobsyogi.com

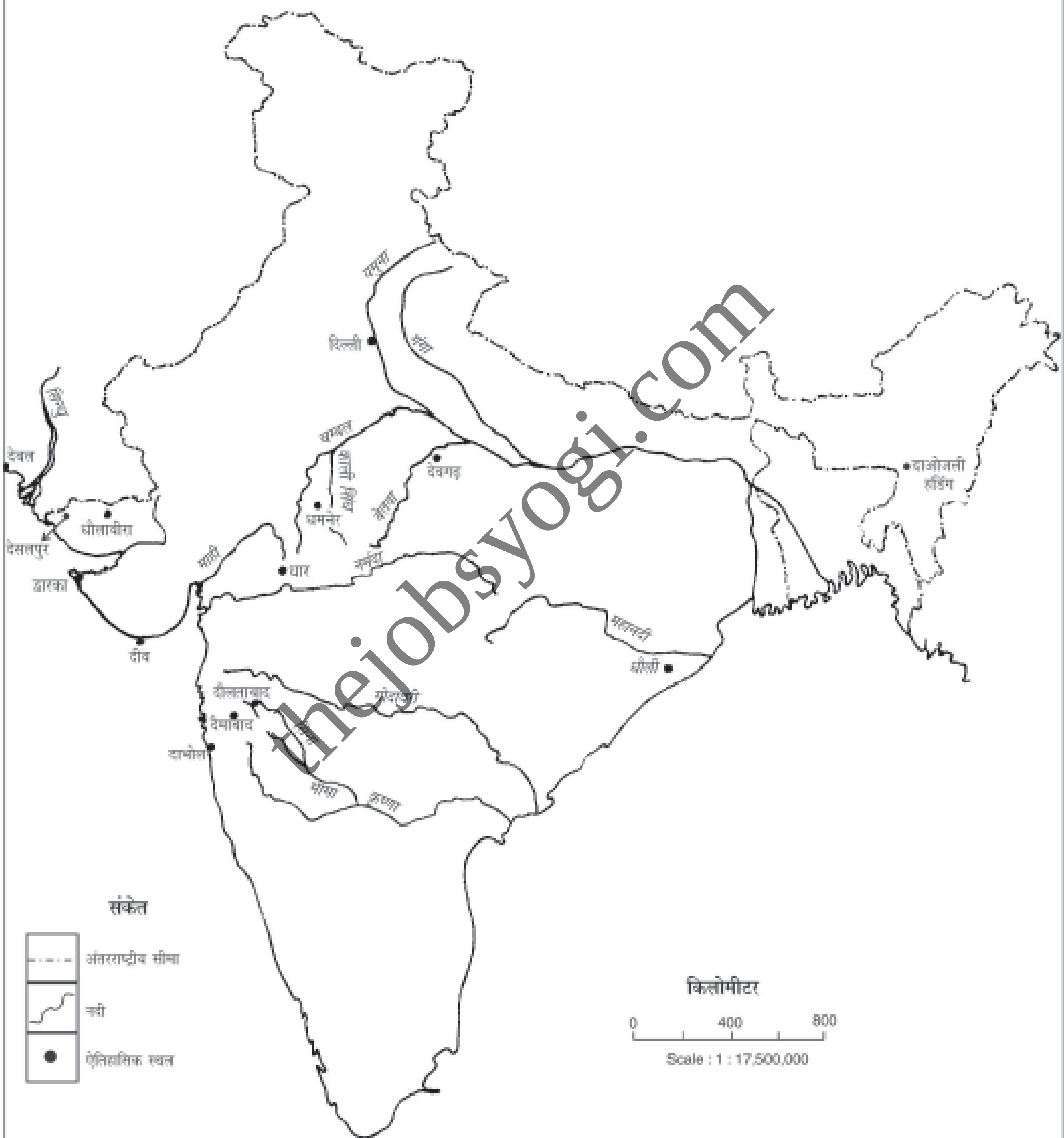

thejobsyogi.com

बहमनी तथा अहमदनगर साम्राज्य के शासनाधीन अपने महत्व को बनाए रखा, परंतु 17वीं शताब्दी में इसका स्थान वह नहीं रहा जब मुगलों ने इसे दक्कन में अपना प्रशासनिक केंद्र बना लिया। औरंगजेब ने गोलकुंडा के अंतिम शासक को इसी दुर्ग में 13 वर्ष के लिए अपना बंदी बनाए रखा।

ऐसा माना जाता है कि यह दुर्ग सबसे अच्छी तरह से संरक्षित दुर्ग है।

देबल (24°51′ उत्तर, 67°0′ पूर्व)

देबल सिंध प्रांत के निकट पाकिस्तान में स्थित है। प्राचीन काल में यह सिंध की कालरा या ब्राह्मशाही वंश का एक प्रमुख बंदरगाह नगर था।

बगदाद के खलीफा अल हाजिब के भतीजे मु. बिन कासिम के नेतृत्व में अरबों ने 712 ई. में देबल पर अधिकार कर लिया। दाहिर को आगे बढ़ने के मंच के तौर पर प्रयोग करते हुए, उसने नेहरून, सिविस्तान (सेहवान), ब्रह्मनाबाद, अलोर तथा मुलतान जैसे अन्य क्षेत्रों को अपने अधीन कर लिया। अरबों की सिंध पर विजय भारत में मुस्लिमों के आने की महत्वपूर्ण घटना थी। परंतु अरब इस क्षेत्र पर अपना अधिकार बहुत दिनों तक नहीं रख पाए।

कालांतर में देबल, गजनी के अधिकार में चला गया परंतु महमूद गजनवी का शासन काल कम अवधि का ही रहा। उसकी मृत्यु के उपरांत, सुमारा नामक जाति ने सिंध में अपना शासन स्थापित कर लिया तथा देबल को इसकी राजधानी बनाया। 1182 में, मोहम्मद गौरी ने सिंध पर अचानक आक्रमण कर दिया तथा सिंधु के शासक को अपनी अधीनता मानने के लिए बाध्य कर दिया।

इल्तुतमिश के समय देबल दिल्ली सल्तनत के अधीन आ गया।

दिल्ली (28°36′ उत्तर, 77°13′ पूर्व)

भारत की राजधानी दिल्ली, जो यमुना के तट पर बसा हुआ एक विशाल नगर है, 5000 वर्षों का इतिहास अपने अंदर समेटे हुए है। दिल्ली का इतिहास पांडवों द्वारा प्राचीन काल में इंद्रप्रस्थ की स्थापना से प्रारंभ होता है। इसके बाद विभिन्न शासक यहां विभिन्न कालों में शासन करते रहे। इन विभिन्न शासकों ने यहां विभिन्न शासक नगरों की स्थापना की। इंद्रप्रस्थ, लालकोट, किला रायपिथौरा, सीरी, जहॉपनाह, तुगलकाबाद, फिरोजाबाद, दीनपनाह, शांहजहांनाबाद इत्यादि। इन सभी को एकीकृत एवं सम्मिलित रूप से दिल्ली कहा गया। दिल्ली प्रारंभ से ही शासकों की प्रतिष्ठा का प्रश्न एवं शक्ति का केंद्र बिन्दु रहा है।

दिल्ली का वह हिस्सा, जो वास्तव में दिल्ली का मुख्य भाग निर्मित करता है, की स्थापना 11वीं शताब्दी में तोमर शासकों ने की थी। बाद में यह चौहान शासकों के अधीन आ गया। इसके बाद दिल्ली, दिल्ली सल्तनत के शासकों के अधीन आ गया। इल्तुतमिश ने राजधानी दिल्ली में स्थानांतरित की। यद्यपि इसके पश्चात पूरे मध्यकाल में कई भारतीय शासकों ने कई बार राजधानी को दिल्ली से स्थानांतरित किया। मु. बिन तुगलक ने दिल्ली से दौलताबाद एवं अकबर ने दिल्ली से आगरा स्थानांतरित की। परंतु दिल्ली का महत्व सदैव बना रहा तथा शासक अपनी राजधानी को वापस दिल्ली लाने पर विवश हो गए।

अंग्रेजों ने जब 1911 में भारत की राजधानी को कलकत्ता से दिल्ली स्थानांतरित किया तब भारत के स्वतंत्रता आंदोलन की समस्त गतिविधियों का केंद्र दिल्ली ही बन गया। यहीं से भारत के राष्ट्रवादी नेताओं ने स्वराज्य प्राप्ति का लक्ष्य अपने सामने रखकर अपना संघर्ष चलाया। आजाद हिंद फौज द्वारा दिए गए 'दिल्ली चलो' के नारे को आज भी सभी राजनीतिक दल दिल्ली में अखिल भारतीय स्तर की रैलियां एवं सभाएं आयोजित करते समय यदाकदा प्रयुक्त करते हैं।

15 अगस्त 1947, को तिरंगा झंडा फहराए जाने के साथ ही दिल्ली ने भारत के इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ दिया।

दिल्ली में अनेक ऐतिहासिक एवं प्रसिद्ध इमारते हैं। जैसे—पुराना किला, कुतुबमीनार (यूनेस्को की विश्व धरोहर सूची में सम्मिलित), लाल किला, जामा मस्जिद, जंतर-मंतर, हुमायूं का मकबरा (यूनेस्को की विश्व धरोहर सूची में सम्मिलित) एवं इंडिया गेट इत्यादि।

राजघाट यहीं यमुना नदी के तट पर स्थित है। यह स्थान महात्मा गांधी की समाधि के रूप में प्रसिद्ध है। यह स्थान आज भी पूरे देश के लिए सम्मान एवं प्रेरणा का प्रतीक है, क्योंकि यहां उस व्यक्ति की समाधि है, जिसने भारतवासियों को परतंत्रता की बेड़ियों के मुक्त कराने के लिए सत्य एवं अहिंसा का मार्ग अपनाया तथा देश सेवा के लिए अपना पूरे जीवन का बलिदान कर दिया। इस समाधि में एक ज्वाला निरंतर प्रज्जवलित होती रहती है। समाधि स्थल में बड़े अक्षरों में 'हे राम' लिखा हुआ है। ये वही शब्द हैं, जो महात्मा गांधी के मुख से अपने प्राणों की आहुति देते समय निकले थे।

महात्मा गांधी की समाधि के अतिरिक्त यहां कई अन्य नेताओं की समाधियां हैं। जैसे—शांतिवन—जवाहरलाल नेहरू की समाधि; किसान घाट—लाल बहादुर शास्त्री की समाधि एवं शक्ति स्थल—इंदिरा गांधी की समाधि।

देवगढ़ (24.52° उत्तर, 78.23° पूर्व)

देवगढ़ झांसी के समीप उत्तर प्रदेश में स्थित है तथा भगवान विष्णु के दशावतार मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। पत्थरों से निर्मित यह मंदिर गुप्तकालीन है। यह मंदिर शिखर या नागर शैली का पहला उदाहरण है। इसकी गणना भारत के सर्वश्रेष्ठ मंदिरों में की जाती है।

इसमें एक मीनार है जो कि धीरे-धीरे पीछे की ओर वर्गाकार पवित्र स्थल से ऊपर उठती है, जबकि इससे पूर्व समय में निचले तथा सपाट छतों वाले मंदिर हुआ करते थे। तीन दीवारों पर उत्कृष्ट कोटि की मूर्तियां हैं तथा एक उत्कृष्टता से सजाया गया प्रवेश द्वार है। मंदिर की दक्षिणी दीवार पर लक्ष्मी तथा भगवान विष्णु की मूर्तियां कलात्मक महत्व की हैं।

गुप्तोतर काल का एक मंदिर, बेतवा नदी के तट पर स्थित ईसा पूर्व सातवीं शताब्दी का कुरैय्या बीर मंदिर स्थापत्य का उत्कृष्ट कलात्मक नमूना है। मंदिर पूर्वकाल के लकड़ी की परंपरागत विशिष्टताओं को दर्शाता है।

thejobsyogi.com

पास ही में पहाड़ी के शिखर पर स्थित दुर्ग में लगभग 30 से अधिक जैन मंदिर हैं, जो कि नवीं तथा दसवीं शताब्दी से संबंधित हैं।

देसलपुर/गुंथली (23°44′ उत्तर, 70°41′ पूर्व)

देसलपुर अथवा गुंथल नामक पुरातात्वविक स्थल सिंधु घाटी सभ्यता का एक भाग है, जो गुजरात के कच्छ जिले में नखतराना तालुक में स्थित है। यह भुज से 25 किमी. दूर तथा भामु-चेला के उत्तरी तटों, जो कि पहले धुड़ नदी के निकट कटाव क्षेत्र में था, पर है। भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण ने 1963 से देसलपुर में उत्खनन आरम्भ किया। इस प्राचीन नगर के विस्तृत क्षेत्र का 3000 वर्षों से भी अधिक समय तक नदी द्वारा अपदरन होता रहा एवं यह कच्छ के रन से जुड़ गया। यहां निचले उत्खनन स्तरों पर भूरे रंग के पतले मृदभांड, जिन्हें भली प्रकार चिन्हित व नील हरित रंग की धारियों द्वारा चित्रित किया गया है, प्राप्त हुए हैं। ये सामान्यतः हड़प्पा मृदभांड की विशेषता है। इसी प्रकार के मृदभांड मोहनजोदड़ो में मिले हैं, जिन्हें 'चमकीले मृदभांड' भी कहा जाता है। लिपि वाली तीन मुहरें भी प्राप्त हुई हैं, प्रत्येक मुहर भिन्न पदार्थ की है, एक मुहर शैलखड़ी, दूसरी तांबे तथा तीसरी मिट्टी की बनी है। दो बहुरंगी बर्तन यहां मिले हैं, जिसमें से एक सफेद, बैंगनी तथा काले डिजाइनों द्वारा सज्जित है तथा दूसरा गहरे काले रंग द्वारा चित्रित है। अन्य कलात्मक वस्तुएं भी यहां मिली हैं, जिसमें मिट्टी के बर्तन, मूल्यवान पाषाण मनके, तांबे के तीर व चकमक ब्लेड सम्मिलित हैं।

यहां एक भट्टा भी मिला है। देसलपुर से मिली वस्तुओं से दो सांस्कृतिक कालों की पहचान हुई है—प्रागैतिहासिक काल तथा हड़प्पा सभ्यता। हड़प्पा काल में देसलपुर एक दुर्गीकृत शहर था। घरों के साथ एक रक्षात्मक दीवार बनाई गई थी। इस प्रकार की रचना एक सामान्य रक्षात्मक उपाय न होकर घरों को बाढ़ से बचाने हेतु थी।

धमनेर

धमनेर राजस्थान में कोटा एवं उज्जैन के मध्य स्थित है। यह स्थान बौद्ध गुफाओं के लिए प्रसिद्ध है, जिसमें चैत्य, भिक्षु आवास एवं उपासना स्थल बने हुए हैं। यहां बुद्ध के विभिन्न रूपों को सुंदरता से दर्शाया गया है। यद्यपि गुफाओं का निर्माण सुनियोजित ढंग से नहीं किया गया है। केवल एक ही गुफा ऐसी है, जिसे देख कर लगता है कि इसका निर्माण पूर्व योजनानुसार हुआ है। यहां पर चैत्य को मठवासीय कक्ष के बीच में निर्मित किया गया है, सामान्य विहारों की तरह नहीं, जहां पर चैत्य गुफा मेहराबदार छोर की ओर होती है।

धार (22.6° उत्तर, 75.3° पूर्व)

प्राचीन काल में 'धार नगरी' एवं मध्य काल में 'पीरन धार' के नाम से प्रसिद्ध धार दोनों ही समय राजधानी नगर रहा है। वर्तमान समय में यह मध्य प्रदेश का जिला नगर है। परमारों ने 9वीं से 13वीं शताब्दी के मध्य मालवा के एक बड़े क्षेत्र में लगभग 400 वर्षों तक शासन किया। वाक्पत्ति मुंज एवं भोजदेव इस वंश के सबसे प्रतापी शासक थे। भोज ने ही अपनी राजधानी को उज्जैन से धार स्थानांतरित किया तथा यहां एक संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना करवाई, जिसे 'भोजशाला' के नाम से जाना जाता था। भोज के शासनकाल में धार नगरी कला, संस्कृति एवं शिक्षा का एक महत्वपूर्ण केंद्र बन गई।

1305 में धार अलाउद्दीन खिलजी के प्रभावाधीन आ गया तथा 1401 तक दिल्ली सल्तनत का ही हिस्सा बना रहा। 1401 में दिलावर खान घुर, एक गवर्नर, ने स्वयं की स्वतंत्रता घोषित कर मालवा में एक स्वतंत्र राज्य की स्थापना की तथा धार को अपनी राजधानी बनाया। यद्यपि आगे चलकर सम्पूर्ण मालवा मुगलों के अधीन आ गया। अकबर के प्रशासनिक संगठन में धार, मालवा सूबे के मांडू सरकार में एक मुख्य महाल या नगर था। अकबर अपने दक्षिण अभियान के समय एक सप्ताह धार में रुका था।

बालाजी पेशवा ने धार का नियंत्रण आनंद राव पवार को सौंप दिया तथा 1948 तक धार, इनके उत्तराधिकारियों के अधीन बना रहा। इस समयावधि में 1857 के विद्रोह के समय मात्र तीन वर्षों तक ही मराठों के प्रभुत्व से बाहर रहा। धार 1857 के विद्रोह का एक प्रमुख केंद्र था। विद्रोह के दमन के उपरांत अंग्रेजों ने इस पर अधिकार कर लिया किंतु बाद में पुनः इसे मराठों को सौंप दिया।

धौली (20°11′ उत्तर, 85°50′ पूर्व)

धौली ओडिशा की राजधानी भुवनेश्वर से 8 किमी. दूर दाया नदी के तट पर स्थित है। यह स्थान तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में लड़े गए प्रसिद्ध कलिंग युद्ध की भयावहता का साक्षी है। धौली में ही मौर्य शासक अशोक ने युद्ध की विभीषिका को देखा तथा युद्ध की विनाशलीला से उसका मन द्रवित हो गया। इसके उपरांत ही उसने भेरी घोष के स्थान पर धम्मघोष की नीति को अपनाने का निश्चय किया। इस प्रकार बौद्ध धर्म के एक महान संरक्षक का आविर्भाव हुआ।

धौली अपने अशोककालीन शिला राजाज्ञाओं तथा उभरी हुई नक्काशी में चित्रित एक हाथी द्वारा अभिषेक जैसे शिलालेख एवं शैल चित्रों के लिए प्रसिद्ध है। अशोक के 14 शिलालेखों में 11 इसी क्षेत्र में पाए गए हैं। यहां से अशोक के दो शिलालेख प्राप्त हुए हैं उनमें वह कलिंग के लोगों को संबोधित करता है।

बौद्ध धर्म की दृष्टि से धौली का विश्वस्तरीय महत्व है। यहां एक 'शांति स्तूप' है तथा एक विशाल मठ भी है, जो 'सधरम विहार' के नाम से प्रसिद्ध है।

धौली में लघु गुहा आवास, मध्यकालीन हिन्दू मंदिर एवं एक शिव मंदिर 'धवलेश्वर' भी पाया गया है। इन सभी कारणों से धौली का ऐतिहासिक एवं धार्मिक दृष्टि से एक महत्वपूर्ण स्थान है।

धौलावीरा (23°55′ उत्तर, 70°13′ पूर्व)

धौलावीरा, पश्चिमी भारत में गुजरात राज्य के कच्छ जिले के भचाऊ तालुका में खादिरबेट में एक पुरातात्विक स्थल है। इसका नाम यहां

thejobsyogi.com

से एक किलोमीटर दूर दक्षिण में स्थित गांव के नाम पर पड़ा है। इसे स्थानीय रूप से कोटडा टिम्बा नाम से भी जाना जाता है। इस स्थल में सिंधु घाटी सभ्यता/हड़प्पा कालीन शहर के अवशेष प्राप्त हुए हैं। इस स्थल को सर्वप्रथम भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण के महानिदेशक जे.पी. जोशी द्वारा 1967-68 में खोजा गया तथा आर.एस. बिष्ट के नेतृत्व में 1989 में इसका उत्खनन शुरू किया गया। यह आठ मुख्य हड़प्पाकालीन स्थलों में से पांचवां बड़ा स्थल है। उत्खनन उपरांत सिद्ध हो गया कि यह सैंधव सभ्यता का सबसे प्राचीन, सर्वाधिक सुव्यवस्थित, सुंदर एवं सबसे बड़ा स्थल था। धौलावीरा में सिंधु सभ्यता के निवासी लगभग 5000 वर्ष पूर्व से रहते आ रहे थे।

धौलावीरा तीन भागों में विभाजित था—दुर्ग, मध्यम नगर एवं निचला नगर।

धौलावीरा की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता इसकी जल प्रबंधन व्यवस्था थी। इसमें एक विशाल तालाब एवं कई छाटे-छोटे जलाशय थे। सबसे बड़े तालाब का माप 80.4 मी. × 12 मी. × 7.5 मी. है।

यहां की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता एक आम स्थान है, जिसकी माप 238 × 48 मीटर है। संभवतः यह या तो कब्रिस्तान या विशाल सम्मेलन स्थल रहा होगा।

धौलावीरा के उत्खनन से प्राप्त अवशेषों में पालिशदार श्वेत पाषाण खण्डों की प्राप्ति भी एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। संभवतः इनका उपयोग स्तंभों के रूप में हुआ था। इनसे ज्ञात होता है कि सैंधववासी पत्थर पर पॉलिश करने की कला से परिचित थे तथा यह कहीं बाहर से यहां नहीं आई थी। इसके अलावा सैंधव लिपि के 10 ऐसे अक्षर भी यहां से प्राप्त हुए हैं। प्रत्येक अक्षर क्रिस्टल से बने टुकड़े पर उत्कीर्ण है जो आकार में काफी बड़े हैं तथा विश्व की प्राचीन अक्षर माला में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। सैंधव सभ्यता के संदर्भ में यह एक अद्‌भुत खोज है।

शवाधान की विभिन्न विधियों के ज्ञात होने से अनुमान है कि यहां विभिन्न प्रजातीय समूहों के लोग वास करते थे।

दीव (20.71° उत्तर, 70.98° पूर्व)

भारत के पश्चिमी तट पर अरब सागर में स्थित दीव केंद्र-शासित प्रदेश दमन एवं दीव का एक प्रमुख बंदरगाह है।

दीव अपने किले के लिए प्रसिद्ध है, जिसका निर्माण 1535 में छः वर्षों की मेहनत के उपरांत किया गया था। यह किला गुजरात के शासक बहादुरशाह एवं पुर्तगालियों के मध्य संपन्न हुई उस मैत्री का परिणाम है, जिसमें इस प्रकार के एक दुर्ग के निर्माण का प्रस्ताव था। मुगल शासक हुमायूं ने जब गुजरात पर आक्रमण किया तो उसके उपरांत ही इस किले के निर्माण पर विचार प्रारंभ हो गया था।

किले में बनी गहरी सुरंगें, पांच टावर, विभिन्न युद्धों के अवशेष, पत्थर की गैलरियों एवं विशाल, भव्य खिड़कियां तथा ग्रेनाइट का कार्य इत्यादि एक भव्य एवं ऐतिहासिक समय की यादें ताजा कर देती हैं।

पुर्तगालियों ने छलपूर्वक बहादुरशाह की हत्या कर दी तथा दीव पर अधिकार कर लिया। पुर्तगालियों का यह एक महत्वपूर्ण व्यापारिक केंद्र बन गया। दमन के साथ ही दीव मालवा से लाए गए अफीम का प्रमुख निर्यातक स्थल बन गया।

दीव पर अधिकार को लेकर पहले मुगल एवं पुर्तगालियों तथा बाद में पुर्तगालियों एवं अंग्रेजों के मध्य लंबा संघर्ष हुआ।

दीव सेंट पालचर्च (1601-10), जिसमें अत्यलंकृत अग्रभित्ति तथा लकड़ी से बने फलक लगे हुए हैं, के लिए भी प्रसिद्ध है। यह चर्च अत्यंत खूबसूरत है। इसमें दीव अपने खूबसूरत तटों के लिए भी प्रसिद्ध है, जिनमें—चक्रतीर्थ एवं नागाओ घोघला प्रसिद्ध हैं। पुर्तगालियों द्वारा 1535 में निर्मित पानीकोटा की गढ़ी भी यहीं स्थित है।

द्वारका (22.23° उत्तर, 68.97° पूर्व)

ऐतिहासिक महत्व की प्राचीन नगरी द्वारका एक छोटी नगरी है, जो गुजरात के जामनगर जिले सौराष्ट्र प्रायद्वीप के उत्तर-पश्चिमी सिरे पर स्थित है। द्वारका का नामकरण संस्कृत भाषा के शब्द 'द्वार' से हुआ, जिसका अर्थ है—प्रवेश द्वार। प्राचीन काल में यह भारत का प्रवेश द्वार था। भारतीय व्यापारी यहां से मिस्र, अरब देशों एवं मेसोपोटामिया के साथ सामुद्रिक व्यापार संपन्न करते थे।

द्वारका का सर्वप्रथम उल्लेख भारत तथा रोमन साम्राज्य के बीच व्यापार के समुद्रीय भूगोल की रचना 'पेरिप्लस ऑफ द इरीथ्रियन सी', (80-115 ईस्वी) में है। पेरिप्लस इसे बराको की खाड़ी कहता है। इसका यह उल्लेख भृगुकच्छ के विवरण के साथ प्राप्त होता है। महाभारत द्वारका से संबंधित है।

मध्यकालीन समय में शंकराचार्य ने यहां एक प्रसिद्ध पीठ—एक महान हिंदू धर्म के केंद्र—की स्थापना की थी, जो आज भी प्रसिद्ध है।

thejobsyogi.com

E&F

एलिफैन्टा (18.96° उत्तर, 72.93° पूर्व)

मुंबई से लगभग 10 किलोमीटर दूर अरब सागर में एलिफैन्टा एक छोटा-सा द्वीप है। चालुक्य एवं राष्ट्रकूट शासकों के प्रभावाधीन रहा यह स्थान अपने गुहा मंदिरों विशेषकर भगवान शिव की मूर्तियों के लिए प्रसिद्ध है। इनमें त्रिमूर्ति शिव की प्रतिमाएं सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं। इसमें भगवान शिव को 'नटराज' एवं योगीश्वर' के रूप में दिखाया गया है। मंदिर के स्तंभ एवं दीवारें शिव की विभिन्न मुद्राओं एवं अवतारों के चित्रों से युक्त एवं सुसज्जित हैं। शिव की तीन धड़ों वाली 'महेशमूर्ति' अत्यंत प्रभावोत्पादक एवं आकर्षक है। यह एलिफैंटा की सभी मूर्तियों में सबसे मुख्य स्थान रखती है। इसमें भगवान को तीन रूपों—सृष्टि का निर्माता, संचालक एवं संहारक—में दर्शाया गया है।

छठी शताब्दी ईस्वी में यह द्वीप 'घरापुरी' यानि दुर्गों का नगर के नाम से जाना जाता है। हाथियों की कई मूर्तियों के कारण (जो कि अब विक्टोरिया गार्डन में हैं) इस स्थान का नाम पुर्तगालियों ने 'एलीफैंटा' रखा। यहां शिव की अर्द्ध-नारीश्वर एवं गंगाधर रूप में भी मूर्तियां हैं।

गुफा में प्रवेश के लिए तीन द्वार हैं, जो छज्जों से युक्त हैं। 1996 में ऐलिफैन्टा को विश्व धरोहर घोषित कर दिया गया है।

एलिचपुर/अचलपुर (21°15′ उत्तर, 77°30′ पूर्व)

एलिचपुर देवगिरी के यादव शासकों का एक सीमांत स्थल था। 1296 ई. में, अलाउद्दीन खिलजी से परास्त होने के उपरांत देवगिरी के राजा रामचंद्र देव ने एलिचपुर की आय को दिल्ली सल्तनत को भेजने का वायदा किया था। अलाउद्दीन की सेना से पराजित होने के उपरांत गुजरात के भगोड़े शासक कर्णदेव ने एलिचपुर में ही शरण ली थी। बाद में 1307 में मलिक काफूर ने कर्णदेव को पुनः परास्त किया। दिल्ली सल्तनत के पतन से पहले तक एलिचपुर तुगलक शासकों के अधीन रहा। दिल्ली सल्तनत के पतनोपरांत यह बहमनी शासकों द्वारा हस्तगत कर लिया गया। बहमनी साम्राज्य के विघटन के पश्चात यह बरार के इमादशाही शासनकाल में एक प्रमुख शहर बन गया।

सोलहवीं शताब्दी के मध्य, अहमदनगर की चांदबीबी ने मुगलों के समक्ष बरार का समर्पण कर दिया तथा यह मुगलों के अधीन हो गया। मुगलों ने यहां शाहपुर नाम से एक नया शहर बसाया तथा उसे अपना सैन्य मुख्यालय बनाया। इसके बाद यह मराठा साम्राज्य के अंतर्गत आ गया तथा अंत में इसे ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपने साम्राज्य में मिला लिया।

एलौरा (20°01′ उत्तर, 75°10′ पूर्व)

महाराष्ट्र प्रांत के औरंगाबाद जिले में स्थित एलौरा नामक स्थान अपने गुहा—मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है। (अब इसे यूनेस्को की विश्व धरोहर सूची में सम्मिलित कर लिया गया है।) एलौरा में कुल 34 गुफाएं हैं, जिनका समय 350-800 ईस्वी के मध्य माना जाता है। इन 34 गुफाओं में से 12 बौद्ध गुफाएं हैं, 17 गुफाएं हिन्दू धर्म से संबंधित हैं तथा 5 की विषय-वस्तु जैन धर्म से संबद्ध है। गुफा संख्या 6 एवं 10 में बौद्ध तथा हिन्दू दोनों धर्मों से संबंधित प्रतिरूप दृष्टव्य हैं। बाद में गुफा संख्या 10 को 'विश्वकर्मा, भारतीय शिल्पकारों के संरक्षक संत, का गुहा मंदिर' नाम दे दिया गया। स्तूप में अवस्थित आसन धारण किए हुए बुद्ध सहित विश्वकर्मा गुफा *चैत्य* एवं *विहार* दोनों है।

एलौरा में 17 गुहा मंदिर प्राप्त होते हैं, इनमें गुहा 16 में 'कैलाश मंदिर' सर्वाधिक प्रसिद्ध है। यह शिल्पकला का एक उत्कृष्ट नमूना है, यह पूरी संरचना एक ही चट्टान को काट कर बनाई गई है तथा इस कार्य को पूर्ण होने में एक शताब्दी का समय लगा। ये सभी राष्ट्रकूट शासकों (7-8वीं शताब्दी) के समय में निर्मित हैं। कैलाश मंदिर प्राचीन वस्तु एवं तक्षण कला का एक अत्युत्कृष्ट नमूना है। इसका निर्माण राष्ट्रकूट शासक कृष्ण प्रथम (756-793 ई.) ने करवाया था। दूमर लेन गुफाएं, एलिफैंटा के प्रसिद्ध गुफा मंदिरों से साम्यता रखती है तथा भगवान शिव को समर्पित हैं। जैन मंदिरों में 'इन्द्रसभा मंदिर' सबसे प्रमुख हैं, जिसमें जैन तीर्थंकरों की कई सुंदर मूर्तियां हैं। यह मंदिर फ्रास्को पेंटिंग के लिए भी प्रसिद्ध है। इसकी विषय-वस्तु ब्राह्मण एवं जैन हैं।

एरण (24°5′ उत्तर, 78°9′ पूर्व)

गुप्त एवं हूण अभिलेखों में 'एरिकेण' के रूप में उल्लिखित एरण वर्तमान समय में मध्य प्रदेश के सागर जिले में स्थित है। पुरातात्विक उत्खनन इसके पाषाणकालीन स्थल होने का संकेत देते हैं। यह 300 ई.पू. के लगभग एक महत्वपूर्ण स्थल के रूप में उभरा। सीसे का एक टुकड़ा, जिस पर ब्राह्मी लिपि में दंतकथा के साथ एक पासे की छाप में रानो दोगुत्सा—राजा इंद्रगुप्त लिखा है—विशेषतया दिलचस्प है। गुप्त राजाओं के काल में यह एक महत्वपूर्ण नगर था। यहां

thejobsyogi.com

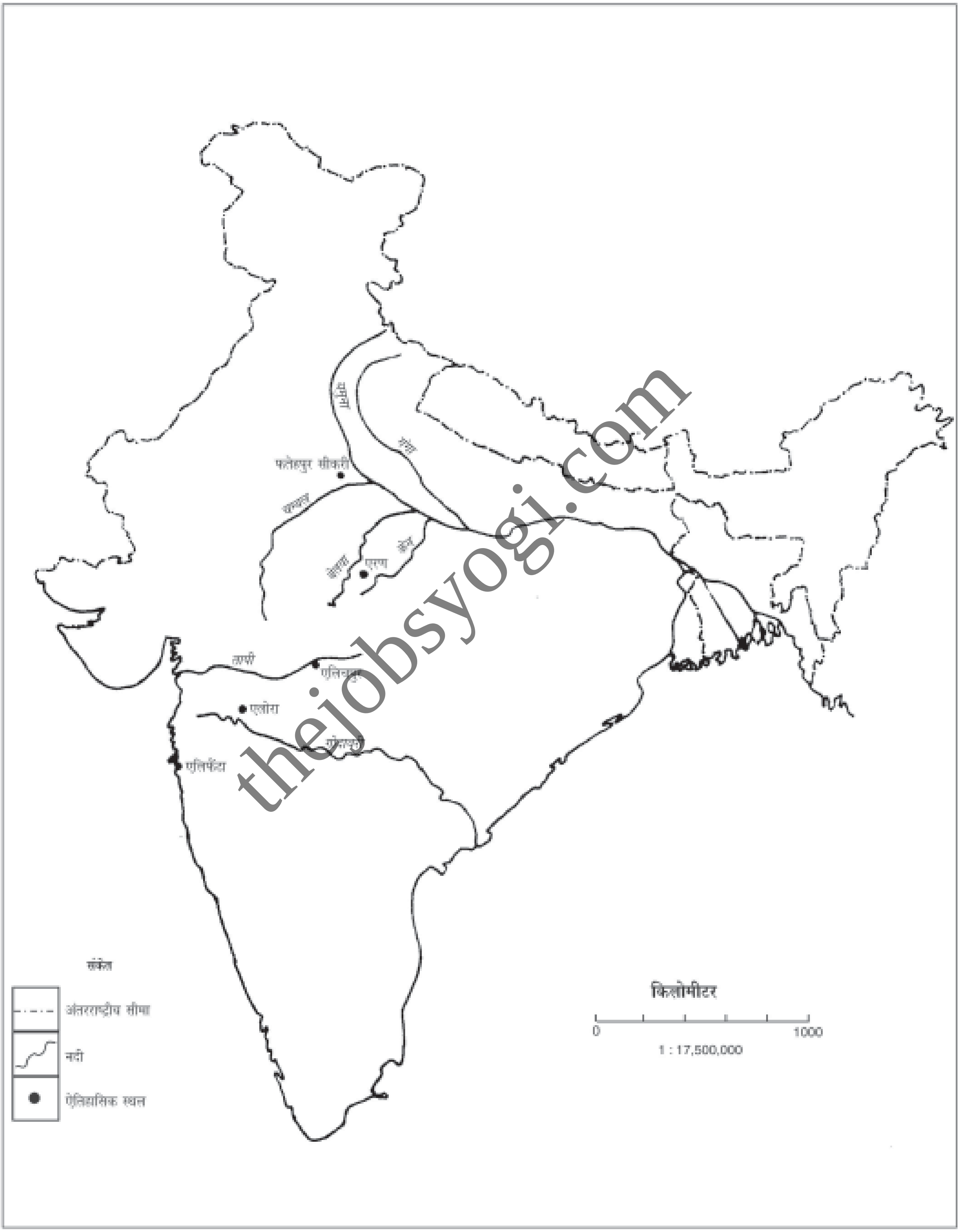

thejobsyogi.com

से कई गुप्तकालीन लेख तथा सिक्के प्राप्त हुए हैं। यहां से कई आहत सिक्के तथा रामगुप्त, नागों एवं भारतीय सशानियन शासकों के सिक्के भी प्राप्त हुए हैं। इनके अतिरिक्त यहीं से पहली बार रामगुप्त की सिंह एवं गरुड़ प्रकार की मुद्राएं सर्वप्रथम प्राप्त की गई हैं। यहां से गज-लक्ष्मी की आकृतियुक्त एक मुहर भी पायी गई है, जिसमें गुप्त शासकों से संबंधित कुछ अन्य जानकारियां भी हैं। इसी मुहर में इस स्थान का नाम ऐरिकेण उल्लिखित है।

भारत में सती प्रथा का प्रथम अभिलेखीय साक्ष्य ऐरण से ही प्राप्त हुआ है। यहां भानुगुप्तकालीन (510 ई.) एक लेख मिला है, जिसमें उसके एक सामंत गोपराज का उल्लेख है। गोपराज हूणों के विरुद्ध युद्ध में मारा गया था तथा उसकी पत्नी सती हो गई थी। हूण शासक तोरभाण के समय का भी एक लेख यहां से प्राप्त हुआ है।

एरण से प्रारंभिक मंदिर स्थापत्य के प्रमाण भी प्राप्त हुए हैं। इसमें उथले बरामदे के साथ समतल छत वाले चौकोर मंदिर प्रमुख हैं। यह विशाल शूकर के लिए भी प्रसिद्ध है, जोकि भगवान विष्णु का पशुरूपी अवतार है।

फतेहपुर सीकरी
(27.09° उत्तर, 77.66° पूर्व)

आगरा से लगभग 37 किमी. दूर फतेहपुर सीकरी 16वीं शताब्दी के मध्य में उस समय अस्तित्व में आया, जब अकबर ने यहां भारतीय-इस्लामिक शैली पर एक नए शहर की स्थापना की। 1568 में अकबर अत्यंत शक्तिशाली शासक के रूप में शासन कर रहा था, किंतु उसके कोई पुत्र नहीं था। सीकरी नामक ग्राम में रहने वाले सूफी संत शेख सलीम चिश्ती ने अकबर को तीन पुत्रों की प्राप्ति का आशीर्वाद दिया। इसके शीघ्र पश्चात ही सलीम का जन्म हुआ, जो आगे चलकर जहांगीर के नाम से मुगल साम्राज्य का शासक बना। शेख सलीम चिश्ती के इसी आशीर्वाद से प्रभावित होकर अकबर ने यहां अपना शाही निवास बनाने का निश्चय किया तथा इसे एक नए शहर के रूप में विकसित कर इसे आगरा के साथ संयुक्त राजधानी बनाया। अपनी विभिन्न विजयों की याद में उसने इस स्थान का नाम 'फतेहपुर सीकरी' रखा।

अकबर ने फतेहपुर सीकरी में पूर्ण सुनियोजित ढंग से कई भवनों एवं इमारतों का निर्माण करवाया। शोधों से यह बात स्पष्ट हो चुकी है कि यह शहर पूर्ण गणितीय सिद्धांतों के आधार पर विकसित किया गया था। जामा मस्जिद नामक प्रसिद्ध इमारत से शहर की स्थापत्य रचना का प्रारंभ होता है। इसके अतिरिक्त दीवान-ए-खास, दीवान-ए-आम, पंचमहल, मरियम यहां विश्व प्रसिद्ध बुलंद दरवाजा एवं शेख सलीम चिश्ती की दरगाह भी है।

फतेहपुर सीकरी विश्व धरोहर सूची में सम्मिलित है। यहां की समस्त इमारतें लाल बलुआ पत्थरों से निर्मित हैं तथा उनमें हिन्दू एवं इस्लामिक स्थापत्य शैली का सुंदर समन्वय परिलक्षित होता है। इन बलुआ पत्थरों पर सुंदर नक्काशी की गई है।

यद्यपि स्थापना के 14 वर्षों पश्चात फतेहपुर सीकरी को छोड़ दिया गया। अनुमान है कि पानी की कम उपलब्धता इसका मुख्य कारण था।

thejobsyogi.com

G

गंधार
(33.75° उत्तर, 72.82° पूर्व)

गंधार पेशावर के समीप पाकिस्तान में स्थित है। छठी शताब्दी ई.पू. में गंधार सोलह महाजनपदों में से एक प्रमुख जनपद था। पुष्कलावती एवं तक्षशिला इसकी दो राजधानियां थीं। गांधी का शासक पुष्पुसती, मगध नरेश बिम्बिसार का मित्र था। तक्षशिला, शिक्षा का प्रमुख केंद्र था, जहां दूर-दूर से विद्यार्थी ज्ञानोपार्जन हेतु आते थे।

कुषाण काल में, गंधार बौद्ध कला एवं संस्कृति के महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में विकसित हुआ। इस कला पर यूनानी कला का गहरा प्रभाव था, जो इस कला में निर्मित बुद्ध की विभिन्न मूर्तियों में परिलक्षित होता है। बुद्ध की विभिन्न भाव-भंगिमाओं, रूपों, शारीरिक बनावट एवं केश विन्यास इत्यादि में यह प्रभाव देखा जा सकता है। नीली गचकारी का प्रयोग इस कला की एक अन्य विशेषता है।

प्रसिद्ध सिल्क मार्ग में स्थित होने की वजह से गंधार प्रमुख व्यापारिक केंद्र के रूप में भी विकसित हुआ।

शहबाजगढ़ी, गंधार का एक अन्य प्रसिद्ध स्थल है। यहां से बौद्ध मठों, चतुर्भुज जलाशय एवं गोलाकार स्तूप के ध्वंसावशेष पाए गए हैं। यहां से मौर्य शासक अशोक का एक अभिलेख भी मिला है।

पहलव शासक गोंडोफर्नीज का तख्ते-बाही अभिलेख भी गंधार से ही मिला है।

गंगैकोण्डचोलपुरम
(11°12′ उत्तर, 79°27′ पूर्व)

कुंभकोणम के उत्तर-पूर्व में, गंगैकोण्डचोलपुरम तमिलनाडु के त्रिचनापल्ली जिले में स्थित है। गंगैकोण्डचोलपुरम प्राचीन काल में चोल वंश के शक्तिशाली शासक राजेंद्र (1012-1044) की राजधानी था। गंगैकोण्डचोलपुरम का अर्थ है—'गंगो पर विजय प्राप्त करने वाले चोलों की नगरी। यहां पर 11वीं शताब्दी का एक मंदिर एवं 5 कि.मी. लंबा जलाशय मौजूद है। यहां राजेंद्र द्वारा एक भव्य एवं विशाल मंदिर निर्मित करवाया गया, जो उसके पिता राजराजा द्वारा तंजौर में निर्मित बृहदेश्वर मंदिर से समानता रखता है। इस मंदिर की दीवारों पर अलंकृत चित्रकारियां एवं भव्य मूर्तियां मिलती हैं। मंदिर के सामने ईंट एवं गारे से बनी नंदी की एक विशाल मूर्ति है।

1030 ई. में निर्मित यह मंदिर बृहदेश्वर मंदिर से काफी मिलता-जुलता है। यद्यपि इसका आकार तंजावुर के मंदिर की तुलना में छोटा है।

मंदिर मंडप तथा गर्भगृह, जो कि पश्चिम से पूर्व की ओर है तथा इस तक जाने की सीढ़ियां हैं, के मामले में तंजौर मंदिर की आभा लिए हुए है। गर्भगृह के ऊपर पिरामिड के समान आठ टॉवर हैं।

भगवान शिव का मंदिर के भीतर प्रस्तुतीकरण अपने भक्तों को आशीर्वाद देते हुए है, विशेषतया चंडीकेश्वर जो कि शिव की कृपा से राजेंद्र I को प्राप्त होने वाली विजयों का उल्लेख करता है। यह चोल शिल्पकला का उत्कृष्ट नमूना है, जिसमें शिव द्वारा चंडिकेश्वर को आशीर्वाद देते हुए दिखाया गया है, जिसने शिव भक्ति में अड़चन डालने के कारण अपने पिता के पैर काट दिए थे।

गंजाम (19.38° उत्तर, 85.07° पूर्व)

गंजाम महानदी के दक्षिण में ओडिशा के तटीय क्षेत्र में छत्रपुर के समीप स्थित है। प्राचीनकाल में गंजाम पर कई शासकों ने शासन किया, जिनमें, मगध, मौर्य एवं गुप्त शासक प्रमुख हैं। 6वीं एवं 7वीं शताब्दी में, गुप्तवंश के पतनोपरांत गंजाम गौड़ शासकों के अधीन हो गया। माधवराव द्वितीय के 619 ई. के एक लेख के अनुसार गंजाम पर हर्षवर्धन के एक सामंत का शासन था। एक अन्य अभिलेखीय प्रमाण के अनुसार 643 ई. में हर्ष ने अपना अंतिम सैन्य अभियान गंजाम के विरुद्ध ही किया था। इसके कुछ वर्षों पश्चात ही हर्षवर्धन की मृत्यु हो गई थी। गंजाम उन प्रमुख साम्राज्यों में से एक है, जिनका उल्लेख चीनी यात्री ह्वेनसांग ने अपने यात्रा विवरण में किया है। इतिहासकारों के अनुसार, हर्ष ने गंजाम की स्वतंत्रता को समाप्त कर इस पर अधिकार कर लिया था। ऐसा प्रतीत होता है कि गंजाम के विरुद्ध हर्ष के सैन्य अभियान का मुख्य प्रयोजन अपने अग्रज राज्यवर्धन की हत्या का बदला लेना था। राज्यवर्धन की गौड़ नरेश शशांक ने हत्या कर दी थी। ऐसा भी प्रतीत होता है कि 8वीं शताब्दी में गंजाम पर पाल शासकों ने अधिकार कर लिया था।

thejobsyogi.com

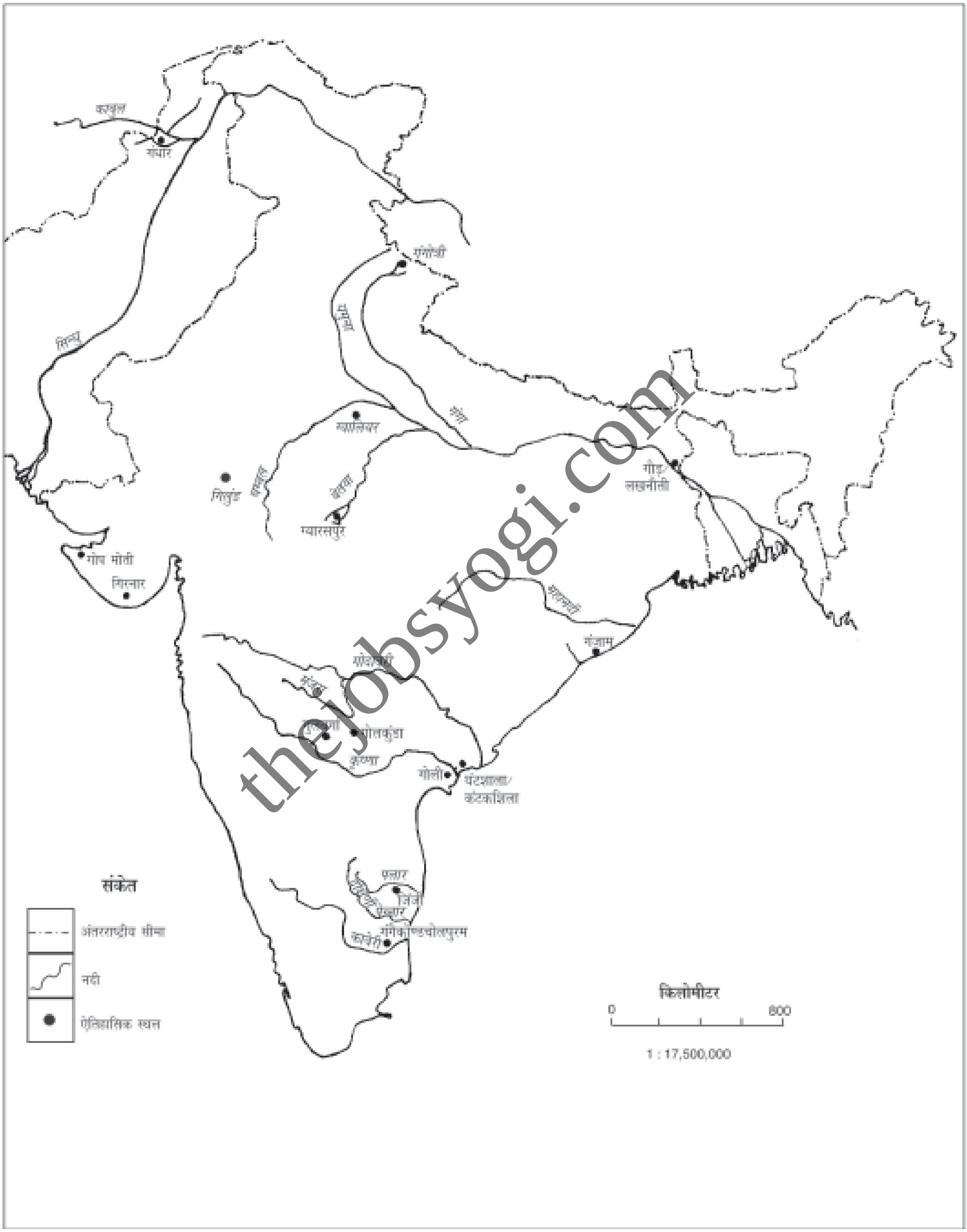

thejobsyogi.com

गंगोत्री (30.98° उत्तर, 78.93° पूर्व)

हिमालय की गोद में स्थित गंगोत्री नामक स्थल का ऐतिहासिक एवं पौराणिक महत्व है। ऐसा माना जाता है कि जीवन रेखा गंगा ने इसी स्थान पर सबसे पहले स्वर्ग से उतरकर पृथ्वी को स्पर्श किया था। हिन्दू धर्मशास्त्रों के अनुसार, स्वर्ग में रहने वाली देवी गंगा ने सागर के पुत्रों को पापों से मुक्त करने के लिए सरिता का स्वरूप धारण कर लिया था एवं पृथ्वी पर आ गई थी। स्वर्ग में देवताओं ने कई वर्षों तक विचार-विमर्श के उपरांत गंगा को पृथ्वी पर भेजने का निश्चय किया था। गंगा की देवी के रूप में आज भी पूजा की जाती है। गोरखा सेनापति अमर सिंह थापा ने 18वीं सदी में प्रसिद्ध गंगोत्री मंदिर का निर्माण करवाया। कालांतर में जयपुर के महाराजा ने इसका जीर्णोद्धार करवाया।

नवंबर तक गंगोत्री बर्फ से ढक जाती है, इसलिए श्रद्धालु इससे 25 किलोमीटर पहले ही मुखम नामक स्थान पर अपनी पूजा-अर्चना संपन्न करते हैं।

गंगा नदी का उद्गम स्थल गोमुख, 18 कि. मी. ऊपर पहाड़ियों में स्थित है। यह स्थान भी श्रद्धालुओं के लिए विशेष महत्व रखता है। गोमुख का रास्ता कठिन है, अनेक तीर्थयात्री गंगा के स्रोत तक श्रद्धांजलि अर्पित करने जाते हैं। यह उत्तराखण्ड में स्थित है।

गौड़/लखनौती (24°52′ उत्तर, 88°08′ पूर्व)

गौड़ पश्चिम बंगाल में स्थित है तथा इसे लखनौती एवं नूरताबाद के नाम से भी जाना जाता है। यह गौड़ नरेश शशांक की राजधानी था। शशांक हर्षवर्धन का सबसे कट्टर दुश्मन था। शशांक के उपरांत गौड़ पर पाल एवं सेन वंश के शासकों ने शासन किया।

सेन शासकों (विजयसेन, बल्लालसेन) के समय गौड़ कला एवं संस्कृति के साथ ही शिक्षा के एक प्रमुख केंद्र के रूप में भी विकसित हुआ। कुतुबुद्दीन ऐबक के सेनापति, बख्तियार खिलजी के पुत्र इख्तियार खिलजी के आक्रमण के साथ ही गौड़ में मुस्लिम शासन प्रारंभ हो गया। दिल्ली शासन के बाद के दिनों में फखरुद्दीन नामक एक अफगानी व्यक्ति ने यहां अपने वंश की स्थापना की। अफगानी शासकों के समय बंगाल की राजधानी गौड़ से फिरोजशाह स्थानांतरित कर दी गई तथा धीरे-धीरे इस स्थान का महत्व समाप्त हो गया। 17वीं शताब्दी में यह मुगल साम्राज्य का हिस्सा बन गई।

गौड़ इण्डो-इस्लामी स्थापत्य की अपनी बंगाली शैली के लिए प्रसिद्ध है। छोटा सोना एवं बड़ा सोना मस्जिद इसी स्थापत्य कला शैली के कुछ प्रमुख उदाहरण हैं। बड़ा सोना मस्जिद को 'बारादुआरी' (12 दरवाजे) के नाम से भी जाना जाता है। इसका निर्माण 1526 में ईंटों से किया गया था। 'कदम रसूल' इस स्थापत्य शैली का एक अन्य नायाब उदाहरण है। बंगाल शैली में निर्मित यह गुंबदनुमा चतुर्भुज इमारत है। यहां की अन्य प्रमुख इमारतों में तांतीपाड़ा मस्जिद, फिरोज मीनार, लखचुरी दरवाजा एवं दाखिल दरवाजा उल्लेखनीय हैं।

घंटशाला/कंटकशिला (16°9′ उत्तर, 80°16′ पूर्व)

घंटशाला आंध्र प्रदेश के कृष्ण (मछलीपट्टनम) जिले में स्थित है। यहां एक विशाल स्तूप है, जो आंध्र प्रदेश में प्रारंभिक सातवाहन कला के स्थापत्य एवं बौद्ध कला के अदभुत नमूने का प्रतिनिधित्व करता है।

यहां उत्खनन से दो रोमन एवं कई सातवाहन सिक्के प्राप्त हुए हैं। इन मुद्राओं की प्राप्ति से इस स्थान के व्यापारिक महत्व की सूचना मिलती है। दक्कन एवं तमिलनाडु के मुख्य वाणिज्यिक मार्ग में स्थित होने के कारण इसका व्यापारिक महत्व स्वाभाविक था। यहां से प्राप्त अभिलेखों से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि घंटशाला बौद्ध धर्म की महासंधिक शाखा के अवरशिला सम्प्रदाय का प्रमुख केंद्र था। यहां इस सम्प्रदाय को कई धनिकों का संरक्षण प्राप्त था।

गिलुंड (25° उत्तर, 74° पूर्व)

गिलुंड राजस्थान के राजसमंद जिले में स्थित है। यह स्थल आहड़-बनास परिसर में उत्खनित उन पांच प्राचीन स्थलों में से एक है, जो दक्षिण-पूर्वी राजस्थान के ताम्रपाषाण पुरातत्विक संस्कृति का भाग है। इस जगह पर बसावट 3000-1700 ई.पू. के दौरान हुई। इन प्राचीन बस्तियों को तीन सांस्कृतिक चरणों में बांटा गया है। यहां आवास के विविध ढांचे पाए गए हैं तथा साथ ही साथ लंबी समानांतर दीवारों, कार्यशालाओं, कचरे के ढेर, और स्थल के चारों ओर एक बाह्य दीवार सहित विशाल इमारतें शामिल हैं।

वर्ष 2003 में किए गए उत्खननों में 2100-1700 ई.पू. के मुहरों का एक भंडार मिला। इनके डिजाइन नमूने सामान्यतः बेहद साधारण हैं तथा ये सिंधु सभ्यता स्थलों से काफी मिलते-जुलते हैं। मध्य एशिया तथा उत्तरी अफगानिस्तान जितने दूर सांस्कृतिक समूह, जिसे पुरातत्वविद् बैक्ट्रिया-मारजियना पुरातात्विक समष्टि (BMAC) कहते हैं, की मुहरों में भी विभिन्न समानताएं मिलीं हैं।

जिंजी (12.15° उत्तर, 79.30° पूर्व)

जिंजी तमिलनाडु के विलुपुरम जिले में स्थित है तथा अपने विशाल किले के लिए प्रसिद्ध है। यद्यपि अब इस किले का अधिकांश हिस्सा नष्ट हो चुका है। यह किला तीन पहाड़ियों पर स्थित है। ये पहाड़ियां हैं—राजगिरि, कृष्णागिरि एवं छपलिदुर्ग। ये तीनों पहाड़ियां इस किले के लिए सशक्त प्राचीर का कार्य करती हैं।

इस किले का मुख्य हिस्सा विजय नगर के शासकों द्वारा बनवाया गया था। 1565 ई. के तालीकोटा युद्ध के पश्चात यह बीजापुर के अधिकार में चला गया।

1677 में इस किले पर शिवाजी ने अधिकार कर लिया तथा यहां उन्होंने मुगलों के विरुद्ध अपना पहला प्रतिरोध केंद्र (Resistance Centre) स्थापित किया। शंभाजी के उत्तराधिकारी राजाराम ने भी औरंगाबाद से संघर्ष के समय कुछ समय के लिए यहां प्रश्रय प्राप्त किया था। 1698 में मुगलों ने इस किले पर अधिकार

thejobsyogi.com

कर लिया। 1750 में फ्रांसीसी जनरल बुस्सी ने इस पर अधिकार कर लिया। फ्रांसीसियों की पराजय के उपरांत 1761 में यह अंग्रेजों के नियंत्रण में चला गया।

गिरनार (21°29′ उत्तर, 70°30′ पूर्व)

गिरनार की पहाड़ियां जूनागढ़ के बगल में सौराष्ट्र क्षेत्र में गुजरात राज्य में स्थित हैं। इसे नेमिनाथ पहाड़ी या शत्रुंजय पर्वत शृंखला की पांचवी चोटी भी माना जाता है। जैन धर्मावलंबी इसे अपने 22वें तीर्थंकर नेमिनाथ का जन्म स्थान भी मानते हैं, फलतः जैन धर्म के अनुयायियों के लिए इसका धार्मिक महत्व भी है।

चन्द्रगुप्त मौर्य के शासनकाल में उसके राज्यपाल पुष्यगुप्त ने यहां एक विशाल जलाशय का निर्माण कराया था, जिसे सुदर्शन झील या सुदर्शन तड़ाग के नाम से जाना जाता है। कालांतर में शक शासक रुद्रदमन एवं स्कंदगुप्त के मंत्रियों चक्रपालित एवं उसके पुत्र प्राणदत्त द्वारा इस तड़ाग का जीर्णोद्धार भी करवाया गया। इससे ज्ञात होता है कि पूरे गुप्त काल एवं उसके बाद की अवधि में भी इस जलाशय का विशेष महत्व था।

गिरनार से शक क्षत्रप रुद्रदमन का एक संस्कृत अभिलेख भी मिला है। अभी तक ज्ञात अभिलेखों में यह संस्कृत का प्रथम एवं सबसे लंबा अभिलेख है।

गिरनार में बने मंदिरों के शिखर, छत एवं स्तंभ विशिष्ट अलंकरणों से युक्त हैं। यहां के दो प्रसिद्ध जैन मंदिरों नेमिनाथ मंदिर एवं आदिनाथ मंदिरों का निर्माण चालुक्य मंत्रियों क्रमशः सज्जन एवं वत्सुपाल द्वारा करवाया गया था।

गोलकुंडा (17.38° उत्तर, 78.40° पूर्व)

गोलकुंडा हैदराबाद के समीप तेलंगाना क्षेत्र में आधुनिक आंध्र प्रदेश में स्थित है। यह गोलकुंडा के कुतुबशाही वंश की प्रसिद्ध राजधानी थी, जिसने 1507 से 1687 तक शासन किया।

गोलकुंडा मध्यकालीन भारत के अपने विशाल एवं भव्य किले के लिए भी प्रसिद्ध है। यद्यपि अब यह नष्ट हो चुका है। इस किले के वास्तविक स्वरूप का निर्माण 12वीं शताब्दी में वारंगल के काकतीय शासकों ने कीचड़ (mud) से करवाया था। 1363 में इस पर बहमनियों ने अधिकार कर लिया तथा इसे ग्रेनाइट पत्थरों से पुनर्निर्मित करवाया। इसके समीप ही कुतुबशाही शासकों के मकबरे हैं। किले के भीतर बसी नगरी हीरे के व्यापार के लिए प्रसिद्ध थी। प्रसिद्ध कोहिनूर हीरा यहीं की खान से प्राप्त किया गया था। बहमनी साम्राज्य का विघटन होने के उपरांत गोलकुंडा कुतुबशाही वंश के अधिकार में चला गया। जब मुगल शासकों ने इस वंश पर दबाव बनाया तो अब्दुल कुतुबशाह ने शाहजहां के समय मुगल आधिपत्य स्वीकार कर लिया। 1687 में औरंगजेब ने गोलकुंडा पर अधिकार कर लिया तथा इस प्रकार सदैव के लिए यहां से कुतुबशाही वंश का अंत हो गया।

हैदराबाद के निजाम, निजामुलमुल्क ने 1724 में उस पर अधिकार कर लिया तथा इसके वैभव को पुनर्स्थापित किया। इसके बाद स्वतंत्रता के समय तक गोलकुंडा निजाम के अधिकार में ही बना रहा तथा अंत में आधुनिक आंध्र प्रदेश राज्य का हिस्सा बन गया तदोपरांत 2014 में तेलंगाना का।

गोली (16°18′ उत्तर, 80°26′ पूर्व)

गोली आंध्रप्रदेश के गुंटूर जिले में स्थित है। यह अपने बौद्ध स्मारकों के लिए प्रसिद्ध है। सातवाहन एवं इक्ष्वाकू काल में यह बौद्ध धर्म का एक प्रसिद्ध केंद्र था। सातवाहन काल में यह पूर्वी दक्कन से कर्नाटक के मध्य के प्रसिद्ध व्यापारिक मार्ग पर स्थित था।

यहां से प्राप्त बौद्ध स्तूप एवं अन्य स्मारक द्वितीय-तृतीय ईसा पूर्व (इक्ष्वाकू काल) तक प्राचीन हैं किंतु वर्तमान समय में इनमें से अधिकांश नष्ट हो चुके हैं। गोली की कुछ स्थापत्य रचनाएं आज चेन्नई एवं न्यूयार्क के संग्रहालयों में रखी हुई हैं। सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं असाधारण एक पैनल यहां से मिला है, जिसमें नंदकालीन फौजों को दर्शाया गया है। वर्तमान समय में यह न्यूयार्क के संग्रहालय में सुरक्षित है। यहां से एक अन्य पैनल भी मिला है, जिसमें सात सिरों वाले सर्प का चित्र बना हुआ है। गोली में मल्लेश्वर मंदिर के ध्वंसावशेष भी पाए गए हैं।

गोली की रिलीफ नक्काशी में बुद्ध के विभिन्न रूपों, जातक कथाओं एवं बोधिसत्वों को विषय-वस्तु बनाया गया है।

गोप मोती (22.02° उत्तर, 69.90° पूर्व)

गोप मोती गुजरात के जामनगर जिले में स्थित है। गोप मोती अपने एक विशाल मंदिर के लिए प्रसिद्ध है, जिसे काठियावाड़ क्षेत्र का सबसे प्राचीन मंदिर माना जाता है। इस मंदिर का निर्माण संभवतः 6 शताब्दी ईस्वी में हुआ था तथा यह मंदिर निर्माण की उत्तर भारतीय शैली का प्रतिनिधित्व करता है। यद्यपि यह मंदिर इस क्षेत्र के नागर/शिखर शैली के मंदिरों से थोड़ा भिन्न है। ऐसा अनुमान है कि गोप मंदिर की शैली दक्कन से काठियावाड़ क्षेत्र में पहुंची होगी। दक्कन में मंजिल एवं पिरामिडनुमा आकार दोनों पाए जाते थे।

इस मंदिर में दो छज्जे हैं, जो चतुर्भुज उपासना कक्ष युक्त हैं। ऊपरी छज्जे में जाने के लिए एक मार्ग है। उपासना गृह की दीवारें साधारण एवं लम्बवत हैं, जो कि शिखर शैली से भिन्नता रखती हैं तथा चारों कोनों के शीर्ष पर एक वाटिकानुमा रचना बनी हुई है। उपासना गृह की छत संरचना में पिरामिडनुमा है, जो कि ऊपर से गुम्बद से ढका है।

गुलबर्गा (17.33° उत्तर, 76.83° पूर्व)

गुलबर्गा वर्तमान में कर्नाटक राज्य का जिला मुख्यालय है। प्रारंभ में यह एक हिंदू नगरी थी, जो बाद में मुस्लिम आधिपत्य में आ गया। यहां दो संस्कृतियों का अद्‌भुत मिलन देखने को मिलता है। जब अलाउद्दीन हसन बहमन शाह/हसन गंगू/अलाउद्दीन हसन/जाफर खान, जिसने दिल्ली सल्तनत के शासक मुहम्मद बिन तुगलक के

thejobsyogi.com

विरुद्ध विद्रोह किया, ने 3 अगस्त, 1347 को बहमनी साम्राज्य की नींव रखी और अलाउद्दीन बहमन शाह के नाम से राजगद्दी पर बैठा, तो उसने गुलबर्गा को अपनी राजधानी बनाया। हसन गंगू ने यहां कई सुंदर स्थल, मस्जिदें, दर्शनीय इमारतें एवं बाजार बनवाए। बाद के शासकों ने भी हसन गंगू के मार्ग का अनुसरण किया तथा गुलबर्गा की भव्यता एवं सौंदर्य में वृद्धि करते रहे।

गुलबर्गा प्रसिद्ध सूफी संत ख्वाजा सईद मुहम्मद गेसूदराज से भी संबंधित है, जो दक्कन में सूफी विचारों के प्रवर्तक थे। उनका मकबरा, जिसे ख्वाजा बंदानवाज दरगाह के नाम से जाना जाता है, इण्डो-सारसेनिक शैली में निर्मित है तथा उनके अनुयायियों के लिए दर्शन का एक प्रमुख केंद्र है।

गुलबर्गा अपने किले के लिए भी प्रसिद्ध है, जिसका निर्माण हिन्दू शासक गुलचन्द्र ने कराया था। कालांतर में अलाउद्दीन बहमनी ने इस किले को और मजबूत करवाया। इस किले में 15 प्रवेश द्वार एवं 25 तोप स्थल हैं।

गुलबर्गा की एक अन्य प्रसिद्ध इमारत जामा मस्जिद है, जो गुलबर्गा किले के अंदर बनी हुई है। यह मस्जिद स्पेन की कार्दोवा मस्जिद की तर्ज पर अलंकृत की गई है। मस्जिद ऊपर से महराबों द्वारा आच्छादित है, जो इसे भारतीय मस्जिदों में एक अलग पहचान प्रदान करती है।

यहां एक प्रसिद्ध हिन्दू धर्मोपदेशक एवं चिंतक का स्थल भी है, जिन्होंने सामाजिक एवं धार्मिक समानता की शिक्षा दी।

ग्वालियर (26.22° उत्तर, 78.17° पूर्व)

ग्वालियर वर्तमान में उत्तर-पश्चिमी मध्य प्रदेश में है। यह एक अत्यंत प्राचीन नगरी है, जहां प्रतिहार, कछवाहा एवं तोमर जैसे कई प्रसिद्ध राजपूत वंशों ने शासन किया। ग्वालियर अपनी कई प्रसिद्ध इमारतों के लिए प्रसिद्ध है। इनमें ग्वालियर का किला (15वीं शताब्दी में राजा मान सिंह तोमर द्वारा निर्मित), एवं 14वीं शताब्दी में निर्मित गुर्जरी महल (राजा मानसिंह एवं उसकी रानी गूर्जरी के प्रेम का प्रतीक) सर्वाधिक प्रमुख हैं।

महमूद गजनवी ने ग्वालियर पर आक्रमण किया था किंतु वह इस पर अधिकार नहीं कर सका। ग्वालियर के शासकों ने दिल्ली सल्तनत के प्रारंभिक शासकों के आक्रमणों का भी सफलतापूर्वक प्रतिरोध किया किंतु अलाउद्दीन खिलजी ने इस पर अधिकार कर लिया। मलिक काफूर ने अलाउद्दीन खिलजी के पुत्रों को यहीं बंदी बनाकर रखा था।

अकबर के समय ग्वालियर पर मुगलों ने आधिपत्य स्थापित कर लिया। महान संगीतज्ञ तानसेन, जो अकबर के नौ रत्नों में से एक थे, ग्वालियर से ही संबंधित थे। ग्वालियर में तानसेन का मकबरा भी है।

कालांतर में ग्वालियर सिंधिया सरदारों का मुख्यालय बन गया। महादजी सिंधिया, महान सिंधिया सरदार थे, जिन्होंने उत्तरवर्ती मुगल शासकों के समय दिल्ली पर भी नियंत्रण स्थापित कर लिया था। 1780 में ग्वालियर पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया। 1857 के विद्रोह में ग्वालियर विद्रोहियों का एक प्रमुख केंद्र था। यहां विद्रोहियों का नेतृत्व तात्यां टोपे ने किया था। यह ग्वालियर का किला (15वीं शताब्दी में राजा मान सिंह तोमर द्वारा बनवाया गया) तथा 14वीं शताब्दी का गूजरी महल (राजा मान सिंह तथा उसकी रानी (गुर्जरी) के बीच प्रेम का स्मारक), जैसे विभिन्न स्मारकों के लिए जाना जाता है।

ग्यारसपुर (23°40′ उत्तर, 78°6′ पूर्व)

ग्यारसपुर मध्य प्रदेश के विदिशा जिले में स्थित है। यह गुप्त एवं उत्तर गुप्तकालीन स्थल अपनी स्थापत्य रचनाओं एवं नक्काशियों के लिए प्रसिद्ध है।

यहां से बौद्ध, जैन एवं ब्राह्मण धर्म से संबंधित विभिन्न वस्तुएं प्राप्त की गई हैं। यहां से गुप्तकालीन एक स्तूप भी मिला है, जिसमें बुद्ध एवं बोधिसत्वों से संबंधित आकृतियों को उकेरा गया है। यहां से वृक्ष देवता की एक मूर्ति भी मिली है, जो शारीरिक बनावट, भारी आभूषणों, केश विन्यास की दृष्टि से विशेष पहचान रखती है। सातवीं शताब्दी ईस्वी के एक जीर्ण-शीर्ण शिव मंदिर के अतिरिक्त ग्यारसपुर में एक जैन मंदिर भी पाया गया है, जिसे माहतोदेवी मंदिर कहा जाता है। संभवतः यह जैन मंदिर 9वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में निर्मित किया गया था। यह मंदिर अपने विभिन्न शिखरों के लिए प्रसिद्ध है। इसके स्तंभ विशिष्ट अलंकरणों से युक्त हैं, जो उत्तरकालीन गुप्तकालीन शैली से साम्यता रखते हैं।

thejobsyogi.com

हैलीबिड/द्वारसमुद्र (13.21° उत्तर, 75.99° पूर्व)

हैलीबिड हासन के उत्तर-पश्चिम में 27 किमी. दूर स्थित है। यह आधुनिक कर्नाटक के बैलूर से पूर्व की ओर 17 किलोमीटर दूर है। हैलीबिड, जिसे द्वारसमुद्र के नाम से भी जाना जाता है, 12वीं एवं 13वीं शताब्दी में होयसल साम्राज्य की राजधानी था। यह तारे के आकार के मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है, जिसका निर्माण होयसल शासकों ने करवाया था। प्रत्येक मंदिर एक-दूसरे के बिल्कुल अगल-बगल स्थित हैं तथा आकार में एक-दूसरे के बिल्कुल समान हैं। ये मंदिर तारे के समान निर्मित धरातल पर बने हुए हैं। अपनी इस विशिष्टता के कारण ये मंदिर देश के सभी अन्य मंदिरों से विशेष पहचान रखते हैं। होयशलेश्वर मंदिर हैलीबिड का सबसे प्रसिद्ध मंदिर है, जिसका निर्माण 12वीं शताब्दी में हुआ था। यह अपने नक्काशीयुक्त कार्यों के लिए प्रसिद्ध है। मंदिर की दीवारों पर देवी-देवताओं, पशुओं, पक्षियों एवं नृत्य करती बालिकाओं के सुंदर चित्र बने हुए हैं। यद्यपि मंदिर के कोई भी दो कोने एक जैसे नहीं हैं। इस उत्कृष्टता की समानता रखने वाला केदारेश्वर मंदिर लगभग एक शताब्दी के बाद बनाया गया।

यहां कई जैन मठ भी हैं जो कि शिल्प में इतने ही उत्कृष्ट हैं। ऐसी मान्यता है कि प्रसिद्ध सुधारवादी संत आदि शंकर ने यहां शारदा पीठ की भी स्थापना की थी। यह देश में वेदांत दर्शन के प्रसार हेतु चार पीठों में से एक है।

हल्लूर (14.3334° उत्तर, 75.6223° पूर्व)

कर्नाटक के भागलकोट जिले में स्थित हल्लूर एक पुरातात्विक स्थल है। यह दक्षिण भारत का प्राचीनतम लौहयुगीन स्थल है, जो तुंगभद्रा नदी के तट पर स्थित है। इस स्थल की खोज नागराज राव ने सर्वप्रथम 1962 में की तथा 1965 में इसका उत्खनन हुआ। यहां बसावट के दो कालखंड परिलक्षित होते हैंः नवपाषाण-ताम्रपाषाण (इसमें 2000 ई.पू. से 1200 ई.पू. के बीच मानव बस्तियों के दो उप-चरण सन्निहित हैं) तथा नवपाषाण-ताम्रपाषाण व प्रारम्भिक लौह युग का अतिव्याप्त काल। लौह युग की ओर संक्रमण काल 1200 से 1000 ई.पू. के मध्य हुआ। इस काल के मृदभांड काले व लाल रंग के हैं, जिनमें श्वेत रंग की लाइनें एवं पैटर्न बने हैं। वर्तमान विद्वानों का मानना है कि नवपाषाण से लौह युग की ओर सांस्कृतिक विकास एक देशी प्रघटना थी तथा इसमें जनसांख्यिकीय निरन्तरता पाई जाती है।

1971 के उत्खनन में यहां अश्व की अस्थियों की खोज हुई जो परिकल्पित आर्य आक्रमण से पहले के काल की थी। इस खोज ने एक विवाद को उत्पन्न कर दिया क्योंकि यह उस धारणा के विपरीत था, जिसमें माना गया था कि भारत के दक्षिणी भागों में अश्वों का परिचय आर्यों द्वारा किया गया। पशु, भेड़, बकरी तथा कुत्ते की अस्थियां भी इस स्थान से मिली हैं। नवपाषाण काल की मुख्य फसलों में बाजरा, चने की दाल, मूंग आदि थी। इस स्थल पर दक्षिण भारत में अफ्रीकी मूल की फसलों के प्राचीनतम साक्ष्य भी पाए जाते हैं जैसे—रागी व जलकुंभी। उत्तर लौह युग काल में रागी, चावल, मिट्टी के आभूषण, कार्नेलियन, स्वर्ण इत्यादि भी मिले हैं।

घरों में गोलाकार फर्श जो मिट्टी व पत्थर के टुकड़ों को परतों में संयोजित करके बनाए गए थे, जिससे सतह कठोर बनी रहे। दीवारें बांस तथा मिट्टी की बनी थी तथा इनकी छत शंक्वाकार थी। एक घर के अंदर वृत्ताकार चिमनी मिली है, जिसमें राख तथा चारकोल मिला है। फर्श के नीचे एक कब्रगाह भी मिली है जिसमें अस्थि कलश रखे हैं, ये बच्चों के शवों को दफनाने हेतु रखे गए थे। इसके अतिरिक्त काले क्वार्टजाइट के बने ताम्रपाषाण ब्लेड के औजार, छोटी ताम्र की कुल्हाड़ियां एवं मछली पकड़ने के हुक भी मिले हैं। महापाषाण एवं लौह औजारों का मिलना लौह युग की ओर संक्रमण को दर्शाता है।

हम्पी (15.33° उत्तर, 76.46° पूर्व)

हम्पी मैसूर के निकट कर्नाटक में स्थित है। हम्पी, भारतीय इतिहास के सबसे बड़े हिन्दू साम्राज्य विजय नगर की राजधानी थी। 1336 में हरिहर एवं बुक्का द्वारा स्थापित विजयनगर साम्राज्य कृष्णदेवराय (1509-1529) के समय अपनी समृद्धि की पराकाष्ठा पर पहुंच गया। हम्पी का अंतरराष्ट्रीय बाजार से भी घनिष्ठ व्यापारिक संबंध था।

इस स्थान से प्राप्त ब्राह्मी अभिलेखों से इस स्थान की प्राचीनता प्रथम शताब्दी ईस्वी तक जाती है। इससे अनुमान है कि इसके आसपास ही कहीं बौद्ध धर्म का एक केंद्र रहा होगा। वर्तमान में हम्पी विजयनगर साम्राज्य के ध्वंसावशेषों के लिए प्रसिद्ध है। कृष्णदेव राय द्वारा 16वीं शताब्दी में निर्मित विट्ठलदेव मंदिर एवं हजारस्वामी मंदिर हम्पी की प्रमुख इमारतों में से है।

thejobsyogi.com

thejobsyogi.com

विजयनगर साम्राज्य का एकाएक अंत हो गया तथा 1565 में दक्कनी सुल्तानों एवं विजयनगर के शासकों के मध्य तालीकोटा (बन्नीघाटी) के युद्ध के दौरान शहर ध्वस्त हो गया।

हम्पी दक्षिण भारत के प्रमुख ऐतिहासिक एवं प्रसिद्ध स्थानों में से एक है तथा यूनेस्को ने इसे विश्व धरोहर सूची में सम्मिलित किया है। शानदार अवशेष एक अनोखे तथा सुन्दर तरह से एक बड़ी चट्टान पर बिखरे हुए हैं तथा ये जादुई स्वरूप के हैं।

हांसी (29.1° उत्तर, 75.97° पूर्व)

हांसी हिसार जिले में हरियाणा में स्थित है। पूर्व मध्यकालीन भारत में यह सामरिक महत्व का एक महत्वपूर्ण केंद्र था। यह राजपूतों के आपसी विवादों एवं राजपूतों एवं मुगलों के मध्य विवाद का एक प्रमुख कारण भी था। महमूद गजनवी ने 1022 ई. में इसे जीतकर गजनवी साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया। इस पर तोमरों एवं अजमेर के चौहान शासक बीसल देव ने भी शासन किया। बीसलदेव ने यहां दुर्ग बनवाया तथा उसका उपयोग तुर्क आक्रमणों का प्रतिरोध करने में किया। सूफी संत फरीदुद्दीन गज-ए-शकर ने हांसी को अपनी गतिविधियों का केंद्र बनाया। 18वीं शताब्दी में अंग्रेज सेनापति जार्ज थामस ने इसे एक स्वतंत्र राज्य की राजधानी भी बनाया।

वर्तमान समय में हांसी वाणिज्यिक एवं संचार गतिविधियों का एक प्रमुख केंद्र भी है।

हनुमानगढ़

राजस्थान के हनुमानगढ़ जिले में कालीबंगा स्थल है, जो घग्गर नदी (प्राचीन काल में सरस्वती के नाम से जानी जाने वाली) के तट पर स्थित है। इस स्थल का उत्खनन भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा 1960-1969 के बीच किया गया। उत्खनन द्वारा संस्कृति के दोहरे अनुक्रम प्रकाश में आए, जिसमें उच्च क्रम (कालीबंगा-I) हड़प्पा का है, जो नगरीय अभिविन्यास दिखाता है, तथा निम्न क्रम (कालीबंगा-II) आरम्भिक हड़प्पा अथवा पूर्ववर्ती हड़प्पा को दर्शाता है।

हड़प्पा (30°37′ उत्तर, 72°51′ पूर्व)

हड़प्पा रावी नदी के पश्चिमी किनारे पर पश्चिमी पंजाब में स्थित है, जो अब पाकिस्तान में है। सिंधु घाटी सभ्यता का प्रथम उत्खनन यहीं से किया गया था, इसीलिए इस सभ्यता का नामकरण हड़प्पा सभ्यता किया गया। हड़प्पा का प्रथम पुरातात्विक उत्खनन सन् 1921 में रायबहादुर दयाराम साहनी के निर्देशन में किया गया।

हड़प्पा के उत्खनन से एक पूर्ण नियोजित नगर के पूर्व में अस्तित्वमान होने के प्रमाण मिले हैं। यह नगर ऊपरी एवं निचले दो भागों में विभक्त था। यहां से जली हुई ईंटों के आवास एवं जलनिकासी व्यवस्था के प्रमाण प्राप्त हुए। यहां से मुहरें, बाट एवं कई अन्य वस्तुएं भी प्राप्त की गई हैं। यहां से प्राप्त वस्तुओं में लाल बलुआ पत्थर से निर्मित मानव धड़ एवं कांसे की गाड़ी है, जो इस सभ्यता की समुन्नत कला एवं शिल्प की ओर संकेत करते हैं। यहां से अन्नागारों एवं श्रमिक आवास के साक्ष्य भी प्राप्त हुए हैं। यहां से कब्रगाह, एंटीमनी की छड़ें एवं कांसे से बने दर्पण भी प्राप्त हुए हैं।

यहां से एक समाधिगृह के भी प्रमाण मिले हैं, जिसे R-37 एवं समाधि-एच के नाम से जाना जाता है। R-37 का संबंध हड़प्पा चरण एवं H- प्रकार का संबंध परवर्ती हड़प्पा चरण से है। विभिन्न प्रकार के मृदभाण्डों से भी हड़प्पा के विभिन्न चरणों का ज्ञान होता है।

ऋगवेद में हड़प्पा का उल्लेख हरियूपिया के रूप में प्राप्त होता है।

हरिद्वार (29.95° उत्तर, 78.17° पूर्व)

उत्तराखंड में तीर्थयात्रा के चार स्थानों के लिए प्रवेश का स्थल हरिद्वार शिवालिक पहाड़ियों के निचले भाग में स्थित है। यह गंगा नदी के तट पर बसी हुई नगरी है। जैसे ही गंगा पर्वतों को छोड़ती है तथा मैदानों में प्रवेश करती है, इससे गुजरने वाले शहरों में हरिद्वार पहला प्रमुख शहर है।

हरिद्वार को हिन्दू देवताओं के देवों—ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश—का स्थान माना जाता है, क्योंकि इसे इन तीनों देवताओं का आशीर्वाद प्राप्त है। यह शक्ति पीठों में से एक है।

हरिद्वार आध्यात्मिक एवं धार्मिक दृष्टि से ही एक प्रमुख केंद्र नहीं है बल्कि यह कला, संस्कृति एवं विज्ञान का भी एक महत्वपूर्ण केंद्र है। यहां आज भी शिक्षा की गुरुकुल परंपरा ही कायम है।

रात्रि के समय जब गंगा में हजारों दिए एवं गेंदे के पुष्प तैरते हैं तब इस स्थान की सुंदरता देखते ही बनती है।

हरिद्वार में कई प्रसिद्ध एवं आकर्षक मंदिर भी हैं। यहां कश्मीर के शासक राजा सुचत सिंह द्वारा 1929 में बनवाया गया चंडी देवी मंदिर भी है। यहां का एक अन्य प्रसिद्ध मंदिर मनसा देवी मंदिर है, जहां केवल रोप वे या ट्रेकिंग द्वारा ही पहुंचा जा सकता है। यह मंदिर भीलवा पर्वत के शिखर पर स्थित है। मायादेवी का प्राचीन मंदिर भी अधिष्ठात्री देवी की उपासना का एक प्रमुख स्थल है। यहां सती (भगवान शिव की प्रथम पत्नी) का सिर धड़ से अलग हुआ था।

हरवान (34°5′ उत्तर, 74°47′ पूर्व)

हरवान कश्मीर के श्रीनगर जिले में है। यह स्थान एक स्तूप, टेराकोटा की बनी विभिन्न वस्तुओं एवं 200 से 500 ई. की बनी ईंटों की प्राप्ति के लिए प्रसिद्ध है। यहां से एक ऐसा फर्श प्राप्त हुआ है, जो टेराकोटा की बनी चौकोर ईंटों से अलंकृत है। इस फर्श में विभिन्न प्रकार की सुंदर आकृतियां बनी हुई हैं, जैसे—लड़ते हुए हाथी, घोड़ों पर सवार धनुर्धारी, नृत्य करती या ढोल बजाती महिलाएं एवं बालकनी में बैठा हुआ युगल। चेहरे की बनावट, केश विन्यास, आभूषणों एवं वस्त्र सज्जा में ये आकृतियां गंधार-यूनानी कला से प्रभावित महसूस होती हैं। ऐसा अनुमान है कि कश्मीर क्षेत्र में जब

thejobsyogi.com

मध्य एशिया के शक एवं कुषाण आए, उसी समय इस क्षेत्र में यूनानी कला को प्रवेश मिला।

हस्तिनापुर (29.17° उत्तर, 78.02° पूर्व)

हस्तिनापुर वर्तमान समय में उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले में स्थित है। महाभारत एवं पुराणों में इस स्थान का प्रमुखता से उल्लेख किया गया है। महाभारत के अनुसार हस्तिनापुर कुरु वंश की राजधानी थी तथा पुराणों के अनुसार हस्तिनापुर में बाढ़ की समस्या के कारण राजा निचक्षु ने अपनी राजधानी यहां से कौशाम्बी स्थानांतरित कर दी थी। पुरातात्विक उत्खननों से भी यहां बाढ़ के प्रमाण पाए हैं। जैन परम्पराओं के अनुसार, उसके 24 तीर्थंकरों में से 3 इसी स्थान से संबंधित हैं।

पुरातात्विक दृष्टिकोण से हस्तिनापुर को पांच भागों में विभक्त कर दिया गया था। यह चित्रित धूसर मृदभाण्डों की प्राप्ति का एक प्रमुख स्थल है। यद्यपि यहां से ओसीपी संस्कृति के प्रमाण भी पाए गए हैं। (यहां से तत्कालीन समय की तांबे एवं लोहे से बनी वस्तुओं, चावल एवं गेहूं के प्रमाण पाए गए हैं।) यहां से उत्तरी काले ओपदार मृदभाण्ड संस्कृति के भी अवशेष मिले हैं। इसके अलावा आहत सिक्कों, लोहे की वस्तुओं, अंगूठियों एवं बहुमूल्य धातुओं की प्राप्ति इसकी समृद्धि का परिचय देती हैं। यह काल 200 ई.पूर्व तथा 300 ईस्वी के मध्य का काल था, जब लाल मृदभाण्डों का उपयोग किया जाता था। पकी हुई ईंटों एवं सुनियोजित आवासों के साक्ष्यों की प्राप्ति से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है। यद्यपि गुप्त काल से संबंधित कोई भी प्रमाण यहां से नहीं मिले हैं। इससे प्रतीत होता है कि मध्यकाल तक आते-आते इस स्थान को लोगों ने छोड़ दिया था, जब हमें बलबन का एक सिक्का प्राप्त हुआ।

हिरेबेंकल (15°26′ उत्तर, 76°27′ पूर्व)

हिरेबेंकल एक महापाषाण स्थल है जो कर्नाटक में होसपेट से लगभग 35 कि.मी. दूर स्थित है। यह उन थोड़े से भारतीय महापाषाण स्थलों में से एक है, जो 800 ई.पू. से 200 ई.पू. के बीच के हैं और कोपल जिले में गंगावती शहर के पश्चिम में 10 कि.मी. के दायरे में स्थित हैं। 1955 से यह भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण (एएसआई) के प्रबंधन के अधीन है।

हिरेबेंकल में, सांस्कृतिक सामग्री जैसे कि नवपाषाण काल के औजारों तथा नवपाषाण व महापाषाण काल के मृदभांडों के अतिरिक्त पुरातत्वविदों को यहां लौह तलछट भी मिला है। महापाषाण काल में कृषि औजारों तथा हथियारों हेतु लौह के उपयोग में आकस्मिक वृद्धि हुई। वास्तव में दक्षिण भारत में महापाषाण काल लौह युग के साथ-साथ आया। इस स्थल के ऊपरी भाग में एक बारहमासी जल स्रोत भी उत्खनन में मिला है। इस जल स्रोत के निकट ही एक खदान भी मिली है जहां से महापाषाण कालीन लोग भवन निर्माण हेतु पत्थर प्राप्त करते थे।

दक्षिण भारत में लगभग 2000 महापाषाण स्थलों में से, हिरेबेंकल में सबसे बड़ा कब्रिस्तान मिला है। यहां नवपाषाण काल से लेकर लौह युग तक के लगभग 400 महापाषाण कब्रगाह मिले हैं। इन्हें स्थानीय कन्नड़ भाषा में ‘ऐलु गुड्डागल’ अथवा ‘मोरयर गुड्ड’ के नाम से जाना जाता है। हिरेबेंकल अपने तीन पार्श्व वाले प्रकोष्ठों, जो 8-10 फुट ऊंचे हैं, के लिए प्रसिद्ध है। इनमें छतों को बड़े पाषाण खंडों द्वारा बनाया गया है। इन प्रकोष्ठों को डौलमैन कहा गया है, जो सामान्यतः कब्रगाहों के भाग हैं। कुछ डौलमैन के गोलाकार छिद्रों वाले द्वार हैं जो खिड़कियों वाले घर जैसे प्रतीत होते हैं। कुछ पुरातत्वविद् यहां पाए गए डौलमैनों को काफी विशिष्ट मानते हैं एवं उन्होंने इस प्रकार के डौलमैनों को ‘हिरेबेंकल टाइप’ डौलमैन नाम दिया है। हिरेबेंकल में कुछ अनियमित आकार वाले प्रकोष्ठ शिला आश्रय स्थल तथा समाधि स्थल मिले हैं, इनमें से कुछ को घेरे के रूप में व्यवस्थित किया गया है।

हुनसागी/हुनासगी/हुनसगी (16°27′ उत्तर, 76°31′ पूर्व)

हुनसागी, कर्नाटक के यदगीर जिले में एक गांव है। यहां पर आरम्भिक पुरापाषाण काल के काफी स्थल मिले हैं। एक स्थल परवर्ती पाषाण काल से संबंधित है, जहां लाल रंग लिए हुए भूरे चकमक के औजार तथा हथियार प्राप्त हुए हैं। इन औजारों में तेज धार वाले लंबे ब्लेड तथा बहुउद्देशीय उपकरण हैं। कुछ स्थलों पर सभी गतिविधियों के लिए प्रयोग होने वाले औजार भारी मात्रा में मिले हैं, जो संकेत करते हैं कि यहां बस्ती के अतिरिक्त फैक्टरी स्थल भी था। कुछ अन्य छोटे-छोटे स्थल भी थे जहां से साक्ष्य मिलते हैं। यहां केवल औजारों का निर्माण होता था तथा यहां बस्तियां नहीं थीं। कुछ स्थल झरनों के बेहद समीप थे। अधिकांश औजार यहां स्थानीय रूप से पाए जाने वाले चूना पत्थर के बने थे।

thejobsyogi.com

इ-ई

इंदौर (22°43′ उत्तर, 75°50′ पूर्व)

इंदौर मध्य प्रदेश में है। पेशवा शक्ति के पतनोपरांत माधवराव होल्कर ने इंदौर में एक स्वतंत्र राज्य की स्थापना की। इंदौर शहर की योजना एवं निर्माण होल्कर महारानी, अहिल्याबाई ने की थी। इंदौर के जसवंत राव होल्कर ने ब्रिटिश आक्रमणों का बहादुरीपूर्वक प्रतिरोध किया। यद्यपि, अंत में इंदौर को ब्रिटिश आधिपत्य स्वीकार करना पड़ा।

इंदौर अपने कई दर्शनीय स्थलों के लिए प्रसिद्ध है। इनमें, 'लालबाग पैलेस', भगवान गणेश की 25 फीट ऊंची प्रतिमा वाला 'बड़ा गणपति मंदिर' होल्कर शासकों का 200 वर्ष पुराना ऐतिहासिक पैलेस 'राजवाड़ा' एवं श्रवण बेलगोला की तर्ज पर निर्मित बाहुबली गोमतेश्वर की 21 फुट ऊंची मूर्ति इत्यादि प्रमुख है।

इंदौर की रियासत पहली रियासत थी, जिसमें अछूतों को मंदिरों एवं शिक्षण संस्थानों में प्रवेश का अधिकार दिया था। यहां की शासिका अहिल्याबाई होल्कर स्वयं एक समाज सुधारक थीं, जिन्होंने अपनी रियासत से सती प्रथा की समाप्ति हेतु सराहनीय प्रयास किए।

इंद्रप्रस्थ (28°36′ उत्तर, 77°12′ पूर्व)

इंद्रप्रस्थ दिल्ली के पुराना किला क्षेत्र में स्थित था। इस स्थान का उल्लेख महाभारत काल से ही मिलना प्रारंभ हो जाता है। महाभारत के अनुसार, पांडवों ने इंद्रप्रस्थ को अपनी राजधानी के रूप में विकसित किया। पुराणों में भी इंद्रप्रस्थ का उल्लेख प्राप्त होता है।

उत्तर वैदिक काल में भी इस स्थान में लोग निवास करते थे तथा यहां से द्वितीय शहरीकरण के साक्ष्य भी प्राप्त होते हैं। चित्रित धूसर मृदभाण्ड, एवं इस काल के चांदी के आहत सिक्कों की प्राप्ति से इस स्थान के महाजनपदकालीन स्थल होने के संकेत प्राप्त होते हैं। हाल के उत्खननों से यहां कुषाण एवं गुप्तकाल से संबंधित वस्तुओं के अवशेष भी पाए गए हैं। कुषाणकाल में, इंद्रप्रस्थ मुख्य व्यापारिक मार्ग में पड़ता था। इससे यहां दस्तकारी एवं वाणिज्य में वृद्धि हुई तथा इसकी यह समृद्धि गुप्तकाल तक बनी रही।

इटानगर (27°06′ उत्तर, 93°37′ पूर्व)

अरुणाचल प्रदेश की राजधानी इटानगर एक पूर्ण नियोजित शहर है। कलिक पुराण, महाभारत एवं रामायण में इस क्षेत्र का उल्लेख प्राप्त होता है। 11वीं शताब्दी में इस क्षेत्र में शासन करने वाले जीति शासकों के समय इटानगर को 'मायापुर' नाम से जाना जाता था। यह जीति शासकों की राजधानी था। अनुमान है कि 14वीं-15वीं सदी में बना प्रसिद्ध इटा किला का निर्माण राजा रामचंद्र ने करवाया था। दलाई लामा द्वारा संचालित एक बौद्ध मंदिर तथा पीली छत वाले पुण्य स्थल से यहां गहन तिब्बती प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। यह इटानगर का एक प्रमुख दर्शनीय स्थल भी है।

जादिगेनहल्ली (लगभग 13° उत्तर, 77.8° पूर्व)

जादिगेनहल्ली कर्नाटक के बंगलुरू के ग्रामीण जिले में होस्कोत तालुक में एक गांव है। 1957 में हुए उत्खनन में, इस स्थान की खोज एक महापाषाण स्थल के रूप में हुई। यहां लोहे की वस्तुओं, मनके एवं चूड़ियों के अतिरिक्त काले मृदभांड, काले तथा लाल मृदभांड तथा लाल मृदभांड मिले हैं। कब्रगाह के गड्ढे में फर्श पर भूसे की खाटें मिली हैं। कब्रगाह के गढ़े में खंड बने हैं, जिसमें निम्न स्तर दो उपखंडों में बंटा है, जिनकी दीवार मिट्टी की बनी है। पत्थर की कब्रगाहों में कुछ सामग्री प्राप्त हुई हैं जिसमें कृषिगत औजारों सहित ऊंची गर्दन के मर्तबान, लोहे की वस्तुएं मिली हैं।

जगदला/जगद्दला/जग्गदला (25°8′ उत्तर, 88°51′ पूर्व)

ऐसा माना जाता है कि वर्तमान बांग्लादेश के उत्तर-पश्चिम में स्थित धमोरहट उपजिला में स्थित जगदला विश्वविद्यालय की स्थापना पाल वंश के शासक रामपाल, जिसने बंगाल में 1077 से 1129 के मध्य शासन किया था, ने की थी। यह विश्वविद्यालय तांत्रिक, बौद्ध धर्म व बौद्ध धर्म के वज्रयान सम्प्रदाय के अध्ययन व प्रचार का केंद्र था। यहां पर काफी मात्रा में मूल पाठों, जो कि बाद में कंग्यूर और तंग्यूर के रूप में जाने गए, की रचना व अनुकृति की गई थी। ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीनतम संस्कृत काव्य 'सुभाषितारत्नकोष' का विद्याकर द्वारा जगदला में ही संकलन किया गया था।

तिब्बती स्रोतों से पता चलता है कि, विक्रमशिला, नालंदा, सोमपुर, ओदंतपुर तथा जगदला ने एक संजाल (नेटवर्क) तैयार किया (संस्थानों का पारस्परिक रूप से जुड़ा एक समूह), जिसमें महान विद्वान एवं शोधार्थी सुगमतापूर्वक समान पद पर एक संस्थान से दूसरे संस्थान में आवागमन करते थे।

ऐसा विश्वास किया जाता है कि जगदला विश्वविद्यालय को 1207 ई. में अंततः मुस्लिम आक्रांताओं द्वारा ध्वस्त कर दिया गया।

thejobsyogi.com

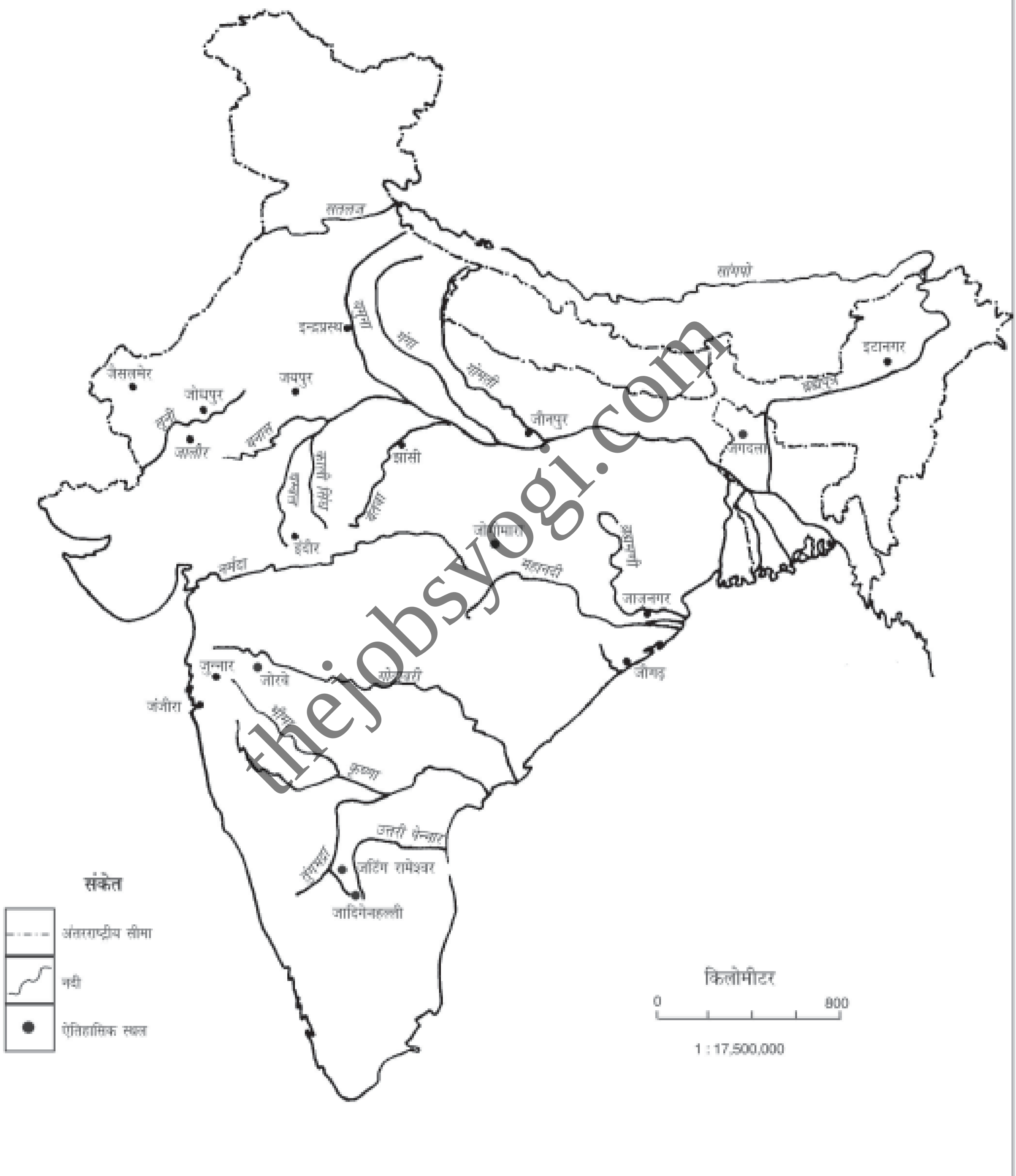

thejobsyogi.com

जयपुर (26.9° उत्तर, 75.8° पूर्व)

राजस्थान की राजधानी जयपुर को 'गुलाबी नगरी' (Pink city) के नाम से भी जाना जाता है। इसका यह नाम शहर की सभी प्रमुख इमारतों के निर्माण में गुलाबी रंग के संगमरमर का उपयोग करने के कारण पड़ा। इस शहर का जयपुर नाम, इसके संस्थापक महाराजा जयसिंह द्वितीय (1693-1793 ई.) के नाम के कारण पड़ा, जिन्होंने 1727 से 1743 तक जयपुर में शासन किया।

प्रारंभ में जयपुर धूंदर क्षेत्र में था, जिसकी राजधानी आमेर या आम्बेर थी। जयपुर अपने 'सिटी पैलेस' के लिए विख्यात है। इस पैलेस की रचना पूर्णरूपेण गुलाबी संगमरमर से की गई है तथा इसमें भारतीय इस्लामी वास्तुकला के दर्शन होते हैं। महाराजा जयसिंह ने यहां एक विशाल वेधशाला का निर्माण भी कराया, जिसे जंतर-मंतर के नाम से जाना जाता है। 1799 ई. में महाराजा सवाई प्रताप सिंह द्वारा निर्मित 'हवामहल' यहां की एक अन्य दर्शनीय इमारत है।

जयपुर धार्मिक सम्प्रदायों एवं तीर्थयात्रा केद्रों से भी संबंधित है। गलताजी नामक प्रमुख धार्मिक स्थल एवं भगवान सूर्य का मंदिर जयपुर के धार्मिक महत्व को प्रतिबिंबित करते हैं

आमेर (कछवाहा शासकों की पुरानी राजधानी) का किला भी जयपुर में ही स्थित है।

जयपुर के निकट बैराट से प्राचीनतम धार्मिक अवशेष प्राप्त हुए हैं। यहां से तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में निर्मित एक स्तूप के प्रमाण मिले हैं। अशोक का भाब्रू अभिलेख भी यहीं से पाया गया है। जयपुर मत्स्य जनपद की भी राजधानी था।

जैसलमेर (26.91° उत्तर, 70.91° पूर्व)

जैसलमेर राजस्थान के पश्चिमी हिस्से में स्थित है तथा राजस्थान की रेगिस्तान नगरी के रूप में जाना जाता है। यह देश के सबसे कम वर्षा वाले क्षेत्रों में से एक है।

मध्यकाल में जैसलमेर राजपूत शासकों के अधीन एक सशक्त दुर्ग नगरी थी। प्रारंभिक मध्यकाल में जैसलमेर पर राजपूतों के भाटी शासकों का शासन था। बाद में (लगभग 1570 में) जैसलमेर के राजा हरराय ने अपनी पुत्री का विवाह अकबर से कर दिया तथा मुगलों की अधीनता स्वीकार कर ली।

दिसंबर 1818 में जब लार्ड हेस्टिंग्स भारत का गवर्नर जनरल था तब जैसलमेर ने ईस्ट इंडिया कंपनी से सतत मित्रता एवं रक्षात्मक संधि संपन्न की। जैसलमेर की अंग्रेजों के साथ यह संधि स्वतंत्रता काल (1947) तक बनी रही।

जैसलमेर अपने वार्षिक ऊंट महोत्सव एवं जैन मंदिर के लिए भी प्रसिद्ध है।

जाजनगर

वर्तमान समय के ओडिशा राज्य का नाम विभिन्न कालों में भिन्न-भिन्न था। समय-समय पर इसे उत्कल, कलिंग, एवं ओदरा देश इत्यादि नामों से पुकारा जाता रहा। ये सभी नाम मूलतः कुछ विशिष्ट लोगों से संबंधित थे। मध्यकाल (14वीं शताब्दी) में, मुस्लिम लेखक एवं इतिहासकार उत्कल को जाजनगर के रूप में उल्लिखित करते थे। जाजनगर ने सर्वप्रथम बलबन के समय अपनी ओर ध्यान आकर्षित किया, जब बंगाल के गवर्नर तुगरिल खान ने सुल्तान के विरुद्ध विद्रोह कर दिया तथा प्रश्रय के लिए जाजनगर के जंगलों की ओर भाग गया। 1323 ई. में मु. बिन तुगलक ने उत्कल या जाजनगर पर आक्रमण किया तथा बहुत से हाथियों एवं काफी सामान लेकर वापस राजधानी पहुंचा। दिल्ली सल्तनत का जाजनगर पर आक्रमण करने वाला दूसरा शासक फिरोज तुगलक था, यद्यपि यह क्षेत्र 16वीं शताब्दी में मुगल साम्राज्य में सम्मिलित होने से पूर्व तक हिन्दू धर्म, कला एवं संस्कृति का प्रमुख स्थल बना रहा।

जालौर (23.35° उत्तर, 72.62° पूर्व)

जालौर को प्राचीन काल में ज्वालीपुर, ज्वालपुरा या जबलपुरा इत्यादि नामों से जाना जाता था। यह राजस्थान में स्थित है। 8वीं सदी में जालौर पर पृथ्वीराज चौहान ने शासन किया। यहां परमार एवं चाहमानों ने भी शासन किया। कालांतर में यह मारवाड़ साम्राज्य का हिस्सा बन गया।

जंजीरा (18.29° उत्तर, 72.96° पूर्व)

महाराष्ट्र के पश्चिमी तट पर स्थित जंजीरा मुंबई के दक्षिण में 45 मील की दूरी पर स्थित एक टापू है। 15वीं शताब्दी के अंत में इस पर अबीसिनियनों ने अधिकार कर लिया तथा इसके पश्चात यह सीद्दियों या अबीसिनियाई प्रमुखों द्वारा ही शासित होता रहा। इन विदेशियों ने अपना सशक्त नौसैनिक बेड़ा तैयार किया तथा इस समुद्री क्षेत्र में व्यापक नियंत्रण स्थापित करने में सफल रहे तथा इस जलमार्ग के यात्रियों के लिए समस्याएं उत्पन्न करते रहे।

शिवाजी एवं उनके पुत्र शंभाजी ने जंजीरा पर अधिकार करने का प्रयास किया किंतु दुर्बल मराठा नौसैनिक शक्ति के कारण वे अपने प्रयासों में सफल नहीं हो सके। 19वीं शताब्दी तक जंजीरा एक स्वतंत्र राज्य के रूप में अपना अस्तित्व बनाए रखने में सफल रहा किंतु इसके बाद वह अंग्रेजों के दबाव के आगे झुक गया तथा अंग्रेजों से मित्रता की संधि करने हेतु विवश हो गया।

जटिंग रामेश्वर (14°50′ उत्तर, 76°47′ पूर्व)

जटिंग रामेश्वर की वास्तविक जगह ब्रह्मगिरी से तीन मील दूर, कर्नाटक में स्थित है। यहां से मौर्य शासक अशोक का एक लघु शिलालेख पाया गया है। यह शिलालेख मैसूर समूह से संबंधित है। वर्तमान समय में यह अभिलेख जटिंग रामेश्वर मंदिर में है, जिससे यह अनुमान लगाया गया है कि यह स्थान कोई धार्मिक स्थान रहा होगा।

thejobsyogi.com

जौगढ़ (19°31′ उत्तर, 84°48′ पूर्व)

जौगढ़ रुसिकुल्य नदी के तट पर ओडिशा के गंजाम जिले में स्थित है। इस स्थान का अत्यधिक ऐतिहासिक महत्व है, क्योंकि यहां से अशोक का एक शिलालेख पाया गया है, जिसमें वह सभी को बौद्ध धर्म का उपदेश देता है। कलिंग युद्ध के उपरांत अशोक ने वहां अपना अधिकार कर लिया था तथा अपने लेख उत्कीर्ण करवाए। इसी तरह का एक अन्य लेख धौली से प्राप्त किया गया है। इन लेखों में अशोक द्वारा हाल ही में जीते हुए कलिंग के दो प्रांतों के न्याय प्रशासन का विवरण है। यह राजाज्ञा सम्पा नगर जिसकी जौगढ़ के रूप में पहचान की गई, के मंत्रियों तथा सैन्याधिकारियों को संबोधित करती है, तथा उन्हें प्रजा के प्रति अपने आचरण में न्याय, बुद्धिमानी, न्यायपूर्वक रहने की शिक्षा दी गई है, जिससे अशोक की नीति इच्छित फल प्राप्त कर सके। अशोक यहां यह भी घोषित करता है कि सारी प्रजा उसकी संतान है तथा यह उसके प्रजा के लिए पितृत्व के भाव की ओर संकेत करती है। न्यायाधीश, जो 'नगर व्यावहारिक' कहे जाते थे, उन्हें अशोक आदेश देता है कि वे अकारण किसी व्यक्ति को शारीरिक यातनाएं न दें न ही कैद करें। वह उन्हें क्रोध, ईर्ष्या, अविवेक, निष्ठुरता तथा आलस्य इत्यादि दुर्गुणों से मुक्त रहने का निर्देश देता है। वह कहता है कि यदि वे निष्ठापूर्वक अपने दायित्वों का निर्वहन करेंगे तो वे राजा के ऋण से मुक्त हो जाएंगे तथा उन्हें स्वर्ग की प्राप्ति होगी।

जौगढ़ से प्राक-मौर्य युगीन काल के चांदी के बने आहत सिक्के भी प्राप्त किए गए हैं। यहां से अर्द्ध-बहुमूल्य मनकों एवं स्थानीय सिक्कों की प्राप्ति से जौगढ़ के शहरी विशेषताओं से युक्त होने के संकेत मिलते हैं।

ऐसा अनुमान है कि तीसरी से चौथी शताब्दी के मध्य इस स्थान ने अपना महत्व खो दिया था।

जौनपुर (25.73° उत्तर, 82.68° पूर्व)

जौनपुर वाराणसी के समीप गोमती नदी के तट पर उत्तर प्रदेश में स्थित है। मध्यकाल में यह अत्यधिक महत्वपूर्ण शहर था। जौनपुर शहर की स्थापना 14वीं शताब्दी में फिरोज तुगलक ने अपने भाई, मु. बिन तुगलक (जौना खां) की यादगार में की थी।

फिरोज तुगलक के शासनकाल में जौनपुर जफर खान नामक एक गवर्नर के नियंत्रण में आ गया तथा तुगलक वंश के पतनोपरांत इस पर जफर खान के उत्तराधिकारी शासन करते रहे। इन्होंने लगभग एक शताब्दी तक जौनपुर पर स्वतंत्रतापूर्वक शासन किया।

बाद में 1394 के लगभग, जौनपुर मलिक सरवर द्वारा स्थापित शर्की साम्राज्य का केंद्र बन गया। शर्की शासक कला एवं स्थापत्य के महान प्रोत्साहक एवं संरक्षक थे तथा इन्होंने जौनपुर में कई सुंदर मकबरों, मस्जिदों एवं मदरसों का निर्माण कराया। प्रसिद्ध अटाला मस्जिद एवं जामा मस्जिद शर्की स्थापत्य के दो सुंदर नमूने हैं। इन इमारतों की एक निश्चित कला शैली है तथा इन पर उत्तरकालीन तुगलक काल का प्रभाव परिलक्षित होता है। जौनपुर इस्लामी शिक्षा एवं अध्ययन का भी एक महत्वपूर्ण केंद्र था तथा इसे 'पूर्व का सिराज' की संज्ञा दी गई थी।

कालांतर में जौनपुर शेरशाह के अफगानी साम्राज्य का हिस्सा बन गया। 1569 में अकबर के समय इस पर मुगलों ने अधिकार कर लिया। मुगलों के पतन के पश्चात 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में यह अवध के नवाब के प्रभावाधीन हो गया।

इसकी स्थापत्य इमारतें जहां एक ओर इसके गौरवशाली इतिहास की गाथा कहती हैं, वहीं वर्तमान में यह शहर चमेली के तेल, तम्बाकू एवं मूली के उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है।

झांसी (25°26′ उत्तर, 78°34′ पूर्व)

झांसी मध्यप्रदेश के ग्वालियर नामक शहर के समीप उत्तर प्रदेश की उस भौगोलिक पट्टी पर अवस्थित है, जो मध्य प्रदेश को स्पर्श करती है। इसे बुंदेलखंड का प्रवेशद्वार कहा जाता है।

झांसी पर चंदेल शासकों का सशक्त शासन था, किंतु 11वीं शताब्दी में इस वंश के पतनोपरांत इस शहर का महत्व भी समाप्त हो गया। राजा बीर सिंह बुंदेला के समय 17वीं शताब्दी में इसका गौरव पुनः स्थापित हुआ। राजा वीर सिंह बुंदेला, मुगल शासक जहांगीर का घनिष्ठ सहयोगी था तथा जहांगीर के आदेश पर ही वीर सिंह ने अकबर के मंत्री एवं विशेष कृपापात्र अबुल फजल की हत्या करवाई थी। यद्यपि वीर सिंह बुंदेला के उत्तराधिकारी झुज्झर सिंह बुंदेला के समय झांसी एवं मुगल साम्राज्य के संबंध बिगड़ने लगे। शाहजहां ने झुज्झर सिंह पर आक्रमण कर उसे पराजित कर दिया तथा उसके महल पर अधिकार कर लिया।

1857 के विद्रोह के समय झांसी एक बार पुनः सुर्खियों में आ गया, जब यहां की रानी लक्ष्मीबाई ने विद्रोहियों को प्रशंसनीय नेतृत्व प्रदान किया। इस वीरांगना ने अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध करते हुए अपने प्राणों की आहुति दे दी। प्रसिद्ध कवियत्री सुभद्रा कुमारी चौहान की ये पंक्तियां 'खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी' आज भी इस वीरांगना की शौर्यगाथा का बखान करती हैं। प्रत्येक वर्ष फरवरी–मार्च में झांसी उत्सव की शुरुआत कर, इस ऐतिहासिक स्थल में एक नया आयाम जोड़ दिया गया।

जोधपुर (26.28° उत्तर, 73.02° पूर्व)

जोधपुर जो वर्तमान राजस्थान का एक जिला है, प्राचीन मारवाड़ (मृत्यु की धरती) रियासत की राजधानी था। यह राजपूताना की सबसे बड़ी रियासत थी तथा कश्मीर एवं हैदराबाद के पश्चात यह भारत की तीसरी बड़ी रियासत थी।

राठौर राणा चुन्दा के समय इस रियासत का महत्व अत्यधिक बढ़ गया। उसके उत्तराधिकारी राणा जोधा ने 15वीं शताब्दी में यहां एक नया शहर बसाया तथा उसके पश्चात् ही इसका नाम जोधपुर पड़ा।

शेरशाह ने थोड़े समय के लिए ही सही किंतु मारवाड़ पर अधिकार कर लिया था। राणा मालदेव से संघर्ष के पश्चात शेरशाह

thejobsyogi.com

ने यह प्रसिद्ध उक्ति कही थी कि 'एक मुट्ठी बाजरे के लिए मैं सम्पूर्ण भारत का साम्राज्य खो देता।' यद्यपि जब मुगल शासक अकबर ने राजपूतों के प्रति धार्मिक सहिष्णुता की नीति अपनाई, तब मारवाड़ के शासकों ने भी इसके संबंध में सकारात्मक प्रत्युत्तर दिया तथा अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली। उत्तरवर्ती मुगल शासकों के समय जोधपुर के शासक अजीत सिंह ने अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी। 1818 में जोधपुर ने ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की अधीनता स्वीकार कर ली। 1947 में इसने भारतीय संघ में मिलने का निश्चय किया।

वर्तमान समय में जोधपुर वायुसेना की पश्चिमी कमान का मुख्यालय है तथा पाकिस्तान की सीमा से सटा होने के कारण सामरिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। जोधपुर में उम्मेद भवन एवं शीशमहल धावा वन्यजीव अभ्यारण्य जैसे कई दर्शनीय स्थल भी हैं।

जोगीमारा (22.89° उत्तर, 82.90° पूर्व)

जोगीमारा गुफाएं तथा सीता बेंगरा गुफाएं छत्तीसगढ़ के सरगुजा जिले में नर्मदा नदी क्षेत्र के समीप अमरनाथ (रामगढ़ पहाड़ियां) में स्थित हैं। ये गुफाएं अपनी सुंदर चित्रकारियों, जो कि 1000 ई.पू. से 300 ई.पू. के बीच की हैं, के लिए प्रसिद्ध हैं तथा ऐसा माना जाता है कि ये गुफाएं विश्व की प्राचीनतम नाट्यशालाओं में से एक हैं। 300 ई.पू. से पहले की इन गुफाओं में जानवरों, पक्षियों, मानवों तथा फूलों की चित्रकारियां मिली हैं। इन चित्रकारियों को सफेद लेप को आधार बनाकर किया गया है, जिसमें लाल, काले, सफेद तथा पीले रंग का प्रयोग हुआ है। प्रत्येक चित्र को लाल रंग द्वारा बाह्य रूप से रेखांकित किया गया है।

गुफाओं की छत पर लगभग सात चित्र बनाए गए हैं जो मानव आकृतियों, मछली तथा हाथियों को परिलक्षित करते हैं। इन चित्रों की दो परतें हैंः ऐसा प्रतीत होता है कि मूल परत निपुण चित्रकारों द्वारा बनाई गई है तथा दूसरी परत अनुभवहीन चित्रकारों द्वारा बनाई गई है। इन चित्रों की विषयवस्तु लौकिक है तथा इस रूप में ये ऐतिहासिक काल के अन्य गुफा चित्रों से भिन्न हैं। हालांकि, ये चित्रकारी मानव द्वारा पारंगत चित्रकला की ओर किए गए प्रारंभिक प्रयासों में से एक जान पड़ती है।

यहां पर ब्राह्मी लिपि तथा प्राकृत भाषा में लिखे गए अभिलेख भी हैं, जिन्हें हम दो प्रकार से परिभाषित कर सकते हैंः एक तो भावना व साहस जबकि दूसरा यथार्थवाद से संबंधित है।

इतिहासकारों के अनुसार, पृष्ठभूमि में सीता बेंगरा तथा जोगीमारा गुफाओं के साथ बनी अर्धवृत्ताकार घाटी ग्रीक थिएटर की भांति एक बहुत अच्छी नाट्यशाला का रूप देती है। सीता बेंगरा गुफा के सामने अर्धचन्द्राकार रूप में कतार में व्यवस्थित गोलाकार आसन बने हैं जो पत्थर को काटकर बनाए गए हैं। नाट्यशाला में दर्शकों के लिए लगभग पचास आसन बने हैं। मंच को एक खड़ी चट्टान को तराश कर बनाया गया है। सीता बेंगरा गुफा एक प्राकृतिक गुफा है, जिसमें एक चट्टान को काटकर कक्ष बनाया गया है। यह कक्ष किसी मंच के सदृश है। गुफा की लम्बाई 14 मी., चौड़ाई 5 मीटर तथा ऊंचाई 1.8 मी. है। मंच के सामने पत्थर को काटकर एक चबूतरा बनाया गया है जो किसी उच्च वर्गीय परिवार हेतु बनी दीर्घा की ओर संकेत करता है। सीता बेंगरा गुफा में मिले दो पक्तियों वाले अभिलेख हमें उन प्रतिष्ठित कवियों के बारे में बताता है जो अपनी कृतियों द्वारा लोगों का दिल जीतते थे। ये कवि अपने गले में चमेली के पुष्पों की माला पहनते थे।

जोगीमारा गुफा, सीता बेंगरा गुफा से छोटी थी तथा कृत्रिम रूप से पत्थर काटकर बनाई गई थी। ऐसा प्रतीत होता है कि ये गुफा नाट्यशाला की अभिनेत्रियों के आराम करने की जगह थी। जोगीमारा में एक पांच पंक्तियों वाला अभिलेख भी है जो नाट्यशाला की एक अभिनेत्री सुतनुका तथा देवदिना नामक रूपदक्ष (चित्रकला व हस्तलिपि विधा में दक्ष कलाकार) की प्रेमकथा का चित्रण करता है। देवदिना ने इस गुफा में चित्रों को बनाया था।

इन गुफाओं के अभिलेखों में भारत में प्रथम बार 'देवदासी' शब्द का उल्लेख हुआ है। यह भी समझा जाता है कि यह नाट्यशाला उन सांस्कृतिक केंद्रों में से एक थी जहां से देवदासी परम्परा का उद्भव हुआ। आरम्भ में देवदासियां कम उम्र की एवं विशेष रूप से चयनित कन्याएं होती थीं जिनका विवाह देवताओं से किया जाता था और जो मंदिरों में सेवा हेतु नियुक्त की जाती थीं। ये लौकिक रूप से अविवाहित होती थी और धार्मिक कर्मकांडों को करती थीं। ये शास्त्रीय कलाओं एवं परम्पराओं में पारंगत होती थीं तथा इनका समाज में काफी सम्मान व प्रतिष्ठा थी। इन्होंने स्वयं की परम्परा, कला तथा संगीत शैली विकसित की। बाद में देवदासी परम्परा में काफी गिरावट आई और इनका धर्म के नाम पर शोषण आरम्भ हो गया।

जोरवे

महाराष्ट्र के अहमदनगर जिले में गोदावरी-प्रवर नदी तंत्र क्षेत्र में स्थित जोरवे की पहचान एक ताम्रपाषाण कृषि स्थल के रूप में हुई है। इस स्थल का उत्खनन एच.डी. संकालिया तथा शांताराम बालचन्द्र देव के निर्देशन में 1950-51 में हुआ। अन्य स्थल जैसे नेवासा, अहमदनगर जिले में स्थित देमाबाद, पुणे जिले में स्थित चंदोली, सोनगांव तथा इनामगांव भी जोरवे संस्कृति से संबंधित हैं तथा प्रवर नदी के बाएं तट पर स्थित स्थलों को जोरवे के नाम पर ही जोरवे प्रकार के संस्कृति स्थल कहा गया।

जोरवे संस्कृति कोंकण के तटीय क्षेत्रों को एवं विदर्भ के भाग को छोड़कर वर्तमान महाराष्ट्र के क्षेत्रों में फैली थी। इसका काल 1400 ई.पू. से 700 ई.पू. का है। ये सभी स्थल काली-भूरी मृदा वाले अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में स्थित परंतु नदी के तटवर्ती भू-भाग के निकट थे। यहां बेर व बबूल वृक्षों की अधिकता थी। यद्यपि जोरवे संस्कृति अधिकांशतः ग्रामीण थी परंतु कुछ बस्तियां जैसे कि देमाबाद व इनामगांव शहरी स्तर पर पहुंच गई थी।

जोरवे संस्कृति के निवासी बड़े आयताकार घरों में रहते थे जिनकी

thejobsyogi.com

छत छप्पर की बनी होती थी एवं दीवारें पुताई की हुई होती थीं। वे अनाज का संग्रहण बड़े-बड़े बर्तन अथवा गड्ढे में करते थे। भोजन को घर के अन्दर चूल्हे में पकाते थे एवं जानवरों के मांस को आंगन में भूनते थे। ये लोग मृतकों को घर में ही फर्श के नीचे उत्तर से दक्षिण दिशा की ओर दफनाते थे। हड़प्पा निवासियों की तरह ही जोरवे संस्कृति के लोग भी शवाधान के लिए अलग से शवागृह नहीं बनाते थे। उनका विश्वास था कि मृत्यु के पश्चात् भी जीवन है एवं बर्तन व ताम्र की वस्तुओं को कब्रों में इसी विश्वास के साथ रखा जाता था कि मृतक अपने अगले जन्म में ये प्रयोग कर सके।

जुन्नार (19.2° उत्तर, 73.88° पूर्व)

मराठा छत्रपति शिवाजी का जन्मस्थान जुन्नार के पास शिवनेर में हुआ था। जुन्नार, मुंबई-औरंगाबाद मार्ग पर मुंबई से 177 किमी. की दूरी पर स्थित है। जुन्नार का समतल मैदान चारों ओर से पहाड़ियों से घिरा हुआ है। इन पहाड़ियों में कई बौद्ध गुफाएं हैं, जो तीन समूहों में विभक्त हैं—तुलिजा लेन समूह, मान मोदी पहाड़ियों की ओर का गुफा समूह एवं गणेश लेन गुफा समूह।

जुन्नार की गुफाएं 100 ईसा पूर्व से 200 ईस्वी काल की मानी जाती हैं। ये गुफाएं पश्चिम भारत में शैल स्थापत्य के प्रारंभिक चरण का प्रतिनिधित्व करती हैं तथा लकड़ी की संरचना पर निर्मित इन गुफाओं में से कुछ में असामान्य विशेषताएं परिलक्षित होती हैं। जैसे—तुलिजा लेन की गुफा संख्या 3 में चैत्य कक्ष में गोलाकार गुम्बदनुमा सीलिंग हैं। इस समूह में कई छोटी गुफाएं एवं विहार हैं। मुख्य चैत्य गुफा संख्या 6 में हैं तथा विहार को गणेश लेन के नाम से जाना जाता है।

शक एवं सातवाहन शासकों के समय जुन्नार कला, संस्कृति एवं वाणिज्य का एक प्रमुख केंद्र था। इसके रोम के साथ भी व्यापारिक संबंध थे। यह पश्चिमी तट के कल्याण से पैठन के बीच के व्यापारिक मार्ग पर स्थित था।

thejobsyogi.com

K

काबुल (34°32′ उत्तर, 69°10′ पूर्व)

काबुल जो वर्तमान अफगानिस्तान की राजधानी है, कभी भारतीय उपमहाद्वीप का उत्तर-पश्चिमी भाग निर्मित करता था। मौर्य साम्राज्य के संस्थापक चंद्रगुप्त मौर्य ने 305 ईसा पूर्व में सिकंदर के यूनानी सेनापति सेल्यूकस निकेटर को पराजित कर काबुल (परिपेनिसदाई) पर अधिकार कर लिया था।

काबुल दक्षिण एशिया से मध्य एशिया को जोड़ने वाले व्यापारिक मार्ग पर स्थित था। कुषाण काल के उपरांत यह काफी लंबे समय तक भारत से अलग रहा किंतु बाबर ने इसे पुनः भारतीय उपमहाद्वीप का हिस्सा बना लिया। अकबर ने राजा मानसिंह को काबुल का सूबेदार नियुक्त किया।

मुगलों के पश्चात काबुल पर क्रमशः नादिरशाह, अहमदशाह अब्दाली एवं फिर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया। कुछ समय पूर्व काबुल उस समय सुर्खियों में आया, जब अमेरिका ने यहां से तालिबानी शासन को उखाड़ फेंका। इसके उपरांत यहां हामिद करजई के नेतृत्व में नई सरकार का गठन किया गया।

कलाड़ी (10.16° उत्तर, 76.43° पूर्व)

कलाड़ी एक गांव है, जो दक्षिण केरल में अल्वी नदी के तट पर स्थित है। यह प्रारंभिक मध्यकाल में चर्चा में आया। अद्वैत दर्शन के प्रतिपादक शंकराचार्य का जन्म इसी गांव में हुआ।

788 ई. में मालाबार तट के नम्बूदरी ब्राह्मण परिवार में जन्मे शंकराचार्य का 820 ईस्वी में 32 वर्ष की अवस्था में देहावसान हो गया। अल्पायु में विद्वता प्राप्त कर शंकर ने हिंदू धर्मग्रंथों का विस्तृत अध्ययन पूर्ण कर लिया तथा अपनी तरुणावस्था में ही लेखन को अपनी आजीविका बनाया। शंकर का लक्ष्य था वेदों को हिंदू धर्मग्रंथों के आधार पर प्रतिपादित करना। एक ऐसी अकाट्य आस्था जो कि हिंदुओं में व्याप्त आस्थाओं की विविधता को समाप्त कर उन्हें जोड़ कर एक ही मंच पर ले आए। उन्होंने विभिन्न तीर्थस्थलों पर चार पीठों की स्थापना की। उत्तर में बद्रीनाथ, पूर्व में पुरी, पश्चिम में द्वारका, तथा दक्षिण में श्रृंगेरी, जहां से उनके सन्यासी अनुयायियों ने अद्वैत मत का संदेश दिया।

कालीबंगा (29°28′ उत्तर, 74°7′ पूर्व)

सिंधु घाटी सभ्यता का महत्वपूर्ण स्थल कालीबंगा, राजस्थान के गंगानगर जिले में स्थित है।

यहां से प्राक् हड़प्पा के अवशेष पाए गए हैं। इस तथ्य की पुष्टि इस बात से होती है कि यहां विकसित हड़प्पा चरण के 4 : 2 : 1 अनुपात की ईंटों के स्थान पर 3 : 2 : 1 अनुपात की ईंटें पाई गई हैं। यह नगर दो भागों में विभक्त था—पश्चिमी दुर्ग एवं निचला नगर, जो सुरक्षा दीवार से घिरा था।

विकसित हड़प्पा चरण में कालीबंगा से खेतों की जुताई, मिश्रित कृषि, 4 : 2 : 1 के अनुपात की पकी ईंटों का प्रयोग एवं अग्निकुंडों (कालीबंगा से ऐसे 7 अग्निकुंड पाए गए हैं) के साक्ष्य पाए गए हैं।

यहां से बुस्त्रोफेदेन प्रकार की लिपि, कांसे का बैल, एक मानव सर, छः प्रकार के मृदृभाण्ड एवं तीन प्रकार की कब्रें भी पाई गई हैं आयताकार कब्र, गोलाकार कब्र तथा विस्तृत कब्रगाह (ईंटों से बनी एक विशेष) कब्र।

कालीबंगा से आद्य हड़प्पाई सोठी संस्कृति के अवशेष भी पाए गए हैं। ऐसा अनुमान है कि इसका कालीबंगा नाम यहां से काले रंग की चूड़ियों के पाए जाने के कारण पड़ा, जो आग लगने के कारण नष्ट हो गयीं थीं।

कालिंजर (24.99° उत्तर, 80.48° पूर्व)

कालिंजर उत्तर प्रदेश के बांदा जिले में स्थित है। यह बुंदेलखण्ड क्षेत्र के प्राचीन स्थलों में से एक है। टालेमी ने इसका उल्लेख 'कंगोरा' के नाम से किया है।

इसका कालिंजर नाम भगवान शंकर के कारण पड़ा। प्राचीन जेजाकभुक्ति क्षेत्र में स्थित तथा बुंदेलखंड क्षेत्र का अभिन्न अंग कालिंजर, मध्यकालीन भारत में स्थान एवं किले दोनों की दृष्टि से सामरिक महत्व का एक प्रमुख क्षेत्र था। कालिंजर के सशक्त दुर्ग पर 9वीं से 15वीं शताब्दी तक चंदेलों का अधिकार रहा तथा यह मुगलों के अधिकार करने तक बना रहा। 1182 में पृथ्वीराज चौहान द्वारा पराजित होने के उपरांत चंदेलों ने अपनी राजधानी महोबा के स्थान पर कालिंजर को बना लिया था। मुगलों के बाद इस पर अफगानों ने अधिकार कर लिया, यद्यपि अफगान शासक इस प्रयास में मारा गया था।

1569 में अकबर ने कालिंजर पर निर्णायक विजय प्राप्त की तथा इसे अपने दरबार के नवरत्नों में से एक बीरबल को उपहार में दिया। बीरबल से यह छत्रसाल के हाथों में चला गया तथा 1812 में पन्ना रियासत के हरदेव शाह ने इस पर अधिकार कर लिया। 1812 में अंग्रेजों ने इसे हस्तगत कर लिया।

thejobsyogi.com

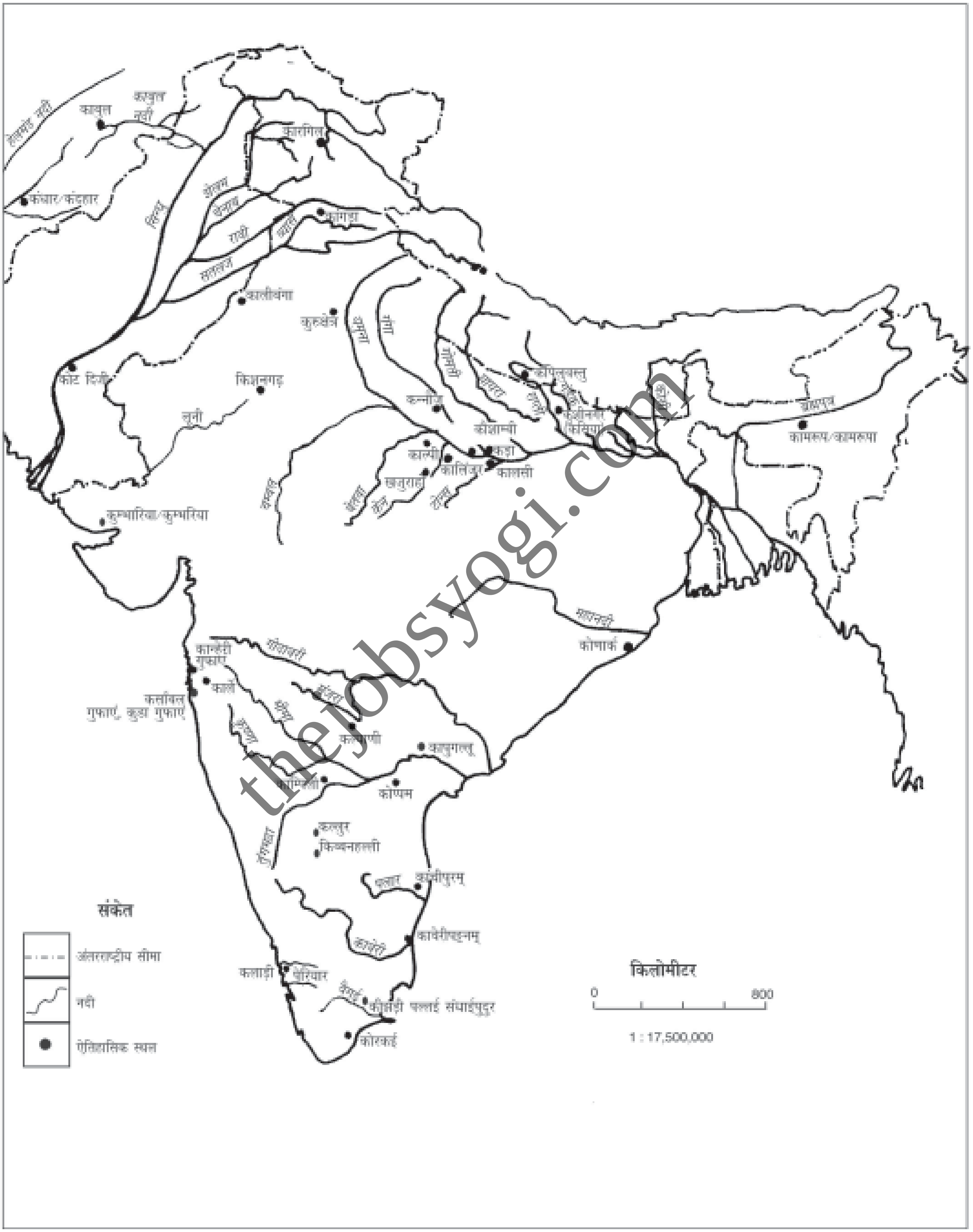

thejobsyogi.com

कालिंजर में कई सुंदर शैल निर्मित जलाशय हैं। यहां से धार्मिक महत्व की कई वस्तुएं भी प्राप्त की गई हैं। कालिंजर का किला भारतीय इतिहास के प्रमुख दुर्गों में से एक है।

कल्लुर (लगभग 16° उत्तर, 77° पूर्व)

कल्लुर, कर्नाटक के रायचूर जिले में स्थित एक पुरातात्विक स्थल है। इस स्थल में तत्कालीन हैदराबाद राज्य के पुरातात्विक विभाग के एम. ख्वाजा अहमद ने 1939-40 में सर्वप्रथम उत्खनन किया था। 1930 के दशक में यह स्थान उस समय प्रकाश में आया जब यहां एक विशिष्ट प्रकार की एंटीना तलवारें खोजी गई। ये तलवारें कच्चे तांबे की बनी हुई थीं एवं ये उत्तरी भारत में ताम्र भंडार संस्कृति (जैसे कि फतेहगढ़) में पाई जाने वाली तलवारों के सदृश थीं। यह दक्षिणी भारत में ताम्र भंडार संस्कृति की उपस्थिति का सबसे पहला एवं सबसे प्रमुख संकेत था। कल्लुर में स्थित पुरातात्विक स्थल में इससे पहले की खोजें नवपाषाण काल की हैं। ('कल्लुर' शब्द कन्नड़ भाषा से लिया गया है, जिसमें 'कुल्लु' का अर्थ है पत्थर व 'अरू' का अर्थ नगर है। इस क्षेत्र के चारों ओर फैले ग्रेनाइट की पहाड़ियों के कारण इसका नाम कल्लुर पड़ा।) यमिगुड्डा पहाड़ी के ऊपर एक पत्थर का वृहद चेहरा बना है, जिस पर भैसों, सांड़ों व एक मानव का चित्र बना है। लाल-भूरा लेपित मृदभांड भी यहां पाए गए हैं। यहां प्राप्त अन्य वस्तुओं में चकमक पत्थर, मणि, पाषाण की कुल्हाड़ियां, लाल मृदभांड, चूंड़ियां एवं मूल्यवान पत्थरों के मनके हैं। लौह अयस्क से लोहे के गलाने के प्रमाण यहां मिले हैं। यहां पर सातवाहन काल के सिक्के भी प्राप्त हुए हैं।

वर्तमान में यह गांव केवल एक पुरानी दीवार से घिरा है, जो 13वीं अथवा 14वीं शताब्दी में बनी प्रतीत होती है। इस गांव के अभिलेख अधिकांशतः कल्याणी चालुक्यों से संबद्ध हैं।

यहां पर कुछ बड़े कुएं भी पाए गए हैं। कुछ कुएं तो काफी बड़े हैं जिनमें चिनाई करके सीढ़ियां भी बनाई गई हैं और ये सीढ़ियां कुएं के तल तक जाती हैं। इन कुओं के इतिहास के बारे में ज्यादा जानकारी प्राप्त नहीं हैं।

काल्पी (26.12° उत्तर, 79.73° पूर्व)

काल्पी उत्तर प्रदेश में स्थित है। 10वीं शताब्दी ईस्वी में यह चंदेल शासकों के अधीन एक महत्वपूर्ण नगर था तथा अपने किले के लिए प्रसिद्ध था। 1196 ईस्वी में दिल्ली सल्तनत के कुतुबुद्दीन ने इसे अपने शासन में मिला लिया।

काल्पी, लोधी साम्राज्य का भी हिस्सा था। इब्राहिम लोदी के भाई एवं उसके प्रतिद्वंद्वी जलाल खान लोदी ने काल्पी में विद्रोह कर अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी किंतु वह इब्राहिम लोदी के हाथों पराजित हो गया। चौरासी गुम्बद काल्पी की वास्तुकला का एक सुंदर नमूना है। अपनी निर्माण शैली एवं अलंकरण में यह स्पष्ट रूप से लोदी शैली से साम्यता रखता है। इस गुम्बद की सम्पूर्ण इमारत शतरंज के समान स्तंभों की 8 लाइनों द्वारा कई चौकोर भागों में विभक्त है। ये सभी भाग चापों द्वारा एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं तथा एक समान समतल एवं चपटी छत के अधीन है। इस इमारत का उन्नत गुम्बद 60 फुट ऊंचा है।

अकबर के शासनकाल में काल्पी 'पश्चिम का द्वार' बन गया तथा मध्य एशिया के लिए यात्रा यहीं से प्रारंभ होती थी। 17वीं शताब्दी में बुंदेला शासक छत्रसाल ने काल्पी को अपना गढ़ बना लिया।

18वीं शताब्दी में, काल्पी कुछ समय तक झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के अधीन रहा। अंततोगत्वा 1857 में इस पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया।

कालसी (30.33° उत्तर, 78.06° पूर्व)

कालसी दो नदियों टोन्स एवं यमुना के संगम पर उत्तर प्रदेश राज्य में स्थित है। यहां से अशोक का एक वृहद शिलालेख प्राप्त किया गया है। इससे प्रतीत होता है कि मौर्य काल में यह एक महत्वपूर्ण स्थल रहा होगा।

हाल के पुरातात्विक उत्खननों से यहां ईंटों से निर्मित यज्ञवेदियों के साक्ष्य पाए गए हैं। ये यज्ञवेदियां राजा शिला वर्मन तृतीय द्वारा शताब्दी ईस्वी में चौथे अश्वमेघ यज्ञ के लिए प्रयुक्त की गई थीं। इससे इस तथ्य की पुष्टि होती है कि इस समय तक यह स्थान महत्वपूर्ण रहा होगा।

यहां एक चट्टान पर एक हाथी की आकृति भी बनी हुई है। अनुमान है कि यह अशोक के समय से संबंधित है।

कल्याणी (17°52′ उत्तर, 76°56′ पूर्व)

उत्तरी हैदराबाद से पश्चिमी दिशा की ओर लगभग 100 मील की दूरी पर स्थित कल्याणी वर्तमान समय में आंध्र प्रदेश में स्थित है। किसी समय कल्याणी प्रसिद्ध चालुक्य शासकों की राजधानी थी। उत्तरवर्ती या पश्चिमी चालुक्यों ने कल्याणी पर लगभग 200 वर्षों तक शासन किया। यह काल 8वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से 12वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक था। कल्याणी की स्थापना सोमेश्वर प्रथम द्वारा की गई थी, तथा 12वीं शताब्दी तक यह निरंतर पश्चिमी चालुक्यों की राजधानी बनी रही। विक्रमादित्य षष्ठम, त्रिभुवनमल्ल (1076-1127) चालुक्यों की पश्चिमी शाखा का एक महान शासक था। विक्रमादित्य षष्ठम ने अपने शासन के प्रारंभ होने के उपलक्ष्य में 'विक्रम संवत' की स्थापना की। इसके दरबार को साहित्य के क्षेत्र की कई महान विभूतियां सुशोभित करती थीं, जिनमें सबसे प्रमुख बिल्हण थे। बिल्हण ने 'विक्रमांगदेव चरित' की रचना की। हिन्दू विधि के महान शास्त्रकार एवं 'मिताक्षरा' के लेखक विज्ञानेश्वर भी इसी के दरबार में थे।

कामरूप/कामरूपा

प्राचीन काल में असम की ब्रह्मपुत्र घाटी कामरूप साम्राज्य का केंद्र थी, जिसकी राजधानी प्रागज्योतिषपुर (आधुनिक गुवाहाटी) थी। यह साम्राज्य करातोया नदी की ओर विस्तृत हुआ। कामरूप, पूर्वी भारत एवं पूर्वी तिब्बत एवं चीन को आपस में जोड़ता था तथा इससे

thejobsyogi.com

इस क्षेत्र के मैदानी भाग में व्यापार एवं वाणिज्य को व्यापक प्रोत्साहन मिला। 350 से 650 ई. के मध्य लगभग तीन शताब्दियों तक कामरूप पुष्यवर्मन वंश के शासकों द्वारा शासित होता रहा। समुद्र गुप्त के इलाहाबाद स्तंभ लेख में कामरूप का उल्लेख गुप्त साम्राज्य के बाहर एक सीमावर्ती राज्य के रूप में किया गया था। इसका शासक समुद्र गुप्त राजस्व अदा करता था। 13वीं शताब्दी के कामरूप के शासक भाष्करवर्मन की हर्षवर्धन से घनिष्ठ मित्रता थी। हर्ष ने बंगाल के शासक शशांक के विरुद्ध अपने अभियान में भाष्करवर्मन से सहायता प्राप्त की थी। शशांक की मृत्यु के उपरांत भाष्करवर्मन ने बंगाल के एक बड़े भू-भाग को अधिकृत कर लिया था। असम के दक्षिण-पूर्व में स्थित अहोम को 13वीं शताबदी में कामरूप ने विजित कर लिया था तथा इस क्षेत्र का नाम 'असम' रखा, जो अहोम से ही व्युत्पन्न है।

कांपिल्य/काम्पिली

काम्पिली या कांपिल्य मध्य काल में तुंगभद्रा घाटी का एक प्रमुख क्षेत्र/स्थल था (वर्तमान बेल्लारी जिला, कर्नाटक)। यह विजयनगर साम्राज्य से लगभग 10 मील की दूरी पर स्थित था। वर्तमान समय के रायचूर एवं धारवाड़ जिले इसी में सम्मिलित थे। काम्पिली, मूलतः यादव साम्राज्य में सम्मिलित था, किंतु जब दिल्ली सल्तनत ने यादवों के देवगिरी राज्य को अधिकृत कर लिया, तो काम्पिली स्वतंत्र हो गया। इसके शासक ने 1326 में मुहम्मद बिन तुगलक के विरुद्ध विद्रोह करने वाले बहाउद्दीन गुर्शास्प को प्रश्रय प्रदान किया था। इसके कारण दिल्ली सल्तनत की सेनाओं ने कांपिल्य पर आक्रमण कर दिया तथा दो माह के युद्ध के उपरांत काम्पिली के किले पर अधिकार कर लिया। लेकिन जब मुहम्मद बिन तुगलक ने मुस्लिम विद्रोही को आश्रय दिया, तो दोनों भाइयों को पकड़ कर जेल में डाल दिया गया तथा दिल्ली भेजकर उनका धर्म परिवर्तन कर मुस्लिम बनाया गया तथा काम्पिली के विद्रोहियों से निबटने के लिए नियुक्त किया गया। दोनों भाइयों ने तुंगभद्रा के तट पर नया नगर विजयनगर बसाने से पहले काम्पिली पर अपना प्रभाव डाला।

कन्नौज (27.07° उत्तर, 79.92° पूर्व)

कन्नौज का क्षेत्र वर्तमान उत्तर प्रदेश में था। प्राचीन धार्मिक ग्रंथों जैसे—महाभारत एवं रामायण में कन्नौज का विभिन्न नामों से उल्लेख किया गया है। जैसे—महोदय, कुशास्थली, कान्यकुब्ज एवं गांधीपुरी। छठी शताब्दी ईसा पूर्व के प्रारंभ में यह मौखरियों की राजधानी थी तथा इसके पहले यह गुप्तों के नियंत्रण में थी। मौखरी वंश के अंतिम शासक गृहवर्मा की विद्रोहियों ने हत्या कर दी थी। इसकी पत्नी राज्यश्री, थानेश्वर के शासक हर्षवर्धन की भगिनी थी। गृहवर्मा की मृत्यु के उपरांत राज्यश्री को संरक्षक बनाकर हर्षवर्धन ने कन्नौज का शासन अपने हाथों में ले लिया तथा लगभग 42 वर्षों (606-47 ई.) तक वहां का शासन संभाला।

8वीं शताब्दी के दौरान, कन्नौज गुर्जर-प्रतिहार, पाल एवं राष्ट्रकूटों के मध्य त्रिपक्षीय संपर्क का कारण बन गया। इस संघर्ष में अंततः गुर्जर-प्रतिहारों को सफलता मिली तथा उन्होंने कन्नौज पर अधिकार कर लिया। यद्यपि 11वीं शताब्दी के प्रारंभ में कन्नौज पर महमूद गजनवी ने अधिकार कर लिया। इसके बाद कन्नौज के गहड़वाल शासक जयचंद्र को मुहम्मद गौरी ने चंदावर के युद्ध में पराजित किया।

आगे चलकर कन्नौज मुगलों के नियंत्रण में आ गया। 1540 ई. में कन्नौज के युद्ध में ही शेरशाह सूरी ने हुमायूं को पराजित कर दिल्ली पर अधिकार कर लिया था।

वर्तमान में कन्नौज एक फलता-फूलता शहर है तथा अपने इत्र उद्योग के लिए प्रसिद्ध है।

कांचीपुरम (12.82° उत्तर, 79.71° पूर्व)

चेन्नई से लगभग 70 किमी. दूर कांचीपुरम छठी से आठवीं शताब्दी तक पल्लव शासकों की ऐतिहासिक राजधानी के रूप में प्रसिद्ध रहा। बाद में यह चोलों, विजयनगर शासकों, मुसलमानों और अन्त में अंग्रेजों के नियंत्रण में रहा। कांचीपुरम तमिल शिक्षा एवं संस्कृति का महान केंद्र था। यह कई शताब्दियों तक धार्मिक शिक्षा का भी एक महत्वपूर्ण केंद्र बना रहा। कांचीपुरम पूरे विश्व में अपनी रेशमी साड़ियों के लिए प्रसिद्ध है। यह अपने हस्तनिर्मित रेशम एवं विभिन्न रंगों के सूती वस्त्र के लिए भी प्रसिद्ध है।

कांचीपुरम में कई सुंदर, भव्य एवं प्रसिद्ध मंदिर हैं, जो मंदिर वास्तुकला की द्रविड़ शैली का प्रतिनिधित्व करते हैं। किसी समय इसे 'हजार मंदिरों का शहर' के नाम से जाना जाता था। वर्तमान में यहां लगभग 126 मंदिर हैं। इनमें से कुछ मंदिर बहुत प्रसिद्ध हैं, जैसे—कामाक्षी अम्मान मंदिर तथा बैकुंठ पेरूमाल मंदिर।

कांचीपुरम हिन्दुओं के सात प्रमुख स्थलों में से एक है। ऐसा माना जाता है कि आदि शंकराचार्य ने यहां एक धार्मिक पीठ की स्थापना की थी। हिन्दू धर्म के पुनरुत्थान से पूर्व यह बौद्ध धर्म का एक प्रसिद्ध केंद्र था। इसलिए इसे 'दक्षिण भारत की धार्मिक राजधानी' की संज्ञा से अभिहीत किया जाना पूर्णतया उचित है।

कांचीपुरम, द्रविड़ कड़गम के संस्थापक एवं तमिलनाडु के पूर्व मुख्यमंत्री सी.एन. अन्नादुरई का जन्म स्थान भी है।

कंधार/कंदहार (31°37′ उत्तर, 65°43′ पूर्व)

कंधार अफगानिस्तान में स्थित है। यहां एक विशाल किला है। सीमावर्ती शहर कंधार किसी समय भारत एवं पर्शिया के मध्य विवाद का एक प्रमुख कारण था। हेरात से मध्य एशिया, काबुल एवं भारत के बीच मुख्य व्यापारिक मार्ग पर स्थित होने की वजह से कंधार सामरिक एवं वाणिज्यिक दृष्टि से एक महत्वपूर्ण स्थल था। विजयों एवं पुनर्विजयों को लेकर कंधार की एक लंबी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि रही है। कंधार पर लंबे समय तक भारत के मुगल शासकों का

thejobsyogi.com

अधिकार रहा। 1545 में हुमायूं ने इसे अपने भाई कामरान मिर्जा से वापस प्राप्त किया। अकबर के काल में निरंतर इस पर मुगलों का अधिकार बना रहा। यद्यपि जहांगीर के समय 1622 में फारस के सफावी शासक ने अचानक कंधार पर आक्रमण किया तथा इसे हस्तगत कर लिया।

प्रतिष्ठा का प्रश्न होने की वजह से शाहजहां ने कंधार को पुनः प्राप्त करने का प्रयास किया। उसने दाराशिकोह, औरंगजेब एवं मुराद के नेतृत्व में कई सेनाएं कंधार पर अधिकार करने के लिए भेजीं, किंतु शाहजहां के सभी प्रयास असफल साबित हुए। मुगलों को इस असफलता की पूरी कीमत 90 वर्ष उपरांत चुकानी पड़ी, जब फारस के शासक नादिरशाह ने 13 अप्रैल 1739 को करनाल के युद्ध में मुगल शासक मुहम्मद शाह रंगीला को पराजित कर दिया तथा सम्पूर्ण दिल्ली को तहस-नहस कर दिया। नादिरशाह के आक्रमण ने दुर्बल मुगल साम्राज्य को भारी आघात पहुंचाया।

कंधार को भारत के बाग एवं फलों के उद्यान के रूप में जाना जाता था। यहां तक कि आज भी सबसे अच्छी किस्म के अनार को 'कंधारी' कहा जाता है। कंधार व्यापार के प्रमुख केंद्र के रूप में भी उभरा तथा आज भी अपनी बहुमूल्य धातुओं के लिए प्रसिद्ध है।

कांगड़ा (32.1° उत्तर, 76.27° पूर्व)

कांगड़ा हिमाचल प्रदेश के पश्चिमी हिस्से में अवस्थित है। कांगड़ा का छोटा-सा नगर पूर्वकालीन चांद शासकों की राजधानी था। यह नगर धौलाधर पर्वत श्रृंखलाओं की कांगड़ा घाटी में स्थित होने के कारण अत्यधिक सुरम्य एवं दर्शनीय है।

कांगड़ा नगर का इतिहास काफी उथल-पुथल भरा रहा है। वज्रेश्वरी मंदिर (कांगड़ा मंदिर) में अतुल धन-सम्पदा एकत्रित होने के कारण यह लुटेरों की आंख में सदैव खटकता रहता था। इसीलिए यहां पर बहुत से लुटेरों ने आक्रमण किए। मुहम्मद गजनवी भी इस मंदिर की सम्पत्ति के कारण ही आकर्षित हुआ था। 1009 ई. में उसने इस मंदिर पर आक्रमण किया तथा इससे विशाल मात्रा में सोने एवं चांदी के जवाहरात इत्यादि लूटकर ले गया। 1360 में यहां दिल्ली सल्तनत के तुगलक शासक फिरोजशाह तुगलक ने आक्रमण किया। यद्यपि मुगल शासकों ने इस मंदिर को भरपूर संरक्षण प्रदान किया तथा जहांगीर के समय इस मंदिर को चांदी की प्लेटों से सुसज्जित कर दिया गया।

नगरकोट का प्राचीन किला कांगड़ा से मात्र 2.5 किमी. दूर था। कांगड़ा जिले का एक छोटा नगर मसरूर अपने मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है। मसरूर में चट्टानों को काटकर बनाए गए 15 मंदिर हैं, जो 10वीं शताब्दी ईस्वी से संबद्ध हैं। यद्यपि इनमें से अधिकांश मंदिर सुंदर नहीं हैं तथा ये बहुत बुरी अवस्था में हैं।

कांगड़ा में ज्वालादेवी का भी मंदिर है। संभवतः यह भारत का एकमात्र मंदिर है जहां प्राकृतिक रूप से ज्वाला की लौ निकलती है।

कन्हेरी गुफाएं (19°12′ उत्तर, 72°54′ पूर्व)

कन्हेरी वर्तमान महाराष्ट्र के ठाणे जिले में है। यह प्रथम शताब्दी की बौद्ध गुफाओं एवं मठों के लिए प्रसिद्ध है। एलीफैन्टा की सुंदर गुफाओं की तुलना में कन्हेरी की गुफाएं कुछ साधारण किस्म की हैं।

कन्हेरी गुफा समूह में, पहाड़ियों को काटकर बनाई गई सैकड़ों छोटी-छोटी गुफाएं हैं। प्रत्येक गुफा में एक पत्थर को बड़े आकार में समतल रखा गया है, जो चारपाई का कार्य करता था। यहां एक चैत्य भी है, जो पाषाण के बहुत से स्तंभों से बना हुआ है। इसमें 'दागोबा' (एक तरह का बौद्ध मंदिर) भी है। यहां अंतिम हीनयान चैत्य भी देखा जा सकता है। कान्हेरी पश्चिमी भारत में बौद्ध धर्म के उत्थान एवं पतन की घटना का साक्षी रहा है।

ये गुफाएं प्रथम से छठीं शताब्दी पुरानी हैं तथा मुख्यतः सातवाहन काल से संबंधित हैं। कन्हेरी की गुफाओं से सातवाहन वंश के अंतिम शक्तिशाली शासक यज्ञश्री शतकर्णी का एक लेख भी पाया गया है।

कन्हेरी से एक अन्य लेख भी प्राप्त हुआ है, जिससे यह सूचना मिलती है कि शकों एवं सातवाहनों के मध्य वैवाहिक संबंध स्थापित हुआ था। राष्ट्रकूट शासकों के समय कन्हेरी बौद्ध धर्म का एक महान केंद्र था किंतु भारत से बौद्ध धर्म के पतन के साथ ही कन्हेरी का महत्व भी कम होने लगा।

कपिलवस्तु (27°32′ उत्तर, 83°3′ पूर्व)

कपिलवस्तु प्राचीन भारत का एक प्रसिद्ध शहर था, जो गौतम बुद्ध के पिता, शुद्धोधन (शाक्य कुल के प्रधान) की राजधानी भी था। परम्पराओं के अनुसार यह माना जाता है कि यह नगर कपिलमुनि की कुटी के स्थल पर बसा हुआ था। तथा राप्ती नदी की सहायक नदी रोहिणी के तट पर स्थित था। कपिलवस्तु नेपाल की तराई में स्थित था। यह एक गणराज्य था तथा यहां का निर्वाचित प्रमुख 'राजन' कहलाता था। धर्म चक्रप्रवर्तन के उपरांत गौतम बुद्ध ने यहां की यात्रा की थी। तथा अपने पिता, पत्नी, पुत्र एवं भाई देवदत्त को बौद्ध धर्म में दीक्षित किया था।

कापुगल्लु/कुपगल्लू (16°56′ उत्तर, 79°59′ पूर्व)

कापुगल्लु या कुपगल्लू तेलंगाना के नालगोंडा जिले में स्थित है तथा यह नवपाषाण काल की अपनी गुफा चित्रकारी के लिए प्रसिद्ध है।

कारसांबल/खादसमला (18.50° उत्तर, 73.33° पूर्व)

कारसांबल गांव महाराष्ट्र के रायगढ़ जिले में स्थित है तथा यह पत्थर को काटकर बनाए गए बौद्ध मंदिरों, बौद्ध परम्परा की चित्रकारी व मूर्तियों के लिए प्रसिद्ध है। कारसांबल गुफाएं पत्थर को काटकर

thejobsyogi.com

बनाई गई 37 संरचनाओं का समूह है तथा ये चौल के प्राचीन बंदरगाह नगर की ओर जाने वाले व्यापार मार्ग पर स्थित था। इतिहासकारों का मानना है कि इन गुफाओं का निर्माण द्वितीय शताब्दी ई.पू. के लगभग हुआ था तथा पांचवीं ई. में इन्हें छोड़ दिया गया, जब चौल पत्तन नष्ट हो गया। इन गुफाओं की ओर 1881 में एच. कौसेनूस का ध्यान गया। यह भी माना जाता है कि इन गुफाओं का इस्तेमाल, छुपने के स्थान के तौर पर, भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान वासुदेव बलवंत फड़के जैसे भारतीय क्रांतिकारियों द्वारा किया गया।

हाल ही में किए अध्ययन में पता चला कि यहां मुख्य गुफा एक बौद्ध मठ था जिसमें एक चैत्य व स्तूप था, ऐसा छत पर मिले खोखले खंड से प्रतीत होता है। बाद में इस गुफा को स्तूप हटाकर रूपांतरित एवं विस्तृत किया गया। मुख्य गुफा के दक्षिण में 17 कमरों वाला एक विहार भी मिला है, जिनमें भिक्षु रहते थे। ऐसा अनुमान है कि गुफा के मुख पर अत्यंत विस्तृत काष्ठ कार्य किया गया था। (ऐसा फर्श व छत में मिले छिद्रों द्वारा साबित होता है।) इसी प्रांगण में एक अन्य गुफा है जिसमें दो स्मृति स्तूप, तथा लाल, काला तथा सफेद रंग को बनाए रखने हेतु चित्रित लेप के निशान मिले हैं।

गुफाओं के मुख्य समूह से लगभग 250 मी. दूर दक्षिणी दिशा में पांच विहारों का एक अन्य समूह है जिन्हें स्थानीय रूप से 'चमर लेन' कहा जाता है। इन गुफाओं का अग्रभाग क्षतिग्रस्त हो गया है, ऐसा पाषाण की बनी गुफामुख के गिरने के कारण हुआ है।

कड़ा (25°42′ उत्तर, 81°2′ पूर्व)

कड़ा को आधुनिक इलाहाबाद के रूप में माना गया है। यह अलाउद्दीन खिलजी के साम्राज्य का एक हिस्सा था तथा दिल्ली सल्तनत का शासक बनने से पूर्व अलाउद्दीन खिलजी यहां का राज्यपाल रह चुका था। कड़ा से ही अलाउद्दीन खिलजी ने देवगिरी के राजा रामचंद्र देव पर आक्रमण किया था तथा उसे परास्त किया था। इस अभियान में अलाउद्दीन खिलजी को अपार दौलत मिली थी, जो बाद में उसके शासक बनने में सहायक सिद्ध हुई। खिलजी वंश के प्रथम शासक जलालुद्दीन खिलजी, जो अलाउद्दीन खिलजी का श्वसुर भी था को कड़ा में ही अलाउद्दीन खिलजी ने षड्यंत्रपूर्वक मार डाला था तथा इसके बाद वह सल्तनत का शासक बन बैठा था।

मुगल काल में कड़ा साम्राज्य का एक हिस्सा बन गया। जहांगीर ने कड़ा में ही अकबर के विरुद्ध विद्रोह किया था तथा अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी थी। जहांगीर के पुत्र खुसरो को कड़ा में ही दफनाया गया था। इस प्रकार मध्यकालीन समय में कड़ा एक प्रसिद्ध स्थान था।

कारगिल (34°33′ उत्तर, 76°08′ पूर्व)

कारगिल जम्मू एवं कश्मीर राज्य में स्थित है। यह सुरू घाटी संफु तथा टैंगोल गांव का एक प्रसिद्ध पर्यटक स्थल है। यहां से एक प्राचीन शिव मंदिर की प्राप्ति से यह सूचना मिलती है कि यह संभवतः कश्मीर में शैववाद का एक प्रमुख केंद्र था। इसे कश्मीर में 'कश्मीर शैववाद' या 'त्रिक शैववाद' के नाम से जाना जाता था।

रंगदम में बौद्ध बस्तियों एवं मलबेक तथा फेकर में शैल गुफाओं की प्राप्ति से यह सिद्ध होता है कि यह स्थान बौद्ध धर्म का भी एक प्रमुख केंद्र था।

वर्ष 1999 में, पाकिस्तान द्वारा यहां अनधिकृत रूप से घुसपैठ करने का प्रयास किया गया था। इसके परिणामस्वरूप भारतीय सेना ने 'आपरेशन विजय' नामक अभियान चलाया तथा पाकिस्तानी प्रयास को विफल कर दिया।

कार्ले (18.78° उत्तर, 73.47° पूर्व)

कार्ले बाणघाट पहाड़ियों में मुम्बई के समीप महाराष्ट्र में स्थित है। यह स्थान बौद्ध गुफाओं के लिए प्रसिद्ध है। यहां से खोजी गई गुफाएं काफी लंबी एवं सुरक्षित हैं। ये गुफाएं गुहा स्थापत्य की सुंदर शैली का नमूना हैं। ये गुफाएं पूर्व के वास्तुकला परंपरा में क्रमिक विकास दर्शाती हैं, जो कि अग्रभाग में लकड़ी की परंपरागत सजावट से क्रमिक मुक्ति तथा बेहतर अलंकरण है।

कार्ले का चैत्य पश्चिमी भारत के सभी चैत्यों में सबसे लंबा एवं सबसे सुंदर है। गुफा के प्रवेश द्वार पर एक विशाल स्तंभ बना हुआ है, जिसके ऊपर चार सिंह विराजमान हैं। मण्डल में प्रवेश हेतु तीन प्रवेश द्वार हैं। द्वारों के सामने के भाग में स्त्रियों एवं पुरुषों की सुंदर आकृतियां बनी हुई हैं। अष्टकोणीय स्तंभों की दो पंक्तियां घड़े के आकार के आधार के साथ आंतरिक स्थल को तीन भागों में विभक्त करती हैं तथा एक चौड़ा गलियारा बनाती हैं, जो भक्तों को स्तूप की परिक्रमा करने का स्थान प्रदान करता है। चैत्य गृह के स्तंभों पर सुंदर नक्काशी भी देखने को मिलती है। इसकी सुंदर नक्काशी एवं मध्य परिमाण बरबस ही पर्यटकों का मन मोह लेता है। आश्चर्यजनक रूप से नश्वर अवशेष तभी से अस्तित्व में हैं, जब से यह हॉल उपयोग में लाया जाता था। सागौन की लकड़ी की मेहराब गुंबदाकार छत पर लगी हुई यह दर्शाती हैं कि पत्थर पर नक्काशी कर उसे लकड़ी की संरचना के नमूने के समरूप बनाया गया है। स्तूप के ऊपर नक्काशी किए हुए लकड़ी के छाते के अवशेष हैं।

कार्ले मढ़ों का महत्व इस तथ्य में है कि ये गुफा को काट कर बहुमंजिली विहार बनाया गया है।

कावेरीपट्टनम/पुहार (11.44° उत्तर, 79.85° पूर्व)

कावेरीपट्टनम, जिसे पुहार या पुम्पुहार के नाम से भी जाना जाता था, कावेरी नदी के मुहाने पर तमिलनाडु में स्थित था। कावेरीपट्टनम या पुहार प्रारंभिक चोलों की राजधानी थी। संगम काल में यह एक प्रमुख बंदरगाह था तथा व्यापार एवं वाणिज्य का प्रमुख केंद्र था। यूनानी लेखक टालमी ने उसका उल्लेख 'खाबेरीज' के रूप में किया है।

thejobsyogi.com

पुरातात्विक उत्खनन से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि प्रथम शताब्दी ईस्वी में कावेरीपट्टनम का रोमन साम्राज्य से घनिष्ठ व्यापारिक संबंध था। यहां से रोमन बस्तियों एवं बड़े बंदरगाहों के साक्ष्य भी पाए गए हैं। प्रसिद्ध चोल शासक करिकाल के शासन काल में, यह तमिल भूमि के एक प्रसिद्ध शहर के रूप में उभरा। यद्यपि उसके उत्तराधिकारियों के काल में चोल शक्ति का धीरे-धीरे पतन होने लगा।

कालांतर में इस नगर का अधिकांश हिस्सा नष्ट हो गया तथा समुद्र के आगोश में समा गया।

पुरातात्विक उत्खननों से इस तथ्य की भी पुष्टि होती है कि यहां से कावेरी नदी से जल प्राप्त करने वाला एक जलाशय भी था। यहां से बुद्ध के प्रतिरूप वाले एक बौद्ध मठ की प्राप्ति से इसके बौद्ध धर्म का एक प्रमुख केंद्र होने की पुष्टि होती है। यहां से उत्तरवर्ती चोलों का (10वीं-12वीं शताब्दी) का एक मंदिर भी पाया गया है।

कीझडी पल्लई संधाईपुदुर

तमिलनाडु के सिवगंगा जिले में स्थित कीझडी पल्लई संधाईपुदुर गांव में भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण (एएसआई) के विशेषज्ञ दल, जिसमें के. अमरनाथ रामकृष्ण, राजेश एवं वीराघवन शामिल थे, द्वारा वर्ष 2015 में किए गए उत्खनन के दौरान आभूषणपरक डिजाइन वाली मिट्टी की एक अंगूठी सहित लगभग 3,000 वर्ष प्राचीन शिल्पकृतियां मिली हैं।

दरअसल 2013-14 में भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण (एएसआई) ने वेगई नदी घाटी के साथ-साथ 293 स्थलों, जिनमें थेनी, डिंडिगुल, मदुरई, सिवगंगा तथा रामनाथपुरम जिले शामिल हैं, में खोज कार्य शुरू किया। सिवगंगा जिले में स्थित कीझडी को उत्खनन हेतु चुना गया। कीझडी के पल्लीचन्थई थिडाल में उत्खनन के दूसरे चरण में मिली कलाकृतियां वेगई नदी के किनारे एक प्राचीन सभ्यता की ओर इशारा करती हैं।

फरवरी 2017 में कीझडी स्थल के चारकोल पर आधारित कार्बन डेटिंग से स्पष्ट हुआ कि यह सभ्यता 200 ईसा पूर्व की है। इस प्रकार उत्खनन ने सिद्ध किया कि तमिलनाडु में शहरी सभ्यता संगम काल से मौजूद थी।

एएसआई द्वारा किए गए उत्खनन में भूमिगत जल-निकासी तंत्र प्राप्त हुआ है, जोकि हड़प्पा सभ्यता के जल-निकासी तंत्र के समान है। मल-जल निकासी तंत्र पकी मिट्टी की पाइप लाइन में बिछाया गया है। यहां से मुद्रा, बाण, लौह तथा तांबे के औजार, खुरचकर चिन्हित करने वाली कील तथा दुर्लभ आभूषण प्राप्त हुए हैं। ये खोज संकाकला तमिल सभ्यता पर प्रकाश डालती हैं। यहां से प्राप्त मृदभांडों के टुकड़ों पर तमिल-ब्राह्मी लिपि में अभिलेख हैं। संगम काल 400 ईसा पूर्व से 200 ईस्वी तक तमिलनाडु के उस स्वर्णिम काल को दर्शाता है जब तमिल सभ्यता अपने चरमोत्कर्ष पर थी तथा भाषा में उत्कृष्ट साहित्य तथा कला का निर्माण हो रहा था। इस काल का नाम संगमों (विद्वानों), तमिलनाडु के कवियों तथा रचनाकारों के नाम पर रखा गया, जोकि मदुरई या आस-पास के क्षेत्र में थे। उस समय तमिलनाडु में केरल, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक तथा श्रीलंका के क्षेत्र सम्मिलित थे।

यद्यपि यह उत्खनन अभी तक विवाद का विषय बना हुआ है तथा भिन्न दल अपने भिन्न विचारों को इस स्थल के लिए प्रतिपादित कर रहे हैं। इस उत्खनन ने राजनैतिक दलों को दो मत वाले दलों में विभक्त कर दिया है। कुछ के अनुसार यह खोज स्वतंत्र तमिल सभ्यता को दर्शाती है जबकि अन्य के अनुसार, ऐसा मान लेना अनुचित है।

खजुराहो (24.83° उत्तर, 79.91° पूर्व)

खजुराहो वर्तमान समय में मध्य प्रदेश में है। यह चंदेल शासकों की गाथा से जुड़ा हुआ एक ऐतिहासिक स्थल है। चंदेल शासकों ने मात्र 100 वर्षों की छोटी अवधि (950-1050 ई.) में ही खजुराहो को मंदिर स्थापत्य के सुंदर नमूनों से भर दिया। यहां निर्मित मूल 85 मंदिरों में से अब मात्र 22 ही बचे हैं। यहां के मंदिर तीन भौगोलिक विभाजनों में समूहीकृत हैंः *पश्चिमी समूह*'—इसमें कंदेरिया महादेव मंदिर, चौसठ योगिनी मंदिर, चित्रगुप्त मंदिर, विश्वनाथ मंदिर, लक्ष्मण मंदिर एवं मातंगेश्वर मंदिर सम्मिलित हैं। *पूर्वी समूह* में अधिकांशतया जैन मंदिर हैं। इनमें पार्श्वनाथ मंदिर, घंटाई मंदिर एवं आदिनाथ मंदिर सम्मिलित हैं। *दक्षिणी समूह* में दुलादेव मंदिर एवं चतुर्भुज मंदिर सम्मिलित हैं। खजुराहो के इन सभी मंदिरों में चौसठ योगिनी मंदिर सबसे प्राचीन एवं कंदेरिया महादेव का मंदिर सबसे विशाल एवं सबसे सुंदर मंदिर है। चित्रगुप्त मंदिर खजुराहो का एकमात्र सूर्य मंदिर है, जिसे चंदेल शासकों द्वारा ही बनवाया गया था।

खजुराहो के मंदिर शिल्पकला की दृष्टि से प्रशंसनीय हैं। इन मंदिरों में बनी मूर्तियां कलात्मक दृष्टि से उच्चकोटि की तथा कामोद्दीपक हैं। इसका कारण या तो कामसूत्र का निदर्शन है अथवा ये तांत्रिक संप्रदाय क्लानुख—एक शैव संप्रदाय, जिसके चंदेल शासक अनुयायी थे, के कर्मकाण्डों के प्रतीक हैं। समग्र रूप से खजुराहो की वास्तु तथा शिल्प दोनों ही कलाएं अत्यंत प्रशंसनीय हैं तथा दर्शकों का मन सहज ही अपनी ओर मोह लेती हैं। खजुराहो को यूनेस्को द्वारा विश्व धरोहर सूची में स्थान दिया गया है। इन मंदिरों ने तीसरी सहस्राब्दी ईस्वी के प्रारंभ पर अपने निर्माण के 1000 वर्ष पूर्ण कर लिए हैं।

किब्बनहल्ली (13.30° उत्तर, 76.64° पूर्व)

किब्बनहल्ली, दक्षिणी कर्नाटक में एक प्रसिद्ध पुरापाषाण स्थल है। यहां पर पुरापाषाण काल की बस्तियां तथा वस्तुएं मिली हैं। पुरातत्वविदों द्वारा 90 वर्षों के अनुसंधान से यहां पुरापाषाण औजारों व इस काल की पाषाण तकनीक के बारे में काफी जानकारियां प्राप्त हुई हैं। हालांकि किब्बनहल्ली में निकट के अन्य स्थलों की तुलना में व्यवस्थित तथा व्यापक अनुसंधानों की कमी रही है। हाल के अनुसंधान से यह सिद्ध होता है कि यहां की सभी पुरापाषाण बस्तियां बानसंद्रा गिरिपीठ के एक किलोमीटर के दायरे में हैं। पहले ऐसा माना जाता है कि ये स्थल बानसंद्रा पहाड़ियों के उत्तर-पूर्व में ही सीमित थे।

thejobsyogi.com

किब्बनहल्ली का पुरातात्विक पक्ष रेगोलिथ (regolith) अथवा कोलुवियल (Colluvial) निक्षेप भी है जो बाबाबुदन निर्माण (Bababudan formation) के विभिन्न पहलुओं द्वारा उत्पन्न होता है। यह प्रक्रिया इस क्षेत्र में चिन्हित सभी पुरापाषाण स्थलों में उभयनिष्ठ है। इसके अतिरिक्त, पाषाण औजारों में प्रयोग किए जाने वाले प्रमुख कच्चे पदार्थों में अपरिष्कृत दानेदार क्वार्टजाइट, प्रज्वलित क्वार्टजाइट अथवा क्वार्टजाइट का प्रयोग एक गोंण पदार्थ के रूप में किया गया है। यहां से प्राप्त कुल्हाड़ी, छेनी तथा अन्य पुरापाषाण पदार्थों को बंगलुरू के केंद्रीय महाविद्यालय के भूगर्भशास्त्र विभाग के संग्रहालय में रखा गया है।

किशनगढ़ (26.57° उत्तर, 74.87° पूर्व)

वर्तमान समय में किशनगढ़ अजमेर, राजस्थान में है। आमेर रियासत के अंतर्गत यह एक छोटी रियासत थी, जिसकी स्थापना 1611 में किशन सिंह ने की थी। इसे लघु चित्रकला की किशनगढ़ शैली के लिए भी जाना जाता है।

चित्रकला की किशनगढ़ शैली गीतमय एवं कभी-कभी संवेदनशील प्रतीत होती है। महाराजा सावंत सिंह, जिन्हें 18वीं शताब्दी में (1699-1764) नागरी दास के नाम से भी जाना जाता था, ने इस शैली को लोकप्रिय बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यद्यपि मुगलों का धर्मनिरपेक्ष प्रभाव राजस्थान के प्रत्येक दरबार में परिलक्षित होता है, किशनगढ़ शैली में हिन्दू भक्ति का ही गहरा प्रभाव दिखाई देता है।

सावंत सिंह के संरक्षण में, इस शैली की मुख्य विषयवस्तु राधा एवं कृष्ण का भावनात्मक प्रेम संबंध था। निहाल चंद इस शैली के एक प्रतिभाशाली चित्रकार थे। इस शैली में निर्मित महिलाओं के चित्रों में उन्हें अत्यंत सुंदरता एवं कोमलता से दर्शाया गया है। तीखे नयन-नक्श एवं चेहरे की सुंदर बनावट ने राजस्थानी चित्रकला में नारी चित्रों की एक नई परम्परा की शुरुआत की। 'बणी-ठणी' इस चित्रकला शैली की सबसे सुंदर अभिव्यक्ति मानी जाती है।

कोणार्क (19°53′ उत्तर, 86.06° पूर्व)

ओडिशा के पुरी जिले में स्थित कोणार्क (जिसका अर्थ है—सूर्य का किनारा) ओडिशा की मंदिर वास्तुकला की सुंदरतम शैली का प्रतीक है। कोणार्क के मंदिरों के संबंध से कई मिथक एवं गाथाएं संबंधित हैं। गाथाओं के अनुसार, भगवान कृष्ण ने अपने पुत्र सांबा पर क्रोधित होकर कोढ़ग्रस्त होने का अभिशाप दे दिया। 12 वर्षों तक कोढ़ से तड़पने के पश्चात सूर्यदेव की कृपा से सांबा को इस व्याधि से मुक्ति मिली। इसके बाद सांबा ने भगवान सूर्य की स्मृति में यहां एक मंदिर का निर्माण करवाया।

ऐतिहासिक दृष्टि से यहां के सूर्य मंदिर का निर्माण 13 शताब्दी ईस्वी में गंग वंश के शासक नरसिंह देव प्रथम ने करवाया था। यह मंदिर वास्तुकला का एक अत्यंत सुंदर एवं सुनियोजित उदाहरण है। मंदिर में एक विशाल रथ है, जिसमें 12 जोड़ी पहिए लगे हुए हैं। रथ को सात घोड़े खींच रहे हैं। मंदिर में तीन मंजिले हैं। मंदिर में पाषाण के उपयोग से वास्तुकला को एक सुंदर अभिव्यक्ति प्रदान की गई है। यहां जीवन के प्रत्येक पहलू को प्रदर्शित किया गया है तथा मानवीय प्रेम के विभिन्न रूपों को जीवंतता से दर्शाया गया है। मंदिर में दो छोटे बाहरी कक्ष हैं, जो मुख्य मंदिर से स्पष्टतया पृथक हैं। रथों की बनावट भी अत्यंत सुंदर है। इस विशाल एवं सुंदर रथ में भगवान सूर्य विराजमान हैं।

सूर्य मंदिर को 'ब्लैक पैगोडा' के नाम से भी पुकारा जाता है। क्योंकि मंदिर निर्माण में प्रयुक्त पत्थरों में काले पत्थर भी हैं। इसकी यह विशेषता इसे भुवनेश्वर के लिंगराज के सफेद मंदिर से एक अलग पहचान प्रदान करती है।

वर्तमान समय में विश्व धरोहर सूची में दर्ज इस मंदिर के 'जगमोहन' को 1903 में बंगाल के तत्कालीन लेफ्टिनेंट गवर्नर में बंद कर दिया था, जिससे कि इसे नष्ट होने से बचाया जा सके।

कोप्पम (15.96° उत्तर, 76.65° पूर्व)

कोप्पम प्राचीन काल में सामरिक महत्व का क्षेत्र था, जो कृष्णा नदी के तट पर स्थित था। 1054 में यहां चालुक्य शासक सोमेश्वर प्रथम एवं चोल युवराज राजाधिराज के मध्य एक युद्ध हुआ था। सोमेश्वर प्रथम के अभिलेख के अनुसार उसने इस युद्ध में चोल शासक राजेंद्र को मार डाला था। यद्यपि चोल अभिलेखों के अनुसार, राजेंद्र चोल ने सोमेश्वर प्रथम को 1058 ई. में यहीं राप्ती नदी के तट पर एक युद्ध में हराया था। प्रसिद्ध लेखक एवं इतिहासकार बिल्हण के अनुसार चालुक्य सेनाएं चोल प्रदेशों में घुसकर उनकी राजधानी कांची तक पहुंच गई थीं। राजाधिराज, जो राजेंद्र के साथ था, उसने तत्परता से सेना का नेतृत्व संभाला तथा युद्ध को जीत लिया।

कोरकई (8°38′ उत्तर, 78°40′ पूर्व)

'कोल्ची' के नाम से भी जाना जाने वाला कोरकई तमिलनाडु के तिरुनेलवेल्ली जिले में स्थित है। पांड्य शासकों का यह प्रसिद्ध बंदरगाह था। 'पेरिप्लस ऑफ द इरीथ्रियन सी' तथा संगम साहित्य में इसका उल्लेख मोतियों के एक प्रसिद्ध केंद्र के रूप में किया गया है।

पुरातात्विक उत्खननों से यहां मध्यपाषाणकालीन अवशेष पाए गए हैं। ऐसा अनुमान है कि ईसा की प्रारंभिक शताब्दियों में रोमन सभ्यता से घनिष्ठ व्यापारिक संबंधों की वजह से यह स्थान महत्वपूर्ण बन गया।

यहां से प्राप्त वस्तुओं में चांदी की सीपें, दांतेदार मृदभांड, छिद्रयुक्त टैराकोटा की पट्टी, क्रिस्टल के मनके, तांबे एवं लोहे की वस्तुएं प्रमुख हैं।

कौसाम्बी/कौशाम्बी (25.33° उत्तर, 81.39° पूर्व)

प्राचीन भारत का एक महत्वपूर्ण नगर कौशाम्बी छठे तीर्थंकर का जन्म स्थान है। कोसाम से प्रस्तर का एक स्तंभ लेख भी पाया गया है, जिसमें इस स्थान का नाम कोसाम्बी या कौशाम्बी दर्ज है। महान

thejobsyogi.com

व्यापारिक मार्ग, जो उत्तर में साकेत को श्रावस्ती से जोड़ता था तथा पैठन को गोदावरी के तट पर दक्कन से जोड़ता था, यहीं से होकर गुजरता था। इस मार्ग पर यात्रा करने वाले व्यापारियों एवं यात्रियों के लिए कौशाम्बी एक विश्राम स्थल भी था। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने 7वीं शताब्दी में यहां की यात्रा की थी।

कोटदिजी (27°20′ उत्तर, 68.42′ पूर्व)

कोटदिजी सिंधु नदी के बांएं तट पर स्थित है तथा प्राक-हड़प्पा सभ्यता चरण का प्रतिनिधित्व करता है। यह स्थल रक्षात्मक भित्तियों तथा अच्छी तरह से संरेखित गलियां तथा बड़े सार्वजनिक अग्नि स्थलों के साथ घरों को दर्शाता है। यह चक्र पर बनी उत्कृष्ट कोटि के मृदभांड के साथ-साथ पत्थर, तांबा तथा कांसे के औजार तथा हथियार के साथ-साथ कलात्मक खिलौने भी दर्शाता है। इसलिए यह स्थल सिंधु घाटी के कलाकारों तथा शिल्पकारों की योजना, संगठन तथा कुशलता के प्रमाण देता है।

यहां से प्राप्त विभिन्न साक्ष्यों से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि व्यापक अग्निकांड में यह स्थान नष्ट हो गया था।

कुडा गुफाएं (18.29° उत्तर, 72.96° पूर्व)

कुडा गुफाएं महाराष्ट्र के रायगढ़ जिले में स्थित हैं। ये पत्थरों को तराश कर बनाई गई प्राचीन बौद्ध गुफाओं का समूह है जो वर्तमान की जंजीरा खाड़ी के निकट है। इन गुफाओं के निर्माण को दो कालों में बांटा जा सकता है। प्रथम चरण में इनका निर्माण प्रथम शताब्दी ई.पू. से तृतीय शताब्दी ई.पू. के बीच हीनयान संप्रदाय द्वारा किया गया तथा द्वितीय चरण में इनका निर्माण महायान संप्रदाय द्वारा पांचवी तथा छठी शताब्दी के बीच किया गया। प्रायः शिला तराश कर बनाई गई बौद्ध गुफाओं का निर्माण बंदरगाहों के निकट अथवा प्राचीन व्यापार मार्ग पर किया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि कुडा गुफाएं मंदगोरा के प्राचीन बंदरगाह के निकट थी। इसका उल्लेख ग्रीको-रोमन भूगोलशास्त्री टोलेमी ने किया है।

कुडा गुफा समूह में शिला काट कर बनाई गई 26 गुफाएं एवं 11 शिला काट कर बनाए गए जलाशह हैं। जिन का उपयोग संभवतः जल संग्रह के लिए किया जाता था। कुछ छोटी गुफाएं भी हैं परंतु ये छोटे कक्ष अधिक प्रतीत होते हैं। ये गुफाएं समुद्र तल से लगभग 45 से 60 मी. की ऊंचाई पर स्थित हैं तथा पहाड़ी के अंदर 75 मी. की ऊंचाई तक जाती हैं। सभी गुफाएं सघन रूप से एक समूह में स्थित हैं। अनुसंधानकर्ताओं ने इनका संख्यांकन I से लेकर XXVI तक किया है।

ऐसा प्रतीत होता है गुफाओं के अग्रभाग में स्थित मूर्तियां, अभिलेख तथा चित्रकलाओं का प्राकृतिक कारणों से क्षरण हो गया है, परंतु भीतरी भाग में स्थित अभिलेख व कलाकृतियां संरक्षित हैं। लगभग सभी गुफाएं आंतरिक रूप से समान हैं—कोरी एवं बिना किसी सज्जा के। परंतु गुफा संख्या V1 में अत्यधिक साज-सज्जा तथा काफी उभरी हुई नक्काशी हैं। काफी गुफाओं में अभिलेख पाए गए हैं। लगभग सभी अभिलेखों में मठों को दानदाताओं के नामों व दान दी गई वस्तुओं का उल्लेख है। गुफाओं की दीवारों पर मिट्टी तथा चावल के भूसे का लेप था।

कुम्भारिया/कुम्भरिया (23.01° उत्तर, 69.95° पूर्व)

कुम्भारिया उन 18 गांवों में से एक था, जिनको कच्छ के गुर्जर क्षत्रीय, जिन्हें मिस्त्री भी कहा जाता था, द्वारा बसाए गए थे। वर्तमान में यह गांव गुजरात के कच्छ जिले के अंजार तालुका में स्थित है। ऐसा माना है कि मिस्त्री समुदाय सातवीं शताब्दी के प्रारम्भ में राजस्थान से सौराष्ट्र आया तथा बाद में 12वीं शताब्दी में इनके एक प्रमुख समूह ने कच्छ में प्रवेश किया और घनेती नामक स्थान में बस गए। तत्पश्चात् ये अंजार तथा भुज के मध्य घूमते रहे और कुछ गांवों जैसे अंजार, सिनुगरा, संभरा नागलपार, खेदोई, कुकमा, नागोर, कुंभारिया आदि को बसाया। ये क्षत्रिय अपनी वीरता के लिए तो जाने जाते थे बल्कि ये प्रतिभाशाली वास्तुकार भी थे। इन्होंने कच्छ की ऐतिहासिक स्थापत्य कला में काफी योगदान दिया। मंदिर, सामुदायिक भवन तथा विशाल तालाब इत्यादि इन्होंने निर्मित किए। (इस प्रकार का निर्माण 19वीं शताब्दी के मध्य तक जारी रहा)।

कुम्भारिया अपने जैन मंदिरों के लिए भी प्रसिद्ध है, जिनका निर्माण लगभग 900 वर्ष पहले किया गया था। मंदिरों का यह समूह पांच जैन तीर्थकरों यथा—महावीर, पार्श्वनाथ, नेमीनाथ, शांतिनाथ तथा संभवनाथ को समर्पित है। कहा जाता है कि इन मंदिरों का निर्माण एक व्यापारी विमल शाह ने कराया था। किवदंती के अनुसार, देवी मां अंबिका ने विमल शाह को 360 जैन मंदिरों के निर्माण करने को कहा, परंतु विमल शाह इन मंदिरों में देवी की मूर्ति की स्थापना करना भूल गया तो देवी ने क्रोधित होकर पांच मंदिरों को छोड़कर बाकी सभी मंदिरों को नष्ट कर दिया। बाद में जब विमल शाह को अपनी भूल का एहसास हुआ तो उसने इन बाकी बचे मंदिरों में देवी की मूर्ति को स्थापित किया। ये मंदिर श्वेत संगमरमर के बने हैं तथा इनमें देवी, देवताओं, संगीतज्ञों, कन्याओं की मूर्तियों को तराशा गया है। यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि ये सभी मंदिर उत्तर दिशा की ओर अभिमुख हैं।

कुरुक्षेत्र (29.96° उत्तर, 76.83° पूर्व)

कुरुक्षेत्र, दिल्ली के उत्तर में हरियाणा राज्य में स्थित है। पुराणों एवं महाभारत के अनुसार कुरुक्षेत्र, प्राचीन भारत के प्रसिद्ध राज्य कुरु एवं उसके उत्तराधिकारियों कौरवों एवं पांडवों से संबंधित है। प्रारंभिक संस्कृत साहित्यों में कुरुक्षेत्र से संबंधित कई भौगोलिक नामों एवं प्रमुख व्यक्तियों का उल्लेख प्राप्त होता है।

महाभारत का प्रसिद्ध युद्ध कुरुक्षेत्र में ही लड़ा गया था तथा यहीं भागवतगीता की रचना हुई थी। थानेश्वर (हर्षवर्धन का साम्राज्य) ज्योतिश्वर वह स्थान है, जिसके लिए यह माना जाता है कि यहीं पर भगवान कृष्ण ने अर्जुन को गीता का उपदेश दिया था।

मत्स्य पुराण के अनुसार, कुरुक्षेत्र द्वापर युग का सबसे पवित्र

thejobsyogi.com

स्थान था तथा जम्बूद्वीप के 16 महाजनपदों में से एक था। यह झीलों एवं कमलनुमा मनकों के लिए प्रसिद्ध था, जिन्हें आज भी यहां देखा जा सकता है। कुरुक्षेत्र का ब्रह्म सरोवर पूरे देश के तीर्थयात्रियों को अपनी ओर आकर्षित करता है। सूर्य ग्रहण के अवसर पर पूरे देश से श्रद्धालु यहां आते हैं तथा इस पवित्र सरोवर में स्नान करते हैं। मनु ने कुरुक्षेत्र के लोगों की वीरता की प्रशंसा की है। बाण ने इसका उल्लेख वीरों की भूमि के रूप में किया है। पाणिनी की अष्टाध्यायी में भी कुरुक्षेत्र का उल्लेख प्राप्त होता है। गौतम बुद्ध ने भी यहां की यात्रा की थी। सिखों के दस गुरुओं में से दूसरे गुरु अंगददेव को छोड़कर अन्य सभी गुरुओं ने कुरुक्षेत्र की यात्रा की थी।

कुशीनगर (कसिया)
(26.74° उत्तर, 83.88° पूर्व)

कुशीनगर (कुसीनारा या कुसावती भी कहा जाता है) की पहचान आधुनिक कसिया नामक स्थान से की गई है, जो उत्तर प्रदेश के पडरौना जिले में अवस्थित है। कुशीनगर में ही गौतम बुद्ध ने महापरिनिर्वाण (483 ईसा पूर्व) प्राप्त किया था तथा जन्म-मृत्यु के चक्र से सदैव के लिए मुक्त हो गए थे। यहां पांचवी शताब्दी में मरणासन्न बुद्ध की एक छह फीट ऊंची प्रतिमा है, जो पांचवी शताब्दी में स्थापित की गई थी। कुशीनगर को कुशीनारा नाम से भी जाना जाता था। कुशीनगर में अनेक विहार हैं, एक तिब्बती गोम्पा, जोकि शाक्य मुनि को समर्पित है, एक बर्मा का विहार तथा चीन और जापान के मंदिर हैं। निर्वाण मंदिर (स्तूप) जो कि कुमार गुप्त प्रथम (413-455 ई.) के समय का है, बुद्ध की विशाल प्रतिमा के कारण सुप्रसिद्ध है। रंभर स्तूप वह स्थल माना जाता है जहां मल्ल ने बुद्ध को दफनाया था। मुक्तबन्धन स्तूप को माना जाता है कि इसे बुद्ध के स्मृति चिन्हों को संरक्षित करने के लिए बनाया गया था।

यद्यपि गुप्त काल के पश्चात कुशीनगर का महत्व समाप्त हो चुका था। जब ह्वेनसांग ने इस स्थान की यात्रा की थी तो उसने इसे उजड़ा हुआ पाया था।

कुशीनगर की अन्य प्रमुख इमारतों में 10वीं शताब्दी का एक माता कौर मंदिर एवं विश्व बौद्ध सांस्कृतिक संस्थान द्वारा बनवाया गया एक जापानी मंदिर भी है। इतिहासकारों का कहना है कि कुसावती मल्ल की राजधानी थी, जब मल्ल ने साम्राज्य स्थापित किया था। नाम को बदल कर कुसीनारा कर दिया गया, जब मल्ल ने गण संघ (गणराज्य) व्यवस्था को अपना लिया था।

thejobsyogi.com

लखुडियार (29.62° उत्तर, 79.67° पूर्व)

लखुडियार का शाब्दिक अर्थ है एक लाख गुफाएं। लखुडियार उत्तराखंड के अल्मोड़ा जिले में सुयाल नदी के तट पर स्थित है। यहां पाए गए शैलाश्रय स्थल अपनी प्रागैतिहासिक चित्रकलाओं के लिए प्रसिद्ध हैं। ये चित्रकलाएं पुरापाषाण तथा नवपाषाण काल की हैं। इन शैलचित्रों को प्रमुख रूप से तीन वर्गों में बांटा जा सकता है—मानव, पशुओं, तथा सफेद, काले व गेरुए लाल रंग के ज्यामितीय पैटर्न। मानवों को इनमें रेखाओं के माध्यम से दर्शाया गया है, जबकि जानवरों को आकृतियों के रूप में। एक थूथनों वाला जानवर, एक लोमड़ी एवं छिपकली सदृश कई पांवों वाला जीव, जिससे तत्कालीन लोग परिचित होंगे, दर्शाए गए हैं। अधिकांश दर्शाई गई मानव आकृतियां हाथों में हाथ लेकर नृत्य करती हुई पंक्तिबद्ध हैं। इनको जमीन से 3.75 मी. की ऊंचाई पर तराशा गया है। एक समूह में उपमानव आकृतियां बनी हैं तो दूसरे में 24 मानव आकृतियां हैं। लहरदार रेखाएं, आयताकार ज्यामितीय डिजाइन, तथा बिन्दुओं के समूहों को भी दर्शाया गया है। कुछ जगह एक चित्र के ऊपर दूसरे चित्र को अध्यारोपित किया गया है, जिसमें पहले के चित्र काले, उसके ऊपर लाल गेरुए एवं सबसे ऊपर सफेद रंग से चित्र बनाए गए हैं। इस क्षेत्र में पाई गई सांस्कृतिक महत्व की अन्य हैं वस्तुओं में सम्मिलित हैं—महापाषाण, स्मारक स्तम्भ (menhirs), शवाधान, समाधि में रखे गए मृदभांड, मनके इत्यादि।

ललितगिरी (20.58° उत्तर, 86.25° पूर्व)

ओडिशा राज्य में स्थित ललितगिरी, प्रथम शताब्दी ईस्वी का प्राचीन स्थल है। हाल ही के पुरातात्विक उत्खननों से इस बात का ज्ञान हुआ है कि ललितगिरी बौद्ध धर्म का एक महान केंद्र था। ईंटों से निर्मित मठ के अवशेष, चैत्यगृह के अवशेष तथा कई स्तूपों के अवशेष तथा जीर्णोद्धार किया गया पाषाण स्तूप है, जोकि छोटी, ऊबड़-खाबड़ पहाड़ी के शीर्ष पर है, भी यहां से प्राप्त किए गए हैं।

ललितगिरी के संग्रहालय में महायान बौद्ध धर्म से संबंधित कई वस्तुएं रखी हुई हैं। जैसे—ध्यानमग्न बुद्ध की मूर्ति, बोधिसत्वों की कई प्रतिमाएं, तारा (बोधिसत्व अवलोकितेश्वर की पत्नी) की मूर्ति इत्यादि। इनके अतिरिक्त भी यहां कई और वस्तुएं हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि इनमें से अधिकांश मूर्तियों में छोटे लेख लिखे हुए हैं। बुद्ध की एक खड़ी प्रतिमा कंधों से लेकर घुटनों तक वस्त्रों से ढंकी हुई है। इससे इस मूर्ति पर गंधार एवं मथुरा कला का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है।

पहाड़ी के शीर्ष भाग पर स्थित स्तूप से एक पात्र मिला है, जिसमें धार्मिक वस्तुएं रखी हुई हैं। अनुमान है कि यह पात्र स्वयं बुद्ध (तथागत) का ही था। ललितगिरी, समस्त विश्व में प्रसिद्ध एक प्रमुख बौद्ध स्थल है। चीनी यात्री ह्वेनसांग के विवरण से भी यहां पहाड़ी के शीर्ष पर एक सुंदर स्तूप होने के प्रमाण मिले हैं। ह्वेनसांग के अनुसार, पुष्पागिरी पर एक सुंदर एवं भव्य महाविहार अवस्थित था। पुष्पागिरी का ललितगिरी से क्या संबंध था, यह जानने का प्रयास इतिहासविदों एवं अनुसंधानकर्ताओं द्वारा किया जा रहा है।

ललितपाटन (27°42′ उत्तर, 85°20′ पूर्व)

वर्तमान नेपाल की राजधानी काठमांडू ही ललितापाटन थी। परम्पराओं के अनुसार, पाटन या ललितापाटन नगर की स्थापना तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में अशोक द्वारा तब की गई थी, जब उसने बौद्ध धर्म के प्रचार हेतु नेपाल की यात्रा की थी। अशोक ने यहां कई स्तूपों की स्थापना भी करवाई थी, जिनमें सबसे प्रमुख काठमांडू की पहाड़ियों पर स्थित 'स्वयंभू स्तूप' था। बाद में इसमें चतुर्दिक पाषाण स्तंभ जोड़ा गया, जिसमें चार जोड़ी आंखें, चारों दिशाओं की ओर बनी हुई है। इन चारों जोड़ों को लाल, काले एवं सफेद रंगों से रंगा गया है। ये आदि-बुद्ध या महायान बौद्ध धर्म के बुद्ध की आंखें मानी गई हैं। यद्यपि इस स्तंभ के निर्माण की तिथि ज्ञात नहीं है किंतु ऐसा अनुमान है कि इस स्तंभ की स्थापना वसुबंधु की नेपाल यात्रा के पश्चात ही की गई होगी। वसुबंधु महायान बौद्ध धर्म के उपदेशक एवं चिंतक थे, जिन्होंने इसके प्रचार हेतु नेपाल की यात्रा की थी। नेपाल में बौद्ध धर्म की महायान एवं वज्रयान दोनों शाखाओं का प्रभाव था, जोकि आठवीं या नवीं शताब्दी में बंगाल से अन्य क्षेत्रों में फैलनी शुरू हो गई थी।

लेनयाद्रि गुफाएं (19°14′ उत्तर, 73°53′ पूर्व)

लेनयाद्रि (जिसे जीर्णापुर तथा लेखन पर्वत भी कहा जाता है) महाराष्ट्र के पुणे जिले में जुन्नार के समीप कुकडी नदी के उत्तर-पश्चिम तट पर स्थित है। यह शिला काटकर बनाई गई लगभग 30 बौद्ध गुफाओं की शृंखला के लिए प्रसिद्ध है। इनमें से एक गुफा, जिसे संख्या 7 कहा जाता है, को हिन्दू मंदिर में रूपांतरित किया गया था तथा यह भगवान गणेश को समर्पित था। इस गणेश मंदिर को अष्टविनायक मंदिरों में से एक माना जाता है। 'लेनयाद्रि' नाम का अर्थ है पर्वतीय गुफा तथा इसका उल्लेख हिन्दू ग्रंथों—गणेश पुराण व स्थल पुराण में हुआ है। एक प्राचीन अभिलेख में इस स्थान को कपिचित्र कहा गया है।

thejobsyogi.com

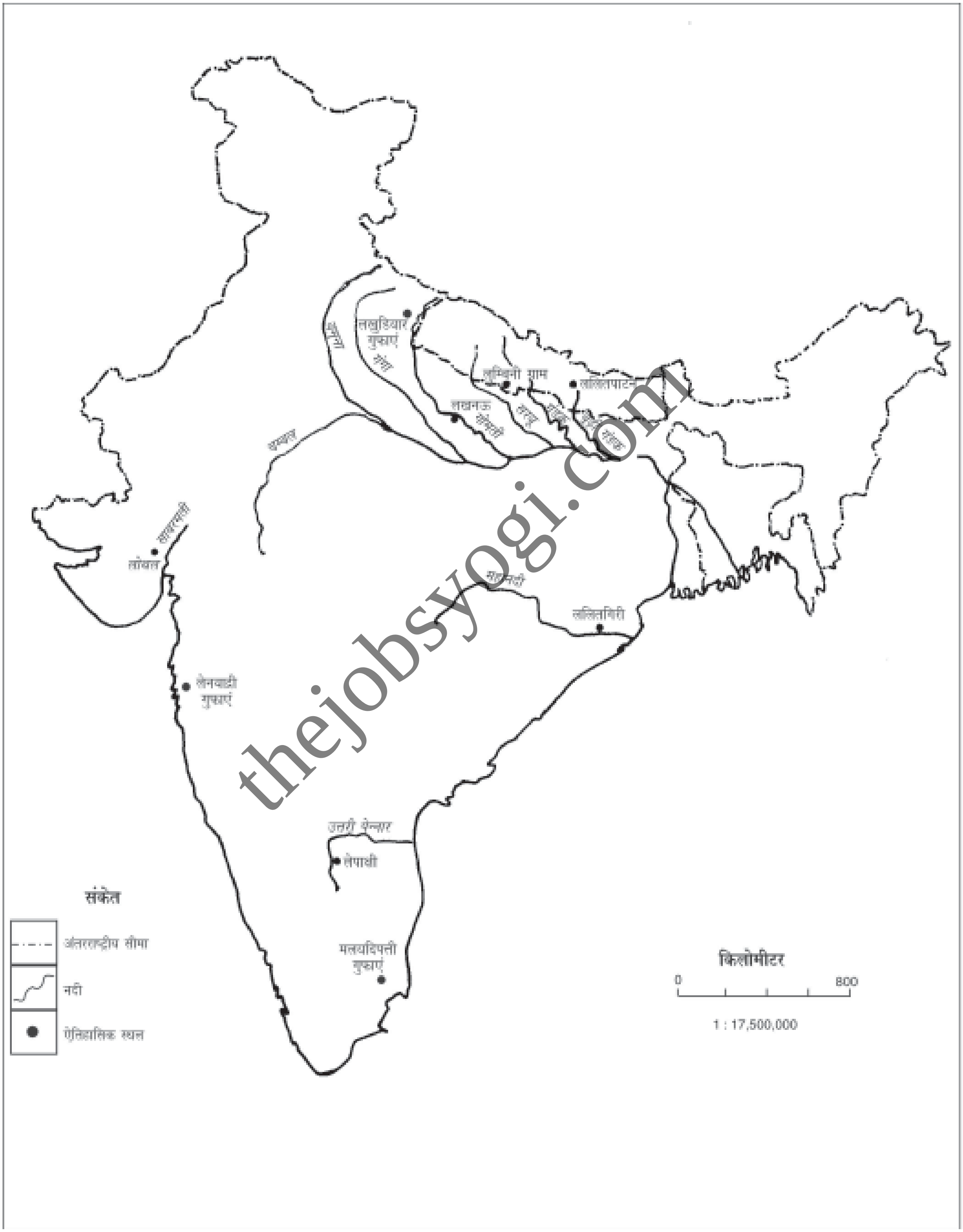

thejobsyogi.com

यहां सभी गुफाएं एक पंक्ति में हैं तथा पूर्व से पश्चिम की ओर पंक्तिबद्ध हैं। ये दक्षिण की ओर कुकाडि नदी घाटी की ओर अभिमुख हैं। पूर्व से पश्चिम की ओर अंकित गुफा संख्या VI तथा गुफा संख्या XIV चैत्य हैं तथा शेष विहार हैं जिनमें से गुफा संख्या VII सबसे बड़ी है। इन गुफाओं का निर्माण प्रथम शताब्दी से तीसरी शताब्दी के मध्य हुआ था। गुफा संख्या VI जो कि मुख्य चैत्यगृह है, हीनयान चैत्यगृहों के सबसे प्राचीन उदाहरणों में से एक है।

लेपाक्षी (13.81° उत्तर, 77.60° पूर्व)

वर्तमान समय पेन्नेरू नदी के तट पर आंध्र प्रदेश में स्थित लेपाक्षी, 16वीं शताब्दी में निर्मित एक मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। इस मंदिर में नंदी की एक विशाल मूर्ति है, जो 66 स्तंभों पर खड़ी है। यह मूर्ति भारत में नंदी की विशालतम मूर्ति है। चित्रकला एवं वास्तुकला दोनों ही दृष्टि से इसे आंध्रप्रदेश के बेहतरीन मंदिरों में से एक माना जाता है। यह अपनी प्रस्तर नक्काशी के लिए भी प्रसिद्ध है। यहां की पहाड़ी में निर्मित छोटा वीरभद्र मंदिर भी वास्तुकला की दृष्टि से एक सुंदर मंदिर है। लेपाक्षी, एक ही पाषाण को तराशकर बनाए गए सप्त-फणी नाग मूर्ति एवं पंचलिंगों के लिए भी प्रसिद्ध है। लेपाक्षी मंदिर में स्थित ये पांच लिंग मंदिर परिसर के सबसे प्रमुख लिंग हैं। इनमें अगस्त्य मुनि का पापनेश्वर लिंग, रामलिंग, नागा लिंग, हनुमान द्वारा प्रस्थापित लिंग, एवं विरूपन्ना द्वारा प्रस्तावित तांडवेश्वर सम्मिलित हैं। यहां का एकाश्म नंदी (बसवन्ना) 4.6 मीटर ऊंचा एवं 8.23 मीटर लंबा है।

लोथल (22°31′ उत्तर, 72°14′ पूर्व)

पुरातात्विक महत्व की एक जबरदस्त खोज, लोथल, गुजरात में अहमदाबाद से 80 कि.मी. दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। 1955 से 1962 में एस.आर. राव के निर्देशन में पुरातात्विक खोज से यह साबित हो चुका है कि यहां पर अवशेष, दूसरी शताब्दी ई.पू. हड़प्पा सभ्यता काल के संपूर्ण विकसित अधिवास के हैं।

प्रागैतिहासिक काल में, लोथल भारतीय उपमहाद्वीप का एक महत्वपूर्ण बंदरगाह रहा होगा, यह नगर के पूर्व में गोदीबाड़ा (माप 219 × 37 × 4.5 क्यूबिक मीटर) से स्पष्ट होता है, जोकि एक उत्खनन में प्राप्त हुआ था तथा एक भण्डारगृह की उपस्थिति भी इस तथ्य का साक्ष्य है। फारस की खाड़ी की एक सील तथा गुर्दे के आकार की जड़ी हुई हड्डियां भी यही प्रमाणित करते हैं कि लोथल का अन्य सभ्यताओं के साथ भी संबंध था। परंतु हड़प्पा तथा मोहनजो-दाड़ो से भिन्न दोनों ही गढ़ों तथा छोटे नगर का एक दीवार से दुर्गीकरण किया गया है। लोथल में धान की बाली का मिलना एक अन्य विशेष खोज है, जो दर्शाती है कि इस क्षेत्र के लोग चावल का प्रयोग करते थे।

एक ही कब्र में दो लोगों के शव के पाए जाने से यहां युगल शवाधान की रीति की पुष्टि होती है। अग्निवेदियों के मिलने से इतिहासकारों ने यह अनुमान लगाया है कि लोथल के निवासी अग्नि की पूजा करते थे तथा पशु बलि की प्रथा से परिचित थे।

लोथल हड़प्पा सभ्यता के पश्चात् भी विकसित हुआ जिसका साक्ष्य हैं—लाल चमकदार मृदभांड।

लखनऊ (26.8° उत्तर, 80.9° पूर्व)

वर्तमान उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ, गोमती नदी के तट पर स्थित है।

लखनऊ नवाबी सभ्यता एवं संस्कृति वाला शहर है। यहां की विभिन्न इमारतों एवं अन्य वस्तुओं में नवाबी संस्कृति की झलक दिखाई देती है। लखनऊ अपने आतिथ्य-सत्कार, जीवन के विविध रंगों एवं कलात्मक वस्तुओं के प्रमुख केंद्र के रूप में भी जाना जाता है।

'लखनऊ' शब्द की उत्पत्ति को लेकर इतिहासकारों के मध्य मतैक्य का अभाव है। एक विचारधारा के अनुसार लखनऊ का यह नाम भगवान राम के भाई लक्ष्मण के नाम पर पड़ा, जबकि दूसरी विचारधारा के अनुसार इसका यह नाम यहां के प्रमुख सामंत लखूराय के नाम पर पड़ा। यद्यपि लखनऊ शब्द का संदर्भ हमें अकबर के शासनकाल से ही प्राप्त होने लगता है। अकबर ने अपने सम्पूर्ण साम्राज्य को 12 सूबों में विभक्त किया था तथा मुगलों के पतन के समय 1722 ई. में यहां के सूबेदार बुरहानुलमुल्क सआदल अली ने अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी तथा स्वतंत्र शासक की भांति व्यवहार करने लगा। नवाब आसफउद्दौला ने अपनी राजधानी फैजाबाद से लखनऊ स्थानांतरित कर दी। इसी के शासनकाल में लखनऊ कला एवं संस्कृति के क्षेत्र में दिल्ली से प्रतिस्पर्द्धा करने लगा। नवाब के शासनकाल में शांति एवं समृद्धि से लखनऊ में सांस्कृतिक पुनर्जागरण हुआ। संगीतकारों एवं नर्तकों को यहां भरपूर प्रश्रय एवं प्रोत्साहन मिला तथा उन्होंने नवाबों के अधीन रहकर संगीत एवं नृत्य की विधाओं को नई ऊंचाइयों पर पहुंचाया।

इमामबाड़ा, कैसर बाग, बोस्तान-ए-दोस्तान, आधुनिक वानस्पतिक अनुसंधान केंद्र एवं भूल-भुलैया इत्यादि लखनऊ के प्रमुख दर्शनीय स्थल हैं।

लुम्बिनी ग्राम (27.48° उत्तर, 83.27° पूर्व)

लुम्बिनी ग्राम नेपाल की तराई में स्थित उपवन था। बौद्ध गाथाओं के अनुसार, यहीं महारानी महामाया ने गौतम बुद्ध को जन्म दिया था। यहां रुम्मिनदेई स्तंभ की स्थापना के उपरांत इस स्थान को अब 'रुमिन्नदेई' के नाम से जाना जाता है। अशोक का एक अभिलेख भी यहां से पाया गया है, जिसे 'रुमिन्नदेई अभिलेख' के नाम से जाना जाता है। इस अभिलेख में इस स्थान का नाम 'लुम्बिनी' नाम से उल्लिखित है। अशोक ने अपने अभिषेक के बीसवें वर्ष लुम्बिनी की यात्रा की थी क्योंकि उस समय यह माना जाता था कि यही बुद्ध का जन्म स्थल है, तथा यहां के निवासियों का राजस्व घटाकर आठवां भाग कर दिया गया था। इससे यह साबित होता है कि यह दंतकथा तीसरी शताब्दी ई.पू. ही स्थापित हो चुकी थी। बौद्ध धर्म के अनुयायियों के लिए चार तीर्थ यात्राओं में से एक तीर्थयात्रा लुम्बिनी की है।

अश्वघोष ने 'बुद्धचरित' में लुम्बिनी का उल्लेख बुद्ध के जन्म स्थल के रूप में किया है। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भी यहां की यात्रा की थी तथा यहां अशोक स्तंभ, साल वृक्ष एवं एक स्तूप के दर्शन किए थे।

thejobsyogi.com

M

मदुरई (9.9° उत्तर, 78.1° पूर्व)

मदुरई वैगई नदी के तट पर तमिलनाडु में स्थित है। इस नगर के स्थान पर पहले कदंबों का एक वन था, जिसे 'कदम्बवन' कहा जाता था। पांड्य शासक कुलशेखर ने यहां एक सुंदर मंदिर बनवाया था। ऐसी मान्यता है कि जिस दिन इस शहर का नामकरण किया गया था, उस दिन भगवान शिव यहां अवतरित हुए थे तथा उनके बालों से अमृत की एक बूंद यहां गिर गई थी। इसीलिए इस स्थान का 'मदुरई' (मधुरम-जिसका तमिल में अर्थ है—मीठावन) नाम पड़ा। शीघ्र ही यह पांड्य शासकों की राजधानी बन गया तथा उनके संरक्षण में यहां दो संगम सभाओं (प्रथम एवं तृतीय) का आयोजन किया गया। एक प्रारंभिक तमिल साहित्यिक कृति 'मदुराईक्कांजी' (मरुदन द्वारा लिखित) में मदुरई नगर एवं नेदुनजेलियन नामक शासक के नेतृत्व में यहां की शासन व्यवस्था एवं यहां के लोगों का विस्तृत विवरण प्राप्त होता है। 'शिल्पादिकारम्' के अनुसार, एक बार मदुरई, कन्नगी के श्राप के कारण नष्ट-भ्रष्ट हो गया था। कौटिल्य ने मदुरई का उल्लेख सूती वस्त्र के एक प्रसिद्ध केंद्र के रूप में किया है।

मेगास्थनीज ने तृतीय शताब्दी ईसा पूर्व में मदुरई की यात्रा की टॉलेमी थी। इसके बाद यूनान एवं रोम के कई यात्रियों ने मदुरई की यात्रा की तथा पांड्य शासकों के साथ व्यापारिक संबंधों की स्थापना की। मदुरई 10वीं शताब्दी तक फलता-फूलता रहा। इसके उपरांत इस पर पांड्यों के प्रबल प्रतिद्वंद्वी चोलों ने अधिकार कर लिया। चोल मदुरई में 13वीं शताब्दी के प्रारंभ तक शासन करते रहे, किंतु इसके उपरांत मदुरई पर पुनः पांड्यों ने अधिकार कर लिया। 1311 में, अलाउद्दीन खिलजी के सेनापति मलिक काफूर ने मदुरई पर आक्रमण किया तथा वह भारी मात्रा में धन एवं बहुमूल्य धातुएं लूटकर अपने साथ ले गया। मलिक काफूर के इस आक्रमण से विभिन्न मुस्लिम आक्रांताओं का ध्यान मदुरई की ओर आकर्षित हुआ तथा इसके बाद कई आक्रमण किए गए। 1371 में, मदुरई, विजयनगर साम्राज्य का हिस्सा बन गया। तथा इसके बाद यह नायकों के नियंत्रण में आ गया। तिरुमल नायक (1623-1659) एक प्रसिद्ध नायक था, जिसने मदुरई एवं उसके आसपास कई सुंदर इमारतों का निर्माण करवाया। इन सभी में सबसे प्रसिद्ध 1781 में निर्मित मीनाक्षी मंदिर है। बाद में मदुरई पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया तथा उन्होंने यहां एक गवर्नर की नियुक्ति कर दी।

भारत की स्वतंत्रता के उपरांत, मदुरई तमिलनाडु का एक प्रमुख जिला बना। कुछ समय बाद मदुरई जिले को दो भागों—मदुरई एवं डिंडीगुल में विभाजित कर दिया गया।

मदुरई चारों ओर से कई पहाड़ियों से घिरा हुआ है। यह चमेली के फूलों के लिए प्रसिद्ध है। ये फूल यहां से न केवल भारत अपितु विश्व के कई देशों को भी भेजे जाते हैं। मदुरई शहर वस्त्र मिलों एवं भारी इंजीनियरिंग उद्योग के लिए भी प्रसिद्ध है।

मदुरई का 2500 वर्ष पुराना इतिहास है तथा ऐतिहासिक दृष्टि से यह तमिलनाडु का सबसे प्राचीन शहर है।

महाबलिपुरम/मामल्लपुरम (12°36′ उत्तर, 80°11′ पूर्व)

महाबलिपुरम, जिसे मामल्लपुरम के नाम से भी जाना जाता है, एक प्रसिद्ध तटीय शहर है। यह चेन्नई के दक्षिण में 60 किमी. दूर तमिलनाडु में स्थित है। यह शहर मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है। वर्तमान में विश्व धरोहर स्थल के रूप में घोषित महाबलिपुरम का इतिहास लगभग एक हजार वर्ष प्राचीन है। यह एक व्यस्त बंदरगाह था। पेरिप्लस तथा टॉलेमी के समय पर यहां विभिन्न प्रकार के लगभग 40 महत्वपूर्ण स्थापत्य नमूने हैं, जिनमें निम्नतम उभरी हुई नक्काशी के नमूने हैं, जो कि विश्व में सबसे बड़े हैं, इसे 'अर्जुन प्रायश्चित' के नाम से जाना जाता है। यह वास्तुकला तथा शिल्पकला पल्लव शासकों की रचना है।

महेन्द्रवर्मन I (600-630) ने दो पहाड़ियों को, जोकि समुद्र से 400 मी. दूर हैं, को काटकर गुफा मंदिर बनवाए। बड़ी पहाड़ी पर दोनों ओर 11 मंदिर बनाए गए जिन्हें 'मंडपम' (स्तंभों वाला गृह) कहा गया। पास ही खड़ी बड़ी चट्टान को काट कर एक मंदिर बनाया गया, जिसे 'रथ' कहा गया। छोटी पहाड़ी पर पांच अन्य 'रथ' बनाए गए तथा नन्दी, सिंह तथा एक हाथी की तीन बड़ी मूर्तियां बनाई गईं। अधिकांश विहारों को बुद्ध विहार की तरह बनाया गया। यह पहले से ही तीर्थस्थान था, जब पल्लव शासक मामल्ल (नरसिंह वर्मन II) ने इसे बंदरगाह बनाया। महाबलीपुरम का संरचनात्मक मंदिर 'तटीय मंदिर' कहलाता है, क्योंकि यह समुद्र तट पर स्थित है तथा ज्वारीय लहरें इसकी मूर्तियों तक आती हैं। यह विष्णु तथा शिव को समर्पित है। नरसिंह वर्मन II ने इसका निर्माण कराया है। तटीय मंदिर, निम्नतम उभरी हुई नक्काशी के नमूने, मूर्तियां तथा मंडपम तथा पांच रथ देखने में बड़े ही मनोहर लगते हैं। वास्तविक पेरूमल मंदिर का विस्तार विजयनगर शासकों के अधीन हुआ।

thejobsyogi.com

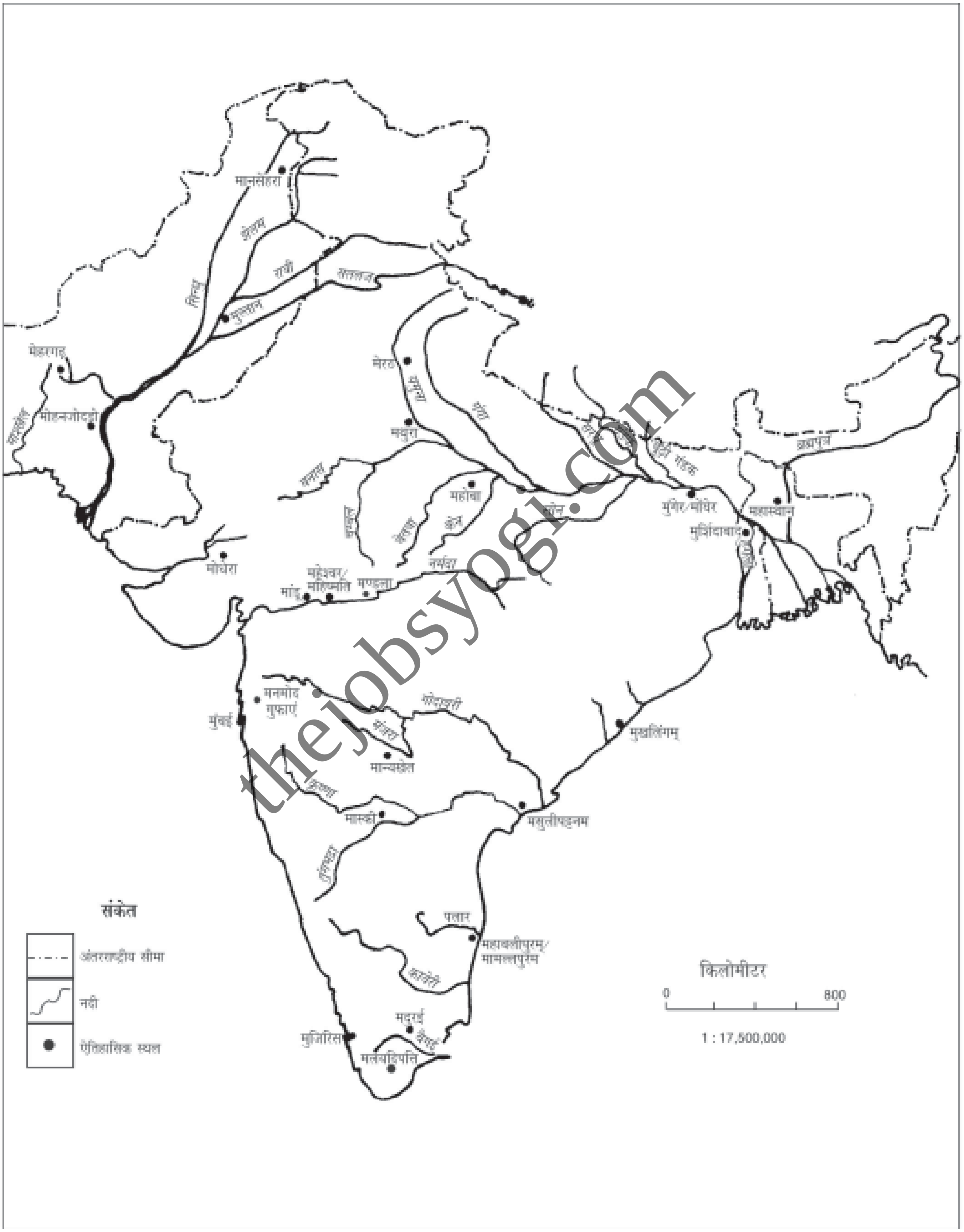

thejobsyogi.com

यूरोप के लोगों ने नगर को 'सात पैगोड़ा' शब्द दिया। कडप्पक्कम के पास (मामल्लपुरम के समीप) अलमपराई दुर्ग (अलमपरा) के अवशेष हैं, जो कि सत्रहवीं शताब्दी में मुगलों के समय निर्मित हुआ। एक समय इस दुर्ग में गोदीबाड़ा था, जोकि समुद्र तक विस्तृत था, जहां से नमक, घी तथा जरी के कपड़े निर्यात किए जाते थे। यह बंदरगाह 1750 में फ्रांसीसियों को दे दिया गया परंतु फ्रांसीसियों की पराजय के बाद, 1760 में इसे अंग्रेजों ने नष्ट कर दिया।

कलपक्कम, महाबलीपुरम के समीप एक आणविक शक्ति संयंत्र है।

महास्थान (24°57′ उत्तर, 89°20′ पूर्व)

महास्थान, वर्तमान समय में बांग्लादेश के बोगरा जिले में है। पुरातात्विक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण स्थल महास्थान पहले पूर्वी भारत में था किंतु अब यह बांग्लादेश में है। यह क्षेत्र प्राचीन भारत के प्रसिद्ध नगर पुंड्रवर्धन से संबंधित है, जो प्रारंभिक ऐतिहासिक काल से प्रारंभिक मध्यकाल तक प्रसिद्ध शहरी सभ्यता के विकास का साक्षी रहा है। करातोआ नदी के तट पर स्थित इस दर्शनीय स्थल में मिट्टी के अनेक विशाल टीले हैं, जिन्हें स्थानीय स्तर पर गोविंद, भील मंदिर एवं कोडाई पाथर टीलों के नाम से जाना जाता है।

यहां से चंद्रगुप्त मौर्य के शासनकाल का एक लेख भी प्राप्त हुआ है, जिसमें मौर्य साम्राज्य में पड़ने वाले उस भीषण अकाल का उल्लेख है, जिसका विवरण जैन लेखक हेम चंद्र सूरी के 'परिशिष्टपर्वन' नामक ग्रंथ में भी प्राप्त होता है। यह अभिलेख महत्वपूर्ण है क्योंकि मेगास्थनीज ने मौर्य साम्राज्य में अकाल का उल्लेख नहीं किया। यह स्थान संभवतः गुप्त काल में पुंड्रवर्धन भुक्ति का मुख्यालय रहा होगा।

आठवीं शताब्दी के इस प्रसिद्ध पुरातात्विक स्थल का हिन्दुओं के लिए आज भी अत्यधिक महत्व है। प्रत्येक वर्ष अप्रैल के मध्य में तथा प्रत्येक 12 वर्ष में दिसंबर माह में पूरे देश से हिन्दू श्रृद्धालू यहां आते हैं तथा करातोआ नदी में स्नान करते हैं।

इस क्षेत्र से टेराकोटा की बनी हुई वस्तुएं तथा सोने की कई मुद्राएं प्राप्त हुई हैं।

महेश्वर/महिष्मती (22.11° उत्तर, 75.35° पूर्व)

महेश्वर, नर्मदा नदी के उत्तरी तट पर मध्य प्रदेश के पश्चिमी निमाड़ (खरगौन) जिले में स्थित है। मंदिरों के इस प्रसिद्ध शहर को पहले 'महिष्मति' के नाम से जाना जाता था। रामायण एवं महाभारत में भी इस स्थान का विवरण प्राप्त होता है। हरिवंश पुराण के अनुसार महिष्मती की स्थापना मुकुंद ने की थी। जबकि पुराणों के अनुसार, महिष्मती की स्थापना यदु वंश के एक राजकुमार द्वारा की गई थी। पुरातात्विक उत्खननों से इस बात के प्रमाण प्राप्त हुए हैं कि उज्जैन के साथ ही महिष्मती भी छठी शताब्दी ईसा पूर्व से ही राजनीतिक एवं वाणिज्यिक गतिविधियों का एक महत्वपूर्ण केंद्र बन गया था। यद्यपि उज्जैन के पास से लौह अयस्कों की प्राप्ति से यह अनुमान लगाया जाता है कि यहां के लोग काम के लिए उज्जैन आकर बस गए थे तथा महिष्मती से तेजी से लोगों का पलायन हुआ था। इसके परिणामस्वरूप महिष्मती का महत्व घटने लगा। प्रारंभिक बौद्ध ग्रंथों में महिष्मती का उल्लेख अवंती की राजधानी के रूप में किया गया है। यह उज्जैन से पैठन के मुख्य मार्ग पर अवस्थित था। सांची अभिलेख में महिष्मती के लोगों द्वारा दिए गए दान का विवरण भी प्राप्त होता है।

पुरातात्विक उत्खननों से इस बात के प्रमाण भी मिलते हैं कि नेवदाटोली के समान यह भी एक पुरापाषाणकालीन स्थल था तथा इसका महत्व प्रथम शताब्दी ईस्वी से बढ़ना प्रारंभ हुआ।

उत्तरवर्ती गुप्तों के शासनकाल में महिष्मती का महत्व एक बार पुनः स्थापित हो गया था। इस बात का प्रमाण यहां से प्राप्त एक लेख से भी मिलता है, जिसमें यहां के एक शासक सुबंधु द्वारा भूमि दान में दिए जाने का उल्लेख है। बदरीक इतिवृत्तों के अनुसार यहां नर्मदा के किनारे प्रारंभिक चाहमान या चौहान शासकों का निवास स्थल था।

रानी अहिल्याबाई ने महिष्मती को होल्करों की राजधानी बनाया था। यहीं समीप स्थित पेशवा घाट, फांसे घाट एवं अहिल्या घाट पर्यटकों के आकर्षण के प्रमुख केंद्र हैं।

यह नगर महेश्वरी साड़ियों के लिए भी प्रसिद्ध है, जो अपनी विशिष्ट बुनाई के लिए जानी जाती हैं।

महोबा (25.28° उत्तर, 79.87° पूर्व)

वर्तमान समय में उत्तर प्रदेश के बुंदेलखंड क्षेत्र में स्थित महोबा एक प्राचीन शहर है। विभिन्न समयों में इसे भिन्न-भिन्न नामों से जाना जाता था। ये नाम थे—केकापुर एवं पाटनपुरा। ऐसी भी मान्यता है कि इसका यह नाम 'महोत्सव' से व्युत्पन्न हुआ है। यह महोत्सव महोबा के संस्थापक, चंदेल शासक चन्द्रवर्धन द्वारा 800 ई. में आयोजित किया गया था। जैसा कि साक्ष्य बताते हैं, लगभग 900 ई. में चंदेलों ने अपनी राजधानी खजुराहो से महोबा स्थानांतरित कर दी थी। प्रारंभिक चंदेल शासक जिसे स्थानीय रूप से रुहेला कहा जाता था, के सम्मान में यहां रुहेला सागर झील का निर्माण किया गया है। इस झील के निकट ही ग्रेनाइट से एक सूर्य मंदिर भी निर्मित किया गया। चंदेल वंश के दो प्रसिद्ध शासकों कीर्तिवर्मन एवं मंदरवर्मन ने भी यहां कीर्तिसागर एवं मदन सागर नामक दो प्रसिद्ध जलाशयों का निर्माण करवाया था। यह निर्माण 1182 ई. में हुआ था तथा इन जलाशयों का नामकरण इन शासकों के नाम पर ही किया गया। पृथ्वीराज चौहान ने जब महोबा पर आक्रमण किया तो परमार्दिदेव को दो प्रसिद्ध सेनानायकों आल्हा एवं ऊदल ने पृथ्वीराज के विरुद्ध भीषण युद्ध किया। इस युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की विजय हुई। उसने महोबा पर अधिकार कर लिया तथा उसे तहस-नहस कर दिया। चंदेलों के पतनोपरांत, इस स्थान का

thejobsyogi.com

महत्व समाप्त हो गया। यद्यपि बाद में मुगलों ने इसे बुंदेलखंड क्षेत्र का अपना मुख्यालय बनाया।

महोबा में धार्मिक, पुरातात्विक एवं ऐतिहासिक महत्व के अनेक स्थल हैं।

महोबा का पान पूरे भारत में प्रसिद्ध है तथा विदेशों को निर्यात भी किया जाता है।

मलयदिपत्ती गुफा (10.28° उत्तर, 78.82° पूर्व)

मलयदिपत्ती गुफा तमिलनाडु के पदुकोट्टई जिले में स्थित है। पहले मलयदिपत्ती को थिरुवलत्तुरमलई भी कहा जाता था। यह शिला को काटकर बनाए गए दो मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है—इनमें से एक मंदिर शिव का तथा दूसरा मंदिर विष्णु का है। दोनों मंदिर आठवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा नौवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में एक ही चट्टान को काट कर बनाए गए थे। भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण के अनुसार, शिव मंदिर पल्लव काल से संबंधित है तथा यह विष्णु मंदिर से अधिक प्राचीन है। यह मंदिर कुवावन साथन द्वारा 730 ई. में बनाया गया था, जिसने यहां पीठासीन देवता वकिशवरर का नाम दिया। इस शिव मंदिर को अलारथुर्थली के नाम से जाना जाता है। विष्णु मंदिर में रंगनाथ (अनंतपदमनाभ स्वामी) की विश्राम मुद्रा में एक नक्काशीदार प्रतिमा है।

शैलकर्त मंदिर की शैली थिरूमेय्यम मंदिर तथा वहां चूने द्वारा अलंकरण का स्मरण करती है। मलयदिपत्ती में विष्णु मंदिर मामल्ल शैली का अधिक प्रतीत होता है, जिसमें अत्यन्त सुंदर स्तंभ बने हैं। स्तंभयुक्त विशाल कक्ष में पार्श्वभित्तियों पर पैनल बने हुए हैं। दंती वर्मा पल्लव का एक आठवीं शताब्दी का अभिलेख भी है। कुछ अन्य अभिलेख भी हैं, जिनमें राजा केसरी सुन्दर चौझन (एक चोल नरेश) द्वारा 960 ई. में यहां किए गए मरम्मत कार्यों का उल्लेख है।

मांडला (लगभग 22.59° उत्तर, 80° पूर्व)

मध्य प्रदेश के मांडला जिले में पादप जीवाश्मों का एक राष्ट्रीय उद्यान है। ये पादप जीवाश्म भारत में 40 मिलियन से 150 मिलियन वर्ष पहले के हैं तथा मांडला जिले के 7 गांवों (घुगुवा, उमारिया, देओराखुर्द, बरबसपुर, चांटी-पहाड़ियां, चारगांव तथा देओरी कोहानी) में फैले हैं। इस क्षेत्र को 1983 में राष्ट्रीय उद्यान घोषित किया गया था। यह पाया गया कि ये जीवाश्म 65 मिलियन वर्ष पूर्व मिलने वाले पौधों के हैं। उपरोक्त सात गांवों के अतिरिक्त धनगांव में भी कुछ पादप जीवाश्म मिले हैं। तीन अन्य गांव भी हैं जहां जीवाश्म पाए गए हैं, परंतु ये गांव राष्ट्रीय उद्यान की परिधि के बाहर हैं।

बीरबल साहनी प्रागवनस्पति संस्थान, लखनऊ ने मांडला के वनस्पति अवशेषों पर कुछ प्रारम्भिक अध्ययन किए हैं। घुगुवा तथा उमरिया में सूखे हुए पेड़ों को जिमनोस्पर्म, ऐंजियोस्पर्म तथा ताड़ के रूप में चिन्हित किया गया है। कुछ ब्रायोफाइट जीवाश्मों को भी पहचाना गया है। पादप जीवाश्मों में कुछ मोलस्क जीवाश्म भी मिले हैं तथा ये माना जाता है कि नर्मदा नदी घाटी के निकट मांडला में जिस क्षेत्र में ये जीवाश्म पाए गए हैं वह क्षेत्र लगभग 40 मिलियन वर्षों पहले 'पोस्ट कैम्ब्रियन टरश्यरी ऐज' में समुद्र से आच्छादित था। समुद्र के उतरने पर घाटी में एक दरार उत्पन्न हो गई, जिससे वर्तमान की नर्मदा व तापी नदी अरब सागर तक बहती हैं। भूमि में दरार के फलस्वरूप दो भू-भाग लोरेशिया तथा गोंडवाना सामने आए। भारत गोंडवाना का हिस्सा था। यह कटाव जुरासिक अथवा क्रिटेशियस काल में हुआ था तथा वैज्ञानिकों द्वारा जीवाश्मों का सही-सही काल निर्धारण किया जाना अभी बाकी है। कुछ पादप अफ्रीका व ऑस्ट्रेलिया में पाए जाने वाले पादपों से संबंधित हो सकती हैं। यूकेलिप्ट्स वृक्ष के जीवाश्म हैं, जो ऑस्ट्रेलिया में बहुतायत से पाए जाते हैं। कुछ फलदार वृक्षों जैसे खजूर, नीम, जामुन, केला, कटहल तथा रुद्राक्ष के जीवाश्म भी हैं। हालांकि निश्चित रूप से अभी इनके बारे में कुछ भी नहीं बताया जा सकता है।

मांडू (22°20′ उत्तर, 75°24′ पूर्व)

मांडू, एक विनष्ट नगर, माण्डव या मांडोगढ़ नाम से भी जाना जाता है, जो दक्षिण-पश्चिमी मध्य प्रदेश में स्थित है। मांडू की किलेबंदी मालवा क्षेत्र के परमार शासकों के समय की गई। प्रसिद्ध परमार शासक मुंज ने यहां मुंज सागर झील का निमाण कराया।

मध्यकाल में मांडू दिल्ली सल्तनत के नियंत्रणाधीन हो गया। बाद में इस पर तीन पठान वंशों के शासकों ने शासन किया। दिलावर खान गुर ने 1401 में यहां एक नए शासक वंश की स्थापना की। उसके पुत्र एवं उत्तराधिकारी होशंगशाह ने मांडू को अपनी राजधानी बनाया। 1435 में होशंगशाह की मृत्यु हो गई तथा उसको एक शानदार मकबरे में दफन कर दिया गया, जो आज भी अस्तितत्व में है। किंतु अपनी मृत्यु से पूर्व उसने यहां कई सुंदर इमारतों का निर्माण कराया, जिन्हें आज भी देखा जा सकता है। होशंगशाह की मृत्यु के उपरांत उसके पुत्र गजनी खान ने आदेश दिया कि मांडू को 'शादियाबाद' (खुशी की नगरी) के नाम से पुकारा जाए।

कालांतर में मांडू पर शेरशाह ने अधिकार कर लिया तथा इसे सुजात खान के नियंत्रण में रख दिया। सुजात खान का उत्तराधिकारी उसका पुत्र बाज बहादुर हुआ। इसी बाज बहादुर एवं रानी रूपमती के प्रणय संबंधों से मांडू की प्रसिद्धि चारों ओर फैल गयी। बाद में मुगल सेना ने बाज बहादुर को पराजित कर दिया।

मांडू, मुगल सम्राट जहांगीर का प्रसिद्ध सैरगाह था। यहां की स्वास्थ्यवर्धक जलवायु एवं सुंदर स्थलों का वह कायल था तथा अक्सर वह मांडू आया करता था।

मांडू में मुस्लिम शासकों की वास्तुकला के जो नमूने हैं, वे स्थापत्य की भारतीय-इस्लामी शैली का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा उनके विलासिता के प्रति अगाध प्रेम से विशेषित हैं। यहां की प्रमुख इमारतों में होशंगशाह का मकबरा, रानी रूपमती एवं बाजबहादुर

thejobsyogi.com

के महल, हिंडोला महल, जहाज महल एवं जामी मस्जिद इत्यादि सम्मिलित हैं।

मनमोद गुफाएं (19.18° उत्तर, 73.88° पूर्व)

मनमोद गुफाएं, जो महाराष्ट्र के जुन्नार क्षेत्र में हैं, जैन एवं बौद्ध धर्म के शैलकर्त मंदिरों हेतु प्रसिद्ध 45 गुफाओं का एक समूह है। इन गुफाओं का निर्माण प्रथम शताब्दी ई. से तृतीय शताब्दी ई. के बीच हुआ था (लेनयाद्रि गुफाएं, तुलजा गुफाएं तथा शिवनेर गुफाएं भी जुन्नार क्षेत्र में स्थित हैं) मनमोद गुफाएं तीन समूहों में विभाजित हैं—भीमशंकर समूह (10 गुफाएं) अंबिका समूह (19 गुफाएं) तथा भुतलिंग समूह (16 गुफाएं)।

गुफाओं का भीमशंकर समूह पूर्व दिशा में दुधार पहाड़ियों के निकट स्थित है। गुफा संख्या I भिक्षुओं के निवास (लयान) हेतु प्रयोग में लाई जाती थी तथा यहां एक बरामदा व उसके पीछे तीन कमरे बने हैं। गुफा संख्या II एक चैत्य था जिसमें बैठी हुई अवस्था में एक नारी की अपूर्ण मूर्ति है। गुफा संख्या VI में एक अभिलेख है जो 124 ई. में नहपान के प्रधानमंत्री अयाम द्वारा लिखवाया गया था।

अंबिका समूह की गुफाएं भीमशंकर समूह के उत्तर में स्थित हैं तथा इनका नामकरण गुफा संख्या XVI में स्थापित जैन देवी अंबिका के नाम पर किया गया है। कुछ गुफाओं में तीर्थंकरों जैसे चक्रेश्वर, आदिनाथ व नेमिनाथ की मूर्तियां स्थापित की गई हैं। कुछ गुफाओं में बौद्ध धर्म से संबंधित कलाकृतियां भी हैं।

भूतलिंग समूह की गुफाएं उत्तर-पूर्व की ओर अभिमुख हैं और अंबिका समूह से लगभग 200 मी. की दूरी पर स्थित हैं। गुफा संख्या XXXVIII में एक अपूर्ण पूजास्थल है, जो भुतलिंग समूह में सबसे बड़ा ढांचा है। इस गुफा समूह की अधिकांश गुफाएं बौद्ध विहारों के रूप में उपयोग की जाती थीं।

मानसेहरा (34°20′ उत्तर, 73°12′ पूर्व)

मानसेहरा उत्तर-पश्चिमी प्रांत का एक व्यापारिक नगर है, जो वर्तमान में पाकिस्तान के हजारा जिले में स्थित है। यहां से मौर्य शासक अशोक का तीसरी शताब्दी ईसापूर्व का एक अभिलेख मिला है। यह एक शिलालेख है, जो खरोष्ठी लिपि में लिखा हुआ है। यह नगर तीर्थयात्रा के एक प्रसिद्ध मार्ग में स्थित था, उत्तर पश्चिमी सीमांत प्रांत को पाटलिपुत्र एवं बाहरी क्षेत्रों से जोड़ने वाला प्रसिद्ध मार्ग यहीं से होकर गुजरता था। यह उत्तरी सीमा का भी एक महत्वपूर्ण स्थल था। संभवतः यह उत्तरी सीमाओं से समीपता के कारण चुना गया हो।

मान्यखेत (17°11′ उत्तर, 77°9′ पूर्व)

मान्यखेत, आधुनिक मालखेड है, जो कर्नाटक में स्थित है। मान्यखेत प्रसिद्ध राष्ट्रकूट शासकों की राजधानी थी। राष्ट्रकूटों की प्रारंभिक राजधानी महाराष्ट्र में लातूर थी, बाद में उन्होंने राजधानी मान्यखेत स्थानांतरित कर दी।

राष्ट्रकूट शासक अमोघवर्ष के अधीन मान्यखेत की भरपूर समृद्धि एवं विकास हुआ, जिसने यहां कई झीलों, महलों एवं मंदिरों का निर्माण करवाया। मान्यखेत के समीप कागना नदी बहती है, जिसके तट पर एक पुराना किला स्थित है। ऐसा अनुमान है कि इस किले का निर्माण राष्ट्रकूट शासकों द्वारा ही कराया गया होगा। इसे तंदूर के नाम से भी जाना जाता है। मान्यखेत को मालखेद के अतिरिक्त स्थिरभूत एवं मालकुर नामों से भी जाना जाता था।

यह भट्टारक का मुख्यालय भी रहा। भट्टारक से सम्बद्ध सिद्धांत पुस्तकों के संकलन के समय मान्यखेत राष्ट्रकूटों के अधीन था। यद्यपि राष्ट्रकूटों के पतन के साथ ही मान्यखेत का महत्व भी समाप्त हो गया।

मास्की (15.96° उत्तर, 76.65° पूर्व)

मास्की, जिसे प्रारंभ में मसागी नाम से भी जाना जाता था, कर्नाटक के रायचूर जिले में स्थित है। मास्की से सम्राट अशोक का एक लघु शिलालेख पाया गया है। यह एकमात्र अभिलेख है, जिसमें अशोक का नाम प्राप्त होता है। यह अभिलेख उसके नाम 'देवानांपिय अशोक' से प्रारंभ होता है। अशोक के अन्य सभी अभिलेखों में उसकी उपाधि प्राप्त होती है, न कि नाम। यहां से एक प्राक् ऐतिहासिक स्वर्ण खान एवं एक बस्ती की प्राप्ति से यह स्पष्ट होता है कि नवपाषाण काल से मास्की एक प्रमुख नगर बन गया था। यहां प्राप्त बस्ती से कई महत्वपूर्ण अवशेष भी पाए गए हैं। जैसे—पालिशयुक्त प्रस्तर की वस्तुएं, काले एवं लाल मृदभाण्ड, मनके, घोंघे से बने आभूषण, टेराकोटा की वस्तुएं तथा नाग का जम्बुमपि से बना एक छोटा सिर इत्यादि।

मसूलीपट्टनम (16.17° उत्तर, 81.13° पूर्व)

मसूलीपट्टनम आंध्र प्रदेश के पूर्वी भाग में स्थित है। प्रारंभ में इसे मसूलीपट्टम, मछलीपट्टनम एवं बंडार नामों से भी जाना जाता था। गोलकुंडा शासकों के अधीन मसूलीपट्टनम दक्षिण-पूर्वी तट का एक प्रमुख बंदरगाह था। बंगाल की खाड़ी में अंग्रेजों ने अपनी पहली व्यापारिक कोठी 1611 में यहीं स्थापित की थी। अंग्रेज यहां से स्थानीय स्तर पर बुना हुआ सूती कपड़ा खरीदते थे तथा उसे फारस भेजते थे। गोलकुंडा के सुल्तान ने 1632 ई. में ईस्ट इंडिया कंपनी के लिए सुनहरा फरमान जारी किया था। इस फरमान के अनुसार अंग्रेज चुंगी अदा करके गोलकुंडा के सभी तटीय बंदरगाहों से स्वतंत्रतापूर्वक व्यापार कर सकते थे। डच एवं फ्रांसीसियों के विरोध तथा स्थानीय अधिकारियों के असंतोष की वजह से अंग्रेजों को मसूलीपट्टनम में असुरक्षा महसूस होने लगी तथा उसने मसूलीपट्टनम के स्थान पर सेंट फोर्ट जार्ज को अपनी व्यापारिक गतिविधियों का केंद्र बना लिया तथा यह शीघ्र ही कोरोमंडल तट पर अंग्रेजों का मुख्य व्यापारिक ठिकाना बन गया। 1759 में अंग्रेजों ने मद्रास को पूरी तरह से अंग्रेजों से छीन लिया।

thejobsyogi.com

मथुरा (27°29′ उत्तर, 77°40′ पूर्व)

यमुना के तट पर बसा हुआ मथुरा, एक पवित्र शहर है। यह एकमात्र ऐसा शहर है, जिसका उल्लेख इतिहास एवं मिथक कथाओं दोनों में प्राप्त होता है। मथुरा भगवान कृष्ण की गाथाओं से जुड़ा हुआ है। यहीं उनका जन्म हुआ एवं अपने जीवन का लंबा समय उन्होंने यहीं गुजारा।

ऐतिहासिक साक्ष्यों के अनुसार, यह सूरसेन की राजधानी थी, जो छठी शताब्दी ईसापूर्व का एक प्रमुख महाजनपद था।

मथुरा कनिष्क की दूसरी राजधानी भी थी। कुषाणों के अधीन मथुरा कला एवं संस्कृति के एक महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में विकसित हुआ। मथुरा कला की मुख्य विशेषताएं हैं—स्थानीय रूप से उपलब्ध लाल-बलुआ पत्थर का प्रयोग; ब्राह्मण, बौद्ध एवं जैन जैसे सभी धर्मों से संबंधित मूर्तियों का निर्माण एवं कुषाण शासकों की विशालकाय प्रतिमाएं।

मथुरा बौद्ध धर्म की एक शाखा सर्वास्तिवाद का मुख्यालय भी था। इस शाखा के प्रमुख प्रसिद्ध संत राहलु भद्र थे। मथुरा के निकट स्थित कंकाली टीला की विद्यमानता एवं आज्ञा-पथ अभिलेख से इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि यह जैन धर्म का भी एक प्रसिद्ध केंद्र था।

आगे चलकर मथुरा हिन्दू एवं भागवत धर्म के प्रसिद्ध केंद्र के रूप में भी उभरा। वर्तमान में यह शहर 'कृष्ण नगरी' के रूप में प्रसिद्ध है। यहां एक विशाल तेलशोधक कारखाना भी है।

मेरठ (28.99° उत्तर, 77.70° पूर्व)

मेरठ पश्चिमी उत्तर प्रदेश में गंगा एवं यमुना नदियों के मध्य की भूमि पर स्थित है। यह प्राचीन काल से ही भारतीय इतिहास की विविध गतिविधियों का केंद्र रहा है।

मेरठ के समीप स्थित आलमगीरपुर नामक ग्राम में पुरातात्विक उत्खनन से यहां हड़प्पा सभ्यता के प्रमाण पाए गए हैं। यह स्थल सिंधु घाटी सभ्यता की पूर्वी सीमा थी। इससे मेरठ प्राचीन सभ्यताओं के अंतरराष्ट्रीय मानचित्र में एक प्रमुख स्थल के रूप में दर्ज हुआ है। चित्रित धूसर मृदभाण्डों की प्राप्ति से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि कालांतर में यहां आर्य समूहों ने आकर अधिकार जमा लिया था। मौर्य काल में अशोक के स्तंभ लेख की प्राप्ति से यह सूचना मिलती है कि मौर्यकाल में भी यह एक महत्वपूर्ण स्थल था। इस स्तंभ लेख को बाद में फिरोज तुगलक द्वारा दिल्ली ले जाया गया था।

1857 के विद्रोह के समय भी मेरठ एक महत्वपूर्ण केंद्र था। 10 मई, 1857 को यहीं की छावनी में सेना की तीसरी बटालियन ने विद्रोह की चिंगारी फूंक कर अंग्रेजों के विरुद्ध पहले स्वतंत्रता संग्राम का बिगुल बजाया था। यद्यपि यह विद्रोह शीघ्र ही कुचल दिया गया तथा मेरठ ब्रिटिश भारत के संयुक्त प्रांत में पश्चिमी क्षेत्र का एक प्रमुख शहर बन गया।

वर्तमान में मेरठ में भारतीय सेना की महत्वपूर्ण छावनी है तथा यह औषधि निर्माण का प्रमुख केंद्र है। यह पश्चिमी उत्तर प्रदेश का एक प्रमुख व्यापारिक स्थल भी है।

मेहरगढ़ (29°23′ उत्तर, 67°37′ पूर्व)

मेहरगढ़, बलूचिस्तान क्षेत्र में स्थित है, जो अब पाकिस्तान में है। यह नगर, भारतीय उपमहाद्वीप में आवास एवं कृषि के प्रारंभिक प्रमाण प्रस्तुत करता है। यहां आवास के त्रि-स्तरीय साक्ष्य पाए गए हैं—नवपाषाणकालीन सभ्यता, प्राक-सैंधव सभ्यता एवं हड़प्पा सभ्यता।

यहां लगभग 6000 ईसा पूर्व ही मानव ने मिट्टी के ईंटों की सहायता से घरों का निर्माण कर निवास प्रारंभ कर दिया था। भारतीय उपमहाद्वीप में मेहरगढ़ के लोगों ने ही सर्वप्रथम 6000-5000 ईसापूर्व के आसपास गेंहू की खेती प्रारंभ की थी। विभिन्न कमरों वाले ईंट के बने चौकोर आवासों की प्राप्ति से इस स्थल में प्राक-सैंधव सभ्यता के अस्तित्वमान होने के संकेत प्राप्त होते हैं। यहां से हस्तनिर्मित मृदभाण्डों के उपयोग, खजूर, कपास एवं जौ की खेती के प्रमाण तथा पशुपालन के प्रमाण भी प्राप्त हुए हैं।

आवासों के प्रारूप, मृदभाण्डों एवं मुहरों की प्राप्ति, बहुमूल्य धातुओं के प्रयोग, लेपीज लेजुली जैसे मनकों के प्रयोग एवं सैंधव सभ्यता से संबंधित अन्य वस्तुओं के उपयोग के जो साक्ष्य यहां से प्राप्त हुए हैं, उससे मेहरगढ़ के हड़प्पा सभ्यता से संबंधित होने के तथ्यों की पुष्टि होती है।

मोधेरा (23.42° उत्तर, 72.37° पूर्व)

मोधेरा, मेहसाना से 30 किमी. दूर एवं अहमदाबाद से 128 किमी. दूर गुजरात राज्य में स्थित है। पुष्पवती नदी के तट पर स्थित यह नगर सूर्य मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। यह एक प्राचीन नगर है। यह पौराणिक काल से संबंधित है तथा उस समय इसे 'धर्मरण्य' के नाम से जाना जाता था। ऐसा माना जाता है कि लंका का रावण, जो कि एक ब्राह्मण था, का वध करने पर भगवान राम पर जो कलंक लग गया था, उससे मुक्त होने के लिए श्रीराम ने यहीं प्रायश्चित किया था। भगवान सूर्य की उपासना करने वाले श्रृद्धालुओं के लिए यह एक पवित्र स्थल है। यहां के सूर्य मंदिर का निर्माण 1026-27 में गुजरात के सोलंकी शासक भीम प्रथम के समय हुआ था। यह वही समय था जब महमूद गजनवी ने सोमनाथ मंदिर पर आक्रमण कर वहां लूटपाट मचाई थी।

प्रथम दृष्टया यह सूर्य मंदिर अत्यंत चित्ताकर्षक प्रतीत होता है। इसमें स्तंभयुक्त सभामण्डप है, जो कि जलाशय में प्रतिबिम्बित होता है। मंदिर का आंतरिक भाग पूर्व की ओर सूर्य को उन्मुख करते हुए बना है। यहां कामकुंड नामक एक पवित्र सरोवर भी है, जिसमें सूर्य पूजा से पूर्व श्रृद्धालु स्नान करते हैं। यह जलाशय अपनी निर्माण संरचना में देश का एक विशिष्ट प्रकार का जलाशय है। बहुत सावधानी से कामोत्तेजक मूर्तियों के फलकों को अवशिष्ट कोणों पर रखा गया है। एक समय पर सूर्य की स्वर्ण से बनी मूर्ति को

thejobsyogi.com

कक्ष में ऐसे स्थान पर रखा गया था जहां सूर्य की पहली किरणें उस पर पड़ें, परंतु स्वर्ण प्राप्त करने के लिए आक्रमणकारियों ने मूर्ति को हटा दिया।

मोहनजोदड़ो (27°19′ उत्तर, 68°08′ पूर्व)

मोहनजोदड़ो का अर्थ है—मृतकों का टीला। सिंधु नदी के दाएं तट पर स्थित यह स्थल वर्तमान में पाकिस्तान के लरकाना जिले में स्थित है। मोहनजोदड़ो की खोज 1922 में आर.डी. बनर्जी ने की थी।

यह नगर सिंधु घाटी सभ्यता का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। यह नगर दो भागों में विभक्त था—पश्चिमी टीला एवं निचला नगर। पश्चिमी टीले की सबसे प्रमुख इमारत वृहत स्नानागार (11.88 मी. × 7.01 मी. × 2.43 मी.), एक अन्नागार, पुरोहित आवास एवं सभागार हैं।

ऐसा अनुमान है कि हड़प्पा के साथ मोहनजोदड़ो इस सभ्यता की जुड़वां राजधानी थी। यहां से कई महत्वपूर्ण वस्तुएं प्राप्त की गई हैं, जैसे—कांसे की बनी नर्तकी की मूर्ति, सूती वस्त्रों के अवशेष, एवं एक योगी की मूर्ति इत्यादि। मोहनजोदड़ो से ही हड़प्पा सभ्यता की मुहरें भी मिली हैं। इनके अतिरिक्त यहां से मेसोपोटामिया की मुहरें भी पाई गई हैं।

इस नगर की नगर नियोजन व्यवस्था एवं जल निकासी व्यवस्था अपने आप में अद्वितीय थी।

मोहनजोदड़ो की सर्वाधिक उल्लेखनीय इमारत स्नानागार है। यह नगर हड़प्पा सभ्यता से संबंधित कई अन्य महत्वपूर्ण जानकारियां भी उपलब्ध कराता है।

मुंगेर (25.38° उत्तर, 86.46° पूर्व)

मुंगेर बिहार में है। यह तीन ओर से गंगा से घिरा है तथा खड़गपुर की पहाड़ियां इसके लिए सुरक्षा प्रहरी की भांति कार्य करती हैं। मुंगेर की सामरिक स्थिति से यह विभिन्न शासकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करता रहा है तथा इसी वजह से यहां समय-समय पर आक्रमण होते रहे। वास्तव में मुंगेर का इतिहास, युद्धों का इतिहास है। युद्धों का यह क्रम मोदागिरी (मुंगेर का प्राचीन नाम) के शासक, की भीम के साथ लड़ाई से प्रारंभ होता है (महाभारत में उल्लिखित)। यह क्रम 1764 में तब समाप्त हुआ, जब अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी ने बंगाल के नवाब मीर कासिम को पराजित किया।

कुछ इतिहासकारों का मत है कि मुंगेर का संस्थापक चंद्रगुप्त था। उस समय यह गुप्त गढ़ कहा गया। यह नाम यहां की एक शिला पर भी उत्कीर्ण पाया गया है। बौद्ध परम्पराएं मुंगेर का उल्लेख 'मौद्रगोल्यागिरी' नाम से करती हैं। यह नाम एक धनी व्यापारी मोद्गल्या के नाम पर रखा गया, जिसने बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया था।

आइने-अकबरी के अनुसार मुंगेर ही वह मुख्य शहर था जहां राजा मानसिंह का निवास था। इस ग्रंथ के अनुसार, जब टोडरमल बंगाल की सेना को पराजित करने यहां आए तो वे यहीं रह गए तथा उन्होंने अपना काफी लंबा समय यहीं बिताया।

समीप स्थित खड़गपुर की पहाड़ियां, जो विन्ध्याचल पर्वत श्रृंखलाओं का विस्तार है, में अनेक सुंदर कुंड या जलाशय पाए जाते हैं। इनमें भीमबांध, ऋषिकुंड एवं सीताकुंड प्रमुख हैं। ऐसी मान्यता है कि सीताकुंड ही वह स्थान है, जहां सीता ने अपना स्त्रीत्व सिद्ध करने हेतु स्वयं को अग्नि को समर्पित कर दिया था।

मुंगेर की अन्य प्रमुख इमारतों में—18वीं शताब्दी में निर्मित शाहनाग का मकबरा सबसे उल्लेखनीय है, जो वास्तुकला की बंगाल शैली का एक सुंदर नमूना है।

मुखलिंगम (18° उत्तर, 83.96° पूर्व)

मुखलिंगम आंध्र प्रदेश के श्रीकाकुलम जिले में स्थित है। अपनी धार्मिक प्रतिष्ठा के कारण दक्षिण काशी के नाम से भी जाना जाने वाला यह स्थान 10वीं शताब्दी ईस्वी में उड़ीसा के पूर्वी गंगों की राजधानी भी था। यहां स्थित श्री मुखलिंगम मंदिर का निर्माण पूर्वी गंग वंश के शासक कामर्नवा द्वितीय ने 8वीं शताब्दी में कराया था। यहां से प्रथम शताब्दी ईस्वी की सांस्कृतिक महत्व की कई वस्तुएं भी प्राप्त की गई हैं, जिससे यह अनुमान है कि प्राचीन काल से ही यह एक महत्वपूर्ण स्थल था।

मधुकेश्वर मंदिर यहां का एक अन्य उल्लेखनीय मंदिर है, जो प्रारंभिक उड़िया कला शैली में निर्मित है। मंदिर की दीवारें सुंदर चित्रों से परिपूर्ण हैं तथा इसकी शैली भी प्रशंसनीय है।

सातवाहन सिक्कों एवं रोमन प्रकार की वस्तुओं की प्राप्ति से यह स्पष्ट होता है कि मुखलिंगम ईसा का प्रारंभिक शताब्दी से ही वाणिज्यिक महत्व का एक प्रमुख केंद्र रहा होगा।

मुल्तान (30°11′ उत्तर, 71°28′ पूर्व)

वर्तमान में मुल्तान पाकिस्तान का एक प्रांत है। मुल्तान का प्रारंभिक इतिहास रहस्यपूर्ण है एवं मिथक धारणाओं पर आधारित है। यद्यपि अधिकांश इतिहासकारों का मानना है कि मुल्तान ही मालि-उस्तान है, जिस पर सिकंदर ने अपने एशिया अभियान में आक्रमण किया था तथा विजय प्राप्त की थी। यद्यपि अपने इस आक्रमण में स्थानीय लोगों ने सिकंदर का भयंकर प्रतिरोध किया था तथा सिकंदर घायल भी हो गया था।

चीनी यात्री ह्वेनसांग ने इस नगर की यात्रा की थी तथा इसे पांच मील में विस्तृत नगर बताया था। उसके अनुसार इस नगर में घनी आबादी थी तथा यहां एक सूर्य मंदिर भी था। सातवीं शताब्दी से मुल्तान हिन्दू शाही वंश के अधीन आ गया। धार इसी वंश का प्रसिद्ध शासक था। 712 ई. में मुहम्मद बिन कासिम ने यहां आक्रमण किया तथा सिंध के साथ मुल्तान को भी जीत लिया था। इसके बाद यह विभिन्न मुस्लिम आक्रांताओं के हाथों में जाता रहा। महमूद गजनवी ने यहां के प्रसिद्ध सूर्य मंदिर को नष्ट कर दिया एवं मुहम्मद गौरी के समय से यह दिल्ली सल्तनत का हिस्सा बन गया। गियासुद्दीन

thejobsyogi.com

तुगलक इसी सुल्तान का राज्यपाल था, जो आगे चलकर दिल्ली सल्तनत का शासक बना।

मुगलों के अधीन, 250 वर्षों तक मुल्तान में शांति एवं समृद्धि बनी रही। यह एक समृद्ध नगर के रूप में विकसित हुआ तथा उत्तर-पश्चिमी प्रांत का मुख्यालय बना।

आगे चलकर मुल्तान रणजीत सिंह द्वारा शासित सिख साम्राज्य में सम्मिलित हो गया तथा फिर यह ब्रिटिश भारत का हिस्सा बन गया। भारत की स्वतंत्रता के उपरांत यह पाकिस्तान में सम्मिलित हो गया तथा एक प्रांत बन गया।

मुंबई (18°58′ उत्तर, 72°49′ पूर्व)

मुंबई, जो आधुनिक महाराष्ट्र प्रांत की राजधानी है, भारत का एक समृद्ध एवं आधुनिक महानगर भी है। किसी समय सात द्वीपों के एक समूह में सम्मिलित मुंबई, कुछ समय पूर्व तक बंबई के नाम से जाना जाता था।

आधुनिक मुंबई का उद्भव 1661 ई. में तब हुआ, जब पुर्तगाल के शासक की बहन कैथरीन ऑफ ब्रगैन्जा का विवाह, इंग्लैण्ड के युवराज चार्ल्स द्वितीय से हुआ। इस विवाह में पुर्तगाल ने मुंबई अंग्रेजों को दहेज में दे दिया। 1668 में चार्ल्स द्वितीय ने इसे ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी को बेच दिया।

मुंबई गेटवे ऑफ इंडिया के लिए प्रसिद्ध है, जिसका निर्माण 1911 में जार्ज पंचम की भारत यात्रा के उपलक्ष्य में किया गया था। आधिकारिक तौर पर इसे 1924 में खोला गया। प्रिंस ऑफ वेल्स संग्रहालय, विक्टोरिया एवं अल्बर्ट संग्रहालय, नरीमन प्वाइंट, मरीन ड्राइव एवं जूहू बीच यहां के प्रमुख पर्यटक स्थल हैं।

मुंबई में कई धार्मिक केंद्र भी हैं। जैसे—महालक्ष्मी मंदिर, हाजी अली की दरगाह एवं आदिनाथ को समर्पित जैन मंदिर इत्यादि।

मुंबई को भारत की वाणिज्यिक राजधानी कहा जाता है।

मुर्शिदाबाद (24.18° उत्तर, 88.27° पूर्व)

भागीरथी नदी के तट पर स्थित मुर्शिदाबाद, स्वतंत्र बंगाल राज्य की राजधानी था। इसका नामकरण स्वतंत्र बंगाल के संस्थापक एवं बंगाल के नवाब मुर्शिद कुली खां के नाम पर किया गया। मुर्शिदाबाद भारतीय इतिहास की उन घटनाओं से संबंधित है, जिन्होंने इसे गहराई से प्रभावित किया। 23 जून, 1757 को मुर्शिदाबाद के निकट प्लासी के युद्ध में राबर्ट क्लाइव ने बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला को पराजित कर अंग्रेजों के लिए भारत के द्वार खोल दिए।

हजारद्वारी महल यहां आकर्षण का मुख्य केंद्र है। इसका निर्माण 1837 में किया गया था। इसके सामने महान इमामबाड़ा है। नमक हराम ड्योढ़ी वह स्थान है, जहां सिराजुद्दौला का कत्ल किया गया था। कटरा गेट मस्जिद में मुर्शीद कुली खान को दफनाया गया था। बारानगर में रानी भवानी द्वारा बनवाया गया मंदिर 18वीं शताब्दी में बंगाल में निर्मित सुंदर मंदिरों में से एक है। बेहरामपुर के समीप कासिम बाजार 18वीं तथा 19वीं शताब्दी में एक व्यस्त अंग्रेजी नदीय बंदरगाह था।

यह क्षेत्र दस्तकारी एवं वस्त्रों की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है एवं अपने सिल्क के लिए प्रसिद्ध है। खगड़ा एवं बेहरामपुर का कांसा एवं धातुओं से निर्मित वस्तुएं अत्यंत प्रसिद्ध हैं। मुर्शिदाबाद की हाथी दांत की नक्काशी, बंगाल की हस्त कला की शान है। वर्तमान समय में मुर्शिदाबाद एक छोटा जिला मुख्यालय है, जबकि ऐसा कहा जाता है कि बंगाल के नवाब के समय मुर्शिदाबाद अपनी भव्यता में लंदन की बराबरी करता था।

मुजिरिस (9.97° उत्तर, 76.28° पूर्व)

वर्तमान समय में केरल में स्थित मुजिरस को कोडुंगालूर या क्रंगानूर के नाम से जाना जाता है। प्राचीन विश्व में यह पूर्व का एक अत्यंत महत्वपूर्ण व्यापारिक केंद्र था, जहां मिर्च, इलायची एवं दालचीनी जैसी महंगी वस्तुओं का व्यापार होता था। प्रथम शताब्दी ईस्वी में यहां से अदन (दक्षिण यमन) के लिए सीधा व्यापारिक मार्ग था। पेरूमलों के उपरांत मुजिरिस पर चेरों ने अधिकार कर लिया तथा इसे महत्वपूर्ण सामुद्रिक व्यापारिक केंद्र के रूप में विकसित किया। प्रथम शताब्दी ईस्वी तक, पूरे संसार में मुजिरिस अपनी समृद्धि एवं व्यापार के लिए प्रसिद्ध हो चुका था।

प्लिनी एवं टालेमी ने अपने विवरणों में मुजिरिस को मालाबार तट का एक प्रमुख बंदरगाह बताया है। सेंट टामस संभवतः 52 ईस्वी में भारत आया था तथा चेर राजा ने उसका स्वागत किया था। जब यरूशलम में यहूदियों के मंदिर को नष्ट कर दिया गया तो बहुत से यहूदी यहां आकर बस गए। यहूदी मिथक कथाओं में सोलोमन राजा के जलपोतों का उल्लेख है, जो मालाबार तट से व्यापार करते थे। 345 ईस्वी में, एक सीरियाई व्यापारी कैना थॉमस यहां 400 सीरियाई परिवार लेकर आया। यूनानी स्रोतों के अनुसार, रोमनों ने यहां आगस्टस का एक मंदिर भी बनवाया था।

10वीं शताब्दी के अंत तक बंदरगाह में समुद्री कीचड़ के जमा हो जाने के कारण मुजिरिस का महत्व कम होने लगा। इसके बाद धीरे-धीरे मुजिरिस का स्थान कालीकट ने ले लिया। जबकि क्विलोन चीन से आने वाले जहाजों के लिए केंद्र के रूप में विकसित हुआ।

thejobsyogi.com

N

नचना-कुठार (24°30′ उत्तर, 80°44′ पूर्व)

नचना-कुठार मध्य प्रदेश के बुंदेलखण्ड क्षेत्र में स्थित है तथा गुप्तकालीन शिव-पार्वती मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। यह मंदिर तत्कालीन मंदिरों की तुलना में कुछ उन्नत विशेषताएं प्रदर्शित करता है। प्रारंभिक मंदिरों की छतें सपाट एवं चौकोर हैं, जबकि इसमें थोड़ी उन्नत स्थिति परिलक्षित होती है।

पार्वती मंदिर पांचवी-छठवीं शताब्दी से संबंधित है, इसमें एक छोटा गर्भगृह है, जोकि चारों ओर से एक बड़े वर्गाकार कक्ष से घिरा है तथा आंतरिक गर्भगृह के चारों ओर का प्रदक्षिणा पथ प्रदान करता है। बाद के दिनों में ऐसे मंदिरों को जिनमें ढके हुए मार्ग थे, 'संधार संरचना' कहा जाने लगा। पार्वती मंदिर में एक ऊपरी मंजिल भी है जोकि आंतरिक गर्भगृह के ऊपर है तथा द्रविड़ शैली की एक मंजिल के ऊपर दूसरी मंजिल जैसी व्यवस्था की ओर संकेत करती है।

नचना-कुठार का महादेव मंदिर संभवतः कुछ बाद के समय का है इसमें तत्कालीन वास्तुकला से कुछ भिन्नताएं भी परिलक्षित होती हैं, जैसाकि इसके गर्भगृह का कक्ष निचले तथा छोटे शंक्वाकार मीनार से घिरा हुआ है, जिसके ऊपर एक संपूर्ण गोलाभ है। देवगढ़ और भीतरगांव की मीनारों के सिर्फ अवशेष बाकी है, नचना-कुठार का महादेव मंदिर उत्तर भारतीय नागर शैली का सबसे प्राचीन मंदिर माना जाता है।

नागपट्टिनम (10.77° उत्तर, 79.83° पूर्व)

नागपट्टिनम जो कि एक तटीय शहर है, प्राचीन काल में नेगापट्टिनम के नाम से जाना जाता था। यहां एक बंदरगाह भी है। यह तमिलनाडु के पूर्वी-मध्य भाग में स्थित है। प्राचीन काल में यहां से रोम एवं यूनान को व्यापार किया जाता था। आगे चलकर पहले यह पुर्तगाली तथा फिर डच उपनिवेश बन गया। यद्यपि जब मद्रास का विकास हो गया, जो इसके उत्तर में लगभग 250 मील (400 किमी.) की दूरी पर स्थित है, तब इसका महत्व कम होने लगा। नवंबर 1781 ई. में नागपट्टिनम पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया।

नागार्जुनकोंडा(16°31′ उत्तर, 79°14′ पूर्व)

वर्तमान समय में आंध्रप्रदेश का गुंटूर जिला ही नागार्जुनकोंडा था। यह भारत में बौद्ध धर्म का एक प्रमुख स्थल है। प्राचीनकाल में इसे श्री पर्वत के नाम से जाना जाता था। यद्यपि वर्तमान समय में इसका अधिकांश हिस्सा नागार्जुन सागर बांध में डूब गया है। इस झील के मध्य में स्थित पहाड़ियों के शीर्ष पर मठों एवं चैत्यों का निर्माण किया गया था। इस पहाड़ी का शीर्ष भाग ही नागार्जुनकोंडा के नाम से जाना जाता था, जोकि झील के मध्य से ऊपर उठती है।

इस स्थान का यह नाम एक बौद्ध भिक्षु नागार्जुन के नाम पर पड़ा, जो बौद्ध धर्म की महायान शाखा से संबंधित थे। नागार्जुन ने ही शून्यवाद का प्रतिपादन किया था। ये लगभग दूसरी ईसा के आसपास थे।

प्रारंभ में इस स्थान को विजयपुर के नाम से जाना जाता था। इसकी खोज 1926 में हुई थी। इसके पश्चात यहां किए गए पुरातात्विक उत्खननों से यहां स्तूप, विहारों, चैत्यों एवं मंडपों के प्रमाण पाए गए हैं। यहां से संगमरमर में नक्काशी के कुछ अत्यंत सुंदर नमूने भी प्राप्त हुए हैं। कुछ नक्काशियों में बुद्ध के जीवन को भी संजीदगी से चित्रित किया गया है।

तृतीय शताब्दी ईस्वी में इक्ष्वाकुओं ने नागार्जुनकोंडा को अपनी कलात्मक गतिविधियों का केंद्र बनाया। इन्होंने वास्तुकला एवं स्थापत्य कला को प्रोत्साहित किया। यहां के उत्खनन से प्रारंभिक वास्तुकला एवं स्मारक स्तंभों के कुछ सुंदर नमूने प्राप्त हुए हैं।

नागार्जुनकोंडा नवपाषाणकाल एवं मध्यपाषाण काल का भी साक्षी है।

नगरकोट (32.1° उत्तर, 76.27° पूर्व)

पश्चिमी हिमाचल प्रदेश में स्थित कांगड़ा शहर ही प्राचीन एवं मध्यकाल में नगरकोट के नाम से जाना जाता था। यह राजपूत शासकों का एक सशक्त गढ़ था। नगरकोट पर कई मध्यकालीन शासकों ने आक्रमण किया। जैसेः 1009 में महमूद गजनवी, 1360 ई. में फिरोज तुगलक एवं अंत में मुगल। मुगलों ने इस पर पूर्णतया अधिकार भी कर लिया। 18वीं एवं 19वीं शताब्दी में कांगड़ा राजपूतों की चित्रकला का एक प्रमुख केंद्र बन गया। यहां देवितु का मंदिर है, जो पूर्वी भारत का सबसे प्राचीन मंदिर माना जाता है। 1905 में आए विनाशकारी भूकंप में इस मंदिर का अधिकांश हिस्सा नष्ट हो गया था, जिसे फिर से बनाया गया है।

नागौर (27.2° उत्तर, 73.73° पूर्व)

मुगलों के उदय से पूर्व नागौर का प्रारंभिक इतिहास दिल्ली सल्तनत के सुल्तानों, गुजरात के सुल्तानों एवं मारवाड़ के शासकों के लंबे

thejobsyogi.com

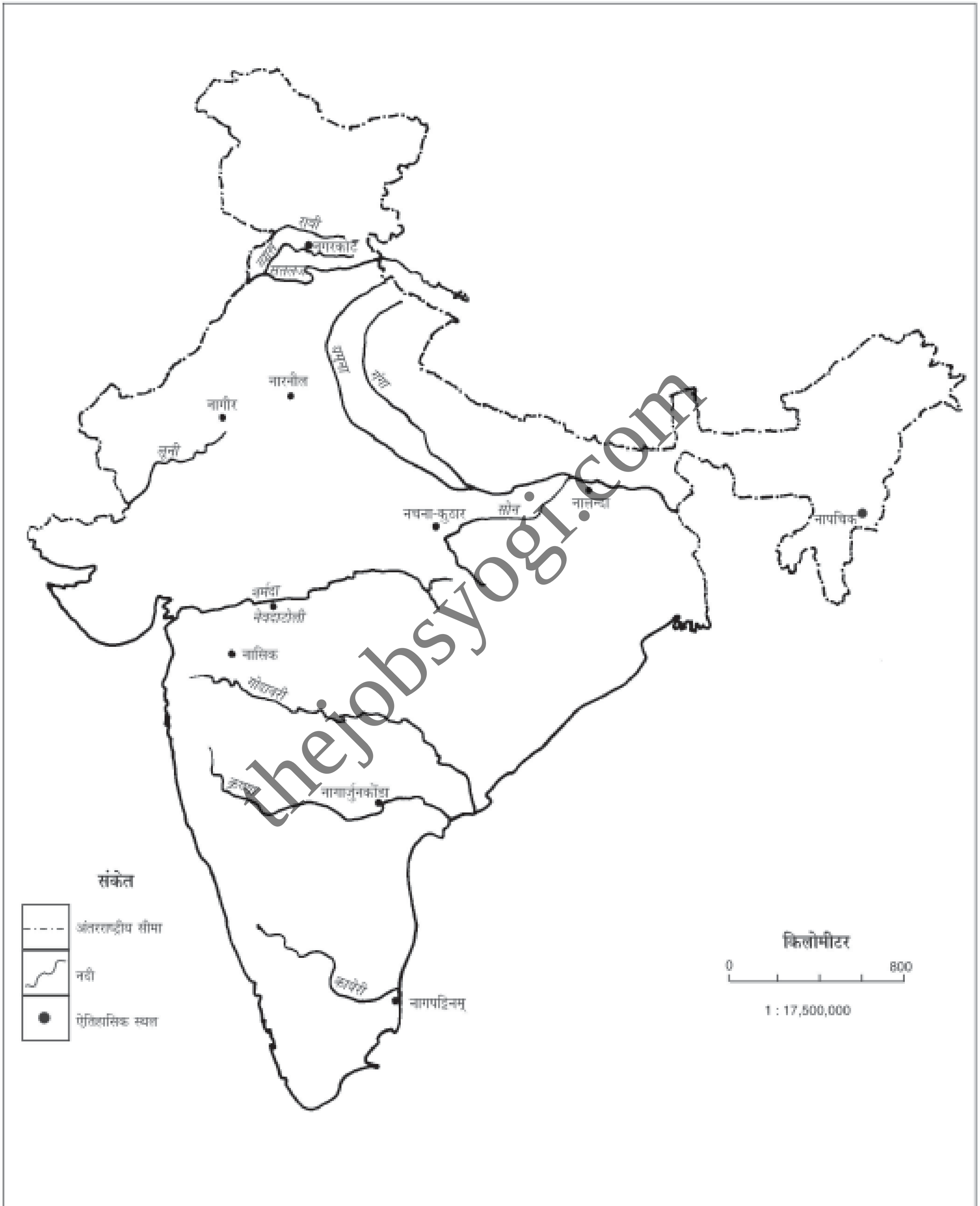

thejobsyogi.com

शोषण का इतिहास है, जिन्होंने उसकी सामरिक महत्ता के कारण सदैव इसे अपने अधिकार में रखने का प्रयास किया। बाद में यह मुगल साम्राज्य में सम्मिलित हो गया और अजमेरी सूबो (प्रांत) के अंतर्गत एक सरकार (संभाग) बन गया।

यहां एक प्राचीन किला है, जो शहर के लगभग मध्य में स्थित है। यह किला विशाल भू-क्षेत्र में फैला हुआ है। इस किले में कई महल, सरोवर एवं अन्य इमारतें हैं, जिसमें से अधिकांश अब नष्ट हो चुकी हैं। यद्यपि इन इमारतों की दीवारों पर चित्रकला के कुछ सुंदर नमूने देखने को मिलते हैं।

प्रत्येक वर्ष जनवरी-फरवरी माह में यहां पशु मेला आयोजित किया जाता है। यहां बड़ी संख्या में गायें, बैल (नागौरी नस्ल प्रसिद्ध हैं), भैंसे एवं ऊंट लाए एवं बेचे जाते हैं।

इस शहर में ऐतिहासिक महत्व की कुछ महत्वपूर्ण इमारतें भी हैं। इनमें—सुल्तान-उल-तुर्कीन के नाम से प्रसिद्ध ख्वाजा हमीमुद्दीन नागौरी की दरगाह एवं अमर सिंह की छतरी सबसे प्रमुख हैं। ख्वाजा हमीमुद्दीन, अजमेर के ख्वाजा के सबसे प्रमुख शिष्य थे। अमर सिंह ही वे महान राजपूत थे, जिन्होंने अपना अपमान करने पर प्रसिद्ध मुगल सेनापति सलाबत खान का वध कर दिया था। यद्यपि बाद में अमर सिंह को भी पराजित कर मौत के घाट उतार दिया गया। आज भी यहां अमर सिंह की शौर्य गाथाएं याद की जाती हैं।

नालंदा (25°08′ उत्तर, 85°26′ पूर्व)

बिहार के पटना के समीप स्थित नालंदा मूलतः बुद्ध के समय निर्मित एक मठ स्थल था। यह पांचवीं शताब्दी से लेकर तेरहवीं शताब्दी के प्रथम दशक तक एक प्रसिद्ध बौद्ध विश्वविद्यालय या महाविहार के रूप में प्रसिद्ध रहा। यहां लगभग 10 हजार विद्यार्थी एवं 1500 शिक्षक थे। यहां विश्व के कई देशों, जैसे—चीन, जापान, तिब्बत, इंडोनेशिया इत्यादि से भी विद्यार्थी बौद्ध दर्शन एवं परंपराओं के अध्ययन हेतु आते थे। इसे 'महायान बौद्ध धर्म के आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय की संज्ञा दी गई है। यहां साहित्य, तर्क, संगीत, कला एवं खगोल-विज्ञान जैसे विविध विषयों की शिक्षा दी जाती थी।

ऐसी मान्यता है कि जब नालंदा में केवल बौद्ध मठ था, तब बुद्ध ने कई बार यहां की यात्रा की थी। उनका प्रिय शिष्य शारिपुत्र यहीं पैदा हुआ था तथा बौद्ध धर्म की शिक्षा देते हुए यहीं निर्वाण को प्राप्त हुआ था। तृतीय शताब्दी ईसा पूर्व में मौर्य सम्राट अशोक ने इस महान बौद्ध भिक्षु के सम्मान में यहां एक विशाल स्तूप निर्मित करवाया था।

8वीं से 12वीं शताब्दी तक विभिन्न शासकों ने इस विश्वविद्यालय को भरपूर संरक्षण एवं प्रोत्साहन दिया, जिससे यह फलता-फूलता रहा तथा उत्तरोत्तर विकास करता रहा।

7वीं शताब्दी में भारत आने वाले चीनी यात्री ह्वेनसांग ने अपने तीन वर्ष इसी विश्वविद्यालय में व्यतीत किए थे। एक अन्य चीनी यात्री इत्सिंग ने यहां 10 वर्ष निवास किया था।

1197 ई. में बख्तियार खिलजी ने इस विश्वविद्यालय को नष्ट कर दिया।

पुरातात्विक प्रमाणों से नालंदा में विभिन्न धात्विक वस्तुओं के उपयोग की पुष्टि होती है। कला की पाल शैली को नालंदा में प्रमुखता से देखा जा सकता है। पुरातात्विक उत्खननों में यहां तत्कालीन समय की स्थापत्य कला के कई अवशेष भी पाए गए हैं।

1951 में यहां बौद्ध धर्म का एक अंतरराष्ट्रीय अध्ययन केंद्र स्थापित किया गया। रत्न सागर, रत्न रंजक एवं रतन ओदधि यहां के प्रसिद्ध पुस्तकालय हैं।

नापचिक (लगभग 24.77′ उत्तर, 93° पूर्व)

मणिपुर की पहाड़ी ढलान पर स्थित नापचिक एक नवपाषाण स्थल है। पाषाणकाल का यह स्थल द्वितीय सहस्राब्दी ई.पू. का है। यह मितेयी गांव के पास वांगू नामक छोटी पहाड़ी/टीले पर स्थित है। यह इंफाल घाटी के दक्षिणी भाग में एवं मणिपुर नदी के दाएं तट पर स्थित है। मणिपुर नदी बहती हुई, म्यांमार में चिंदविन नदी से मिल जाती है। नापचिक में हस्तनिर्मित तीन हत्थे वाले बर्तन, पाषाण छुरे, खुरचने वाले पत्थर, शल्क, नुकीले चाकू, पीसने के पत्थर, पॉलिश किए सेल्ट इत्यादि खुदाई में मिले हैं। नुकीले औजार व डोरी वाले बर्तन, थाईलैंड में स्प्रिट गुफाएं (Sprit Cave), म्यांमार की पदुतिन गुफा तथा वियतनाम के हाओविहिअन स्थलों में मिली वस्तुओं से काफी मिलती-जुलती हैं। उत्तर-पूर्व भारत में नवपाषाण काल संभवतः 500 ई.पू. से 2000 ई.पू. के बीच का है।

नारनौल (28°05′ उत्तर, 76°10′ पूर्व)

हरियाणा में स्थित नारनौल, अफगान शासक शेरशाह का जन्म स्थान है। यह परगना दिल्ली के शासकों ने शेरशाह के दादा इब्राहीम सूर को दे दिया था। शेरशाह ने नारनौल में दुर्गीकृत जिला मुख्यालय बनाया तथा अपने दादा की कब्र पर एक स्मारक बनवाया। नारनौल में ही सतनामियों (एक धार्मिक सम्प्रदाय) ने 1672 ई. में विद्रोह किया था।

नासिक (20.00° उत्तर, 73.78° पूर्व)

महाराष्ट्र में गोदावरी के तट पर स्थित नासिक, मुम्बई से 75 मील की दूरी पर उत्तर-पश्चिमी दिशा में स्थित है।

पुरातात्विक उत्खननों से ऐसे प्रमाण मिले हैं, जिनसे स्पष्ट होता है कि नासिक का समीपवर्ती क्षेत्र प्रारंभिक पाषाण युग में ही अधिकृत कर लिया गया था। प्रसिद्ध संत अगस्त्य, पहले आर्य थे, जिन्होंने विन्ध्य पर्वत को पार कर दक्षिण भारत में ब्राह्मण धर्म का प्रचार-प्रसार किया था, वे भी यहां रहे थे। उन्होंने ही राम व सीता को वनवास के दौरान नासिक में पंचवटी में निवास करने का परामर्श दिया था तथा यहीं रावण ने सीता का अपहरण किया था। कालांतर में प्रसिद्ध कवि कालिदास, वाल्मीकि एवं भवभूति ने नासिक का 'पद्मपुर' के रूप में उल्लेख किया तथा इसे प्रेरणा का एक महान स्रोत बताया।

ऐतिहासिक काल में यह क्षेत्र अशोक के विशाल साम्राज्य में सम्मिलित था। बाद में सातवाहनों के समय, नासिक एक समृद्ध स्थान बन गया क्योंकि भड़ौच को जाने वाला प्रसिद्ध व्यापारिक मार्ग यहीं से होकर गुजरता था। अपनी सुंदरता की वजह से मुगल काल

thejobsyogi.com

में नासिक को 'गुलशनाबाद' कह कर पुकारा जाने लगा। 1751 में जब नासिक मराठा पेशवा के नियंत्रण में आया तो इसका नाम पुनः नासिक कर दिया गया। 1818 में इस पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया। इसके बाद पूरे स्वतंत्रता संघर्ष काल में नासिक में उथल-पुथल चलती रही। नासिक में महात्मा गांधी का वन सत्याग्रह एवं क्रांतिकारियों की विभिन्न गतिविधियां हुईं। डा. अम्बेडकर ने नासिक में अपना मंदिर प्रवेश आंदोलन चलाया।

नासिक, देश के उन चार स्थानों में से एक है, जहां 'कुंभ मेला आयोजित किया जाता है।

नेवदाटोली (22.11° उत्तर, 75.35° पूर्व)

नेवदाटोली एक अत्यंत प्राचीन स्थल है, जो मध्य प्रदेश में महेश्वर के समीप नर्मदा नदी के तट पर स्थित है। यह स्थल भारतीय इतिहास के पाषाणिक एवं ताम्र-पाषाणिक चरणों से संबंधित है। यहां से उत्तर पाषाण युग से संबंधित कई उपकरणों की प्राप्ति हुई है। यहां विभिन्न किस्मों के अनाज, बेर एवं तिल की खेती के भी प्रमाण पाए गए हैं। 1700-1200 ई.पू. की मालवा संस्कृति के प्रमाण जो नेवदाटोली के साथ ही ऐरण एवं नागदा से भी प्राप्त हुए हैं, इस तथ्य की ओर संकेत करते हैं कि यह एक गैर-हड़प्पाई स्थल था।

thejobsyogi.com

O,P&Q

ओदन्तपुर/ओदन्तपुरी/उड्डन्डपुरा (25.19° उत्तर, 85.51° पूर्व)

ओदन्तपुर की पहचान वर्तमान बिहार के बिहार शरीफ (नालंदा जिले का मुख्यालय) में स्थित एक स्थल रूप में हुई है। यह एक बौद्ध महाविहार था। पाल नरेश गोपाल प्रथम ने आठवीं शताब्दी में हिरण्य पर्वत नामक पर्वतीय क्षेत्र में इसका निर्माण कराया था। तिब्बती आलेखों के अनुसार, ओदन्तपुर में लगभग 12000 छात्र थे। इसे भारत का दूसरा सबसे बड़ा महाविहार कहा जाता था। लगभग 1193 ई. में मोहम्मद बिन बख्तियार खिलजी ने नालंदा विश्वविद्यालय के साथ-साथ ओदन्तपुर विश्वविद्यालय को भी नष्ट कर दिया था।

ओहिंद (33°54′ उत्तर, 72°14′ पूर्व)

ओहिंद जिसे पूर्व में उदभांदपुर या वाहिंद नाम से जाना जाता था, आधुनिक समय का ऊंद गांव हैं, जो सिंधु के दाहिने तट पर पाकिस्तान में स्थित है। यह स्थल अटक से कुछ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इतिहास में इस स्थल की प्राचीनता, पूर्व में सिकंदर की विजय तक जाती है। यहीं सिकंदर से तक्षशिला के शासक का दूत आकर मिला था तथा उसने सम्राट को उसकी अधीनता स्वीकार करने की सूचना दी थी।

ओरछा (25.35° उत्तर, 78.64° पूर्व)

बेतवा नदी के तट पर स्थित ओरछा, वर्तमान समय में मध्य प्रदेश में है। ओरछा की स्थापना 16वीं शताब्दी में बुंदेला सरदार रुद्र प्रताप (1501-31) ने की थी। इसके उत्तराधिकारी राजा वीर सिंह ने जहांगीर की ओरछा यात्रा की स्मृति में यहां जहांगीर महल बनवाया था। वीर सिंह बुंदेला, जहांगीर का अत्यंत घनिष्ठ मित्र था तथा ऐसा माना जाता है कि जहांगीर के आदेश पर ही वीरसिंह ने अबुल फजल की हत्या करवाई थी। यद्यपि वीर सिंह के उत्तराधिकारी जुझार सिंह के शाहजहां से मैत्रीपूर्ण संबंध नहीं रहे तथा इसके पश्चात ओरछा के शासक मुगलों की आंख की किरकिरी बने रहे। छत्रसाल बुंदेला ने मुगलों का दृढ़ता से प्रतिरोध किया। ओरछा का दुर्ग बुंदेला सरदारों की शौर्य एवं साहस की कथा का वर्णन करता है। मधुकर शाह द्वारा बनवाया गया 'राजमहल' बुंदेला स्थापत्य का एक सुंदर नमूना है। यहां चंद्रशेखर आजाद की समृति में निर्मित 'शहीद स्मारक' भी एक महत्वपूर्ण दर्शनीय स्थल है।

पैठन (19.48° उत्तर, 75.38° पूर्व)

पैठन गोदावरी के उत्तरी तट पर औरंगाबाद से 50 किमी. दूर, महाराष्ट्र में स्थित है। पैठन या प्रतिष्ठान दक्कन का एक महत्वपूर्ण व्यापारिक केंद्र था। यह नगर महाराष्ट्र एवं गुजरात के तटीय क्षेत्रों से सातवाहन साम्राज्य को जाने वाले महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग में अवस्थित था। ऐसा विश्वास है कि पैठन सातवाहनों की राजधानी भी था। 'पेरिप्लस ऑफ द इरीथ्रियन सी' में पैठन को दक्कन से रोमन साम्राज्य को होने वाले व्यापार का एक महत्वपूर्ण केंद्र बताया गया है।

पैठन धार्मिक जगत की कई महत्वपूर्ण हस्तियों से भी संबंधित था। प्रसिद्ध भक्ति संत एकनाथ की समृति में यहां एकनाथ मंदिर एवं एकनाथ समाधि बनाई गई है, जिससे पैठन हिन्दू धर्मावलंबियों का एक प्रमुख तीर्थस्थल बन गया है।

आजकल यह नगर चांदी एवं सोने के तारों से की जाने वाली कढ़ाई का एक महत्वपूर्ण केंद्र बन गया है। इस कार्य की प्रेरणा अजंता की गुफाओं से ली गई है। पैठन अपनी रेशमी साड़ियों के लिए भी पूरे विश्व में प्रसिद्ध है, जिन्हें 'पैठनी साड़ियां' कहा जाता है। पैठन में बुनाई की कला लगभग 200 ईसा पूर्व में सातवाहन काल में ही विकसित हो गई थी तथा यहां के बुनकरों की लगन एवं समर्पण से यह कला लगभग 2000 वर्षों तक फलती-फूलती रही। वास्तविक पैठनी शुद्ध सिल्क सोने एवं चांदी के तारों से हाथ से बुनकर बनाई जाती है।

पांचाल

महावीर एवं बुद्ध के समय प्रमुख सोलह महाजनपदों में पांचाल का 10वां स्थान था। इसकी तुलना वर्तमान समय में उत्तर प्रदेश के बरेली, बदायूं एवं फर्रुखाबाद जिलों से की जाती है। चौथी शताब्दी ईसा पूर्व के लगभग मध्य में, महापदमनंद के शासन के समय पांचाल पर संभवतः मगध के नंद शासकों ने अधिकार कर लिया था।

पांचाल की राजधानियां अहिच्छत्र एवं कांपिल्य थीं। संकिसा में मौर्य सम्राट अशोक ने एक एकाश्म स्तंभ भी निर्मित करवाया था, जिसकी खोज चीनी यात्री फाह्यान ने की थी। पांचाल क्षेत्र, मथुरा एवं कन्नौज से बड़ी मात्रा में सिक्कों की प्राप्ति से इतिहासकार यह मत व्यक्त करते हैं कि यह क्षेत्र संभवतः मित्र शासकों से संबंधित था। इन सिक्कों को जारी करने वाले शासक अनुमानतः 1000 ईसा पूर्व से 200 ईस्वी के मध्य शासन करते रहे होंगे।

thejobsyogi.com

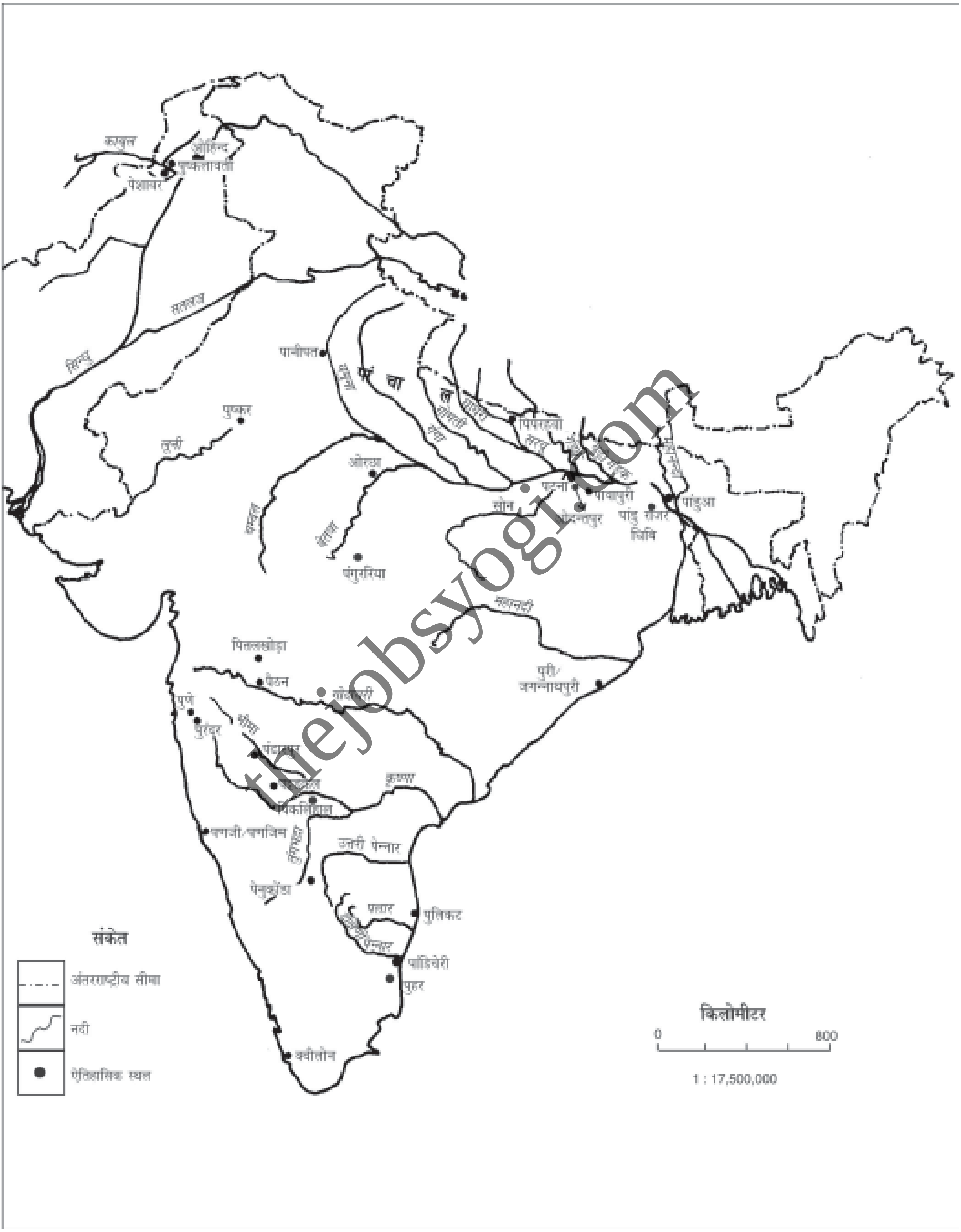

thejobsyogi.com

पंढारपुर (17°40′ उत्तर, 25°19′ पूर्व)

पंढारपुर महाराष्ट्र का प्रमुख धार्मिक स्थल है। यह भीमार्थी नदी, जिसे चंद्रभागा नदी के नाम से भी जाना जाता है, के तट पर शोलापुर से पश्चिम की ओर 65 किमी. की दूरी पर स्थित है।

पंढारपुर में विठोबा (कृष्ण या विष्णु के अवतार) का एक भव्य मंदिर चंद्रभागा नदी के तट पर बना हुआ है। पंढारपुर के विट्ठल, पुराणों से व्युत्पन्न हैं तथा महाराष्ट्र में 13वीं से 17वीं शताब्दी के मध्य कई वैष्णव संतों ने इन्हें लोकप्रिय बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन संतों में नामदेव, ज्ञानेश्वर, एकनाथ एवं तुकाराम के नाम सबसे उल्लेखनीय हैं। यह मंदिर एक विशाल भू-क्षेत्र में बना है, जिसमें प्रवेश हेतु 6 द्वार हैं।

गर्भगृह में विठोबा की एक खड़ी मूर्ति है, जिसे 'पांडुरंग' (पंढारपुर का पुराना नाम) के नाम से भी जाना जाता है। शैलीगत ढंग से यह मूर्ति लगभग पांचवीं शताब्दी ईस्वी में निर्मित की गई थी। छठी शताब्दी में इस मंदिर में राष्ट्रकूट शासक का ताम्र पट्ट पर लिखित अभिलेख यहां लगाया गया। यह लेख 13वीं शताब्दी का माना जाता है। 13वीं शताब्दी के प्रसिद्ध संत नामदेव, इसी पंढारपुर से संबंधित थे।

पंढारपुर में पुंडरीक मंदिर भी है। पुंडरीक, भी एक संत थे, जो विट्ठल मंदिर से संबंधित थे। यह मंदिर उनकी स्मृति में उनकी मृत्यु के बाद बनाया गया।

पांडु राजर धिबि (लगभग 23.5° उत्तर, 87.6° पूर्व)

पांडु राजर धिबि, पश्चिम बंगाल के बर्दवान जिले में एक पुरातात्विक स्थल है। अजय नदी के दक्षिणी तट के निकट स्थित, पश्चिम बंगाल में खोजा गया प्रथम ताम्रपाषाण स्थल है। पांडु राजर धिबि में पाया गया मुख्य टीला महाभारत में वर्णित पांडवों के पिता पांडु से संबद्ध है। 1954-57 के मध्य राजपोत दंग व पांडुक गांवों में उत्खनन किया गया था। ये स्थल वर्तमान में बीरभूम, बर्दवान, बंकुरा तथा मिदनापुर जिले में फैले हैं तथा मयुराक्षी (उत्तर दिशा में), कोपर्ट, अजय, कुन्नूर, ब्राह्मणी, दामोदर, देवराकेश्वर, सिलवती तथा रूपनारायण (दक्षिण दिशा में) नदियों द्वारा अंतः प्रकीर्णित किए हुए हैं।

पांडु राजर धिबि में किए गए उत्खननों से यह तथ्य भी सामने आता है कि ज्यादातर गैर-ब्राह्मण बंगालियों का उद्भव गैर-आर्यों से हुआ है। पूर्वी भारत की ताम्रयुगीन सभ्यता के संबंध केंद्रीय भारत व राजस्थान की समकालीन सभ्यताओं के साथ थे। इस समय के लोग नियोजित नगरों को बनाने में सक्षम थे। अर्थव्यवस्था का आधार कृषि एवं व्यापार था। पांडु राजर धिबि को एक व्यापारिक नगर के खंडहर के रूप में देखा जाता है। व्यापार न केवल भारत के आंतरिक भागों से किया जाता था बल्कि क्रीट (भूमध्यसागर में सबसे बड़ा ग्रीक द्वीप) व भूमध्यसागरीय क्षेत्रों जैसे सुदूर प्रदेशों तक फैला था। यहां के लोग अच्छे नाविक थे।

पश्चिमी बंगाल के ताम्रपाषाणीय स्थलों के वितरण पैटर्न के अध्ययन द्वारा यह तथ्य सामने आता है कि भागीरथी के पश्चिमी क्षेत्रों में एक गहन धान उत्पादक तटवर्ती संस्कृति थी। यद्यपि ताम्रपाषाणीय लोग प्रमुख रूप से कृषक थे परन्तु उन्होंने शिकार व मछली पकड़ना भी जारी रखा था। वे साधारण-सी वृत्ताकार अथवा वर्गाकार झोपड़ियों में रहते थे, जिनकी दीवारों पर मिट्टी की परत से लेप किया जाता था। झोपड़ियों में चूल्हे तथा कचरे हेतु स्थान बना हुआ था। उनके खाद्य पदार्थों में चावल, मांस, मछली व फल सम्मिलित थे।

पांडुआ (24°52′ उत्तर, 88°08′ पूर्व)

पांडुआ बंगाल में गौड़ के समीप स्थित है। गौड़ ही वह स्थल है, जो 1338 ई. एवं 1500 ई. में राजनीतिक शून्यता की वजह से राजनीतिक केंद्र पांडुआ में स्थानांतरित हो गया था।

यहां की सबसे प्रमुख इमारत अदीना मस्जिद है, जिसका निर्माण 14वीं शताब्दी में सिकंदर शाह ने करवाया था। उत्खनन से इस बात के प्रमाण प्राप्त हुए हैं कि इस मस्जिद का निर्माण हिन्दू मंदिर के ऊपर किया गया था। यह भारत की सबसे लंबी मस्जिदों में से एक थी, यद्यपि वर्तमान समय में इसका अधिकांश हिस्सा नष्ट हो चुका है। अदीना मस्जिद मध्यकालीन बंगाल में इस्लामी वास्तुकला का एक सुंदर नमूना है तथा संभवतः यहां पूर्वी भारत की सबसे प्रमुख मस्जिद है।

अदीना मस्जिद के समीप ही 'एकलाखी मस्जिद' है। इसका यह नाम इसलिए पड़ा क्योंकि इसके निर्माण में एक लाख रुपए खर्च हुए थे। लेकिन 1412 ईस्वी के आसपास से इसके अग्रभाग में एक हिंदू देवता की प्रतिमा है।

कुतुबशाही मंदिर का निर्माण 1582 में हुआ था। इसमें ईंटों एवं पत्थरों का प्रयोग किया गया है तथा इसमें 10 गुम्बद हैं।

पंगुदरिया/पंगुरारिया/पंगोररिया (22.75° उत्तर, 77.72° पूर्व)

पंगुदरिया मध्य प्रदेश के सिहोर जिले में स्थित है। यह स्थान 1970 के दशक के मध्य उस समय प्रकाश में आया जब भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण (एएसआई) ने यहां पर अशोक के लघु शिलालेख की खोज की। यहां पर दो शिलाश्रय स्थल हैं, जिनमें से वृहद आश्रय स्थल को सारू-मारू-मठ कहा जाता है (स्थानीय लोग इसे सारू-मारू की कोठरी कहते हैं)। यहां के शिलालेख में प्रथम बार मानसेम-देश के कुंवर संबा के नाम का उल्लेख हुआ है। विदिशा के दक्षिण में स्थित क्षेत्र को मानसेम देश कहा गया है। इस शिलालेख के अनुवादक फाल्क के अनुसार—''राजा, जिसे, (राज्याभिषेक के उपरांत) प्रियदस्सी कहा गया है, इस स्थान पर मनोरंजन यात्रा हेतु आया था जब वो राजकुमार था, वह यहां अपनी सहचरी (अविवाहिता) के साथ रहा था।''

शिलालेख के अतिरिक्त, यहां पर मौजूद शैलकला में बौद्ध

thejobsyogi.com

मूर्तिकला, आखेट के प्राचीन चित्र, सांड, घोड़े जैसे पशु शामिल हैं। ये सभी चित्रकारियां ऐतिहासिक काल की हैं, और लाल, सफेद तथा हल्के पीले रंग से चित्रित हैं।

पानीपत (29.39° उत्तर, 76.97° पूर्व)

आधुनिक हरियाणा राज्य में स्थित पानीपत, भारत का एक प्राचीन स्थल है। पानीपत का इतिहास महाभारत तक प्राचीन है। इसका प्राचीन नाम पानीप्रस्थ था।

यह स्थान भारतीय इतिहास के कई भीषण एवं रक्तरंजित युद्धों का साक्षी रहा है, जिसने भारतीय इतिहास की दिशा बदल दी।

पानीपत का प्रथम युद्ध 21 अप्रैल, 1526 को बाबर एवं इब्राहीम लोदी के मध्य लड़ा गया। इस युद्ध में इब्राहीम लोदी की पराजय हुई तथा वह युद्ध स्थल में ही मारा गया। युद्ध से दिल्ली सल्तनत का शासन समाप्त हो गया तथा बाबर ने भारत में मुगल वंश की नींव डाली।

पानीपत का दूसरा युद्ध 1556 ई. में बैरम खां, युवा मुगल शासक अकबर का अभिभावक/संरक्षक, की हेमू, एक अफगान दावेदार का सेनापति, जिसने स्वयं की राजा के तौर पर उद्घोषणा की, पर विजय के साथ समाप्त हुआ। इसने 1540 में अफगान शासक शेरशाह सूरी द्वारा हुमायूं को बाहर खदेड़ देने के पश्चात् मुगल शक्ति के पुनः स्थापन/बहाली का मार्ग प्रशस्त किया।

पानीपत का तीसरा युद्ध मराठों एवं अहमदशाह अब्दाली के मध्य 1761 में हुआ। इस युद्ध में मराठों का नेतृत्व सदाशिव राव भाऊ ने किया। इस युद्ध में मराठे, अफगान सेना से बुरी तरह पराजित हुए तथा उनकी प्रतिष्ठा को भारी धक्का लगा। इसने मुगलों के स्थान पर स्वयं को भारत के शासक के रूप में प्रतिष्ठित करने के मराठों के प्रयासों का अंत कर दिया, और साथ ही मुगल साम्राज्य के अंत का भी मार्ग प्रशस्त किया। इस प्रकार उत्तर-पश्चिमी भारत में 40 वर्षों की अराजकता की स्थिति की शुरुआत हुई और ब्रिटिश शासन हेतु मार्ग प्रशस्त हुआ।

बाबर ने पानीपत में 1526 में प्रसिद्ध काबुली बाग मस्जिद का निर्माण करवाया।

वर्तमान पानीपत भारत का तेजी से विकसित होता एक शहर है। यह देश के उन प्रमुख शहरों में भी सम्मिलित है, जिनकी प्रति व्यक्ति आय सबसे अधिक है।

पणजिम/पणजी (15°29′ उत्तर, 73°49′ पूर्व)

पणजिम या पणजी गोवा की राजधानी है। यह भारत की सबसे छोटी एवं सबसे आनंददायक राज्य राजधानी है। यह मंडोवी नदी के दक्षिणी तट पर स्थित है।

1510 में गोवा को पुर्तगालियों ने बीजापुर के शासक यूसुफ आदिल शाह से छीन लिया तथा पणजी को उसकी राजधानी बनाया। पुर्तगाली उपनिवेश होने के कारण गोवा की सभ्यता एवं संस्कृति पर पुर्तगाल का गहरा प्रभाव पड़ा तथा इसकी झलक यहां आज भी देखी जा सकती है। संकरी घुमावदार गलियां, पुराने घर, बाहर की ओर निकले छज्जे एवं लाल ईंटों से बनी छतें इत्यादि पुर्तगाली प्रभाव के ही द्योतक हैं। इनमें पुर्तगाली स्थापत्यकला की झलक आसानी से देखी जा सकती है। पणजी के संबंध में एक दिलचस्प बात है कि यह एक छोटा शहर है, तथा इसकी भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि किसी ओर इसका विस्तार नहीं हो सकता है। इसके एक ओर एल्टिनो नामक एक पहाड़ी, दूसरी ओर अरब सागर, तीसरी ओर मंडोवी नदी एवं चौथी ओर ओरेम क्रीक स्थित है।

प्रारंभ में पणजी एक छोटा पड़ाव स्थल एवं कस्टम हाउस था, किंतु 1843 में पुराने गोवा का बंदरगाह गाद से भर गया तो पणजी का महत्व बढ़ गया। 1960 एवं 1970 के दशक में पणजी का तेजी से विस्तार हुआ।

पणजी महालक्ष्मी मंदिर के लिए भी प्रसिद्ध है।

पटना (25.6° उत्तर, 85.1° पूर्व)

आधुनिक बिहार राज्य की राजधानी पटना को प्राचीन काल में कई नामों से जाना जाता था, यथा—कुसुमपुर, पुष्पपुर, पाटलिपुत्र एवं अजीमाबाद। पटना भारत के कई प्राचीन साम्राज्यों के उत्थान एवं पतन का साक्षी है। छठी शताब्दी ईसा पूर्व से छठी शताब्दी ईस्वी तक इसका वैभव बरकरार रहा। मगध के द्वितीय शासक अजातशत्रु ने गंगा एवं सोन नदी के संगम पर स्थित पाटलिग्राम नामक स्थान पर एक छोटा दुर्ग बनवाया। यही ग्राम आगे चलकर प्रसिद्ध पाटलिपुत्र बना तथा यहीं मौर्य साम्राज्य के संस्थापक चंद्रगुप्त मौर्य एवं अशोक ने शासन किया। पटना या पाटलिपुत्र में गुप्त एवं पाल वंश के शासकों ने भी शासन किया।

मध्यकाल में, राजधानी दिल्ली स्थानांतरित हो जाने के कारण पाटलिपुत्र का महत्व समाप्त हो गया। फिर यह दिल्ली सल्तनत का एक हिस्सा बन गया। 16वीं शताब्दी में, इस पर अफगान शासक शेरशाह सूरी ने अधिकार कर लिया।

यहां सिखों का पवित्रतम धार्मिक स्थल हरमंदिर साहिब है, जिसका निर्माण पंजाब के शासक महाराजा रणजीत सिंह द्वारा कराया गया था। यहां सिखों के दसवें गुरु गोविंद सिंह का जन्म हुआ था।

औरंगजेब के पौत्र अजीम-उस-शान ने पटना का नाम बदलकर अजीमाबाद कर दिया था।

मुगल साम्राज्य के पतन के साथ ही पटना बंगाल के नवाब के नियंत्रण में आ गया। अंग्रेजों ने बंगाल के नवाब मीर कासिम को पराजित कर दिया तथा पटना पर अधिकार कर लिया।

अगम कुंआ, गोल घर, जालान म्यूजियम एवं खुदाबख्श ओरिएंटल लाइब्रेरी इत्यादि यहां के प्रमुख दर्शनीय स्थल हैं। इनके अतिरिक्त यहां सदाकत आश्रम भी है, जिसके संग्रहालय में भारत के प्रथम राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद की निजी उपयोग की वस्तुएं रखी हुई हैं।

कुम्हरार एवं बुलंदी बाग के पुरातात्विक उत्खननों से यहां 600

thejobsyogi.com

ईसा पूर्व से 600 ईस्वी काल के पांच पुरातात्विक चरण प्राप्त हुए हैं।

पट्टडकल (15.94° उत्तर, 75.81° पूर्व)

पट्टडकल, अब कर्नाटक में, एहोल तथा बदामी के मध्य में स्थित है तथा टॉलमी द्वारा पेट्रीगल नाम से संबोधित किया गया है। पट्टडकल को कालांतर में भिन्न नामों से जाना गया जैसे कि रक्तपुरा (लाल नगर) तथा पट्टडकल किसुवोलई। यहां से पुरातात्विक उत्खनन में महापाषाण काल के साक्ष्य मिले हैं।

अब एक विश्व धरोहर केंद्र, पट्टडकल सातवीं शताब्दी में चालुक्यों की नगरी थी। इसमें दस बड़े मंदिर प्रारंभिक चालुक्य वास्तुकला को दर्शाते हैं। यहां का सबसे बड़ा मंदिर वीरूपक्ष को समर्पित है। बड़े प्रांगण में बंद तथा चारों ओर से छोटे कक्षों से घिरे इस मंदिर में विशालकाय प्रवेशद्वार तथा कई अभिलेख हैं। रामायण तथा महाभारत के दृश्यों के साथ-साथ यहां पर एक तरफ हाथी तथा दूसरी तरफ भैंस के आकार जैसी सुंदर एवं आश्चर्यजनक नक्काशी की गई है। मंदिर के अग्रभाग में हरे पत्थर में 2.6 मी. ऊंचा, भव्य नंदी बनाया गया है। पापनाथ मंदिर के अंतःकक्ष की रक्षा नंदी तथा वीरभद्र द्वारा की गई है। यहां मुख्य कक्ष में 16 स्तम्भ हैं जिनमें सुंदर नक्काशी की गई है।

यहां के मंदिरों में विरूपाक्ष मंदिर, संगमेश्वर मंदिर तथा पापनाथ का मंदिर सबसे उल्लेखनीय है। इनमें भी विरूपाक्ष मंदिर सबसे आकर्षक एवं सुंदर है। इस मंदिर का निर्माण 740 ई. में विक्रमादित्य द्वितीय के समय हुआ था। मंदिर की बाहरी दीवारों पर बने स्थानों में शिव, पार्वती, नाग इत्यादि की मूर्तियां रखी हुई हैं एवं रामायण के विभिन्न दृश्यों को सुंदरता से चित्रित किया गया है।

पट्टडकल के मंदिर नागर एवं द्रविड़ शैली के बीच की शैली यानि बेसर शैली के ज्यादा निकट प्रतीत होते हैं।

यहां जैन मंदिर भी है, जो राष्ट्रकूट काल में निर्मित हुआ था। इस मंदिर से प्राप्त अभिलेख से तत्कालीन समय की सामाजिक दशा की महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है।

पावापुरी (25°05′ उत्तर, 85°32′ पूर्व)

पावापुरी या अपापुरी बिहार में पटना से 90 किमी. की दूरी पर स्थित है। पावापुरी जैन धर्म के अनुयायियों का एक महत्वपूर्ण तीर्थ स्थल है। जैन धर्म के प्रवर्तक महावीर ने यहीं महापरिनिर्वाण प्राप्त किया था तथा उन्हें यहीं दफनाया गया था। यहां झील के मध्य में सफेद संगमरमर से एक सुंदर मंदिर बनाया गया है, जिसे 'जल मंदिर' कहा जाता है। यह जैन धर्मावलंबियों के आकर्षण का एक प्रमुख केंद्र है। इस मंदिर में महावीर के चरण-चिन्ह हैं, जो काले रंग के हैं तथा इनका आकार 18 सेमी. है। ऐसी मान्यता है कि महावीर ने अपना पहला उपदेश यहीं दिया था।

यहां समवासर्ण का एक नया एवं सुंदर मंदिर भी बनाया गया है। प्रत्येक वर्ष दीपावली के दिन भक्तों का एक मेला यहां आयोजित होता है।

जैन साहित्यों में धार्मिक पावापुरी नगर को 'मध्यम पावा' के नाम से जाना जाता है। इसका कारण है कि यहां पावा नाम के तीन नगर हैं। वर्तमान समय में पावापुरी नामक इस प्राचीन नगर को पावा एवं पुरी नामक दो ग्रामों में विभाजित कर दिया गया है।

पेनुकोंडा (14.08° उत्तर, 77.59° पूर्व)

पेनुकोंडा एक छोटा शहर है, जो पुट्टापर्ती के दक्षिण पूर्व में आंध्र प्रदेश राज्य में स्थित है। यह 14वीं से 16वीं शताब्दी तक विजयनगर शासकों का एक महत्वपूर्ण एवं दुर्गीकृत स्थल था। विजयनगर साम्राज्य के पतनोपरांत यह अरविदु शासकों का भी मुख्यालय रहा। 17वीं शताब्दी में इस नगर पर कुतुबशाही वंश के शासकों ने अधिकार कर लिया। फिर यह मुगलों एवं अंत में मराठों के हाथों में चला गया।

विजयनगर शासकों द्वारा बनवाया गया पेनुकोंडा का किला अत्यंत प्रसिद्ध है। यह किला आकार में लगभग त्रिकोणीय था। इसके प्रवेश द्वार, रक्षा मीनारें एवं जीर्ण-शीर्ण सभाकक्ष तत्कालीन समय की सुंदर वास्तुकला की झलक देते हैं।

पेनुकोंडा में 'पार्श्वनाथ मंदिर' भी है, जो होयसल काल (12-13वीं शताब्दी) में निर्मित किया गया था। इस मंदिर में जैन वास्तुकला के कई दृश्य हैं। इनमें एक सर्प के सम्मुख नग्नावस्था में खड़ा एक जैन संत का चित्र सबसे सुंदर है। इसके समीप ही भगवान राम एवं भगवान शिव के जुड़वा मंदिर हैं। पार्श्वनाथ मंदिर के समीप ही सीरसा नामक मस्जिद भी है, जिसका निर्माण कुतुबशाही शासकों के काल में हुआ था। हैदरअली एवं टीपू सुल्तान द्वारा संरक्षित 'बबइया की दरगाह' भी पेनुकोंडा में है। पेनुकोंडा की ये सभी धार्मिक इमारतें विजयनगर शासकों एवं उनके उत्तराधिकारियों के धर्म-निरपेक्ष दृष्टिकोण को निर्दिष्ट करते हैं।

यहां अरविदु शासकों के समय निर्मित 'गंगामहल' भी है। यह वह समय था, जब पेनुकोंडा राजधानी नगर था।

पेशावर (34°01′ उत्तर, 71°35′ पूर्व)

पेशावर अब पाकिस्तान में है। पेशावर एक अत्यंत प्राचीन शहर है। यह इतना प्राचीन है कि इसके उद्भव का समय भी ठीक से ज्ञात नहीं है। इसकी स्थापना संभवतः गंधार के कुषाण शासकों द्वारा लगभग 2000 वर्ष पहले की गई थी। इसके उतने ही नाम प्राप्त होते हैं, जितने इसके शासक। यह कनिष्क की प्रथम राजधानी थी, जहां उसने एक मठ तथा एक विशाल स्तूप/स्मारक/मीनार का निर्माण कराया था, जो कि आने वाले यात्रियों के लिए एक आश्चर्यजनक वस्तु थी। पेशावर बौद्ध-गांधारी सभ्यता का एक महत्वपूर्ण केंद्र तथा एक प्रमुख तीर्थ स्थल था। जैसे ही विश्व मानचित्र पर बौद्ध धर्म का पतन हुआ, वैसे ही पेशावर का महत्व भी कम हो गया।

thejobsyogi.com

9वीं शताब्दी ईस्वी में यह हिंदू शाही वंश के अधीन था। बाद में महमूद गजनवी के प्रभावाधीन हो गया। कम होते महत्व के पश्चात भी 16वीं शताब्दी के अंत तक पेशावर एक महत्वपूर्ण नगर बना रहा।

पेशावर का यह नाम संस्कृत शब्द—'पुष्पपुर' से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ है—'फूलों का शहर'। यहां तक कि कुषाण काल में भी इसे 'कमल भूमि' एवं 'अनाज की भूमि' के नाम से जाना जाता था। बाबर के कई विवरणों में पेशावर के पुष्पों का उल्लेख प्राप्त होता है। जब बाबर पेशावर आया तो उसने यहां 'बेग्राम' नामक एक नगर की स्थापना की तथा 1530 में यहां के किले को पुनः निर्मित करवाया। उसके पौत्र अकबर ने आधिकारिक तौर पर इस नगर का नाम पेशावर रख दिया, जिसका अर्थ है—सीमावर्ती स्थान। इसके साथ ही पेशावर एक प्रमुख सीमावर्ती नगर एवं प्रमुख व्यापारिक पड़ाव के रूप में विकसित हुआ।

वर्तमान समय में पेशावर पाकिस्तान का एक प्रमुख औद्योगिक नगर है तथा पठानों के आतिथ्य-सत्कार के लिए जाना जाता है।

पिकलिहाल (15°57′ उत्तर, 76°26′ पूर्व)

कर्नाटक के रायचूर जिले में स्थित पिकलिहाल प्रागैतिहासिक काल से संबंद्ध शैल कला का एक महत्वपूर्ण स्थल है। पिकलिहाल में प्राप्त चित्रों में जानवर जैसे कि सांड, हथियार लिए हुए मानव आकृतियां, सफेद पृष्ठभूमि पर लाल रंग से चित्रित शिकार से संबंधित चित्रकारी आदि हैं। इसके अतिरिक्त यहां नक्काशी भी की गई है। शैल चित्रों में पशुओं के चित्रण की बहलुता से प्रतीत होता है कि ये कृतियां नवपाषाण काल से संबंधित होंगी।

पिपरहवा (27.44° उत्तर, 83.12° पूर्व)

पिपरहवा एक गांव है, जो उत्तर प्रदेश के सिद्धार्थनगर जिले में स्थित है। इसकी पहचान कपिलवस्तु के रूप में की जाती है, जो शाक्यों की राजधानी थी। गौतम बुद्ध इसी कुल से संबंधित थे। बुद्ध ने यहीं अपना बचपन व्यतीत किया था, तथा यहीं किशोरावस्था में उन्हें मानवीय दुखों का भान हुआ, जिसके कारण उन्हें सांसारिक जीवन से विरक्ति हो गई तथा उन्होंने भिक्षु जीवन अपना लिया। यह प्राचीन शहर, जहां से बौद्ध धर्म प्रारंभ हुआ, अब नष्ट हो चुका है। किंतु अभी भी यहां कई स्तूपों के ध्वंशावशेष विद्यमान हैं। यहां के मुख्य स्तूप से एक प्रस्तर की मंजूषा प्राप्त हुई है, जिसमें कुछ वस्तुएं रखी हैं। ऐसा विश्वास है कि ये वस्तुएं भगवान बुद्ध की ही हैं।

1897-98 में यहां से एक अस्थि-पात्र भी प्राप्त हुआ था। 1971 में किए गए उत्खनन में यहां से कई अन्य ऐसी वस्तुएं प्राप्त हुईं, जिनसे पूर्णरूपेण यह सिद्ध हो गया कि यह स्थान ही प्राचीन काल का कपिलवस्तु था। यहां से तत्कालीन समय के कुछ सिक्के भी प्राप्त हुए हैं।

ऐसा अनुमान है कि कपिलवस्तु/पिपरहवा पांचवीं शताब्दी ईसा पूर्व से तीसरी-चौथी शताब्दी तक अस्तित्वमान था। इसके पश्चात यह नष्ट हो गया, क्योंकि सातवीं शताब्दी में जब ह्वेनसांग ने इस स्थान की यात्रा की थी तो इसे नष्ट स्थिति में पाया था।

पितलखोड़ा (20.31° उत्तर, 74.99° पूर्व)

महाराष्ट्र के औरंगाबाद जिले में स्थित पितलखोड़ा एक प्रारंभिक बौद्ध स्थल है, जहां प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व के स्थापत्य अवशेष एवं पांचवीं सदी ईस्वी की चित्रकला के अवशेष पाए गए हैं। यहां से ऐतिहासिक महत्व की कई वस्तुएं प्राप्त हुई हैं, जिनमें एक यक्ष की सुंदर प्रतिमा सर्वाधिक उल्लेखनीय है।

पितलखोड़ा की गुफाएं एलोरा उत्तर पश्चिम में लगभग 40 किमी. की दूरी पर स्थित हैं। इन गुफाओं में कई विहार हैं, जो हीनयान बौद्ध धर्म से संबंधित हैं। पितलखोड़ा से प्राप्त वस्तुओं में—पशुओं की प्रतिकृतियां, चैत्यों की प्रतिकृति, हाथी की आकृतियां, संरक्षकों एवं यक्ष की मूर्तियां प्रमुख हैं। यद्यपि पितलखोड़ा के चैत्य विनष्ट हो चुके हैं। इन चैत्यों के कुछ स्तंभ ही शेष हैं, जो जीर्ण-शीर्ण स्थिति में हैं तथा पांचवीं सदी ईस्वी में निर्मित माने जाते हैं।

चैत्यों से जुड़े हुए विहार प्रारंभिक विहारों से रचना में थोड़ी भिन्नता दर्शाते हैं। गुफाओं की दीवारों एवं गर्भगृहों में सुंदर नक्काशी से तत्कालीन समाज की समृद्धि का आभास होता है।

यहां तीन छोटी गुफाएं भी हैं, जिनके अंदर स्तूप बने हुए हैं। इनमें एक छोटा चैत्य गृह भी है। लंबाई में ये मानव की ऊंचाई से लगभग दुगने हैं। स्पष्टतया ये एक ही चट्टान को काट कर नहीं बनाए गए हैं, बल्कि इनके लिए बनाए गए आलों में इन्हें लाया गया है।

पांडिचेरी (वर्तमान में पुदुचेरी) (11.93° उत्तर, 79.78° पूर्व)

वर्तमान समय में पुदुचेरी भारत का एक केंद्र-शासित प्रदेश है। पुदुचेरी का इतिहास रोमन काल तक प्राचीन है। इसकी पुष्टि यहां के पुरातात्विक उत्खनन से प्राप्त रोमन बस्तियों से होती है। पांडिचेरी के अरिकामेडु नामक स्थल से एक प्राचीन बंदरगाह की विद्यमानता के साक्ष्य मिले हैं, जहां से रोमन साम्राज्य के साथ व्यापार किया जाता था। बाद के समय में, पांडिचेरी पल्लव एवं चोल साम्राज्य का हिस्सा बन गया। यहां के बंदरगाह के संबंध में यद्यपि ज्यादा जानकारी का अभाव है किंतु यहां से चतुर्थ-आठवीं शताब्दी ईस्वी काल के सिक्के की प्राप्ति से इसके एक प्रसिद्ध बंदरगाह नगर होने की पुष्टि हो जाती है।

वर्तमान पुदुचेरी का इतिहास 1674 से प्रारंभ होता है, जब यहां फ्रांसीसियों का आगमन हुआ। फ्रांसीसियों ने अपना एक प्रमुख व्यापारिक केंद्र बनाया। फ्रैंको मार्टिन वह पहला प्रशासक था, जिसके शासनकाल में पांडिचेरी एक नगर के रूप में विकसित हुआ। 1742 ई. में, जे.एफ. डूप्ले फ्रांसीसी-भारत का गवर्नर बना। डूप्ले का सपना

thejobsyogi.com

भारत में फ्रांसीसी साम्राज्य स्थापित करने का था। फ्रांसीसियों एवं अंग्रेजों के युद्ध का परिणाम यह हुआ कि 1761 में अंग्रेजों ने पांडिचेरी को नष्ट कर दिया। 1765 में, पांडिचेरी फ्रांसीसियों को पुनः प्राप्त हो गया तथा उन्होंने पांडिचेरी को पुनः बसाया। इसके पश्चात कुछ समय को छोड़कर पांडिचेरी सदैव फ्रांसीसियों के हाथों में रहा तथा वहां शांति बनी रही।

1947 में ब्रिटेन से स्वतंत्रता मिलने के उपरांत भारत ने पांडिचेरी को प्राप्त करने के प्रयास प्रारंभ कर दिए। 1962 में यह भारतीय गणतंत्र का हिस्सा बन गया। वर्तमान में करिकाल, माहे एवं यनम के साथ पुदुचेरी भारत का एक प्रमुख संघ-शासित प्रदेश है।

पुलिकट (13.41° उत्तर, 80.31° पूर्व)

पुलिकट तमिलनाडु में चेन्नई के समीप तिरुवल्लूर जिले में स्थित एक नगर है। डचों ने 1610 ई. में यहां एक दुर्ग बनाया तथा लंबे समय तक यह कोरोमंडल तट पर डचों का मुख्य व्यापारिक केंद्र बना रहा। यद्यपि बाद में पुलिकट पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया, किंतु यह 1825 तक ब्रिटिश भारतीय साम्राज्य में सम्मिलित नहीं हो सका। पुलिकट का यह नाम यहां स्थित पुलिकट झील के नाम पर पड़ा। यह एक उथला जलाशय है, जिसका विस्तार तट के साथ-साथ 37 मी. लम्बा है।

यहीं समुद्र तट पर श्री हरिकोटा नामक प्रसिद्ध अंतरिक्ष केंद्र स्थित है।

पुणे (18°31′ उत्तर, 73°51′ पूर्व)

महाराष्ट्र में स्थित पुणे अथवा पूना को राज्य की सांस्कृतिक राजधानी माना जा सकता है। पुणे के निकट स्थित शिवनेर में ही शिवाजी का जन्म हुआ था। शिवाजी ने जब मुगल सम्राट औरंगजेब के गवर्नर शाइस्ता खान को पुणे के समीप पराजित किया तो पुणे सभी की नजर में आ गया।

आगे चलकर पूना पेशवा की शक्ति का केंद्र बन गया। पेशवा जैसे—बालाजी विश्वनाथ, बाजीराव प्रथम एवं बालाजी बाजीराव पूना से निकटता से संबंधित थे। पेशवाओं ने यहां कई सुंदर मंदिरों, बागों एवं शैक्षणिक संस्थाओं का निर्माण करवाया।

भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के समय बाल गंगाधर तिलक ने पूना में ही सर्वप्रथम 'स्वदेशी' की अवधारणा का प्रतिपादन किया था। तथा शीघ्र ही पूना पश्चिमी भारत में राष्ट्रवादियों की गतिविधियों का सबसे मुख्य केंद्र बन गया।

प्रसिद्ध आगा खां महल पूना में ही है, जहां महात्मा गांधी को बंदी बनाकर रखा गया था तथा यहीं कस्तूरबा गांधी की समाधि है। यहां कई अन्य प्रसिद्ध स्थल भी हैं, जैसे—1867 में डेविड सैसन द्वारा निर्मित यहूदी सिनेगॉग 'लाल देवल', शनिवार वाड़ा' पेशवा का एक प्रमुख महल, पाषाण को काटकर बनाया गया 'पंचेश्वर मंदिर'। शिवाजी का प्रसिद्ध 'सिंह गढ़ किला' भी पूना के समीप ही स्थित है। पूना के निकट स्थित जेजुरी 'खांदोबा मंदिर' के लिए प्रसिद्ध है।

पुरंदर (18°17′ उत्तर, 73°59′ पूर्व)

महाराष्ट्र में स्थित पुरंदर में बीजापुर के सुल्तान के अधीन एक प्रसिद्ध एवं अभेद्य दुर्ग था, जिसे शिवाजी ने 1648 ई. में जीत लिया था। शिवाजी, बीजापुर के सुल्तान के सेनापति शाहजी भोंसले के पुत्र थे। बाद में पुरंदर के किले पर मुगलों ने अधिकार कर लिया तथा यहीं 1665 ई. में शिवाजी एवं मुगल सेनापति जयसिंह के मध्य पुरंदर की संधि संपन्न हुई थी।

पुरी/जगन्नाथपुरी (19°48′ उत्तर, 85°49′ पूर्व)

पुरी या जगन्नाथपुरी हिन्दुओं का एक प्रसिद्ध तीर्थस्थल है, जो उड़ीसा में बंगाल की खाड़ी के तट पर स्थित है। यहां भगवान जगन्नाथ या पुरुषोत्तम का प्रसिद्ध मंदिर है, जिसका अर्थ है—सम्पूर्ण सृष्टि के स्वामी या सृष्टि के सर्वोच्च देवता। यह भारत के चार प्रसिद्ध तीर्थ धामों में से एक है, जबकि तीन अन्य धाम हैं—रामेश्वर, द्वारका एवं बद्रीनाथ। यहां आयोजित होने वाले विभिन्न उत्सवों में वार्षिक रथयात्रा महोत्सव सर्वाधिक प्रसिद्ध है। इस महोत्सव में देश-विदेश से लाखों श्रद्धालु भाग लेने आते हैं

यहां स्थित विभिन्न मंदिर 12वीं सदी में निर्मित होने प्रारंभ हुए, जब गंग वंश के संस्थापक चोडगंग देव ने इन मंदिरों का निर्माण प्रारंभ करवाया। इन मंदिरों का निर्माण कार्य अनंगभीम देव के समय संपन्न हुआ।

यद्यपि ऐतिहासिक दस्तावेजों से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि यहां मंदिर प्राचीन काल से ही विद्यमान थे, परंतु इनका स्वरूप ऐसा नहीं था। इन मंदिरों पर कई अफगानी एवं मुस्लिम आक्रांताओं ने आक्रमण किए तथा कई बार इन्हें नुकसान पहुंचाया। यद्यपि भक्तों की श्रद्धा कम नहीं हुई तथा वे निरंतर यहां पहुंचते रहे।

अद्वैतवाद के प्रतिपादक आदिशंकर ने यहां अपनी एक पीठ भी स्थापित की।

पुष्कलावती (34°09′ उत्तर, 71°44′ पूर्व)

वर्तमान समय में चरसद्दा नामक नगर के रूप में जाना जाने वाला प्राचीन पुष्कलावती नगर स्वात एवं काबुल नदियों के संगम पर स्थित था। पुष्कलावती, गांधार की प्रारंभिक राजधानी थी, जो सिंधु नदी के पश्चिम में स्थित थी। चतुर्थ सहस्राब्दी ईसा पूर्व में सिकंदर के भारत आक्रमण के समय हस्ती नामक एक भारतीय राजा यहां शासन कर रहा था। तीस दिनों के प्रतिरोध के उपरांत सिकंदर ने इस नगर पर अधिकार कर लिया तथा ऐसा माना जाता है कि इसे उसने तक्षशिला के शासक को दे दिया था। माउज (75 ईसा पूर्व) के शासनकाल के दौरान यह शकों के अधीन आ गया। इतिहासकार तारानाथ के मतानुसार, पुष्कलावती वैभव की देवी 'लक्ष्मी' से संबंधित था।

thejobsyogi.com

पुष्कर (26.5° उत्तर, 74.55° पूर्व)

राजस्थान में अजमेर शहर से लगभग 11 किमी. दूर स्थित पुष्कर के संबंध में ऐसी मान्यता है कि यह विश्व का एकमात्र ऐसा स्थल है, जहां ब्रह्माजी का मंदिर है। गाथाओं के अनुसार, यह मंदिर उस स्थान पर निर्मित है, जहां भगवान ब्रह्मा ने एक कमल का पुष्प फेंका था। नाग पर्वत पुष्कर को अजमेर से पृथक करता है। यहां एक प्रसिद्ध सरोवर भी है, जो 'पुष्कर झील' के नाम से प्रसिद्ध है। प्रति वर्ष लाखों श्रद्धालु पुष्कर आकर इस पवित्र सरोवर में स्नान करते हैं। चीनी यात्री फाह्यान ने जब पुष्कर की यात्रा की थी तो उसने भी यहां हजारों श्रद्धालुओं की भीड़ देखी थी।

यहां ब्रह्मा मंदिर के बगल में स्थित पहाड़ी में 'सावित्री मंदिर' है, जो ब्रह्माजी की पत्नी को समर्पित है। इस मंदिर का समीपवर्ती दृश्य अत्यंत मनोहारी एवं चित्ताकर्षक है। यहां की एक अन्य प्रसिद्ध इमारत 'मानमहल' है, जिसका निर्माण अजमेर के राजा मानसिंह प्रथम ने कराया था। यह महल पुष्कर झील के तट पर स्थित है।

पुष्कर में प्रत्येक वर्ष कार्तिक पूर्णिमा (अक्टूबर-नवंबर) के अवसर पर एक विशाल मेले का आयोजन किया जाता है। यह मेला विश्व का सबसे बड़ा ऊंट बाजार भी होता है। यहां बड़ी मात्रा में अन्य पशुओं को भी लाया जाता है एवं उनकी खरीद-फरोख्त की जाती है। पशुओं की नीलामी और ऊंट दौड़ यहां के मुख्य आकर्षण हैं।

क्विलोन/कोल्लम (8.88° उत्तर, 76.60° पूर्व)

क्विलोन अरब सागर के तट पर स्थित एक प्राचीन तटीय नगर है। यह केरल का प्रमुख व्यापारिक केंद्र भी है। यह अष्टामुदी झील के किनारे बसा हुआ है। इस शहर का कई बार नाम परिवर्तन हुआ। इसे देसिंगनाडू, कोल्लम एवं क्विलोन इत्यादि विभिन्न नामों से जाना गया। यह प्राचीन काल (रोम से लेकर फोनीशिया तक) से ही वाणिज्यिक महत्व का एक प्रमुख केंद्र रहा।

इब्नबतूता ने इसे अपनी भारत यात्रा के दौरान देखे गए पांच प्रमुख बंदरगाहों में से एक बताया है। 14वीं शताब्दी में क्वीलोन के शासकों के चीन के शासकों के साथ कूटनीतिक संबंध थे तथा उन्होंने आपस में राजनयिक प्रतिनिधिमंडलों का आदान-प्रदान भी किया था। इस काल में क्विलोन में एक चीनी बस्ती भी थी, जो अत्यधिक समृद्ध थी। वेनिस के यात्री मार्कोपोलो ने 1275 में इस नगर की यात्रा की थी। वह यहां चीनी उच्चाधिकारी की हैसियत से आया था। 16वीं शताब्दी के प्रारंभ से ही यहां पुर्तगाली, डच एवं अंग्रेज व्यापारी आने लगे थे तथा सभी ने क्विलोन के व्यापारिक महत्व के कारण इस पर प्रभुत्व स्थापित करने का प्रयास किया। 18वीं शताब्दी में ट्रावणकोर एवं अंग्रेजों के मध्य संपन्न हुई एक संधि के अंतर्गत अंग्रेजों ने यहां एक सैन्य छावनी भी स्थापित की।

thejobsyogi.com

R

रायगढ़ (18°39′ उत्तर, 72°52′ पूर्व)

रायगढ़ शहर महाराष्ट्र के रायगढ़ जिले में स्थित है। इसे दुर्गदिश्वर या किलों के भगवान के नाम से भी जाना जाता है। इसका कारण यह है कि यहां का किला अभेद्य है।

शिवाजी, जो अपने गुरु के मंत्र 'हिंद स्वराज' से राष्ट्रवादी भावनाओं से भर गए थे, उन्होंने रायगढ़ के किले को अपनी राजधानी बनाया। इस किले का वास्तविक नाम रायगिरी था। 6 जून, 1674 ई. को शिवाजी ने यहीं अपना राज्याभिषेक कराया था।

14वीं शताब्दी में यह किला विजयनगर के शासकों के अधीन था। बाद में अहमदनगर निजामशाही वंश के नियंत्रण में आ गया। तदोपरांत इस पर बीजापुर के शासकों का नियंत्रण हो गया, जिनसे इसे शिवाजी ने छीन लिया।

6 जून, 1974 को रायगढ़ में शिवाजी के राज्याभिषेक की तीन सौवीं वर्षगांठ के अवसर पर तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने यहां शिवाजी की नवस्थापित प्रतिमा का अनावरण किया था।

यहां शिवाजी का मकबरा एवं प्रिय कुत्ते वाघ्या की कब्र भी है। यहीं शिवाजी की माता रानी जीजाबाई की समाधि भी है।

राजगीर (25.03° उत्तर, 85.42° पूर्व)

वर्तमान समय में बिहार राज्य में स्थित राजगीर पांचवीं शताब्दी ईसा पूर्व (460-440बीसी) में मगध साम्राज्य की राजधानी थी। यह हिन्दुओं, बौद्धों एवं जैनों का एक प्रसिद्ध धार्मिक केंद्र भी है। यह भारतीय इतिहास की प्रथम सात राजधानी के रूप में भी प्रसिद्ध है। राजगीर में महात्मा बुद्ध ने कुछ प्रसिद्ध धार्मिक उपदेश दिए थे तथा मगध नरेश बिम्बिसार को बौद्ध धर्म में दीक्षित किया था। रामायण एवं महाभारत में भी राजगीर का उल्लेख प्राप्त होता है। यहीं की सप्तपर्णि गुफा में प्रथम बौद्ध संगिती आयोजित की गई थी। राजगीर की एक पहाड़ी में गर्म जल का एक झरना भी है, जो हिन्दू धर्म के श्रद्धालुओं की श्रद्धा का केंद्र है। चीनी यात्री फाह्यान ने भी राजगीर की यात्रा की थी। यहां जापानियों द्वारा बनवाया गया, 'विश्व शांति स्तूप' भी स्थित है।

महाभारत के अनुसार, पांडवों का एक प्रमुख प्रतिद्वंद्वी जरासंघ यहीं का शासक था, बाद में जिसकी भीम ने हत्या कर दी थी।

राजगीर में बहुत से महत्वपूर्ण स्थल हैं। इनमें प्रमुख हैंः वेणुवन (बांस का जंगल, जिसे बिम्बिसार ने भगवान बुद्ध को दान में दे दिया था); अमरवन या जीवक आम बाग (राजकीय वैद्य जीवक का औषधालय); अजातशत्रु का किला; स्वर्ण भंडार (दो अनुपम गुहा कक्ष जिन्हें एक ही विशाल चट्टान काट कर बनाया गया तथा जिनमें भित्ति पर उकेरी हुई शंख लिपि है, जिसे अब तक पढ़ा नहीं जा सका है) एवं कुंडलपुर। कुंडलपुर के संबंध में जैनों की दिगम्बर शाखा की मान्यता है कि भगवान महावीर का जन्म यहीं हुआ था।

राजिम (20°27′ उत्तर, 81°52′ पूर्व)

राजिम महानदी के दाहिने तट पर वर्तमान छत्तीसगढ़ राज्य की राजधानी रायपुर से दक्षिण-पश्चिम दिशा में 40 किमी. की दूरी पर स्थित है। यह पायरी, महानदी एवं सोन्धु नामक तीन पवित्र नदियों के संगम पर स्थित है। इस स्थल को छत्तीसगढ़ का प्रयाग कहा जाता है। ऐसी मान्यता है कि राजिम का प्राचीन नाम 'कमल क्षेत्र' या 'पद्मपुर' था। छठी शताब्दी ईस्वी के मध्य में, यहां तीवर नामक एक शासक का शासन था, जो स्वयं को कोशल या दक्षिण कोशल का स्वामी कहता था। बाद के एक अभिलेख से प्राप्त एक विवरण के अनुसार, यहां नल शासक विलासतुंग ने एक भव्य विष्णु मंदिर का निर्माण कराया था। इससे इस तथ्य का संकेत मिलता है कि यह स्थान वैष्णववाद का एक प्रमुख केंद्र था। यहां कई अन्य मंदिर, यथा—कालेश्वर महादेव मंदिर, राजीव लोचन तथा राजेश्वर मंदिर इत्यादि भी हैं। इन मंदिरों में कालेश्वर महादेव मंदिर एक द्वीप समूह पर स्थित है, जो महानदी एवं पायरी नदियों के संगम से निर्मित होता है। प्रति वर्ष माघ पूर्णिमा के अवसर पर एक माह लंबा मेला भी आयोजित किया जाता है।

राखीगढ़ी (लगभग 29° उत्तर, 76° पूर्व)

राखीगढ़ी सिंधु घाटी सभ्यता का स्थल है जिसका उत्खनन हरियाणा के हिसार में किया गया। यह दिल्ली से लगभग 160 किमी. दूर स्थित है। जेन मेकिन्टोश के अनुसार, राखीगढ़ी प्रागैतिहासिक नदी दृष्टद्वीति की घाटी में स्थित है। यहां पर पहली बार उत्खनन 1960 के दशक में हुआ था। वर्ष 2014 में, 1997 से 2000 ई. के बीच हुए उत्खननों के 6 रेडियोकार्बन तिथि निर्धारणों को प्रकाशित किया गया। पुरातत्वविद् अमरेन्द्रनाथ के अनुसार ये तीन कालों—पूर्व गठनात्मक, प्रारम्भिक हड़प्पा तथा परिपक्व हड़प्पा—से संबंधित है।

हड़प्पा स्थल पर जनवरी 2014 में दो और टीलों की खोज के पश्चात् पुरातत्वविदों ने इसे सबसे बड़ा हड़प्पा स्थल मानना आरम्भ कर दिया है। अभी तक विशेषज्ञों का मानना था कि भारत, पाकिस्तान

thejobsyogi.com

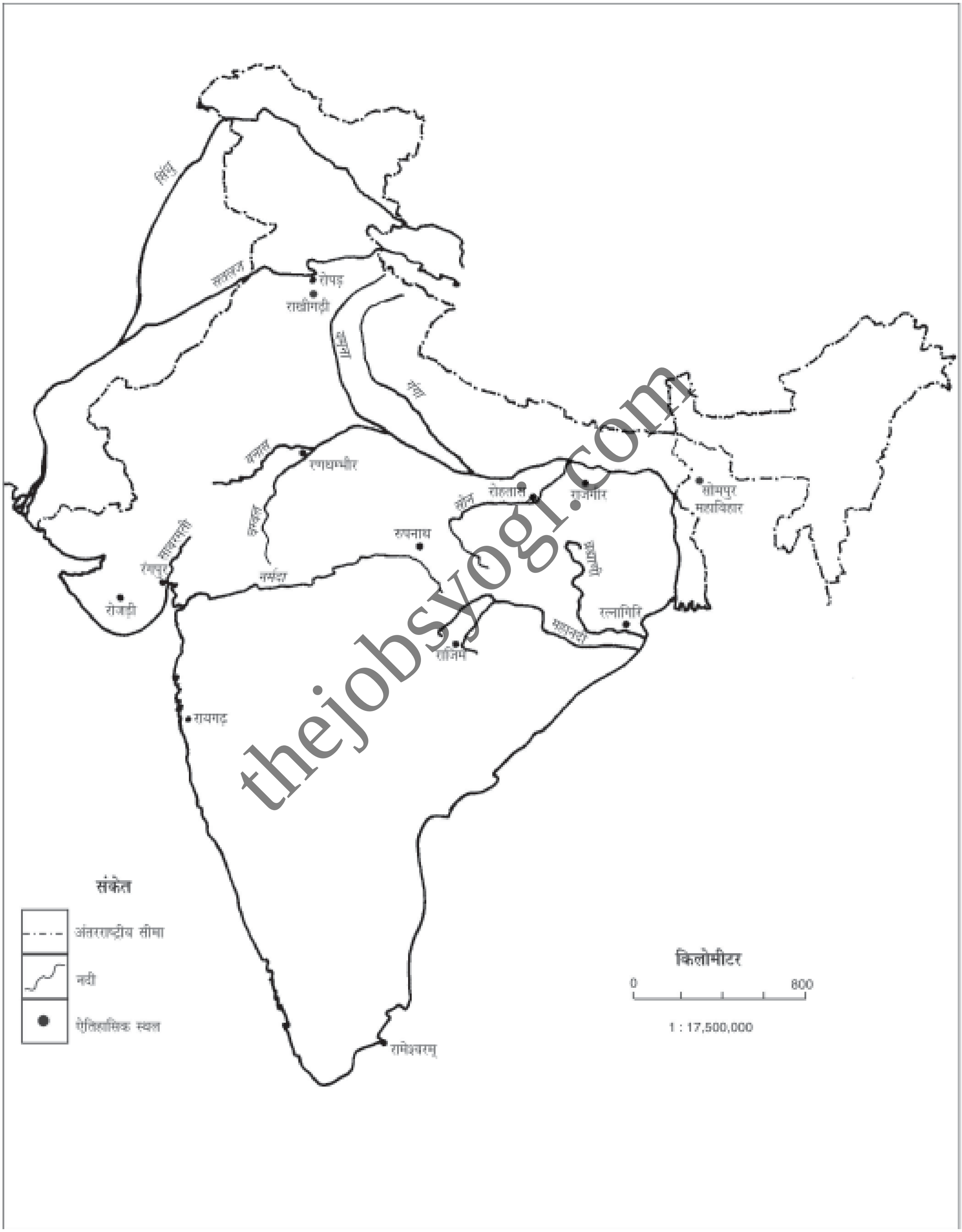

thejobsyogi.com

तथा अफगानिस्तान में मिले लगभग 2000 हड़प्पा स्थलों में पाकिस्तान में स्थित मोहनजोदड़ो सबसे बड़ा स्थल था। हाल ही में मिले दो टीले राखीगढ़ी में पहले से ही खोजे गए सात टीलों के अतिरिक्त हैं। पुरातत्वविदों के अनुसार, राखीगढ़ी के अध्ययन से इस बात को बल मिलता है कि हड़प्पा सभ्यता का आरम्भ हरियाणा के घग्गर बेसिन में हुआ एवं यहां से ये धीरे-धीरे अन्य स्थानों पर फैली। यदि इस तथ्य की पुष्टि होती है तो यह जानना रोचक होगा कि इस सभ्यता की उत्पत्ति भारत में घग्गर बेसिन में हुई और यहां से ये सिंधु घाटी की ओर फैली। (हाल ही में कम से कम 5 ऐसे हड़प्पा स्थलों का उत्खनन हुआ है जहां से संकेत मिले हैं कि प्रारम्भिक हड़प्पा अवस्था 5000 ई.पू. भी जा सकती है। ये पांच स्थल हैं—कुनल, भिराना, फरमाना, गिरवाड़ तथा मिताथल।

पक्की सड़कें, जल-निकास व्यवस्था, वर्षा जल संग्रह, भंडारण व्यवस्था, मिट्टी की ईंटें, मूर्ति उत्पादन, कांसे तथा मूल्यवान धातुओं पर की गई कारीगरी के साक्ष्य मिले हैं। गहने जिनमें टेराकोटा की चूड़ियां, शंख, सोने व अर्द्ध-मूल्यवान पत्थर आदि भी मिले हैं। सोने व चांदी द्वारा अलंकृत एक कांसे का बर्तन भी प्राप्त हुआ है। एक सोने का ढलाईघर और उसके समीप लगभग 3000 बिना पॉलिश किए हुए अर्द्ध-मूल्यवान पत्थर, इन पत्थरों को पॉलिश करने वाले औजार व साथ में एक भट्टी भी यहां मिली है। अग्निवेदियां एवं मेहराबदार संरचनाओं के भी साक्ष्य मिले हैं। शिकार करने के औजार जैसे तांबे के कुंदे व मछली पकड़ने के हुक भी यहां मिले हैं। विभिन्न खिलौने जैसे छोटे पहिए, छोटे ढक्कन, लटकने वाली गेंदे, जानवरों की आकृतियां आदि मिलने से पता चलता है कि खिलौनों का उपयोग यहां किया जाता था। उत्खनन में गहनें, मुहरें तथा चकमक पत्थर के तौलने के बाट मिलने से संकेत मिलता है कि यहां काफी फलता-फूलता व्यापार था। इस स्थल से 'हाकरा मृदभांड' के काफी निक्षेप मिले हैं जो सिंधु घाटी की आरम्भिक अवस्थाओं एवं सरस्वती नदी के सूखने के पश्चात् की बस्तियों की विशेषता थी। परिपक्व हड़प्पाकालीन चरण (2600 ई.पू. से 2000 ई.पू.) से संबंधित एक अन्नागार भी मिला है।

एक कब्रगाह में 11 कंकाल मिले हैं जिनके सर उत्तर दिशा की ओर हैं। इन कंकालों की खोपड़ियों के पास रोजमर्रा काम में आने वाले बर्तन मिले हैं। वर्ष 2015 में यहां से कुछ कंकालों को उत्खनन द्वारा निकाला गया। चूंकि यहां पर उत्खनन बेहद वैज्ञानिक तरीके से किया गया है जिससे कंकालों को कोई क्षति न पहुंचे व न ही वे संदूषित हों, अतः पुरातत्वविदों का यह मानना है कि इन कंकालों व इनके डीएनए का आधुनिक तकनीक की सहायता से अध्ययन कर यह निर्धारण करना संभव होगा कि हड़प्पा के लोग 4500 वर्ष पहले कैसे दिखते थे।

राखीगढ़ी के हड़प्पा स्थल का अधिकांश भाग वर्तमान गांव के नीचे दबा है और इसके ऊपर सैकड़ों मकान निर्मित हो गए हैं।

रामेश्वरम् (9.28° उत्तर, 79.31° पूर्व)

तमिलनाडु में स्थित रामेश्वरम् को 'दक्षिण की काशी' के नाम से भी जाना जाता है। यह वही स्थान है, जहां भगवान राम ने भगवान शंकर की उपासना की थी, फलतः यह शैव एवं वैष्णव दोनों धर्म के अनुयायियों का एक प्रमुख धार्मिक स्थल है। नगर के मध्य में प्रसिद्ध 'रामनाथस्वामी मंदिर' अवस्थित है। यह दक्षिण भारत के सर्वाधिक प्रसिद्ध मंदिरों में से एक है। रामेश्वर मन्नार की खाड़ी में एक द्वीप पर स्थित है, जो मुख्य भूमि पर स्थित मंडपम नामक स्थान से, रेल एवं भारतीय अभियांत्रिकी के एक अद्भुत नमूने 'इंदिरा गांधी सेतु' द्वारा जुड़ा हुआ है। रामनाथस्वामी मंदिर अपने भव्य एवं 1,220 मी. लंबे बरामदे के लिए प्रसिद्ध है। इसमें सुंदर संगमरमर के स्तंभ हैं। रामेश्वर की यात्रा करने वाले पर्यटक एवं तीर्थयात्री 'अग्नितीर्थम' के पवित्र जल में स्नान करना नहीं भूलते। यह मंदिर के समीप ही अत्यंत सुंदर एवं शांत सरोवरनुमा स्थल है। रामनाथस्वामी मंदिर का निर्माण चोलों ने करवाया था किंतु इस मंदिर के सबसे मुख्य भागों का निर्माण नायकों (16वीं-17वीं शताब्दी) के समय हुआ। यह मंदिर द्रविड़ स्थापत्यकला का एक सुंदर उदाहरण है। इस मंदिर का बरामदा या प्रदक्षिणापथ भारत के मंदिरों का सबसे लंबा प्रदक्षिणा पथ है। रामेश्वरम् में अत्यंत मनोहारी समुद्री तट भी हैं, जो बरबस ही पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं। अलाउद्दीन खिलजी के सेनापति मलिक काफूर ने यहां एक मंदिर का निर्माण भी कराया था। रामेश्वर से लगभग 21 किमी. दूर ऐरावदी नामक स्थल स्थित है, जो इब्राहीम सैय्यद औलिया के मकबरे के लिए प्रसिद्ध है।

रंगपुर (22°26′ उत्तर, 71°55′ पूर्व)

सौराष्ट्र क्षेत्र में स्थित रंगपुर नामक स्थल सिंधु सभ्यता का भारत में स्थित एक महत्वपूर्ण स्थल था। यहां से प्राप्त ऐतिहासिक महत्व की वस्तुओं में—तांबे की कुल्हाड़ी, स्टीयेटाइट के मनके, कार्नेलियन के मनके, बड़ी संख्या में मृदभांड एवं कई अन्य वस्तुएं सम्मिलित हैं। रंगपुर के उत्खनन से प्राप्त नालियां बिल्कुल हड़प्पा के समान हैं। ऐसा माना जाता हैं कि रंगपुर के उत्खनन से हड़प्पा संस्कृति एवं छठी शताब्दी ईसा पूर्व के बुद्ध काल के बीच जो अंतराल था, वह समाप्त हो गया। मोहनजोदड़ो से भिन्न रंगपुर की हड़प्पा संस्कृति, उत्तरवर्ती हड़प्पा संस्कृति में समाहित हो गई थी। जहां इस सभ्यता का अंत यकायक हो गया था।

रणथम्भौर (26°1′ उत्तर, 76°27′ पूर्व)

रणथम्भौर का प्रसिद्ध एवं ऐतिहासिक किला, रणथम्भौर के वनों के मध्य पहाड़ी के शीर्ष पर स्थित है। यह पहाड़ी समीप स्थित अरावली एवं विन्ध्य पर्वत श्रृंखलाओं से संबंधित है। यह विशाल किला, भारत के सबसे प्राचीन किलों में से एक है तथा ऐसी मान्यता है कि इसका निर्माण एक चौहान शासक ने 944 ईस्वी में कराया था। किले का हम्मीर दरबार अत्यंत भव्य है। किले में स्थित हनुमान मंदिर में लंगूरों को बड़ी संख्या में देखा जा सकता है। ऐसा माना जाता है कि यह किला देश के सबसे दुर्गम किलों में से एक है। कई महान शासकों यथा—अलाउद्दीन खिलजी, कुतुबुद्दीन, फिरोज तुलगक, गुजरात के बहादुर शाह इत्यादि के आक्रमणों का इस किले ने सफलतापूर्वक प्रतिरोध किया। इस किले के सबसे प्रसिद्ध शासक

thejobsyogi.com

राव हम्मीर थे, जिन्होंने 11वीं शताब्दी में शासन किया। कालांतर में यह किला अकबर के नियंत्रण में आ गया। 17वीं शताब्दी में मुगलों ने इस किले को उपहारस्वरूप जयपुर के शासकों को भेंट कर दिया।

इस किले में कई जलाशय, मंदिर एवं मस्जिद हैं। किले की आंतरिक सज्जा अत्यंत दर्शनीय है। इस किले के निर्माण में विज्ञान के जिन नियमों का पालन किया गया है, वे आज के समय के लिए भी अतुलनीय हैं।

इस किले के चारों ओर स्थित जंगल, अब रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान में परिवर्तित हो गया है।

रत्नागिरि/पुष्पागिरि (20.64° उत्तर, 86.33° पूर्व)

रत्नागिरि भुवनेश्वर से लगभग 90 किमी. दूर ओडिशा में स्थित है। चीनी यात्री ह्वेनसांग के अनुसार यहां एक प्रसिद्ध बौद्ध विश्वविद्यालय स्थित था, जिसे 'पुष्पगिरी' के नाम से जाना जाता था। बौद्ध विहारों के ध्वंसावशेष, प्रस्तर स्तंभ एवं बुद्ध की मूर्तियों इत्यादि की प्राप्ति से यह तथ्य पुष्ट होता है कि यह प्राचीन काल में एक समृद्ध बौद्ध स्थल था। यहां दो विशाल बौद्ध मठ भी थे, जो छठी शताब्दी ईस्वी से 12वीं शताब्दी ईस्वी तक फलते-फूलते रहे। उत्खननों से यहां पुरातात्विक महत्व की अनेक वस्तुएं पाई गई हैं। इसमें सम्मिलित हैं—बुद्ध के विभिन्न अवतारों की बड़ी संख्या में प्रस्तर प्रतिमाएं, लोहे की बनी वस्तुएं एवं पत्थर के बने चक्की के पाट। कांसे की कई मूर्तियों एवं अन्य वस्तुओं की प्राप्ति से यह अनुमान लगाया गया है कि रत्नागिरि कांस्य निर्माण का एक प्रमुख केंद्र था। यहां से सेलखड़ी की बनी कई मुहरें एवं पकी हुई ईंटों से बनी कई वस्तुएं मिली हैं। टेराकोटा की इन वस्तुओं की प्राप्ति महत्वपूर्ण है। इनमें से सर्वाधिक महत्वपूर्ण वस्तु ख्याति प्राप्त श्री रत्नागिरि-महाविहार-आर्य-भिक्षु संघस्य के साथ टैराकोटा की मुहरें मिली हैं। यह भी सिद्ध हो चुका है कि नालंदा के समान रत्नागिरि भी बौद्ध शिक्षा का एक प्रसिद्ध केंद्र था, जो पूरे विश्व से हजारों छात्रों को अध्ययन हेतु यहां आकर्षित करता था।

यहां से एक विहार के सुंदर उत्कीर्ण द्वारों एवं अत्यंत सुघड़ बुद्ध की प्रतिमा की प्राप्ति से ये ऐसा अनुमान लगाया गया है रत्नागिरी उत्तरवर्ती गुप्तकाल में बौद्ध वास्तुकला का एक प्रमुख केंद्र था। यहां से प्राप्त स्तूप नवीं सदी का है किंतु ऐसा प्रतीत होता है कि इस स्तूप का निर्माण गुप्तकाल में निर्मित स्तूप के ध्वंसावशेषों पर पुनः किया गया था।

रोहतास (24°37′ उत्तर, 83°55′ पूर्व)

बिहार में स्थित रोहतास अपने किले के लिए प्रसिद्ध है। रोहतास का किला अत्यंत सशक्त एवं अभेद्य किला था तथा अपनी स्थिति के कारण इसे अत्यंत सुरक्षात्मक माना जाता था। इस किले के संबंध में एक रोचक तथ्य यह है कि जहां इसे बड़े-बड़े आक्रमणों द्वारा नहीं जीता जा सका, वहीं कपट द्वारा इस पर आसानी से अधिकार कर लिया गया। इस किले के अंदर बनी हुई विभिन्न इमारतें यहां समय-समय पर शासन करने वाले विभिन्न शासकों की सुंदर स्थापत्यकला का प्रमाण प्रस्तुत करती हैं। रोहतास का किला सैन्य स्थापत्यकला का भी एक सुंदर उदाहरण है। सामरिक दृष्टि से यह किला एक पहाड़ी के शीर्ष पर स्थित है तथा इसके चारों ओर दुर्गम खाईयां हैं। काफी कठिन चढ़ाई के उपरांत ही इस किले तक पहुंचा जा सकता है। प्रवेश द्वारों द्वारा प्रतिषेधित एक दुर्जेय चारदीवारी का घेरा किले की रक्षा करता है। इस किले के अंदर निर्मित कुछ इमारतों में स्थापत्य का इस्लामी प्रभाव है, जो भारतीय-इस्लामी वास्तुकला शैली का प्रतिनिधित्व करता है, जबकि अन्य इमारतें, जैसे—महल एवं दरबार पर स्थानीय प्रभाव है।

प्रसिद्ध अफगान शासक शेरशाह सूरी ने 1538 में छल द्वारा इस किले पर कब्जा कर लिया। इस समय इस पर एक हिन्दू राजा का अधिकार था। शेरशाह ने इस किले को स्वयं के लिए अत्यंत सौभाग्यशाली माना तथा यहीं से उसकी भारत के सम्राट बनने की प्रक्रिया प्रारंभ हुई। शेरशाह ने इसी नाम का एक अन्य किला भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा में बनवाया, जिससे वह हुमायूं के प्रभाव को रोक सके। कालांतर में मुगलों ने रोहतास को अपना पूर्ण मुख्यालय बनाया। 1621 में, जब शाहजहां अपने पिता के विरुद्ध किए गए विद्रोह में असफल हो गया तो उसने इसी किले में शरण ली। शाहजहां का पुत्र औरंगजेब भी इस किले का प्रयोग बंदियों को रखने के लिए करता था। 1763 ई. में बंगाल एवं बिहार के नवाब मीर कासिम ने भी अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी से पराजित होने के उपरांत इसी किले में प्रश्रय लिया था। यद्यपि अंग्रेजी सेनाओं ने शीघ्र ही इस किले से मीर कासिम को गिरफ्तार कर लिया तथा इस किले का अधिकांश भाग नष्ट कर दिया। इसके पश्चात 1857 तक अर्थात लगभग 100 वर्षों तक यह किला इसी स्थिति में रहा। 1857 के विद्रोह में कुंवर सिंह के भाई उमेर सिंह ने इसी किले में शरण ली थी। अंग्रेजों से लंबी लड़ाई के उपरांत अंततः यह किला विद्रोहियों के हाथों से निकल गया। इस प्रकार इस अत्यन्त प्रसिद्ध किले की गाथा समाप्त हो गई।

रोजड़ी (22°15′ उत्तर, 70°40′ पूर्व)

गुजरात में स्थित रोजड़ी हड़प्पा सभ्यता का एक क्षेत्रीय केंद्र था। 1982 में प्रारंभ हुए रोजड़ी के उत्खनन से हड़प्पा सभ्यता की सामान्य स्थिति एवं सौराष्ट्र क्षेत्र में इस सभ्यता की विशिष्ट स्थिति दोनों के संबंध में जानकारी प्राप्त होती है। यहां से प्राप्त विभिन्न स्तरों की रेडियो कार्बन तिथियों से क्षेत्रीय कालक्रम को पुनर्परिभाषित करने में सहायता मिली है। यहां से प्राप्त विभिन्न पूर्वपाषाणकालीन वानस्पतिक अवशेषों से प्राचीन सौराष्ट्र की जीविकोपार्जन व्यवस्था के बारे में पता चलता है जो तत्कालीन सिंध एवं पंजाब की इस व्यवस्था से नितांत भिन्न थी, जहां मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा स्थित थे। यहां से उत्खनित प्रमाण भी प्राचीन भारतीय कृषि व्यवस्था के

thejobsyogi.com

साथ अफ्रीकी बाजरे (मोटा अनाज) के समन्वय को समझने में हमारी मदद करते हैं।

यहां पर अधिवास का अंतिम समय लगभग 2000 ई.पू. से 1700 ई.पू. था, जब मोहनजोदड़ो तथा उत्तर के कई अन्य क्षेत्रों का परित्याग किया जा रहा था, जिससे यह पता चलता है कि हड़प्पा सभ्यता का कथित अंत जैसाकि सामान्यतः प्रस्तुत किया गया, एक बेहद अलग प्रक्रिया थी।

रोपड़ (30.96° उत्तर, 76.53° पूर्व)

रोपड़ या रूपनगर पंजाब राज्य में एक जिला मुख्यालय है, जो सतलज नदी के बारा तट पर चंडीगढ़ से 40 किमी. की दूरी पर स्थित है। स्वतंत्र भारत का यह पहला हड़प्पाकालीन स्थल है, जहां उत्खनन कार्य किया गया। यहां के उत्खनन से मुख्य सांस्कृतिक कालों का एक क्रम पाया गया है, जो इस प्रकार हैः हड़प्पा (200 ईसा पूर्व-1400 ईसा पूर्व), चित्रित धूसर मृदभाण्ड (700-1200 ईस्वी) एवं मध्यकाल (1200-1700 ईस्वी)।

रोपड़ हड़प्पाकालीन एक प्रमुख स्थल है। यहां से ऐतिहासिक महत्व की जो वस्तुएं प्राप्त हुई हैं, उनमें तांबे का जार एक टूटी कटोरी, टेराकोटा की बनी चूड़ियां, हड्डियां, खोल एवं कुछ हड़प्पाई मृदभाण्ड प्रमुख हैं। यहां से बैल की एक मूर्ति, तिकोनी बट्टी तथा कांसे का बना एक उस्तरा भी पाया गया है।

रोपड़ से एक लंबे अंतराल के बाद चित्रित धूसर मृद्भाण्ड काल में लोगों के पुनः बसने के प्रमाण भी प्राप्त होते हैं। इस काल की सबसे मुख्य विशेषता सुघड़ एवं अच्छी तरह पकी हुई ईंटें हैं। इस काल में प्रयुक्त होने वाली सबसे प्रमुख धातु तांबा थी, जबकि लोहे के कुछ टुकड़ों की प्राप्ति से इस तथ्य के भी संकेत मिलते हैं कि इस काल में लोग लोहे को गलाने की कला से परिचित थे। यहां से प्राप्त अन्य प्रमुख वस्तुओं में बहुमूल्य पत्थर, मनके एवं टेराकोटा की बनी एक खिलौना गाड़ी प्रमुख हैं।

तृतीय काल द्वितीय शहरीकरण से संबंधित है तथा इसी काल में महाजनपदों का उदय हुआ। चांदी के बने आहत सिक्के, गोलाकार कुएं, पकी हुई ईंटें, अगूंठियां, पालिशदार पत्थर, हड्डियों एवं हाथी दांत से बनी वस्तुएं, जैसे—कंघी, पिन इत्यादि भी यहां से प्राप्त किए गए हैं।

प्रारंभिक ऐतिहासिक काल (200 ईसा पूर्व-600 ईस्वी) में कला एवं उद्योग दोनों क्षेत्रों में कई नई विशेषताएं दर्ज की गयीं। यक्ष एवं यक्षिणी की प्रतिमाएं, आभूषण एवं कुछ अन्य वस्तुओं की प्राप्ति इस काल से संबंधित है।

यहां से शक एवं कुषाणकालीन कई सिक्के भी प्राप्त किए गए हैं। यहां से चंद्रगुप्त प्रथम का एक सोने का सिक्का भी मिला है। एक गड्ढे में यहां 200 ईसा पूर्व से 600 ईस्वी काल के सिक्कों का एक ढेर भी प्राप्त किया गया है। पुरातात्विक उत्खननों से यहां 8वीं-10वीं शताब्दी के दौरान समृद्धि के अनेक प्रमाण प्राप्त हुए हैं।

यहां से मध्यकालीन प्रमाण भी पाए गए हैं, जिनमें बहुवर्णी चमकदार मृदभांड, सजावटी वस्तुएं तथा हवन सामग्री सम्मिलित हैं। मुगलकाल में प्रयुक्त होने वाली लखौरी ईंटें भी यहां से मिली हैं। यहां से मुबारकशाह खिलजी (1316-1320 ई.) एवं इब्राहीम लोदी (1517-1526 ई.) के सिक्के भी मिले हैं, जोकि उनके आधिपत्य का प्रमाण हैं।

रूपनाथ (23°10′ उत्तर, 79°56′ पूर्व)

मध्य प्रदेश में सलीमाबाद (जबलपुर) नामक स्थान के समीप कैमूर की पहाड़ियों में स्थित रूपनाथ अशोक के एक लघु शिलालेख की प्राप्ति के लिए प्रसिद्ध है। यहां एक 'लिंग' की उपस्थिति से यह शैव धर्म के अनुयायियों का एक प्रसिद्ध धार्मिक केंद्र है। ऐसी मान्यता है कि अशोक के समय से ही यह स्थान हिन्दू धर्म के लोगों के लिए एक प्रमुख धार्मिक स्थल रहा होगा। संभवतः रूपनाथ से एक प्रमुख व्यापारिक केंद्र भी होकर गुजरता था। यह मार्ग इलाहाबाद (प्रयाग) से भड़ौच जाता था तथा रूपनाथ से होकर गुजरता था।

thejobsyogi.com

S

साकेत/अयोध्या (26.80° उत्तर, 82.20° पूर्व)

साकेत छठी शताब्दी ईसा पूर्व के प्रमुख गणराज्य उत्तरी कोसल की राजधानी था। पतंजलि के महाभाष्य में इसका उल्लेख प्राप्त होता है। टालमी ने अपनी कृति 'भूगोल' में इसका उल्लेख 'सोगेडा' के नाम से किया है तथा फाह्यान 'शा-चि' नाम से इसका उल्लेख करता है। जातक कथाओं में साकेत का उल्लेख महत्वपूर्ण नगर के रूप में किया गया है। कोसल साम्राज्य का महत्वपूर्ण नगर होने के साथ ही साकेत तत्कालीन भारत के छः सर्वाधिक महत्वपूर्ण नगरों में से भी एक था। साकेत से श्रावस्ती को एक प्रमुख मार्ग भी जाता था किंतु इस पर लुटेरों का आतंक होने के कारण व्यापारियों एवं यात्रियों का इस मार्ग पर चलना अत्यंत जोखिम भरा कार्य था।

सालसीट (19°12′ उत्तर, 72°54′ पूर्व)

सालसीट एक छोटा द्वीप है, जो मुंबई के समीप अरब सागर में स्थित है। 16वीं शताब्दी में गुजरात के शासक से इसे पुर्तगालियों ने छीन लिया। सालसीट पर अधिकार को लेकर पुर्तगालियों एवं मराठों में सदैव संघर्ष चलता रहा। पेशवा बालाजी बाजीराव के भाई चिमाजी अप्पा के समय मराठों ने 1739 में सालसीट को पुर्तगालियों से छीन लिया।

बेसीन के साथ सालसीट भी प्रारंभ से ही अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी के आंखों की किरकिरी बना हुआ था। क्योंकि यह राजस्व प्राप्ति का एक प्रमुख स्रोत होने के साथ ही कपास उत्पादक मालवा क्षेत्र में पहुंचने का आसान माध्यम भी था। इसीलिए 1782 की सालबाई की संधि में अंग्रेजों ने मराठों पर सालसीट को सौंपने का दबाव डाला तथा शीघ्र ही इसे ब्रिटिश साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया गया।

समाना (30.16° उत्तर, 76.19° पूर्व)

समाना वर्तमान पंजाब में स्थित है। मध्यकालीन भारत में यह महत्वपूर्ण सीमावर्ती सामरिक केंद्र था।

दिल्ली सल्तनत के समय में यह भारतीय शासकों के लिए समस्या का एक प्रमुख स्रोत था क्योंकि मंगोल बार-बार इस पर अधिकार कर लेते थे। बलबन ने भटिंडा के साथ समाना की सुरक्षा के लिए व्यापक कदम उठाए। उसने समाना के किले की मरम्मत कराई तथा इसकी चारदीवारी से सुरक्षा और बढ़ाई गई। साथ ही उसने व्यास नदी को पार कर आने वाले मंगोलों के आक्रमण से बचाव के लिए यहां भारी सैन्य बल तैनात किया।

दिल्ली सल्तनत का सुल्तान एवं तुगलक वंश का संस्थापक गियासुद्दीन तुगलक सुल्तान बनने से पहले समाना का ही राज्यपाल था।

संभल (28.58° उत्तर, 78.55° पूर्व)

आगरा के समीप, उत्तर प्रदेश राज्य में स्थित संभल, प्रारंभ से ही एक महत्वपूर्ण स्थान रहा है। अपने प्रारंभिक समय में यह राजपूत शासकों के अधीन था। दिल्ली सल्तनत की स्थापना के साथ ही यह दिल्ली सल्तनत का हिस्सा बन गया। यद्यपि इसका महत्व तब बढ़ा जब, साम्राज्य के पूर्वी हिस्से में उत्पन्न अव्यवस्था को समाप्त करने के लिए सिकंदर लोदी ने अपना मुख्यालय संभल को बना लिया। बाद में उसने अपना मुख्यालय संभल से आगरा स्थानांतरित कर दिया।

शेरशाह सूरी के सेनापति निसार खान ने 1540 ई. में कन्नौज के युद्ध के उपरांत संभल पर अधिकार कर लिया। इस समय यहां का राज्यपाल हुमायूं का सेनापति मिर्जा अस्करी था, जो इस आक्रमण के उपरांत भाग खड़ा हुआ। लेकिन हुमायूं ने कुछ समय पश्चात संभल पर पुनः अधिकार कर लिया तथा इसे मुगल साम्राज्य का एक हिस्सा बना लिया।

अकबर के शासनकाल के दौरान, 1556 ई. में संभल के मिर्जाओं ने सुल्तान के विरुद्ध विद्रोह किया किंतु शीघ्र ही यह विद्रोह कुचल दिया गया।

सांभर (26.92° उत्तर, 75.2° पूर्व)

सांभर या शाकंभरी अजमेर में सांभर झील के तट पर, जयपुर के पश्चिम में राजस्थान में स्थित है। आठवीं सदी में एक चौहान सरदार समंत ने अजमेर के निकट सांभर नामक राज्य की स्थापना की थी। उसके उत्तराधिकारी अजयदेव ने वर्तमान अजमेर नगर की स्थापना की तथा वहां एक शक्तिशाली दुर्ग बनवाया। चौहान वंश के प्रसिद्ध शासक पृथ्वीराज तृतीय की अजमेर से जुड़ी शौर्यगाथाएं सर्वप्रसिद्ध हैं। पृथ्वीराज ने 1191 ई. में तराईन के प्रथम युद्ध में मु. गौरी को बुरी तरह पराजित किया था।

सांभर झील, खारे पानी की एक प्रसिद्ध झील है, जो खारे पानी

thejobsyogi.com

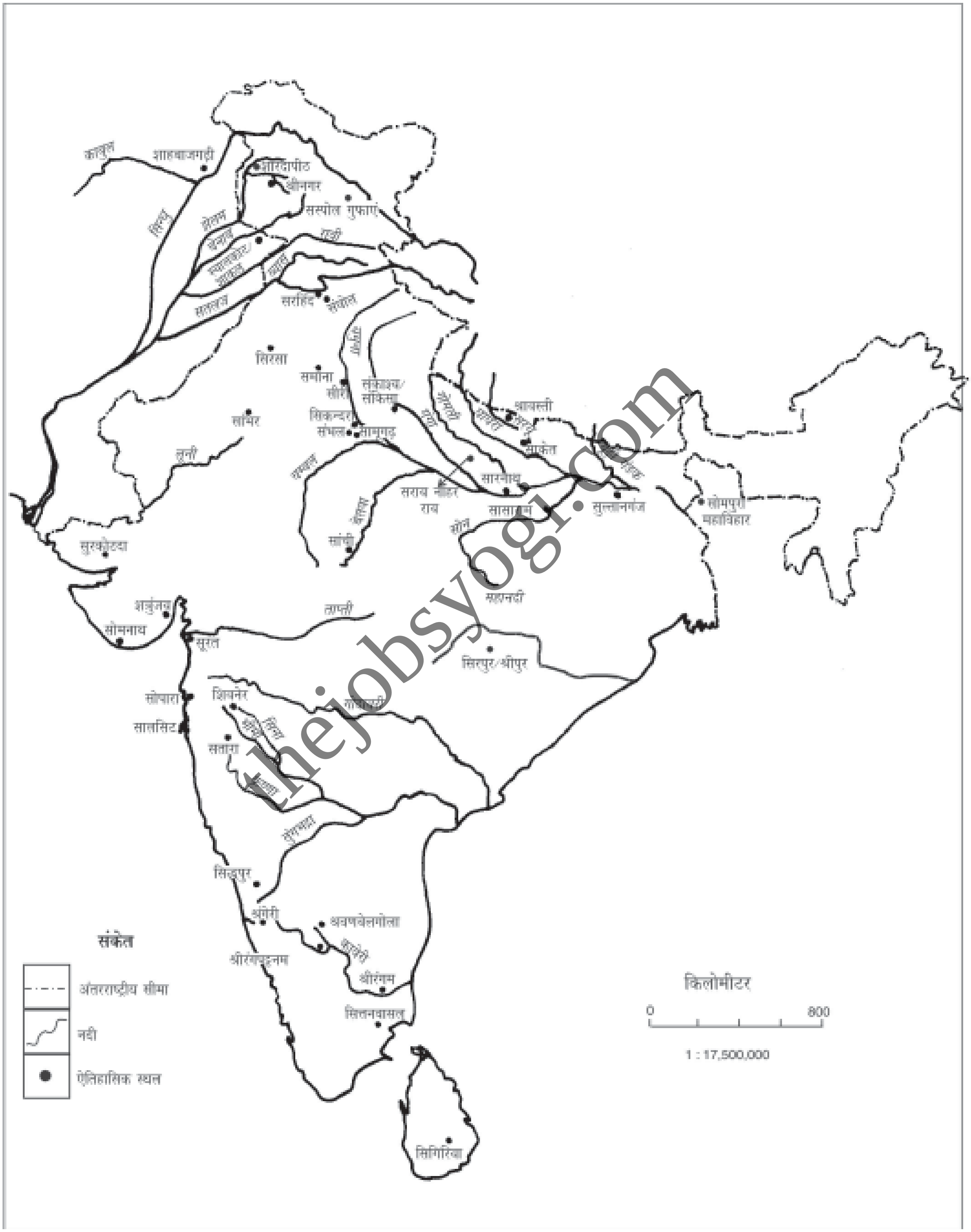

thejobsyogi.com

की भारत की सबसे बड़ी झील भी है। ऐसा कहा जाता है कि इस झील का निर्माण दुर्गा की अवतार शाकंभरी ने छठी शताब्दी ई. में किया था। इस झील के उत्तरी तट पर पानी से नमक का निर्माण किया जाता है।

सामूगढ़ (27.18° उत्तर, 78.02° पूर्व)

सामूगढ़ आगरा के समीप उत्तर प्रदेश में स्थित है। इसका ऐतिहासिक महत्व उस उत्तराधिकार के युद्ध की वजह से है, जो शाहजहां के बाद औरंगजेब एवं उसके भाई दाराशिकोह के मध्य सिंहासन की लड़ाई के लिए हुआ था। इस युद्ध में औरंगजेब ने दाराशिकोह को बुरी तरह पराजित किया था। ऐसा कहा जाता है कि भारत के सिंहासन पर औरंगजेब का अधिकार सामूगढ़ की विजय से ही सुनिश्चित हो गया था।

सांची (23.47° उत्तर, 77.73° पूर्व)

सांची मध्य प्रदेश के विदिशा से लगभग 9 किमी. की दूरी पर दक्षिण-पश्चिम दिशा में स्थित है। सांची बौद्ध स्तूपों के लिए पूरे संसार में प्रसिद्ध है। यहां की पहाड़ी पर बौद्ध शासक अशोक ने एक विशाल स्तूप का निर्माण करवाया था। ईंटों से निर्मित इस स्तूप के चारों ओर लकड़ी की बाड़ लगाई गई है। यहां अनेक विहार, स्तूप एवं मंदिर भी हैं। यह तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व से बारहवीं शताब्दी के लगभग तेरह सौ वर्षों से संबंधित बेहद परिष्कृत एवं भली-भांति संरक्षित स्तूपों, और बौद्ध कला एवं वास्तुकला—बौद्ध कला की लगभग संपूर्ण श्रृंखला को समेटे हुए—के दृष्टिगत बेजोड़ है। दीर्घकाल तक बौद्ध धर्म से संबंधित होने के कारण सांची को 'चैत्यगिरी' के नाम से भी जाना जाता है।

सांची की पहाड़ी पर एक बड़ा तथा दो छोटे कुल तीन स्तूप हैं। इन स्तूपों में बड़ा स्तूप 'महास्तूप' कहलाता है, जो महात्मा बुद्ध के अवशेषों पर निर्मित है। दूसरा स्तूप अशोककालीन धर्म प्रचारकों एवं तीसरा बुद्ध के दो प्रिय शिष्यों—महामोद्ग्ल्यान एवं शारिपुत्र के अवशेषों पर बना है। महास्तूप अशोककालीन एवं दूसरे एवं तीसरे स्तूप शुंग-सातवाहनकालीन माने जाते हैं। यद्यपि शुंग काल में महास्तूप का जीर्णोद्धार किया गया। उस पर पत्थर लगाए गए, चारों दिशाओं में तोरण द्वार बनाए गए तथा वेदिका को भी पाषाण का बना दिया गया। पहले यह लकड़ी से बनी थी। महास्तूप के तोरण द्वारों पर बुद्ध के जीवन से संबंधित विभिन्न घटनाओं एवं जातक कथाओं से संबंधित सुंदर दृश्यों को उत्कीर्ण किया गया है। महास्तूप के दक्षिणी द्वार के समीप अशोक का एक स्तंभ भी खंडित अवस्था में पाया गया है। यहां से दो गुहा मंदिरों के अवशेष भी प्राप्त हुए हैं।

सांची के पर्वत शिखर पर, ऊंचाई में लगभग 91 मीटर, बौद्ध स्मारकों का समूह है, जोकि अधिक दूरी से भी ध्यान अपनी ओर खींच लेते हैं।

सांची के महान धार्मिक आधिष्ठान का आधार, भविष्य में कई शताब्दियों तक बौद्ध धर्म के एक शानदार केंद्र के रूप में पहचाने जाने वाले स्थल को संभवतः अशोक ने (लगभग 273-236 ई.पू.) निर्मित कराया, जब उसने यहां पर एक स्तूप तथा एक विशालकाय स्तंभ लगवाया था।

सांची के सर्मपणात्मक अभिलेख स्पष्टतया यहां पर बौद्ध प्रशासन की समृद्धि दर्शाते हैं, यह बहुत हद तक विदिशा के समृद्ध व्यापारियों के कारण तथा इसके दो प्रमुख व्यापार मार्गों पर सामरिक महत्व की स्थिति के कारण था। दूसरी शताब्दी ई.पू. के लगभग मध्य में जब शुंग साम्राज्य था, पाषाणीय कोषस्थीकरण किया गया तथा बुद्ध के स्तूपों का विस्तार किया गया। अगली शताब्दी में भी यही धार्मिक महत्वाकांक्षा तथा सृजनात्मक शक्तियां निरंतर कार्य करती रहीं। सातवाहन शासन के समय स्तूप 1 तथा स्तूप 3 में सुपरिष्कृत रूप से तराशे गए प्रवेश द्वारों के अलंकरण को बढ़ाया गया।

क्षत्रपों के शासनकाल में दीर्घकालीन निष्क्रियता के बाद गुप्त शासन में सांची की मूर्तिकला संबंधी गतिविधि में पुनर्जागरण हुआ। सत्रहवें मंदिर में हमें गुप्त काल के मंदिर की वास्तुकला के प्राचीनतम मंदिरों में से एक मिला, जिन्हें संतुलित अनुपात, संयमित अलंकरण तथा लालित्य के लिए जाना जाता है। सातवीं तथा आठवीं शताब्दी के चिन्ह, जिन्होंने सांची में अनेकों मठ तथा मंदिरों का निर्माण देखा, इस स्थल में बौद्ध संप्रदाय की समृद्ध स्थिति को दर्शाते हैं। 14वीं शताब्दी के पश्चात सांची लगभग उपेक्षित रहा तथा किसी का ध्यान इसकी ओर नहीं गया। पुनः 1818 में लोगों का ध्यान उसकी ओर अंग्रेज जनरल टेलर ने खींचा, जब उसने इसके अवशेषों को खोजा।

संघोल (30°47′ उत्तर, 76°23′ पूर्व)

संघोल चंडीगढ़ से 40 किमी. दूर स्थित है तथा वर्तमान समय में पंजाब राज्य के फतेहगढ़ साहब जिले का हिस्सा है। यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण बौद्ध स्थल है। यह स्थल परवर्ती हड़प्पा काल (2300-1750 ईसा पूर्व से छठी शताब्दी तक) से ही बौद्ध स्थापत्य के लिए प्रसिद्ध है।

द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व के बौद्ध ग्रंथों में इस स्थान का उल्लेख प्राप्त होता है। अनुमान है कि चीनी यात्री ह्वेनसांग ने इस स्थान की यात्रा की थी तथा यहां 10 बौद्ध मठों को देखा था। यहां से प्राप्त स्तूपों से तत्कालीन समय की वास्तुयोजना एवं भवनों के आकारों के संबंध में महत्वपूर्ण जानकारियां प्राप्त होती हैं।

सन् 1985 में यहां एक स्तूप के समीप स्थित गड्ढे से बड़ी मात्रा में सुंदर कलात्मक वस्तुओं के अवशेष प्राप्त हुए हैं। यहां से सुंदर स्तंभ, तिरछे बार, नक्काशीयुक्त शैल टुकड़े इत्यादि भी मिले हैं, जो प्रारंभिक भारतीय वास्तुकला मुख्यतयाः प्रथम द्वितीय सदी के काल की वास्तुकला के सुंदर उदाहरण हैं। यहां से प्राप्त स्तंभों में जो चित्र उत्कीर्ण हैं, उनमें सबसे महत्वपूर्ण वे चित्र हैं, जिसमें नारियों की योनियों को उत्पादकता के स्रोत के रूप में दर्शाया गया है। पुरुष चित्रों का उत्कीर्णन अत्यंत कम हुआ है। संघोल की शैली अपनी विशेषताओं में मथुरा शैली से ज्यादा समानता दर्शाती हुई प्रतीत होती है। इस स्थान के उत्खनन से न केवल महत्वपूर्ण शासक वंशों एवं स्थानीय शासक वंशों के सिक्के मिले हैं, अपितु मध्य

thejobsyogi.com

एशिया के हूण आक्रांताओं मिहिरकुल एवं तोरमाण के भी सिक्के पाए गए हैं। यहां से पांचवीं शताब्दी ईस्वी की मिट्टी की बनी एक मुहर मिली है, जिसमें एक ओर बैल की आकृति है तथा दूसरी ओर गुप्त-ब्राह्मी लिपि में एक लेख उत्कीर्ण है। यहां से कुषाणों एवं गुप्त शासक समुद्रगुप्त के सिक्के भी पाए गए हैं।

संघोल से प्राप्त एक तांबे के सिक्के में गुप्त शासक चंद्रगुप्त प्रथम का नाम लिखा हुआ है। इस सिक्के के प्रमाण से यह कहा जा सकता है कि गुप्त राजाओं में तांबे के सिक्कों का प्रचलन चंद्रगुप्त प्रथम ने प्रारंभ किया था न कि उसके उत्तराधिकारियों ने, जैसाकि प्रारंभ में इतिहासकारों द्वारा माना जाता था।

संकाश्य/संकिसा (27.33° उत्तर, 79.27° पूर्व)

संकाश्य या संकिसा नामक स्थल काली नदी के तट पर (यमुना की सहायक नदी) कन्नौज से उत्तर-पश्चिमी दिशा में 40 किमी. की दूरी पर उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद जिले में स्थित है।

मौर्य सम्राट अशोक ने इस पावन स्थल को चिन्हित करने हेतु एक स्तंभ लगवाया, जिसके शीर्ष एक हाथी है। संकिसा का हाथी देखने में धौली के हाथी के समकक्ष परंतु संघटन में उससे निम्न गुणवत्ता का है।

चीनी यात्री फा-हियान तथा ह्वेनसांग ने भी इस स्थल का ऐसे बौद्ध केंद्र के रूप में उल्लेख किया है, जहां अनेक मठ, स्तूप, एक पवित्र जलाशय, तथा अशोक का स्तंभ है।

परकोटे से घिरे हुए टीले आज भी देखे जा सकते हैं।

संकिसा हीनयान परंपरा या स्थैविरवदिन बौद्धों के सम्मितीय संप्रदाय के एक महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में विकसित हुआ।

जैन धर्म में संकिसा को तीर्थंकर विमलनाथ की ज्ञान प्राप्ति का स्थान माना गया है।

यहां के उत्खनन से पुरातात्विक महत्व की कई वस्तुएं, जैसे—आहत सिक्के, टेराकोटा की बनी वस्तुएं, चित्रित धूसर मृदभाण्ड एवं उत्तरी काले ओपदार मृदभाण्ड इत्यादि भी पाए गए हैं।

सराय नाहर राय (लगभग 25.8° उत्तर, 81.9° पूर्व)

सराय नाहर राय उत्तर प्रदेश में प्रतापगढ़ से 15 किमी. दक्षिण-पश्चिम में स्थित है, यह एक मध्यपाषाणीय स्थल है। रेडियोकार्बन डेटिंग के अनुसार, यह लगभग 8400 से 150 ई.पू. के समय का है। इस स्थल पर, एक ज्यामितीय छोटे पत्थरों का व्यवसाय प्राप्त हुआ है, इसके साथ जंगली भैसे की हड्डियां, गैंडे, हिरण, मछली की हड्डियां प्रचुरता में मिले हैं। इनके साथ कछुए के खोल तथा 11 मानव शवाधान जिनमें 14 व्यक्ति प्राप्त हुए हैं, शामिल हैं। शवाधान निवास स्थान के क्षेत्र में ही पाए गए, तथा यह अग्नि-कुंड, फर्श तथा बाड़े में गड्ढे, जो कि इसी क्षेत्र में प्राप्त हुए हैं, से स्पष्ट होता है। कब्रों में से एक कब्र में चार व्यक्तियों के अवशेष प्राप्त हुए हैं। ये कब्र अंडाकार गड्ढे हैं जहां पर ढीली मिट्टी को गद्दी की तरह शव रखने में पहले बिछा दिया गया है। शवों को फैलाकर पश्चिम-पूर्व उन्मुख (सर पश्चिम की ओर), दाएं या बांए हाथ को पेट के ऊपर (पुरुषों में दाएं तथा स्त्रियों में बाएं हाथ) रखा गया है।

छोटे पत्थर तथा सीपी कब्रों के अंदर रखे गए हैं। एक पाषाणीय तीर कंकाल की पसलियों में मिला है, जो कि संकेत करता है कि संभवतः तीर ही मृत्यु का कारण हो। कंकालीय शृंखला महत्वपूर्ण जीवाश्मीकरण दर्शाती है तथा यहां से नौ पुरुषों, चार स्त्रियों तथा एक बच्चे के अवशेष प्राप्त हुए हैं। उनकी बड़ी तथा मजबूत खोपड़ी थी।

सारनाथ (25.38° उत्तर, 83.02° पूर्व)

सारनाथ बनारस से लगभग 10 किमी. दूर उत्तर प्रदेश में स्थित है। सारनाथ (इसिपटना) ही वह स्थान है, जहां बुद्ध ने कैवल्य की प्राप्ति के उपरांत अपने पांच शिष्यों को सर्वप्रथम उपदेश दिया था। इसे 'धम्म चक्रप्रवर्तन' के नाम से जाना जाता है। इसे 'ऋषिपत्तनम'—वह स्थान जहां ऋषियों का वास हो या मृगादय, मृगों का उद्यान (नाम की उत्पत्ति सारंगनाथ-मृगों के देवता से हुई) के नाम से भी जाना जाता है। मृत्यु से पहले दिन बुद्ध ने सारनाथ को लुम्बिनी, बोध गया तथा कुशीनगर के साथ जोड़ दिया, जिन्हें बुद्ध ने पवित्र स्थल माना। गौतम बुद्ध द्वारा सारनाथ में धर्म चक्रप्रवर्तन से यह स्थान बौद्ध धर्म के चार सबसे महत्वपूर्ण स्थानों—लुम्बिनी, सारनाथ, गया एवं कुशी नगर में सम्मिलित हो गया है।

मौर्य सम्राट अशोक ने 234 ई. पूर्व में सारनाथ की यात्रा की तथा इस स्थान पर एक स्तूप निर्मित करवाया। तृतीय शताब्दी ईसा पूर्व से 11वीं सदी ईस्वी के मध्य सारनाथ में बौद्ध धर्म से संबंधित कई और इमारतों का निर्माण भी हुआ। यद्यपि वर्तमान समय में इनमें से अनेक इमारतें नष्ट हो चुकी हैं।

इस क्षेत्र में बने विभिन्न स्तूपों में धमेख स्तूप सबसे बड़ा है। यह उस स्थान पर निर्मित है, जहां पर बुद्ध ने अपना विश्वास मत प्रकट किया था। इसका निर्माण वर्ष 500 ईस्वी माना जाता है। यहां का चौखंडी स्तूप गुप्त काल से संबंधित है। अकबर ने अपने पिता हुमायूं की इस स्थान की यात्रा की स्मृति में यहां एक स्तंभ बनवाया था।

जापान की सहायता से महाबोधि सभा द्वारा 1931 ई. में बनवाया गया मुलगंधा कुटी विहार एक अत्यंत सुंदर विहार है।

यद्यपि अपनी प्रारंभिक प्रसिद्धि के बाद 1834 तक सारनाथ पर किसी ने ध्यान नहीं दिया, किंतु 1836 में जब यहां अंग्रेज पुरातत्ववेत्ताओं ने उत्खनन कार्य कराया तब यह स्थान पुनः प्रकाश में आया।

सासाराम (24.95° उत्तर, 84.03° पूर्व)

वर्तमान समय में सासाराम, बिहार के रोहतास जिले का प्रशासनिक मुख्यालय है। यहीं शेरशाह सूरी ने अपने बचपन के दिन गुजारे थे। बाद में 1540 में उसने हुमायूं को पराजित कर भारत में द्वितीय अफगान साम्राज्य की स्थापना की थी।

thejobsyogi.com

शेरशाह के पिता, हसन खान को सासाराम की जागीर मिली थी। अतः शेरशाह ने अपने बचपन के प्रारंभिक दिन यहीं गुजारे। यह नगर गंगा की सहायक नदी सोन के तट पर स्थित है तथा देखने में अत्यंत सुंदर प्रतीत होता है।

शेरशाह ने अपना स्वयं का मकबरा यहां निर्मित करवाया। यह मकबरा लाल बलुआ पत्थरों से बना है तथा भारतीय-इस्लामी वास्तुकला (जिस पर पठानी प्रभाव भी है) का एक सुंदर उदाहरण है। इस मकबरे की सबसे मुख्य विशेषता यह है कि यह एक झील के बीचोंबीच स्थित ऊंचे चबूतरे पर बना हुआ है। शेरशाह सूरी के मकबरे के समीप ही उसके पिता हसन खां सूरी का मकबरा भी स्थित है, जिसका निर्माण 1535 में हुआ था। यहीं पास ही शेरशाह के पुत्र सलीम शाह का मकबरा भी स्थित है।

सासाराम नगर के बाहरी क्षेत्र में शेरशाह सूरी के मुख्य वास्तुकार अलवल खान का मकबरा भी है।

सासाराम में सम्राट अशोक का एक शिलालेख भी पाया गया है।

ससपोल गुफाएं (34.25° उत्तर, 77.15° पूर्व)

ससपोल गुफाएं जम्मू व कश्मीर के लेह जिले में सिंधु घाटी में स्थित हैं। ये गुफाएं पत्थर को काटकर बनाए गए मंदिरों के लिए प्रसिद्ध हैं। ये मंदिर बड़े पैमाने पर बौद्ध चित्रों, भारतीय व तिब्बती कला के सम्मिश्रण, जो 13वीं शताब्दी से 15वीं शताब्दी ई. काल की है, द्वारा अलंकृत हैं। ये गुफाएं तिब्बती बौद्ध सम्प्रदाय, द्रीकुंग काग्यु द्वारा निर्मित की गई। इनका मुख्य बल ध्यान अभ्यास पर था। यह सम्प्रदाय लद्दाख में वर्तमान में भी प्रसिद्ध है।

गुफाओं का आंतरिक भाग साधारण-सा है तथा छतों को बिना काम के ऐसे ही छोड़ा गया है। परंतु गुफाओं की दीवारों पर मिट्टी का लेप किया गया है तथा उन पर चमकदार रंगों से चित्रकारी भी की गई है। इन चित्रकलाओं में बौद्ध देवताओं के काफी मात्रा में लघु चित्र हैं।

सतारा (17.68° उत्तर, 74.00° पूर्व)

वर्तमान समय में सतारा, महाराष्ट्र राज्य में स्थित है। कुमार गुप्त प्रथम के समय ही सतारा को गुप्त साम्राज्य में सम्मिलित किया गया था। जब बीजापुर के विरुद्ध शिवाजी ने अपनी शक्ति को संगठित किया तो सतारा शिवाजी का एक प्रमुख किला बन गया।

मुगल-मराठा संघर्ष के साथ ही सतारा विवाद का एक प्रमुख केंद्र बन गया। 1704 में मुगलों के नियंत्रण से मुक्त होने के उपरांत शिवाजी के पौत्र शाहू ने कोल्हापुर की ताराबाई के विरुद्ध संघर्ष में सतारा को अपना मुख्यालय बनाया। मराठों ने 1743 में कर्नाटक के नवाब के दामाद चंदा साहिब को यहीं रखा था।

1818 ई. में मराठा शक्ति के पतनोपरांत, जब अंग्रेजों ने भारत के लगभग अधिकांश भाग पर कब्जा कर लिया था, तब अंग्रेजों ने सतारा में अपना एक छोटा मुख्यालय स्थापित किया तथा इसे शिवाजी के एक वंशज प्रताप सिंह को दे दिया।

अब सतारा एक औद्योगिक नगर है।

शाहबाजगढ़ी (33°54′ उत्तर, 72°29′ पूर्व)

शाहबाजगढ़ी पेशावर के युसुफजई क्षेत्र में मर्दान के समीप, पाकिस्तान में स्थित है। इसकी पहचान एरियन के विवरण में उल्लिखित बजरिया या बाजिरा नामक स्थान से की जाती है, जो पाषाण निर्मित नगर था। ह्वेनसांग शाहबाजगढ़ी को 'पो-लु-शा' कहता है। शाहबाजगढ़ी के आसपास का क्षेत्र अनुत्खनित है। ऐसी संभावना है कि इसी स्थान में अशोक के समय यह नगर विद्यमान रहा होगा। खरोष्ठी में लिखित अशोक का एक वृहद शिलालेख शाहबाजगढ़ी से प्राप्त किया गया है।

शारदा पीठ (34°47′ उत्तर, 74°11′ पूर्व)

शारदा पीठ कश्मीर (पाकिस्तान अधिपत्य वाले कश्मीर) में नील नदी के तट पर स्थित है। कभी यह स्थान बौद्ध एवं हिन्दू वैदिक पाठों के अध्ययन का प्रसिद्ध केंद्र था। बाद में इस क्षेत्र का इस्लामी शासकों तथा सूफियों द्वारा इस्लामीकरण हो गया। इस स्थान का नामकरण यहां स्थित एक मंदिर के आधार पर किया गया जो देवी सरस्वती (शारदा) को समर्पित है।

चीन के बौद्ध भिक्षु जुआनजेंग ने 632 ई. में इस अध्ययन के प्रसिद्ध केंद्र की यात्रा की और दो वर्षों तक यहां पर रहा। उसने यहां के पुजारियों व छात्रों के ज्ञान की प्रशंसा की थी। लगभग 1277-78 ई. में लिखी गई जैन ऐतिहासिक कृति *प्रभावकचरित* के अनुसार श्वेताम्बर विद्वान हेमचन्द्र ने शारदा पीठ के व्याकरण संबंधित मूलपाठों के संरक्षण का अनुरोध किया था ताकि वह स्वयं द्वारा रचित व्याकरण *सिद्धहेमा* का संकलन कर सके।

शत्रुंजय (21°28′ उत्तर, 71°48′ पूर्व)

शत्रुंजय शत्रुंजय बांध के समीप पालिताना में गुजरात राज्य में स्थित है। यहां एक विशाल जैन मंदिर है, जिसमें जैनों के तेइसवें तीर्थंकर शत्रुंजय पार्श्वनाथ की एक उन्नत, भव्य एवं काले रंग की विशाल प्रतिमा है।

शत्रुंजय पहाड़ी में, 900 वर्षों की अवधि में कुल 863 मंदिर बनवाए गए। इनमें से सबसे महत्वपूर्ण मंदिर, जैनों के प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ (ऋषभदेव) का मंदिर है।

प्रारंभ में यह भय था कि शत्रुंजय बांध के निर्माण से ये सभी इमारतें जलमग्न हो जाएंगी। इस वजह से यहां एक पृथक शत्रुंजय तीर्थ बनाया गया तथा सभी जैन मंदिरों की मूर्तियों को यहां धार्मिक रूप से स्थानांतरित किया गया।

शत्रुंजय तीर्थ को जैनों के सभी तीर्थों में सबसे पवित्र माना जाता है।

thejobsyogi.com

शिवनेर (19.2° उत्तर, 73.88° पूर्व)

शिवनेर जुन्नार से लगभग 3 किमी. की दूरी पर महाराष्ट्र में स्थित है। मराठा शासक छत्रपति शिवाजी का जन्म 1627 ई. में शिवनेर में ही हुआ था। शिवनेर का विशाल किला एक पहाड़ी पर स्थित है। अपनी दुर्गम स्थिति एवं अद्भुतता के कारण शिवनेर का किला शिवाजी के प्रिय स्थानों में से एक था।

इस किले के मध्य में 'देवी शिवाई' का एक प्राचीन एवं सुंदर मंदिर स्थित है। इस देवी का नामकरण शिवाजी द्वारा ही किया गया था।

शिवनेर के अन्य प्रमुख स्थलों में, कमन तापे, कादेलोत तोक एवं कोली चौतारा सम्मिलित हैं।

श्रवणबेलगोला (12.85° उत्तर, 76.48° पूर्व)

कर्नाटक में हासन से 51 किमी. की दूरी पर दक्षिण-पूर्व दिशा में स्थित श्रवणबेलगोला जैनियों का एक अत्यंत प्रसिद्ध तीर्थ स्थल है। जैन परम्पराओं के अनुसार, मौर्य शासक चन्द्रगुप्त गुप्त मौर्य ने अपने जैन गुरु भद्रबाहु के साथ अपने जीवन के अंतिम वर्ष यहीं बिताए थे तथा उपवास द्वारा शरीर-त्याग किया था।

श्रवणबेलगोला गोमतेश्वर या भगवान बाहुबली (पहले तीर्थंकर ऋषभदेव के पुत्र) की 18 मीटर ऊंची विशाल प्रतिमा के लिए प्रसिद्ध है, जिसका निर्माण 983 ईस्वी में चामुंडराय ने करवाया था। यह प्रतिमा इन्द्रगिरी नामक पर्वत को काटकर बनवाई गई है तथा इसे विश्व की सबसे ऊंची एकाश्म प्रतिमा माना जाता है। यहां प्रत्येक 12 वर्ष में होने वाले महामस्तकाभिषेक महोत्सव में हजारों श्रद्धालु भाग लेते हैं। इस महोत्सव में भगवान बाहुबलि की 1000 वर्ष प्राचीन इस विशाल प्रतिमा को हेलिकाप्टरों द्वारा 'दूध एवं दही, घी, केसर से नहलाया जाता है तथा उस पर पुष्प, स्वर्ण सिक्कों एवं अन्य सुगंधित द्रव्यों की वर्षा की जाती है।

चामुंडराय, जो गंगनरेश राजमल चतुर्थ का मंत्री एवं सेनापति था, ने चन्द्रगिरी पहाड़ी पर एक बसाडी (जैन मंदिर) भी बनवाया था। पिरामिडनुमा संरचना एवं प्लास्टरयुक्त दीवारों वाले इस मंदिर में दक्षिणी स्थापत्य कला शैली का प्रभाव है।

स्यालकोट/शाकल (32°29′ उत्तर, 74°32′ पूर्व)

स्यालकोट वर्तमान समय में पाकिस्तान के पंजाब प्रांत में गुजरांवाला संभाग में स्थित है। ऐसा कहा जाता है कि स्यालकोट की स्थापना पांडवों के चाचा महाभारत के राजा साल ने की थी तथा विक्रमादित्य के समय राजा सालिवाहन ने इसे पुनः बसाया। यह प्राचीन काल का शाकल नामक स्थान है। जब सिकंदर ने भारत पर आक्रमण किया तो उसने चिनाब नदी को पार कर कथालोइयों के संघ को हराया तथा उनकी राजधानी शाकल पर अधिकार कर लिया। पुष्यमित्र शुंग के शासनकाल के समय हिन्द-यवनों ने शाकल पर अधिकार कर लिया तथा मेनान्डर ने इसे अपनी राजधानी बनाया। इस काल की एक प्रसिद्ध रचना मिलिंद पंन्हो में इस नगर के संबंध में पर्याप्त जानकारी दी गई है। इस ग्रंथ के अनुसार, मिनांडर की इस राजधानी नगरी की पर्याप्त सुरक्षा व्यवस्था थी, यहां चौड़ी सड़कें एवं सुंदर उद्यान थे, सुंदर बाजार एवं घनी जनसंख्या थी। इन सभी विशेषताओं के कारण शाकल एक प्रसिद्ध नगरी बन गई थी। बाद में हूण नरेश मिहिरकुल (540 ई.) ने शाकल पर अधिकार कर इसे अपनी राजधानी बना लिया।

स्यालकोट प्रसिद्ध कवि एवं दार्शनिक डा. मुहम्मद इकबाल, फैज अहमद फैज एवं असगर सौदाई का जन्म स्थान भी है। यहां कई प्रसिद्ध धार्मिक स्थल भी हैं, जिनमें सबसे प्रमुख सिखों के प्रथम गुरु, गुरुनानक का मंदिर है।

कभी यह नगर धातु पर की गई पच्चीकारी की वस्तुओं एवं कागज के लिए प्रसिद्ध था। आगे चलकर शाकल दिल्ली सल्तनत के तथा फिर बाद में मुगलों के अधीन हो गया। यह भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा का एक महत्वपूर्ण सामरिक स्थल था। कालांतर में स्यालकोट रणजीत सिंह के अधिकार में आ गया तथा फिर इस पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया।

वर्तमान में यह पाकिस्तान का एक प्रमुख व्यापारिक केंद्र है।

सिद्धपुर (14.34° उत्तर, 74.89° पूर्व)

सिद्धपुर—कर्नाटक में करवाड़ से 155 किमी. की दूरी पर स्थित है। एक शासक बिलागी ने इस स्थल को प्रमुखता प्रदान की। उसने यहां एक सिद्धिविनायक मंदिर बनवाया तथा इस स्थान का नाम सिद्धपुर रखा। मौर्य काल में यह एक प्रसिद्ध नगर था, तथा जैसा कि अशोक के जटिंग रामेश्वर के लघु शिलालेख में कहा गया है; यह नगर मौर्य साम्राज्य की धुर दक्षिणी सीमा का निर्धारण करता था।

सारावती नदी पर स्थित प्रसिद्ध जोग जलप्रपात सिद्धपुर से मात्र 22 किमी. की दूरी पर स्थित है। बिल्लागी भी यहां से 22 किमी. दूर है। प्राचीन काल में, सिद्धपुर को संस्कृत में 'श्वेतपुर' भी कहा जाता था। इस जिले में चार प्रसिद्ध जैन बसादिस थे, किंतु वर्तमान समय में यहां केवल एक बसादिस के भग्नावशेष ही दिखाई देते हैं। ये बसादिस यहां के स्थानीय सोंधे शासकों के समय निर्मित किए गए थे। ये जैन बसादि स्थापत्य के सुंदर नमूने थे तथा इन पर होयसल शैली का प्रभाव परिलक्षित होता था।

सिगिरिया (7°57′ उत्तर, 80°45′ पूर्व)

सिगिरिया श्रीलंका में स्थित है तथा इसका इतिहास लगभग 7000 वर्ष प्राचीन है। यहां तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में गुहाओं युक्त एक शैल प्रश्रय गृह का निर्माण किया गया तथा उसे संघ के अनुयायियों को दानस्वरूप दिया गया था। मोगाल्लन की सेना से बचने के लिए श्रीलंका के शासक कश्यप (477-495 ई.) ने यहां बागों का नगर, महल तथा एक किले का निर्माण कराया। ऐसा कहा जाता है कि कश्यप ने इस किले का निर्माण सिगरिया की समिति के कहने पर बनवाया था।

thejobsyogi.com

सिगिरिया के मठ अपने भित्ति-चित्रों, जो अजन्ता के भित्ति-चित्रों से समानता रखते हैं, के कारण प्रसिद्ध हैं। ये भित्ति-चित्र इंगित करते हैं कि ये अजन्ता के भित्ति-चित्रों से प्रभावित हैं।

वर्तमान समय में सिगिरिया आर्थर सी. क्लार्क द्वारा स्थापित फाउंडेशन 'पेराडाइन' के कारण प्रसिद्ध है।

सिकन्दरा (26.44° उत्तर, 79.59° पूर्व)

सिकन्दरा उत्तर प्रदेश में आगरा से 4 किमी. की दूरी पर स्थित है। इस स्थान का नामकरण अफगान शासक सिकन्दर लोदी के नाम पर किया गया है। किंतु सिकन्दरा अकबर के मकबरे के कारण प्रसिद्ध है, जिसका निर्माण कार्य तो अकबर ने स्वयं कराया था किंतु उसे पूरा करवाने का श्रेय उसके पुत्र जहांगीर को है। यह इमारत हिन्दू, ईसाई, इस्लामी, बौद्ध एवं जैन प्रभावों का सम्मिलित स्वरूप है, जो अकबर के धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण का उदाहरण प्रस्तुत करता है। जहांगीर ने मूल इमारत में कई परिवर्तन करवाए। यह इमारत तत्कालीन मुगल स्थापत्य कला का एक सुंदर नमूना है।

इस मकबरे के चार कोनों में से प्रत्येक पर तीन मंजिला मीनारें हैं। ये मीनारें लाल बलुआ पत्थरों से निर्मित हैं, जिनमें संगमरमर की सुंदर जड़ाई की गई है। इस मकबरे में पहुंचने के लिए एक वृहद मार्ग बना हुआ है। यह मकबरा पांच मंजिला है तथा आकार में विकृत पिरामिडनुमा बना हुआ है। मुख्य मकबरे की डिजाइन अनुपम चतुर्भुजाकार है।

सरहिन्द (30°22′ उत्तर, 76°14′ पूर्व)

सरहिन्द भारत के पंजाब प्रांत में है। जब 11वीं शताब्दी में इस पर महमूद गजनवी ने अधिकार कर लिया तो यह भारत में अरब आधिपत्य का सीमावर्ती नगर बन गया। इसके नाम का तात्पर्य था—सर-ए-हिन्द या भारत की सरहद।

दिल्ली सल्तनत का शासक बनने से पूर्व बहलोल खान लोदी सरहिन्द का ही राज्यपाल था तथा सरहिन्द में उसकी स्थिति ने उसको महमूद शाह खिलजी को पराजित कर उसे सिंहासन प्राप्त करने में सहायता दी। लोदियों के समय यह दिल्ली सल्तनत का हिस्सा बन गया तथा एक महत्वपूर्ण सामरिक स्थल बना रहा। बाद में यह मुगलों के प्रभावाधीन हो गया। 1708 ई. में सिखों ने अपने नेता बंदा बहादुर के नेतृत्व में बहादुर शाह के विरुद्ध विद्रोह कर दिया तथा सरहिन्द पर अधिकार कर लिया। 1757 में, अहमदशाह अब्दाली ने अपने चतुर्थ भारतीय आक्रमण में मुगल साम्राज्य से औपचारिक तौर पर सरहिन्द का आधिपत्य प्राप्त किया।

सरहिन्द फतेहगढ़ साहब गुरुद्वारे के लिए प्रसिद्ध है। यह गुरुद्वारा औरंगजेब के शासनकाल में शहीद हुए गुरु गोविंद सिंह के दो युवा पुत्रों को समर्पित है।

हजरत मुजाहिद सरहिन्दी या अलफ सासोनी की प्रसिद्ध दरगाह भी यहीं स्थित है। सरहिन्द में बाबर ने खास बाग एवं सराय बनवाई। अहमदशाह अब्दाली के पुत्र मीर मीरान का मकबरा भी यहां स्थित है। यह एक अष्टभुजाकार इमारत है, जिसके शीर्ष पर गुम्बद बना हुआ है।

सीरी (28.55° उत्तर, 77.22° पूर्व)

सीरी मध्यकालीन भारत में दिल्ली का एक नगर था। एक मंगोल आक्रमण के समय अलाउद्दीन खिलजी ने अपने दिल्ली स्थित जनता को बचाने के लिए अपना सैन्य मुख्यालय यहां स्थानांतरित कर लिया था। उसने सीरी में अपना महल बनाया तथा यहां रहकर इस स्थान को अपनी राजधानी बनाया। दस्तावेजों के अनुसार, अलाउद्दीन के शव को यहीं उसके मकबरे में दफनाया गया था। यद्यपि प्राप्त प्रमाणों से इस तथ्य की पुष्टि नहीं होती है।

सिरपुर/शिरपुर/श्रीपुरा (21.35° उत्तर, 82.18° पूर्व)

महानदी के तट के निकट महासमन्द जिले में ऐतिहासिक नगर सिरपुर स्थित है। इस स्थान का उल्लेख पांचवीं से आठवीं शताब्दी ई. के प्राचीन पुरालेखों में हुआ है। यह नगर दक्षिण कौशल के सरभापुरिय तथा सोमवंशी नरेशों की राजधानी रहा था। ऐसा माना जाता है कि 12वीं शताब्दी में आए एक भयंकर भूकंप ने इस नगर को तहस नहस करके कीचड़ तथा मलबे में दफन कर दिया। श्रीपुर को 'धन-धान्य का नगर' भी कहा गया है क्योंकि 'श्री' का अर्थ है धन की देवी लक्ष्मी। इस स्थल के स्थापत्य महत्व की पहचान 1872 ई. में डा. बेगलर द्वारा की गई; जब यहां एक सुरंग व लक्ष्मण मंदिर उत्खनन में मिला।

एक अन्य किवदंती के अनुसार, सिरपुर का मूल नाम सबरीपुर था। यह नामकरण सबरी नामक भिक्षुणी के आधार पर किया गया था, जिसका उल्लेख रामायण में हुआ है। रामायण की कहानी के अनुसार, सबरी ऋषिमुख पर्वत के पश्चिम में पंपा नदी के तट पर निवास करती थी। यदि स्थानीय कथाओं को माना जाए तो महानदी की पहचान पंपा नदी तथा उसके पूर्व में स्थित पहाड़ियों को ऋषिमुख के रूप में माना जा सकता है। हालांकि, कनिंघम महानदी को पंपा नदी के रूप में नहीं मानता बल्कि उसने महसूस किया कि पंपा को सुक्तिमति के साथ जोड़ना अधिक उपयुक्त था।

सिरपुर छठी से दसवीं शताब्दी के मध्य बौद्ध धर्म का एक महत्वपूर्ण केन्द्र था तथा सातवीं शताब्दी में ह्वेनसांग ने यहां की यात्रा की थी। मार्च 2013 में दलाई लामा ने भी यहां की यात्रा की थी।

विष्णु भगवान को समर्पित लक्ष्मण मंदिर सातवीं शताब्दी से संबंधित था तथा इसे भारत में ईंटों द्वारा निर्मित सबसे सुंदर मंदिरों में से एक माना जाता है। इसका द्वार पत्थर का बना है। नक्काशी के लिए प्रसिद्ध इस मंदिर को सर्वप्रथम कनिंघम ने ढूंढा। यहां किए गए हाल ही के उत्खननों में 12 बौद्ध विहार, 1 जैन विहार, 22 शिव मंदिर, 5 विष्णु मंदिर, छठी शताब्दी का आयुर्वेदिक स्नान कुंड, एक भूमिगत अन्न भंडार, बुद्ध व महावीर की एकाश्म मूर्तियां मिली हैं। सिरपुर के अन्य प्रसिद्ध स्मारकों में गंधेश्वर मंदिर, चर्तुमुखी शिवलिंग, तथा महिसासुरमर्दिनी देवी की मूर्ति है।

thejobsyogi.com

सिरसा (29.53° उत्तर, 75.0° पूर्व)

सिरसा हरियाणा में स्थित है। इसे उत्तर भारत के सबसे प्राचीन स्थलों में से एक माना जाता है। इसका प्राचीन नाम सरिस्का था, जिसका उल्लेख महाभारत, पाणिनी की अष्टाध्यायी एवं दिव्यावदान ग्रंथों में प्राप्त होता है। महाभारत में सरिस्का के संबंध में यह वर्णित है कि नकुल ने जब पश्चिमी भाग पर विजय प्राप्त की तो उसने इस स्थान पर भी अधिकार कर लिया था। पाणिनी के विवरण में जैसा उल्लिखित है, उसके अनुसार यह नगर निःस्संदेह पांचवी शताब्दी ईसा पूर्व में एक अत्यंत समृद्ध नगर था।

स्थानीय परम्पराओं के अनुसार, इस शहर की स्थापना सारस नामक एक अज्ञात राजा ने सातवीं शताब्दी में की थी तथा यहां एक दुर्ग का निर्माण करवाया था। एक अन्य परंपरा के अनुसार, इस नगर का यह नाम सरस्वती नदी के नाम पर पड़ा, जो कभी इसके समीप ही प्रवाहित होती थी।

कई मध्यकालीन इतिहासकारों ने इसका उल्लेख सरसुती के नाम से किया है। सिरसा के समीप ही तराइन नामक प्रसिद्ध युद्ध क्षेत्र स्थित है, जहां पृथ्वीराज चौहान ने 1191 ई. में तराइन के प्रथम युद्ध में मुहम्मद गौरी को पराजित किया था। किंतु 1192 ई. में वह तराईन के द्वितीय युद्ध में गौरी से पराजित हो गया तथा बंदी बना लिया गया तथा बाद में उसकी हत्या कर दी गई। आगे चलकर सिरसा पहले दिल्ली सल्तनत का तथा फिर मुगल साम्राज्य का अंग बन गया।

1398 ई. में जब तैमूर ने दिल्ली की ओर अभियान किया था तो उसने सिरसा एवं उसके समीपवर्ती क्षेत्रों को तहस-नहस कर दिया था।

सित्तनवासल (10.45° उत्तर, 78.72° पूर्व)

सित्तनवासल तमिलनाडु के पुदुकोट्टाई नगर से 16 किमी. दूर इसके उत्तर-पश्चिमी दिशा में अवस्थित है। यह जैन मंदिरों की चित्रकारी एवं शैल गुफाओं के लिए प्रसिद्ध है। एक प्रमुख जैन स्थल के साथ ही यहां कई शैल गुफाएं भी हैं, जहां द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व में जैन भिक्षु निवास करते थे। यहां सातवीं शताब्दी के कई शैल मंदिर भी हैं। एक मंदिर में एक बरामदे सहित अजंता की शैली पर कई सुंदर चित्र भी बने हुए हैं। यहां की गुफाओं में ब्राह्मी लिपि का एक प्रारंभिक अभिलेख तथा सातवीं शताब्दी ईस्वी के कई अन्य अभिलेख भी पाए गए हैं।

पाषाण को काटकर बनाए गए मंदिर में नवीं शताब्दी ईस्वी की सुंदर चित्रकारी एवं स्थापत्य के दर्शन होते हैं। कुछ शोधकर्ताओं के अनुसार, ये चित्र पल्लव शासक महेन्द्रवर्मन प्रथम के शासनकाल से संबंधित हैं। अन्य विद्वानों के मतानुसार ये चित्र 9वीं शताब्दी ई. काल के हैं, जब पांड्य शासकों ने मंदिरों का जीर्णोद्धार कराया था। इन चित्रों को मंदिर के मंडप के स्तंभों, दीवारों एवं छत पर देखा जा सकता है।

सोमापुर महाविहार (25°1′ उत्तर, 88°58′ पूर्व)

पहाड़पुर गांव में अवस्थित सोमापुर या सोमापुरा, अब बांग्लादेश (नौगांव जिला) में, किसी समय अपने बौद्ध विहारों के लिए प्रसिद्ध था। 27 एकड़ से भी अधिक क्षेत्रफल में फैला ये स्थान 8वीं शताब्दी ई. से 17वीं शताब्दी ई. के बीच शिक्षा व ज्ञान का एक महत्वपूर्ण केंद्र था। यह महाविहार सर्वप्रथम वरेन्द्री-मगध के नरेश धर्मपाल विक्रमशिला (770-810 ई.) ने बनवाया था। महाविहार परिसर में इस राजा के नाम की मिट्टी की मुहर प्राप्त हुई है। इस केंद्र पर बारी-बारी से बौद्ध, जैन तथा हिन्दुओं का कब्जा रहा है। यहां से प्राप्त कलाकृतियों से तत्कालीन निवासियों के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

यह महाविहार उन गिने-चुने शैक्षिक केंद्रों में से एक है जो दक्षिण एशिया तथा भारत में मुस्लिम आक्रमण से बचे रहे। इस विशाल चतुर्भुज आकार के ढांचे के ऐतिहासिक व सांस्कृतिक महत्व को 19वीं शताब्दी के आरम्भ में ब्रिटिश विद्वान बकमैन हैमिल्टन ने पहचाना। सोमापुर महाविहार को 1919 में एक संरक्षित पुरातात्विक स्थल घोषित किया गया तथा 1985 में यूनेस्को द्वारा इसे विश्व धरोहर स्थल के रूप में पदनामित किया गया। सोमपुरा महाविहार के कारण पहाड़पुर में जो वृहद् स्तर पर स्थापत्य कला का इस क्षेत्र में प्रादुर्भाव हुआ, उसने म्यामांर के पागन मंदिरों, मध्य जावा के लोरो जोगरंग तथा चांदी सेवर मंदिरों की निर्माण कला को गहरे रूप से प्रभावित किया। यहां तक की इसने सुदूर कम्बोडिया के बौद्ध स्थापत्य को भी प्रभावित किया।

सोमनाथ (20°53′ उत्तर, 70°24′ पूर्व)

सोमनाथ गुजरात के काठियावाड़ क्षेत्र में जूनागढ़ से लगभग 79 किमी. दूर बंदरगाह नगर वारासल के ठीक बाहर स्थित है। इसका पुराना नाम प्रभास पाटन था। सोमनाथ का शिव मंदिर, भारत के 12 सबसे प्रमुख शिव मंदिरों में से एक है। गाथाओं के अनुसार, सोमनाथ के मूल शिव मंदिर का निर्माण चंद्रदेवता भगवान सोमराज ने सोने से करवाया था, जिसे रावण ने पुनः चांदी से बनवाया, फिर कृष्ण ने काष्ठ से एवं सबसे अंत में 10वीं शताब्दी में भीमदेव सोलंकी ने बनवाया।

इस मंदिर में 300 से अधिक संगीतकार तथा 500 नर्तकियां रहती थीं। यहां पर 300 नाई रहा करते थे जो यहां आने वाले श्रद्धालुओं के केश एवं दाढ़ी-मूंछ काटते थे। महमूद गजनवी ने जब अलबरूनी से इस मंदिर के संबंध में सुना तो उसने इसे लूटने की योजना बनाई। 1024 ई. में महमूद गजनवी ने इस मंदिर पर आक्रमण किया तथा इसे जी भरकर लूटा। वह यहां से कई ऊंटों में भरकर सोने-चांदी एवं हीरे-जवाहरात ले गया।

12वीं शताब्दी में गुजरात के शासक कुमारपाल ने इस मंदिर का पुनर्निर्माण करवाया। यद्यपि 1299 ई. में अलाउद्दीन खिलजी की सेना ने एक बार फिर इस मंदिर को लूटा एवं उसे नष्ट कर दिया।

thejobsyogi.com

सोमनाथ का मंदिर छः बार नष्ट किया गया तथा प्रत्येक बार उसे पुनर्निर्मित किया गया। 1706 ई. में मुगल सम्राट औरंगजेब द्वारा इसके विध्वंस के उपरांत सरदार वल्लभ भाई पटेल के सहयोग से 1950 में इसे सातवीं बार बनाया गया।

सोपारा (19°47′ उत्तर, 72.8° पूर्व)

सोपारा मुंबई से 55 किमी. दूर उत्तर में ठाणे जिले में स्थित है। सोपारा एक प्राचीन बंदरगाह तथा एक प्रमुख अंतरराष्ट्रीय व्यापारिक केंद्र था। 'पेरिप्लस आफ इरीथ्रियन सी' एवं टालमी ने इसे 'सूर्पारक' कहा है, जबकि अरब इसे सुबारा कहते हैं। बुद्ध के समय, सोपारा एक प्रमुख बंदरगाह था तथा यहां से विभिन्न देशों के साथ व्यापार होता था। संभवतः इसी कारण अशोक ने अपना एक स्तंभ लेख यहां स्थापित करवाया। ओल्ड टेस्टामेंट में ओफिर नाम से सोपारा का उल्लेख उस स्थान के रूप में किया गया है, जहां से राजा सोलोमन स्वर्ण लेकर आया था।

मौर्यों के समय, उत्तरी भारत एवं मध्य भारत के मध्य संवाद सोपारा के माध्यम से ही होता था। एक व्यापारिक मार्ग सोपारा को उज्जैन से जोड़ता था। यह मार्ग नासिक, पीतलखोड़ा, अजन्ता एवं महेश्वर से होकर गुजरता था। इस मार्ग के साथ स्थित पाषाण गुफाओं की उपस्थिति से इस व्यापारिक मार्ग की पुष्टि होती है।

प्रारंभिक मध्यकाल तक सोपारा एक महत्वपूर्ण स्थल बना रहा। शिलाहार वंश के 11वीं शताब्दी के एक ताम्रलेख में सोपारा का एक प्रसिद्ध बंदरगाह के रूप में उल्लेख किया गया है। अरब यात्रियों के विवरणानुसार सोपारा की चमड़े की वस्तुएं जिन्हें विभिन्न रंगों से रंगा जाता था, अंतरराष्ट्रीय ख्याति की थीं। 13वीं शताब्दी में भारत आने वाले वेनिस के यात्री मार्कोपोलो ने सोपारा का उल्लेख एक प्रमुख बंदरगाह के रूप में किया है तथा इस बंदरगाह से जाने वाली विभिन्न वस्तुओं की सूची भी दी है।

श्रावस्ती (27°31′ उत्तर, 82°3′ पूर्व)

श्रावस्ती उत्तर प्रदेश में गोरखपुर से लगभग 195 किमी. की दूरी पर स्थित है। छठीं शताब्दी ईसा पूर्व में यह उत्तरी कोसल महाजनपद की राजधानी थी। बुद्ध के समय यह गंगा के मैदान का सबसे बड़ा नगर था। वर्षाकाल में प्रतिवर्ष जब संघ के समस्त अनुयायी एक ही स्थान पर वास करते थे, बुद्ध भी अपना वार्षिक वर्षाकाल श्रावस्ती में ही बिताते थे। उन्होंने अपने जीवन के 25 वर्षाकाल 'वस्सवास' यहीं बिताए। श्रावस्ती का एक नाम सहेत-महेत भी प्राप्त होता है। प्रसिद्ध व्यापारी सुदत्त या अनाथपिण्डक, जो बौद्ध का अनन्य भक्त था, श्रावस्ती का ही था। प्रसिद्ध जेतवन विहार श्रावस्ती में ही था, जो समस्त विश्व के बौद्ध धर्म के अनुयायियों को आकर्षित करता था। आनन्दकुटी तथा गंधकुटी के अवशेष से पवित्रता का प्रभामंडल प्रवाहित होता है क्योंकि ये वही स्थान हैं जहां प्रभु जेतवन विहार यात्रा के दौरान रुके थे।

श्रावस्ती में ही बुद्ध ने न केवल त्रिपिटकों की व्याख्या की अपितु उन्होंने छह विरोधियों द्वारा चुनौती देने पर अपने जीवनकाल का एक ही चमत्कार यहीं पर किया। अपने छः विरोधियों को भी यहां बौद्ध धर्म की दीक्षा दी।

श्रावस्ती में जेतवन विहार के समीप ही कई श्रीलंकाई, चीनी, बर्मी एवं थाई मठ एवं मंदिर भी स्थित हैं।

श्रावस्ती में एक जैन मंदिर के ध्वंसावशेष भी पाए गए हैं। जैनियों के अनुसार, उनके तीसरे तीर्थंकर स्वयंभूनाथ का जन्म श्रावस्ती में ही हुआ था।

श्रीनगर (34°5′ उत्तर, 74°47′ पूर्व)

श्रीनगर वर्तमान में जम्मू-कश्मीर राज्य की राजधानी है। इस नगर की स्थापना 72 ईस्वी में प्रवरसेन नामक शासक द्वारा की गई थी। यह ब्राह्मणवाद एवं बौद्ध साहित्यिक परम्पराओं का केंद्र था।

जम्मू-कश्मीर के हिन्दू शासकों ने श्रीनगर में स्थित अपनी राजधानी में मुस्लिम आक्रांताओं का 14वीं शताब्दी तक दृढ़तापूर्वक प्रतिरोध किया। यद्यपि इसके बाद यह मुस्लिम शासक शाह मिर्जा के नियंत्रण में आ गया। श्रीनगर के सुल्तान अपनी धार्मिक सहिष्णुता के लिए प्रसिद्ध थे। 'कश्मीर का अकबर' कहा जाने वाला जैन-उल-अबादीन इनमें से एक था।

पूरे मध्यकाल में श्रीनगर संस्कृत के अध्ययन का एक प्रमुख केंद्र बना रहा। राजतरंगिणी के लेखक कल्हण 1150 ई. के आसपास श्रीनगर में ही निवास करते थे।

अकबर ने 1585 में श्रीनगर के शासक यूसुफ खान को पराजित कर नगर पर अधिकार कर लिया। मुगलों ने यहां कई प्रसिद्ध बाग बनवाए। अकबर ने यहां चिनार के वृक्षों का रोपण करवाकर निसिम बाग बनवाया। चश्मा शाही, शालीमार बाग एवं निशात बागों की स्थापना जहांगीर ने करवाई।

श्रीनगर कई दरगाहों के लिए भी प्रसिद्ध है, इनमें हजरतबल दरगाह, अखुंद मुल्लाशाह की दरगाह एवं रोजाबेल का ईसाई तीर्थ प्रमुख हैं।

शृंगेरी (13.42° उत्तर, 75.25° पूर्व)

शृंगेरी कर्नाटक में है। इसकी स्थापना आदि शंकराचार्य ने की थी। शंकराचार्य ने अद्वैत दर्शन के प्राचारार्थ देश के चार विभिन्न कोनों में चार पीठों की स्थापना की थी, जिनमें से पहली शृंगेरी में थी। उन्होंने यहां शारदा देवी की प्रतिमा भी स्थापित करवाई। श्रृंगेरी शारदा पीठ नाम से प्रसिद्ध है तथा दर्शन एवं अध्यात्म के शिक्षार्थ हेतु एक प्रमुख केंद्र है।

ऐसा कहा जाता है कि शंकर ने इसे उन स्थानों में से एक घोषित किया जहां प्राकृतिक वैरभाव का अस्तित्व नहीं है, क्योंकि उन्होंने एक सांप को अपने फन द्वारा एक मेढक जो कि प्रसवकाल में था, की सूर्य की तेज किरणों से रक्षा करते देखा था।

श्रीरंगम (10.87° उत्तर, 78.68° पूर्व)

भगवान विष्णु के अवतार, भगवान श्री रंगनाथ का वास स्थल, श्रीरंगम तमिलनाडु के तिरुचिरापल्ली जिले में कावेरी नदी के एक मनोहारी द्वीप पर स्थित है।

thejobsyogi.com

श्रीरंगम तमिलहम शासकों द्वारा संरक्षित एवं संवर्धित वर्षों पुरानी भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के प्रमुख रूप का प्रतिनिधित्व करता है। इसकी जड़ें रामायण में खोजी जा सकती हैं। श्रीरंगम के मंदिर का निर्माण विभिन्न कालों में विभिन्न शासक वंशों—चोल, पांड्य, होयसल, विजयनगर एवं नायकों के समय हुआ। इस मंदिर के सात विशाल भाग एवं 21 प्रभावशाली गोपुरम हैं।

यह मंदिर अपनी सुंदर वास्तुकला एवं आभूषणों के विशाल संग्रहण के कारण प्रसिद्ध है। चौथी दीवार के पीछे ही हजार स्तंभों वाला कक्ष है, जो मंदिर के पांचवें हिस्से से संबंधित है। यहां एक अनोखा तीर्थ तुलुक्का नचियार है, जो कि ईश्वर के मुस्लिम भक्त से संबद्ध है।

श्रीरंगपट्टनम (12.41° उत्तर, 76.70° पूर्व)

श्रीरंगपट्टनम कर्नाटक में मैसूर से थोड़ी दूर, मैसूर-बंगलुरू हाइवे पर कावेरी नदी के तट पर स्थित एक मनोहारी स्थल है।

एक प्रसिद्ध हिन्दू धार्मिक स्थल श्रीरंगपट्टनम का यह नाम 12वीं सदी में श्रीरंगनाथस्वामी (विष्णु) के प्रसिद्ध मंदिर के निर्माणोपरांत किया गया। 1133 ई. में प्रसिद्ध दार्शनिक रामानुज ने यहीं कार्य किया था।

1454 ई. में विजयनगर के एक शासक ने यहां एक दुर्ग का निर्माण करवाया। 1616 ई. में यह मैसूर के वाडियार वंश की राजधानी बना। श्रीरंगपट्टनम मुख्य रूप से हैदर अली से संबंधित है, जिसने मैसूर के वाडियार वंश को अपदस्थ कर सत्ता हस्तगत कर ली थी। हैदर अली के पश्चात उसका पुत्र टीपू सुल्तान मैसूर का शासक बना। टीपू का 17 वर्षीय शासनकाल 1799 ई. में चतुर्थ आंग्ल-मैसूर युद्ध के उपरांत समाप्त हुआ, जब वह इस युद्ध में मारा गया।

टीपू के श्रीरंगपट्टनम को इस युद्ध के उपरांत अंग्रेजों ने तहस-नहस कर दिया। अंग्रेज इसे 'सेरिंगपटम' कहते थे। यद्यपि इसके पश्चात भी यहां के दुर्ग का अधिकांश हिस्सा सुरक्षित रहा, जिसे आज भी देखा जा सकता है, जिनमें द्वार, परकोटे, कठोर तहखाने तथा गुम्बदाकार जामी मस्जिद मीनारों के साथ सम्मिलित हैं।

सुल्तानगंज (25.24° उत्तर, 86.73° पूर्व)

सुल्तानगंज बिहार के भागलपुर जिले में स्थित है। परम्परानुसार प्रारंभ में यह 16 महाजनपदों में से एक अंग महाजनपद का हिस्सा था। महाभारत के दिनों में, पांडवों के छठे भाई कर्ण का यहां शासन था। चम्पा (आधुनिक चम्पानगर) एवं जानूगिरी—उस समय इस नाम से सुल्तानगंज को जाना जाता था—में कर्ण के किले थे।

सुल्तानगंज पाल एवं सेन वंशों के शासन (730 ई. से 1199 ई.) के समय भी प्रसिद्ध था। उस समय यह नगर कला एवं स्थापत्य के सुंदर नमूनों के लिए जाना जाता था। यहां से पुरातात्विक महत्व की कई वस्तुएं, जैसे—स्तूप, मुहरें, सिक्के एवं मिट्टी की बनी मूर्तियां इत्यादि पाई गई हैं। सुल्तानगंज से प्राप्त विभिन्न वस्तुओं में सर्वाधिक उल्लेखनीय भगवान बुद्ध की साढ़े सात फुट ऊंची कांस्य प्रतिमा है, जिसे सुंदर परिधानों से युक्त किया गया है। यह प्रतिमा धातु-शिल्प का एक सुंदर नमूना है। परिधानों एवं आभूषणों की बनावट अत्यंत प्रशंसनीय है। अब यह प्रतिमा बर्मिंघम संग्रहालय में रखी हुई है।

सूरत (21.18° उत्तर, 72.83° पूर्व)

गुजरात राज्य के दक्षिण-पूर्वी भाग में स्थित सूरत नामक नगर ताप्ती नदी एवं खंभात की खाड़ी के मुहाने पर स्थित है। ऐसी मान्यता है कि इस शहर की स्थापना गोपी नामक व्यक्ति ने की थी। इसी ने यहां 1516 ई. में गोपी जलाशय बनवाया तथा इस क्षेत्र का नाम सूरजपुर या सूर्यपुर रखा। सूरत का यह नाम 1520 में रखा गया। यह एक प्रसिद्ध बंदरगाह के रूप में विकसित हुआ, जहां से वस्त्रों एवं सोने का व्यापार होता था। वस्त्र निर्माण एवं पोत निर्माण यहां के प्रमुख उद्योग हैं। मुगल सम्राट मुहम्मद शाह ने जयपुर के जयसिंह को सूरत का राज्यपाल नियुक्त किया था। शाहजहां के समय मुगलों की प्रमुख टकसालों में से एक सूरत में ही स्थित थी। जब सर टामस रो ने जहांगीर से कारखाने की स्थापना की अनुमति प्राप्त कर ली तो अंग्रेजों ने अपनी प्रथम व्यापारिक कोठी यहीं स्थापित की। भारत में रेल व्यवस्था के प्रारंभ होने से सूरत और समृद्ध बन गया। उच्च कोटि के मलमल निर्माण की प्राचीन कला पुनर्जीवित हुई तथा सूरत के सूती तथा रेशमी कपड़े, जरी तथा सोने-चांदी की वस्तुएं प्रसिद्ध हुईं।

thejobsyogi.com

सुरकोटदा (23.25° उत्तर, 69.67° पूर्व)

सुरकोटदा गुजरात के कच्छ क्षेत्र में स्थित है। लगभग 2300 ई. पू. के आसपास, हड़प्पा सभ्यता के लोगों ने यहां एक सशक्त दुर्ग बनाया था। यहां मिट्टी, भूसे एवं ईंटों से आवासगृहों का भी निर्माण किया गया। यहां के घरों में स्नानागार एवं समुचित जल निकासी की व्यवस्था थी। यहां से हड़प्पाई लिपि युक्त चित्रित भाण्ड एवं तांबे से बनी वस्तुएं प्राप्त की गई है। यहां से एक विशिष्ट प्रकार की हड़प्पाई मुहर भी मिली हैं।

सुरकोटदा से लिंग के आकार की कुछ मिट्टी से निर्मित आकृतियां पाई गई हैं, जिससे सैंधववासियों द्वारा लिंग पूजा के अनुमानों की पुष्टि होती है। यहां से घोड़े की अस्थियों की प्राप्ति एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इससे यह अनुमान लगाया गया है कि सैंधववासी संभवतः घोड़े से परिचित थे। यहां से अन्य वस्तुएं भी प्राप्त हुई हैं—जैसे हड़प्पा की विशिष्ट मुहरें, तांबे की भारी छेनी तथा तांबे के मनकों का भंडार।

यहां के निवासी मृत शरीर को एक अंडाकार गड्ढे में दफनाते थे तथा उसके साथ जार एवं अन्य वस्तुएं रखते थे। हड़प्पा सभ्यता में शवाधान की यह अनोखी परम्परा थी, जिसे कलश शवाधान के नाम से जाना जाता था। जोकि यह इंगित करता है कि संभवतः हड़प्पावासी अपनी अलग प्रणाली तथा सभ्यताओं के जमावड़े के साथ पूर्वकालीन सभ्यता के साथ रहते थे।

इसके ऊपरी स्तर से श्वेत, कृष्ण एवं लाल रंग के चित्रित भाण्डों की प्राप्ति से ऐसा अनुमान लगाया गया है कि कालांतर में इस क्षेत्र में नए व्यक्ति समूहों का वास हो गया था।

तगार/तेर (18°10′ उत्तर, 76°02′ पूर्व)

महाराष्ट्र के उस्मानाबाद में स्थित आधुनिक तेर की पहचान तगार के रूप में की गई है। शक-सातवाहन काल में यह एक प्रसिद्ध व्यापारिक केंद्र था तथा पूर्वी दक्कन से भड़ौच जाने वाले व्यापारिक मार्ग पर स्थित था। यह मार्ग पैठन एवं नासिक से होकर गुजरता था।

पुरातात्विक उत्खननों से इस बात की जानकारी प्राप्त हुई है कि यहां लोगों ने संभवतः चतुर्थ—तृतीय शताब्दी ईसा पूर्व से ही रहना प्रारंभ कर दिया था। तथा चौथी शताब्दी ईस्वी तक रहते रहे। सिक्के के एक ढेर, शकों के सिक्कों, सातवाहनों के सिक्कों तथा घोंघे एवं कांच की चूड़ियों की प्राप्ति से इस स्थल की शहरी विशेषताओं की पुष्टि होती है। यहां से प्राप्त सर्वाधिक महत्वपूर्ण वस्तु हाथी दांत से बनी नारी की एक प्रतिमा है।

यहां उत्खनन से द्वितीय शताब्दी ई. का ईंटों से निर्मित एक बड़ा स्तूप एवं ईंटों से बनी एक अन्य इमारत के अवशेष भी पाए गए हैं। इस प्रकार तगार ईसा की प्रारंभिक शताब्दियों में वाणिज्यिक एवं धार्मिक महत्व का एक प्रमुख केंद्र था।

तालिकोटा (16°28′ उत्तर, 76°18′ पूर्व)

तालिकोटा, कर्नाटक के बीजापुर जिले में स्थित है। यह स्थान विजयनगर एवं बहमनी के सुल्तानों के मध्य 23 जनवरी, 1565 ईस्वी में हुए भीषण युद्ध के लिए प्रसिद्ध है। इस स्थान के राक्षस एवं तंगड़ी नामक दो गांवों में हुआ यह रक्तरंजित युद्ध दक्षिण भारत के इतिहास के निर्णायक युद्धों में से एक था। यह युद्ध विजयनगर के शासक रामराय तथा बीजापुर, अहमदनगर, गोलकुंडा एवं बीदर की संयुक्त सेनाओं के मध्य लड़ा गया था, जिसमें विजयनगर के शासक की करारी हार हुई।

इस युद्ध ने विजयनगर साम्राज्य के वैभव को समाप्त कर दिया। इसके उपरांत इस क्षेत्र में पहले बीजापुर एवं फिर 17वीं शताब्दी में पेशवाओं का प्रभुत्व स्थापित हुआ। यद्यपि विजयनगर के साम्राज्य ने अरविंदु वंश के शासकों के अधीन 17वीं शताब्दी के प्रारंभ तक अपना अस्तित्व बनाए रखा।

ताम्रलिप्ती/तामलुक (22.3° उत्तर, 87.92° पूर्व)

ताम्रलिप्ती पश्चिम बंगाल में गंगा के मुहाने पर स्थित था। इसकी पहचान वर्तमान तामलुक से की जाती है। यह पूर्वी भारत का एक महत्वपूर्ण बंदरगाह एवं व्यापारिक केंद्र था। ताम्रलिप्ती एक ओर, भूमि एवं जलमार्ग द्वारा तक्षशिला से एवं दूसरी ओर समुद्री मार्ग द्वारा दक्षिण-पूर्व एशिया से जुड़ा था। यहां से प्राप्त वस्तुएं ताम्र पाषाण युग से संबंधित हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि यह स्थान संभवतः एन.बी.पी. डब्ल्यू चरण में महत्वपूर्ण बना। मौर्यों एवं शुंगों के समय भी यह एक प्रसिद्ध स्थल था।

यहां से कई ऐसी वस्तुएं प्राप्त हुई हैं, जिनसे यह स्पष्ट होता है कि प्रथम एवं द्वितीय शताब्दी ईस्वी में ताम्रलिप्ति के रोमन साम्राज्य के साथ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष व्यापारिक संबंध थे। बड़ी संख्या में पकी मिट्टी की बनी वस्तुओं, सिक्कों एवं अर्द्ध-कीमती पत्थरों के मनकों की प्राप्ति इसकी नगरीय विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करती है।

प्लिनी एवं टालमी के विवरणों में भी ताम्रलिप्ति का उल्लेख प्राप्त होता है। चीनी यात्रियों ह्वेनसांग एवं इत्सिंग ने ताम्रलिप्ति की यात्रा की थी। फाह्यान एवं ह्वेनसांग दोनों ने अपने विवरणों में ताम्रलिप्ति का उल्लेख बौद्ध धर्म के प्रमुख केंद्र के रूप में किया है। उत्तर गुप्त काल तक ताम्रलिप्ति प्रमुख व्यापारिक एवं वाणिज्यिक केंद्र बना रहा।

तराइन (29.78° उत्तर, 76.94° पूर्व)

तराइन हरियाणा में थानेश्वर से मात्र 14 किमी. की दूरी पर स्थित है। यह स्थान पृथ्वीराज तृतीय एवं मुहम्मद गौरी के मध्य 1191 एवं 1192 में हुए तराइन के क्रमशः प्रथम एवं द्वितीय युद्धों के बाद प्रसिद्ध हुआ। इन युद्धों ने भारत में दिल्ली सल्तनत की स्थापना का मार्ग प्रशस्त कर दिया।

1191 ई. में तराइन के प्रथम युद्ध में पृथ्वीराज चौहान ने मुहम्मद गौरी को पराजित कर दिया। किंतु मुहम्मद गौरी ने पुनः अपनी शक्ति को संगठित किया तथा अगले ही वर्ष 1192 ई. में तराइन के द्वितीय युद्ध में मुहम्मद गौरी ने पृथ्वीराज चौहान को पराजित कर बंदी बना लिया तथा मारा डाला। मु. गौरी की यह विजय अत्यधिक मुहत्वपूर्ण उपलब्धि थी, क्योंकि निस्संदेह पृथ्वीराज चौहान तत्कालीन समय का सबसे शक्तिशाली भारतीय राजा था।

तराइन का एक अन्य युद्ध इल्तुतमिश एवं कुतुबुद्दीन ऐबक के एक सेनापति ताजुद्दीन यल्दौज के बीच हुआ। इस युद्ध में यल्दौज, इल्तुतमिश द्वारा पराजित हो गया। इससे 1216 ई. में दिल्ली सल्तनत ज्यादा संगठित होकर उभरा। कभी-कभी इस युद्ध को तराइन का तृतीय युद्ध भी कहा जाता है।

thejobsyogi.com

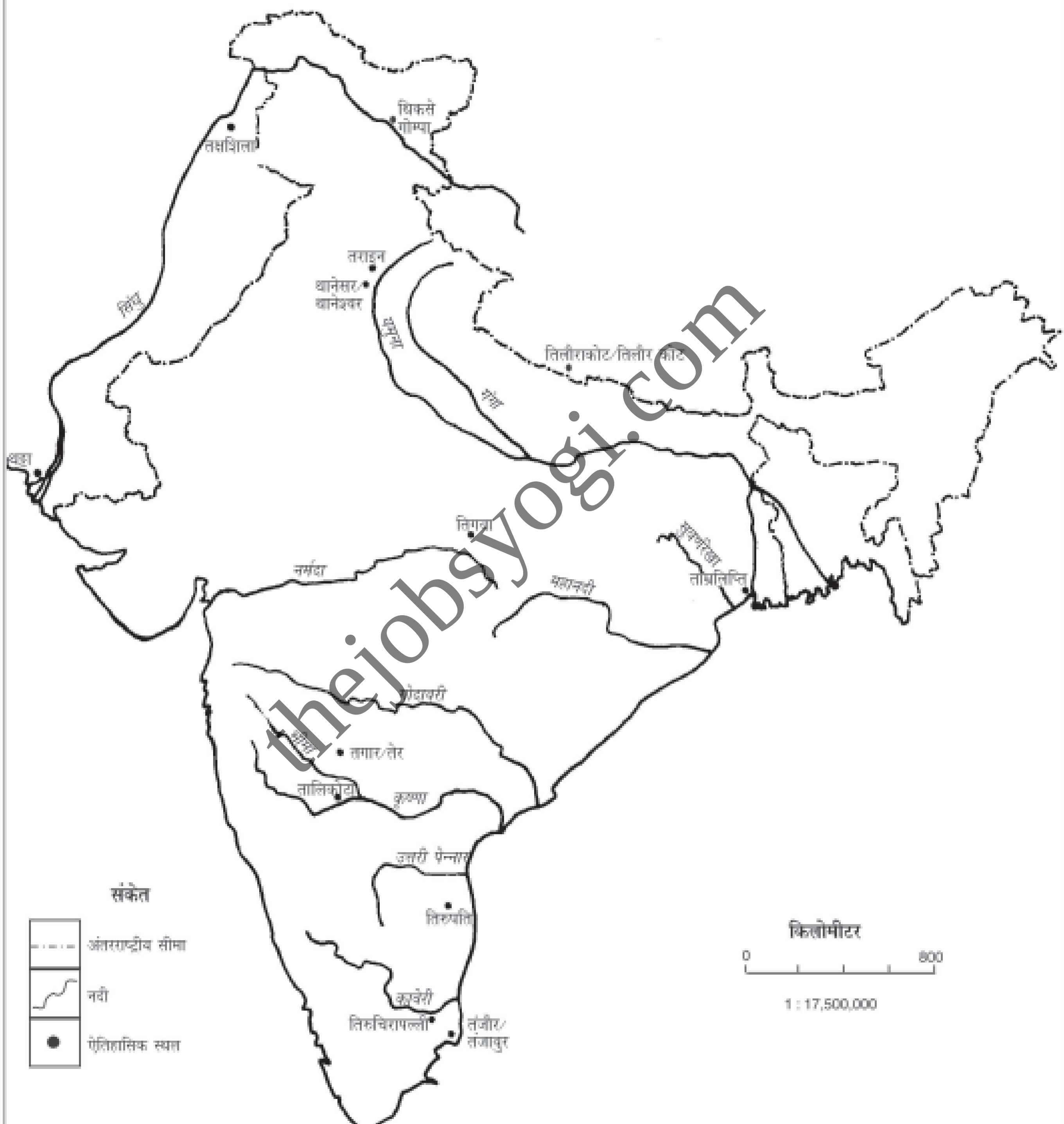

thejobsyogi.com

तक्षशिला/तक्शशिला/शाह-धेरी (33°44′ उत्तर, 72°47′ पूर्व)

तक्षशिला ग्रांड-ट्रंक रोड पर पाकिस्तान में रावलपिंडी से 30 किमी. दूर उत्तर-पश्चिम दिशा में अवस्थित है। यह एशिया के सबसे महत्वपूर्ण पुरातात्विक स्थलों में से एक है। ऐलेक्जेन्डर कनिंघम, भारतीय पुरातत्व विभाग के प्रथम महानिदेशक, ने प्राचीन तक्षशिला सहित शाह-धेरी की पहचान 1863-64 में की थी। चीन को पश्चिमी विश्व से जोड़ने वाले प्रसिद्ध सिल्क मार्ग पर स्थित होने के कारण यह सामरिक दृष्टि से भी एक महत्वपूर्ण स्थल था एवं इसी वजह से इसका भरपूर आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास भी हुआ। प्रथम से पांचवीं शताब्दी के मध्य तक्षशिला अपनी प्रसिद्धि की पराकाष्ठा पर पहुंच गया। समस्त तक्षशिला घाटी में कई बौद्ध इमारतें एवं स्मारक स्थापित किए गए हैं।

प्राचीन काल में यह गांधार जनपद की राजधानी थी। यहीं कला की गंधार शैली का विकास हुआ। प्राचीन भारत में शिक्षा का यह एक महत्वपूर्ण केंद्र था। प्रसिद्ध चिकित्सक जीवक ने चिकित्सा शास्त्र की शिक्षा यहीं प्राप्त की थी।

मौर्यों के अधीन तक्षशिला प्रांतीय मुख्यालय था। बिन्दुसार ने तक्षशिला के विद्रोह का दमन करने के लिए अशोक को भेजा था। मौर्यों ने तक्षशिला से पाटलीपुत्र तक एक राजकीय मार्ग भी निर्मित कराया था।

हमें यहां सिरकप जैसे स्थल भी प्राप्त होते हैं, जहां विभिन्न कालों में बने हुए बहुत से मंदिर एवं मठ पाए गए हैं।

ह्वेनसांग के विवरणानुसार कनिष्क ने यहां एक स्तूप बनवाया था। जांदियाल का मंदिर यहां के प्राचीनतम मंदिरों में से एक है।

थानेश्वर/थानेसर (29.96° उत्तर, 76.83° पूर्व)

थानेश्वर कुरुक्षेत्र के समीप हरियाणा में स्थित है। छठी शताब्दी ईसा पूर्व के लगभग यह पुष्यभूति शासकों की राजधानी था। प्रसिद्ध शासक हर्षवर्धन इसी वंश से संबंधित था तथा उसका जन्म भी यहीं हुआ था।

हर्षवर्धन के भाई राज्यवर्धन की बंगाल में गौड़ राज्य के शासक शशांक ने धोखे से हत्या कर दी। इसके पश्चात हर्षवर्धन थानेश्वर के राजसिंहासन पर बैठा। बाद में हर्षवर्धन ने अपनी राजधानी थानेश्वर से कन्नौज स्थानांतरित कर दी, जो शक्ति का केंद्र बन गया।

थानेश्वर हिन्दुओं की एक पवित्र नगरी है क्योंकि लिंग के रूप में शिव की पूजा सर्वप्रथम यहीं की गई थी।

चीनी यात्री ह्वेनसांग ने थानेश्वर की यात्रा की थी तथा इसे एक समृद्धशाली नगर बताया था।

शेख चिल्ली जलाल का मकबरा, चीनी मस्जिद एवं पाथर मस्जिद इत्यादि यहां की प्रमुख इमारतों में से हैं। इनसे यह भी इंगित होता है कि यह सघन सूफीवाद का एक प्रमुख केंद्र था।

तंजावुर (10°47′ उत्तर, 79°8′ पूर्व)

तंजावुर (या तंजौर) तमिलनाडु में स्थित है। यह विशाल चोल साम्राज्य की राजधानी थी। बाद में तंजावुर पर नायकों एवं मराठों का अधिकार रहा।

तंजौर राजराजा चोल (985-1012 ई.) द्वारा निर्मित वृहदेश्वर मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। भारत के सभी मंदिरों में इस मंदिर का विमान सबसे ऊंचा है। (62 मी. एवं 13 मंजिला, इसके शिखर पर एक गुम्बद है)। यह एक भव्य मंदिर है। इसकी अवधारणा तथा इसके स्तंभों की सटीक ज्यामितीय रचना अत्यंत प्रशंसनीय है। इस मंदिर को विश्व धरोहर सूची में सम्मिलित किया गया है। इस मंदिर के प्रवेश द्वार पर एक ही ग्रेनाइट पत्थर को तराश कर बनाए गए नंदी की एक विशाल मूर्ति है, जो भारत में दूसरी सबसे बड़ी प्रतिमा है। कई बड़े ग्रेनाइट खंडों से मिलकर बने इस मंदिर में शिव, विष्णु एवं दुर्गा की सुंदर प्रतिमाएं स्थापित की गई हैं।

मुख्य मंदिर में एक विशाल शिव लिंग है। मंदिर की आंतरिक दीवारों की सज्जा पर चोल काल का प्रभाव है। अन्य छोटे मंदिरों का निर्माण मुख्य मंदिर के बाद किया गया था। मंदिर के अंदर स्थित संग्रहालय में चोलों की कई दुर्लभ वस्तुएं देखी जा सकती हैं। मदुरई के नायकों ने 1500 ईस्वी के समीप यहां सरस्वती महल का निर्माण प्रारंभ करवाया, किंतु इसे तंजौर के मराठा शासकों ने पूरा करवाया। महाराजा सरफोजी द्वारा स्थापित पुस्तकालय में लगभग 30,000 पुस्तकों का संग्रह है, जिनमें से कई पाण्डुलिपियां तो अत्यंत दुर्लभ हैं। यहां ताड़ पत्र पर लिखित पुस्तकें एवं कई यूरोपीय पुस्तकें भी हैं।

तंजौर हस्तकला, कांच पर चित्रकारी, हाथ के बुने रेशम एवं कांसे की वस्तुओं के लिए भी प्रसिद्ध है।

थट्टा (24°44′ उत्तर, 67°55′ पूर्व)

थट्टा वर्तमान पाकिस्तान के सिंध प्रांत में स्थित है। प्रारंभ में यह ब्राह्मण शाही राजवंश के अधीन था। किंतु 712 ई. में सिंध पर मु. बिन कासिम के आक्रमण के उपरांत, यह अरबों के नियंत्रण में आ गया। अरबों के शासन के समय यह कला एवं संस्कृति के एक महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में विकसित हुआ।

12वीं शताब्दी ईस्वी में मु. गौरी ने इसे अरबों से छीन लिया एवं वह दिल्ली सल्नत का हिस्सा बन गया। बाद में दिल्ली सल्तनत का शासक मु. बिन तुगलक थट्टा अभियान के समय ही मर गया था। फिरोज तुगलक का अंतिम अभियान थट्टा के विरुद्ध ही था।

आगे चलकर थट्टा मुगल साम्राज्य का हिस्सा बन गया एवं मुगल साम्राज्य के पतन के साथ ही इस पर एक बलूची जनजाति—तालपुरा के अमीरों का कब्जा हो गया। यह अधिकार उस समय तक बना रहा, जब तक 1843 में सर चार्ल्स नेपियर ने सिंध पर अधिकार नहीं कर लिया।

थिकसे गोम्पा (लगभग 34° उत्तर, 77° पूर्व)

थिक्से गोम्पा अथवा मठ जम्मू-कश्मीर के लद्दाख में लेह के लगभग 19 कि.मी. पूर्व में थिक्से गांव की पहाड़ी के ऊपर अवस्थित है।

thejobsyogi.com

सिंधु घाटी में 3600 मी. की ऊंचाई पर स्थित गोम्पा, बौद्ध धर्म की गेलुपा शाखा से संबंधित है। थिक्से मठ की संरचनात्मक रूपरेखा, तिब्बत के ल्हासा में स्थित पोताला पैलेस से गहरे रूप से मिलती-जुलती है, जो पहले दलाई लामा का आधिकारिक स्थान था। भवन परिसर के सबसे ऊंचे स्तर पर स्तूप बनाया गया है जिसमें एक पाषाण स्तंभ है। यह बारह मंजिला परिसर है, जिसमें बौद्ध कला से संबंधित कई वस्तुएं जैसे स्तूप, मूर्तियां, थांगका, भित्ति-चित्र तथा तलवारें आदि रखीं हैं। 1970 में इस मठ की 14वें दलाई लामा द्वारा की गई यात्रा की स्मृति में बनाया गया मैत्रेय मंदिर अत्यंत सुंदर है तथा इसमें मैत्रेय की 15 मी. ऊंची मूर्ति है। यह लद्दाख की सबसे बड़ी मूर्ति है। गोम्पा का इतिहास 15वीं शताब्दी के आरम्भिक दशकों से शुरू होता है, जब गेलुग संप्रदाय जिन्हें अक्सर 'यलो हैट्स' (भी कहा जाता है) के संस्थापक जे सोंगरवापा ने तिब्बत के दूर-दराज के क्षेत्रों में नए संप्रदाय की शिक्षाओं को फैलाने के लिए अपने शिष्यों को भेजा था। उनके शिष्यों में से एक शेख जेंगपो और उसके शिष्य पालडन जेंगपो को इस मठ के निर्माण का श्रेय दिया जाता है।

तिगवा (23.71° उत्तर, 80.04° पूर्व)

तिगवा मध्य प्रदेश के जबलपुर जिले में स्थित है तथा कंकाली देवी के मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। इस मंदिर में स्थापत्य की प्रारंभिक विशेषताओं यथा—सपाट छत, चौकोर गर्भगृह एवं संकरा बरामदा इत्यादि के दर्शन होते हैं। यद्यपि सपाट छतों में पानी के निकास की समुचित व्यवस्था थी। मंदिर की दीवारें सामान्य हैं किंतु प्रवेश द्वार अत्यंत कलात्मक हैं तथा इन पर विभिन्न नदी देवियों यथा—गंगा, यमुना इत्यादि की सुंदर आकृतियां बनी हुई हैं। इस मंदिर को समुद्र गुप्त के शासनकाल में (चतुर्थ शताब्दी ईस्वी) बना हुआ माना जाता है।

तिलौराकोट/तिलौरा कोट (लगभग 27° उत्तर, 83° पूर्व)

नेपाल में लुंबिनी (बुद्ध का जन्म स्थान) के दक्षिण में तिलौरा कोट स्थित है। माना जाता है कि तिलौराकोट के भग्नावशेष प्राचीन कपिलवस्तु के ही अवशेष है जो प्राचीन शाक्य साम्राज्य में स्थित था और राजकुमार सिद्धार्थ गौतम (बाद में बुद्ध) के बचपन का घर था। माना जाता है कि यह प्राचीन नगर वही है जिसका उल्लेख चीनी यात्रियों फाहियान तथा ह्वेनसांग ने अपने यात्रा विवरणों में किया था। इन चीनी यात्रियों ने यहां की यात्रा क्रमशः पांचवीं तथा सातवीं शताब्दी में की थी। वर्ष 2000 में रॉबिन कंनिघम तथा आर्मिल शिमिडिट द्वारा की गई खुदाई में किले के भीतर विभिन्न इमारतों की नींव सहित, बड़े आकार का एक चारदीवारी वाले अवशेष मिले।

तिरुचिरापल्ली (10°48′ उत्तर, 78°41′ पूर्व)

तिरुचिरापल्ली जिसे त्रिची के नाम से भी जाना जाता है, कावेरी नदी के तट पर चेन्नई के दक्षिण में तमिलनाडु में स्थित है। त्रिची का लंबा इतिहास ईसा की प्रारंभिक शताब्दियों तक प्राचीन है। टालमी ने द्वितीय सदी ईसा पूर्व में अपने विवरण में इस नगर का उल्लेख किया था।

परम्पराओं के अनुसार, यहां भगवान शिव ने तीन फन वाले एक विशाल नाग (त्रिसरी) को अपने नियंत्रण में किया था। इसीलिए इस स्थान का नाम तिरुचिरापल्ली पड़ा।

चोल, पांड्य, पल्लव एवं हम्पी के विजयनगर शासकों सभी ने इस पर शासन किया। विजयनगर के शासकों से त्रिची की सत्ता नायकों ने छीन ली। नायकों ने यहां पाषाण का एक सशक्त किला बनाया तथा इसे एक व्यापारिक नगर के रूप में विकसित किया।

त्रिची के समीप स्थित श्रीरंगम मंदिर भगवान विष्णु को समर्पित है।

तिरुपति (13.65° उत्तर, 79.42° पूर्व)

आंध्र प्रदेश में स्थित तिरुपति भगवान वेंकटेश्वर के मंदिर के लिए प्रसिद्ध है, जो चित्तूर जिले की तिरुमाला पहाड़ियों पर स्थित है। वेंकटेश्वर मंदिर को भारत का समृद्धतम मंदिर माना जाता है। यह भारत के प्राचीनतम मंदिरों में से एक है, जिसका उल्लेख पुराणों एवं शास्त्रों में भी प्राप्त होता है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह पल्लवों एवं उत्तरवर्ती चोलों से संबंधित माना जाता है। विजयनगर के शासकों ने मंदिर को सुंदर बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया तथा उसे विपुल आर्थिक सहायता प्रदान की, साथ-साथ नियमित पूजन की व्यवस्था भी की। तिरुपति में अन्य धार्मिक स्थलों में स्वामी पुष्कर्णी नामक एक पवित्र सरोवर भी है, जिसमें हजारों श्रद्धालु स्नान करते हैं; तिरुचानूर स्थित पदमावती का मंदिर; कपिलतीर्थम स्थित कपिलेश्वर मंदिर; तिरुपति स्थित राम मंदिर एवं तिरुचनूर के समीप जोगी मल्लवरम स्थित परसरेश्वर मंदिर प्रमुख हैं।

तिरुपति चंद्रगिरी किले के लिए भी प्रसिद्ध है, जो कभी विजयनगर के शासकों का सशक्त गढ़ भी था।

बैकुंठतीर्थम, तुम्बुरुतीर्थम एवं गोविंदराज मंदिर तिरुपति के अन्य प्रसिद्ध मंदिर हैं।

इस प्रकार तिरुपति को 'मंदिरों का शहर' माना जा सकता है।

thejobsyogi.com

U

उच्छ (28°75′ उत्तर, 70°22′ पूर्व)

उच्छ पाकिस्तान के सिंध प्रांत में सिंधु नदी के बाएं तट पर स्थित है। दिल्ली सल्तनत काल में यह एक सीमावर्ती चौकी थी। बलबन ने यहां एक किला बनवाया तथा इसमें भारी सैन्य बल तैनात किया, जिससे मंगोल आक्रमणों का मुकाबला किया जा सके। 1245 ई. में मंगोलों ने उच्छ पर अधिकार कर लिया किंतु बलबन के समय वे अपना अधिकार जारी नहीं रख सके। अलाउद्दीन खिलजी के समय, जफर खान के नेतृत्व में मंगोलों ने यहां पुनः आक्रमण किया किंतु वे सफल नहीं हो सके। 1397 में, तैमूरलंग ने उच्छ को जीत लिया तथा दिल्ली तक पहुंच गया। अपने इस अभियान में उसने दिल्ली में व्यापक तबाही मचाई। यहां तक कि मुगल काल के समय भी मंगोल आक्रमण का भय समाप्त होने के उपरांत भी उच्छ का सामरिक महत्व बना रहा।

उदयपुर (24.58° उत्तर, 73.68° पूर्व)

राजस्थान में स्थित उदयपुर को सूर्योदय की नगरी के नाम से जाना जाता है। यह नगरी मेवाड़ साम्राज्य का एक रत्न थी तथा यहां 1200 वर्षों से अधिक समय तक सिसोदिया वंश के शासकों ने शासन किया। इसका अपना स्वयं का इतिहास है, जो मुगलों के विरुद्ध बहादुरी एवं शौर्य के कारनामों से भरा पड़ा है।

उदयपुर तीन झीलों के समीप स्थित है। ये झीलें हैं—पिछोला, फतेह सागर एवं उदय सागर। उदयपुर नगर के प्रवेश के लिए 11 भव्य प्रवेश द्वार हैं। पूर्वी दिशा में स्थित 'सूरजपोल' सबसे मुख्य प्रवेश द्वार है, यहां राजा उदय सिंह द्वारा पिछोला झील में बनवाया गया पिछोला लेक पैलेस सभी महलों में सबसे सुंदर है।

चित्तौड़गढ़ पर अकबर के कब्जे के उपरांत राणा उदय सिंह ने अपनी राजधानी उदयपुर में स्थानांतरित कर दी तथा 1572 ई. में अपनी मृत्यु तक मुगलों के विरुद्ध सशक्त संघर्ष जारी रखा। उदयपुर के उत्तराधिकारी एवं पुत्र राणा प्रताप के समय में भी यह संघर्ष चलता रहा। औरंगजेब के शासनकाल में, मेवाड़ ने जोधपुर के दुर्गादास एवं अजीत सिंह को संरक्षण दिया, जो मुगल दरबार से बच कर भाग निकले थे।

26 दिसंबर, 1817 को, उदयपुर ने अंग्रेजों से मित्रता की एक संधि कर ली। 1852 में, डलहौजी के व्यपगत के सिद्धांत के अंतर्गत उदयपुर को ब्रिटिश साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया गया। यद्यपि लार्ड कैनिंग ने डलहौजी के इस निर्णय को अस्वीकृत कर दिया। 1947 में उदयपुर भारत में सम्मिलित हो गया।

उदयगिरि एवं खंदगिरि की गुफाएं (20.26° उत्तर, 85.78° पूर्व)

भुवनेश्वर के पश्चिम में, मात्र 7 किमी. की दूरी पर उदयगिरि एवं खंदगिरि की जुड़वां पहाड़ियां स्थित हैं। इन पहाड़ियों में अशोक के पाषाण अभिलेखों के उपरांत उड़ीसा स्थित भारतीय इतिहास के सबसे प्रमुख स्मारक विद्यमान हैं। खंदगिरि एवं उदयगिरि की पहाड़ियों को काटकर जैन भिक्षुओं के लिए बहुमंजिली गुफाओं का निर्माण किया गया है। ये गुफाएं कलिंगराज खारवेल द्वारा प्रथम सदी ईसा पूर्व में निर्मित मानी जाती है। खारवेल महामेघवाहन वंश का शासक था। उसे कलिंग साम्राज्य के विस्तारक एवं विभिन्न लोकोपकारी कार्यों यथा-नहर व्यवस्था के प्रवर्तन इत्यादि के लिए जाना जाता है।

खंदगिरि में 15 गुफाएं हैं जो बाईं ओर स्थित हैं तथा उदयगिरि में 18 गुफाएं हैं, जो दाहिनी ओर स्थित हैं। उदयगिरी की गुफाओं में ही हाथीगुम्फा की प्रसिद्ध गुफाएं स्थित हैं, जहां से कलिंगराज खारवेल का प्रसिद्ध हाथीगुम्फा अभिलेख पाया गया है।

प्रसिद्ध रानीगुम्फा गुफाएं भी उदयगिरी में ही स्थित हैं। इनमें ऊपरी एवं निचली मंजिल, एक बड़ा आंगन, तथा कई बड़े कक्ष हैं। इस गुफा में कई चित्र भी उत्कीर्ण हैं, जैसे—लोकप्रिय गाथाओं के दृश्य, ऐतिहासिक दृश्य, धार्मिक क्रियाकलाप एवं कई नर्तक-नर्तकियों के चित्र। इनकी शैली काफी विकसित प्रतीत होती है।

गणेश गुम्फा थोड़ी अलग है। इसमें बरामदे के साथ बड़ा निवास स्थान है। ऊपर पहुंचाने के लिए सीढ़ियां एवं आंगन भी हैं।

ये सभी गुफाएं छोटी हैं तथा चट्टान के प्राकृतिक विन्यास का अनुकरण करती हैं। मूर्तियां संपूर्णता के साथ लोक कला का प्रदर्शन करती हैं।

उदयगिरि में ओडिशा का सबसे बड़ा बौद्ध काम्प्लेक्स भी स्थित है। हाल के पुरातात्विक उत्खननों से यह सिद्ध हुआ है कि प्राचीनकाल में इस मठ का नाम माधवपुर महाविहार था। यहां के पुरातात्विक उत्खनन से यहां ईंटों का स्तूप, ईंटों से निर्मित दो मठ, पाषाण से निर्मित एक सुंदर कुंआ एवं प्रस्तर स्थापत्य के कुछ अन्य नमूने भी प्राप्त हुए हैं। इन मठों का निर्माण संभवतः 7वीं से 12वीं शताब्दी के मध्य हुआ था। मूर्तियां बौद्ध धर्म के सभी देवताओं—बड़ी संख्या में बोधिसत्व तथा ध्यानी बुद्ध—को दर्शाती हैं।

उडुपी (13.33° उत्तर, 74.74° पूर्व)

वर्तमान समय में उडुपी कर्नाटक राज्य में स्थित है। मिथक एवं ऐतिहासिक दोनों दृष्टियों से यह एक प्रसिद्ध शहर है। ऐसा विश्वास

thejobsyogi.com

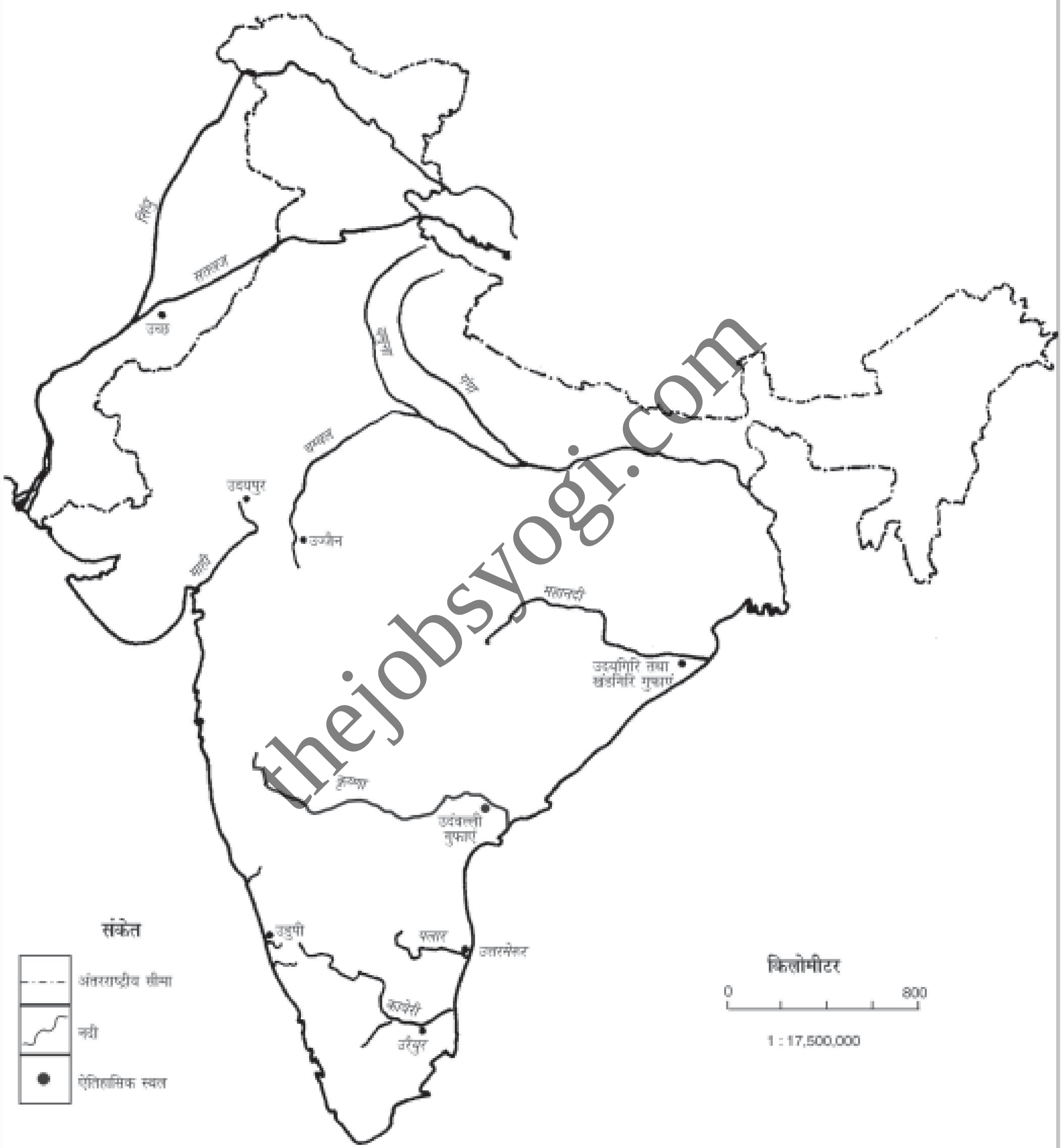

thejobsyogi.com

किया जाता है कि वर्तमान समय का उडुपी भूमि की उस तटीय पट्टी का भाग था जो परशुराम क्षेत्र या परशुराम भूमि कहा जाता था, जिसे परशुराम ने अरब सागर से पुनः प्राप्त किया।

उडुपी, 12वीं शताब्दी के प्रसिद्ध संत एवं द्वैतवादी दर्शन के प्रतिपादक माध्वाचार्य के जन्म स्थान के रूप में भी प्रसिद्ध है। यह कृष्ण मट्ट के लिए भी प्रसिद्ध है। नगर के मध्य भाग में एक बड़े तालाब माधवसरोवर के समीप स्थित एक मंदिर है। श्रद्धालुओं का मानना है कि प्रति दसवें वर्ष इस सरोवर में गंगा प्रवाहित होती है।

यहीं अनंतस्यान मंदिर भी स्थित है। जिसके संबंध में यह माना जाता है कि यहीं माधव अपने शिष्यों को शिक्षा देते हुए अदृश्य हो गए।

उडुपी का कृष्ण मंदिर कनकन किंदी के लिए प्रसिद्ध है। इसी मंदिर में एक छोटा झरोखा है, जिससे कृष्ण ने अपने अनन्य भक्त कनकदास को दर्शन दिये थे।

उज्जैन (23.17° उत्तर, 75.79° पूर्व)

उज्जैन क्षिप्रा नदी के तट पर मध्य प्रदेश में स्थित है। इसे अवन्तिका नाम से भी जाना जाता था। छठी शताब्दी ईसा पूर्व में यह अवन्ति महाजनपद की राजधानी था।

मौर्यकाल में यह एक प्रमुख प्रांत था तथा तक्षशिला भेजे जाने से पूर्व यह अशोक के नियंत्रण में था। टालमी (द्वितीय शताब्दी ईस्वी) के समय उज्जैन शक शासक चष्टन के शासन के अंतर्गत था।

उज्जैन उत्तर एवं उत्तर-पश्चिमी व्यापारिक मार्ग पर स्थित था तथा 'पेरिप्लस ऑफ द इरीथ्रियन सी' के विवरणानुसार यह एक प्रमुख व्यापारिक केंद्र था।

'विजय की नगरी' एवं 'पवित्रता की नगरी' के नाम से भी प्रसिद्ध उज्जैन में कई मंदिर हैं। इनमें सबसे प्रमुख महाकालेश्वर मंदिर है, जो भारत के ज्योतिर्लिंगों में से एक है। प्रसिद्ध कवि एवं नाटककार कालिदास उज्जैन के ही थे। उन्होंने महाकालेश्वर मंदिर में देवदासी प्रथा (देवदासी प्रथा के प्रचलन का प्रथम साहित्यिक प्रमाण) के प्रचलन का उल्लेख किया था। अन्य प्रसिद्ध मंदिर, कालभैरव मंदिर है, जिसका उल्लेख स्कंद पुराण में भी प्राप्त होता है। उज्जैन भृतहरि की गुफाओं; 24 अवतारों; बड़ी संख्या में हिन्दू एवं जैन मंदिरों : अहिल्याबाई होल्कर का महल; कालीदेह महल; वेधशाला (जंतर-मंतर) एवं कालिदास अकादमी के लिए भी प्रसिद्ध है। यहां कुंभ मेले का आयोजन भी होता है।

उदंवल्ली गुफाएं (16.30° उत्तर, 80.44° पूर्व)

उदंवल्ली गुफाएं आंध्र प्रदेश के गुंटूर जिले में कृष्णा नदी के दक्षिणी तट के निकट स्थित हैं। ये गुफाएं शैलकर्त वास्तुकला और मूर्ति निर्माण की एकाश्म शैली के लिए प्रसिद्ध हैं। चौथी तथा पांचवीं शताब्दी के मध्य एक पहाड़ी पर ठोस बलुआ पत्थर को काटकर इन गुफाओं का निर्माण किया गया। इन गुफाओं को स्थानीय गवर्नर माधव रेड्डी ने अनंतपदमनाभ स्वामी मंदिर तथा नरसिंह स्वामी मंदिर को समर्पित किया।

यह माना जाता है कि उदंवल्ली गुफाओं को बौद्ध धर्म के अनुयायियों द्वारा बनाया गया था, जैसाकि यह तथ्य वर्तमान में मौजूद कुछ बौद्ध मूर्तियों से स्पष्ट होता है, लेकिन बाद में इन गुफाओं को हिंदू मंदिरों में परिवर्तित कर दिया गया। चार मंजिला, सबसे बड़ी एवं मुख्य गुफा, जिसमें दूसरी मंजिल पर ग्रेनाइट के एक ब्लॉक पर तराशी विष्णु की विशाल प्रतिमा विश्राम मुद्रा में है। गुफा के अंदर के अन्य मंदिरों को त्रिमूर्ति को समर्पित किया गया है। उदंवल्ली गुफाओं पर निर्माण, गुप्त वास्तुकला के प्रारम्भिक उदाहरणों में से एक है। मुख्य रूप से शिला काट कर बनाए गए प्रारम्भिक बौद्ध विहार बलुआ पत्थर की पहाड़ियों को तराश कर बनाए गए हैं। यह वास्तुकला उदयगिरि एवं खांडगिरि की वास्तुकला के सदृश है।

उरैयूर (10°49′ उत्तर, 78°40′ पूर्व)

उरैयूर तमिलनाडु के तिरुचिरापल्ली जिले में स्थित है। इसे उरगपुर, उरंदाई एवं अरागुरू नामों से भी जाना जाता था। उरैयूर, कावेरी नदी के दक्षिण किनारे पर स्थित है तथा प्रारंभिक चोलों के समय यहां एक नदीय पत्तन था। प्रारंभिक चोलों ने संगम युग के दौरान उरैयूर को अपनी राजधानी भी बनाया था।

'पेरिप्लस ऑफ द इरीथ्रियन सी' (किसी अज्ञात लेखक द्वारा प्रथम ईस्वी में समुद्री यात्राओं पर लिखी हुई किताब) में उरैयूर का उल्लेख अरागुरु के रूप में किया गया है, जो वस्त्रों के व्यापार का एक प्रमुख केंद्र था। यहां कपड़ों पर रंगाई का काम भी किया जाता था तथा इसके प्रमाण भी यहां से प्राप्त हुए हैं।

उरैयूर से रोमन सिक्कों एवं कुछ अन्य वस्तुओं की प्राप्ति से ऐसा अनुमान है कि इसके रोमन साम्राज्य से व्यापारिक संबंध थे।

यह मोती उत्पादन के केंद्र के रूप में भी प्रसिद्ध था। उरैयूर में शिवस्थल एवं भगवान पंचवर्णेश्वर का मंदिर भी स्थित है। संगम साहित्य में इस नगर का उल्लेख एक फलते-फूलते नगर के रूप में किया गया है।

ऐसा प्रतीत होता है कि पांचवी शताब्दी ईस्वी में इस स्थान ने अपना महत्व खो दिया था।

उत्तरामेरूर (12.61° उत्तर, 79.75° पूर्व)

उत्तरामेरूर चेन्नई के समीप तमिलनाडु में स्थित है। प्राचीन समय में यह ब्रह्मदेय (ब्राह्मण को राजस्व मुक्त भूमि दान) गांव का एक उदाहरण था। यह 10वीं शताब्दी ईस्वी के दो अभिलेखों के लिए प्रसिद्ध है, जो चोल शासक परान्तक प्रथम के शासनकाल

thejobsyogi.com

से संबंधित हैं। इन अभिलेखों में 'सभा' नामक संस्था के चरित्र, संगठन एवं भूमिका पर प्रकाश डाला गया है। इस प्रकार ये अभिलेख चोल शासन में स्थानीय प्रशासन संबंधी विस्तृत जानकारी प्रदान करते हैं।

प्रथम अभिलेख में विभिन्न समितियों (वरियम) में निर्वाचन संबंधी नियमों का उल्लेख है, जबकि दूसरे अभिलेख में, नियमों में संशोधन की व्याख्या है। इस अभिलेख में सदस्यों के निर्वाचन हेतु जिन सामान्य मापदण्डों का अनुसरण किया गया है, उनमें प्रमुख हैं—उसे कर दाता, गृहस्वामी एवं वैदिक साहित्य का अच्छा ज्ञाता होना चाहिए।

ये सभी सदस्य सामूहिक रूप से चुने जाते थे तथा एक बार चयन के उपरांत कोई सदस्य दुबारा नहीं चुना जा सकता था। स्थानीय स्तर पर नियमों का निर्माण एवं उनका संचालन तत्कालीन समय में स्थानीय स्वायत्तता का अद्‌भुत उदाहरण है, जिसकी तुलना मध्यकाल में किसी अन्य स्थान से नहीं की जा सकती।

thejobsyogi.com

V&W

वैशाली (25.99° उत्तर, 85.13° पूर्व)

वैशाली की पहचान आधुनिक बसाढ़ नामक ग्राम से की जाती है, जो बिहार के वैशाली जिले में स्थित है। बुद्ध के समय यह एक समृद्धशाली नगर था। वैशाली, लिच्छवी गणराज्य की राजस्थानी था तथा छठी शताब्दी ई.पू. में यह शक्तिशाली वज्जी परिसंघ का मुख्यालय भी था। अजातशत्रु ने इसे विजित कर मगध साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया था।

वैशाली जैन एवं बौद्ध दोनों के लिए महत्वपूर्ण था। गौतम बुद्ध की मृत्यु के लगभग 100 वर्ष पश्चात द्वितीय बौद्ध संगीति यहीं आयोजित की गई थी। इस महासभा या संगीति में पूर्वी एवं पश्चिमी भिक्षुओं के मध्य मतभेदों को दूर किया गया तथा भिक्षु एवं भिक्षुणियों के नैतिक नियमों की आचार संहिता तैयार की गई। यहां से एक स्तूप की प्राप्ति एक महत्वपूर्ण खोज है। यह स्तूप पहले मिट्टी तथा बाद में ईंटों से बनाया गया था। कोल्हुआ वह स्थान है, जहां अशोक ने 18.3 मीटर ऊंचा एक स्तंभ खड़ा करवाया था। यह स्थान भगवान बुद्ध का अंतिम भ्रमण स्थल है तथा अशोक का स्तंभ इसी स्थान को समर्पित है। लाल बलुआ पत्थर से निर्मित इस स्तंभ को स्थानीय तौर पर 'भीमसेन की लाठी' के नाम से जाना जाता है। यह स्तंभ उन दो स्तंभों में से एक है, जो अपने मूल स्थान पर सुरक्षित हैं। इस स्तंभ के समीप ही रामकुंड नामक छोटा जलाशय भी स्थित है।

पुरातत्ववेत्ताओं ने यहां से एक बड़े टीले के अवशेष प्राप्त किए हैं, जो प्राचीन संसद से संबंधित था। इसे 'राजा वैशाल की गढ़' कहा जाता था। यहां बावन पोखर नामक एक मंदिर भी है। इस मंदिर में गुप्त और पाल साम्राज्य की काली बेसाल्ट की मूर्तियां बड़ी संख्या में हैं। एक जलाशय के उत्खनन से यहां चार मुख वाला लिंग भी पाया गया है, जो चौमुखी मंदिर में स्थित था।

बावन पोखर मंदिर के बगल में एक जैन मंदिर है, जिसमें एक तीर्थंकर की मूर्ति है। श्वेतांबर सम्प्रदाय के अनुसार, जैनों के अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर का जन्म वैशाली के कुण्डग्राम में ही हुआ था। ऐसा कहा जाता है कि यहां उन्होंने अपने जीवन के 22 वर्ष व्यतीत किए थे।

राज्याभिषेक तालाब, जिसे 'अभिषेक पुष्करणी' के नाम से भी जाना जाता था, एक कमल तालाब था, जिसका जल प्राचीन काल में अत्यंत पवित्र माना जाता था तथा वैशाली के समस्त निर्वाचित प्रतिनिधि अपना पद ग्रहण करने से पहले इस पवित्र जल में स्नान करते थे। इस अभिषेक पुष्करणी के दाहिने तट पर विश्व शांति स्तूप स्थित है, जिसका निर्माण बुद्ध विहार सभा द्वारा किया गया था।

वलभी (21.88° उत्तर, 71.87° पूर्व)

वलभी (जिसे वलवी के नाम से भी जाना जाता है) गुजरात राज्य में स्थित है। जैनों की द्वितीय सभा यहीं आयोजित की गई थी, जिसकी अध्यक्षता देवर्धिगनी श्रमण ने की थी। इस सभा में 12 उपांगों का संकलन किया गया था।

गुप्त साम्राज्य के पतनोपरांत वलभी के मैत्रेयक प्रसिद्ध शासक हुए तथा वलभी शिक्षा के एक प्रसिद्ध केंद्र के रूप में विकसित हुआ। मैत्रेयकों के हर्षवर्धन के साथ वैवाहिक संबंध थे। यद्यपि वलभी के मैत्रेयक संभवतः अंत तक पश्चिमी चालुक्यों के प्रति निष्ठावान बने रहे।

कालांतर में वलभी गुजरात के सोलंकी शासकों के राज्य का हिस्सा बन गया।

वेंगी (16.77° उत्तर, 81.10° पूर्व)

वेंगी छठी शताब्दी ईस्वी में पूर्वी चालुक्यों की राजधानी थी। पुलकेशियन द्वितीय के भाई विष्णुवर्धन ने वेंगी में स्वतंत्र राज्य की स्थापना की थी।

पूर्वी चालुक्यों से पहले, हम प्रयाग प्रशस्ति में वेंगी का उल्लेख पाते हैं, जिसमें कहा गया है कि समुद्रगुप्त ने वेंगी के शासक को अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य किया था।

पल्लव अभिलेखों में कहा गया है कि वे वेंगी के मूल निवासी थे तथा इस प्रकार वेंगी पर अधिकार को लेकर पूर्वी चालुक्यों से सदैव उनका संघर्ष चलता रहा।

चोल वंश के राजेंद्र द्वितीय या क्लोत्तुंग वेंगी के पूर्वी चालुक्यों का उत्तराधिकारी था तथा कालांतर में चोलों ने वेंगी में नियंत्रण स्थापित किया। यद्यपि वे ज्यादा समय तक इस पर अपना अधिकार बनाए नहीं रख सके तथा वेंगी पांड्यों के नियंत्रण में चला गया।

विजयनगर (15.33° उत्तर, 76.46° पूर्व)

विजयनगर तुंगभद्रा नदी के दक्षिण में कर्नाटक में स्थित था। दो सगे भाइयों हरिहर एवं बुक्का ने विजयनगर में स्वतंत्र शासन की स्थापना की थी। विजयनगर के प्रथम शासक हरिहर प्रथम ने

thejobsyogi.com

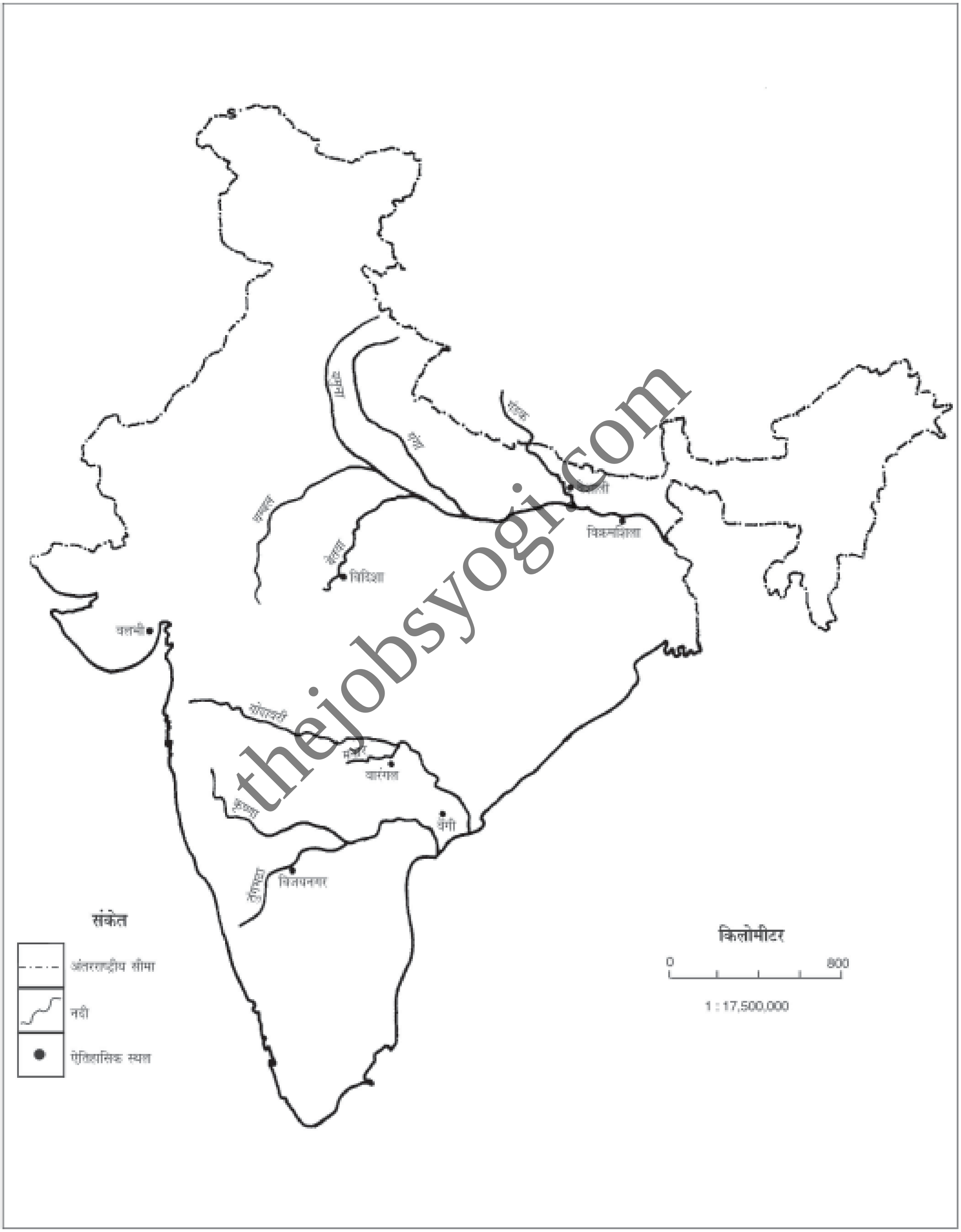

thejobsyogi.com

1336 ई. में सर्वप्रथम विजयनगर नामक नगर की स्थापना की तथा उसे अपनी राजधानी बनाया। धीरे-धीरे विजयनगर दक्षिण भारत का सबसे शक्तिशाली राज्य बन गया तथा वैभव एवं समृद्धि के शिखर पर पहुंच गया। इस साम्राज्य के सबसे महान शासक कृष्ण देव राय के समय विजयनगर साम्राज्य का अत्यधिक विकास हुआ तथा यह शिक्षा, कला, संस्कृति एवं व्यापार का एक प्रमुख केंद्र बन गया। निकोली कोण्टी तथा अब्दुल रज्जाक नामक विदेशी यात्रियों ने विजयनगर की यात्रा की तथा इसे एक समृद्ध एवं वैभवशाली नगर बताया। विजयनगर में स्थापत्य के कई सुंदर नमूने थे। यहां के शासकों ने विशाल महलों एवं सुंदर मंदिरों का निर्माण करवाया। महानवमी उत्सव यहां का सबसे प्रमुख उत्सव था। 1565 में तालीकोटा के युद्ध के उपरांत बीजापुर, गोलकुंडा, अहमदनगर एवं बीदर की संयुक्त सेनाओं ने विजयनगर को तहस-नहस कर दिया।

वर्तमान हम्पी नामक स्थल की पहचान विजयनगर के रूप में की जाती है।

विक्रमशिला (25°19′ उत्तर, 87°17′ पूर्व)

विक्रमशिला गंगा नदी के तट पर बिहार के भागलपुर जिले में स्थित है। इसकी पहचान अंतीचक कहे जाने वाले स्थल के रूप में की गई है। विक्रमशिला अपने विश्वविद्यालय के कारण 8वीं-12वीं शताब्दी तक अर्थात 400 वर्षों तक प्रसिद्ध रहा। इस विश्वविद्यालय की स्थापना बंगाल के पाल शासक धर्मपाल ने की थी। इस विश्वविद्यालय में व्याकरण, तर्क, खगोल, भौतिकी, वेदों एवं दर्शन जैसे विविध विषयों की शिक्षा दी जाती थी।

पुरातात्विक उत्खनन से यहां इस विशाल विश्वविद्यालय के अवशेष पाए गए हैं। इस मठ में लगभग 208 छोटे कक्ष थे। इस विश्वविद्यालय की औसत क्षमता लगभग 1000 छात्रों की थी।

विक्रमशिला बौद्ध धर्म की वज्रयान शाखा का भी एक महत्वपूर्ण केंद्र था। इस शाखा को बंगाल के पाल शासकों ने भरपूर संरक्षण दिया। इस विश्वविद्यालय के प्रसिद्ध शिक्षक दीपांकर को तिब्बत के शासक ने अपने यहां आमंत्रित किया था। इसके उपरांत दीपांकर ने तिब्बत की यात्रा की तथा वहां वज्रयान मत का व्यापक प्रचार-प्रसार किया। उन्होंने कई बौद्ध ग्रंथों का तिब्बती भाषा में अनुवाद भी किया।

बख्तियार खिलजी के आक्रमण में विक्रमशिला विश्वविद्यालय पूरी तरह नष्ट हो गया था। एक तिब्बती भिक्षु धर्मस्वामी ने 1206 ई. में जब यहां की यात्रा की थी, तो उन्होंने पूरी तरह इसे विनष्ट अवस्था में पाया था।

विलिनाम/विझीनजाम (08°22′ उत्तर, 76°59′ पूर्व)

विलिनाम अथवा विझीनजाम को आठवीं या नौवीं शताब्दी में अय राजवंश की राजधानी के रूप में पहचाना गया है। यह तिरुवनंतपुरम के पास स्थित एक बन्दरगाह था। यह क्षेत्र कुलशेखर वंश एवं चोल वंश के बीच कई युद्धों का साक्षी था। महान चोल नरेश राजराजा ने पांड्या नरेश अमारा भुजंग को कैद कर विलिनाम बंदरगाह पर कब्जा कर लिया था। डा. अजीत कुमार तथा डा. रॉबर्ट हार्डिंग द्वारा विलिनाम में हाल ही में किए गए उत्खननों में जो पुरातात्विक साक्ष्य मिले हैं, वे यहां से होने वाले समृद्ध अंतरराष्ट्रीय समुद्री व्यापार पर प्रकाश डालते हैं। प्राचीन यूनान से संबद्ध बर्तन के टूटे हुए टुकड़ों की खोज से संकेत मिलता है कि विलिनाम का रोमन काल के दौरान लाल सागर के तटीय क्षेत्रों के साथ समुद्री व्यापार था। ग्रीक-रोमन अभिलेखों में विलिनाम की पहचान बालिता या ब्लिंका के रूप में की गई है।

वारंगल (18.0° उत्तर, 79.58° पूर्व)

वारंगल आंध्र प्रदेश के तेलंगाना क्षेत्र में स्थित है। यह नगर एक वैभवशाली नगर था तथा 12वीं एवं 13वीं शताब्दी में यह काकतीय शासकों की राजधानी था। 13वीं शताब्दी में भारत की यात्रा करने वाले यात्री मार्कोपोलो के विवरण में वारंगल का उल्लेख एक महत्वपूर्ण नगर के रूप में प्राप्त होता है। इससे पहले इसका उल्लेख ओरुगलु या एकशिला के रूप में प्राप्त होता है। वारंगल में 13वीं शताब्दी के काकतीय शासक गणपति देव एवं उसकी पुत्री रुद्रमा ने एक प्रसिद्ध किले का निर्माण कराया।

अलाउद्दीन खिलजी के अधीन मुस्लिम सेनाओं ने दक्षिण में अभियान किया तथा वारंगल के प्रताप रुद्रदेव ने मुस्लिम आधिपत्य स्वीकार कर लिया। यहीं अलाउद्दीन खिलजी को विश्व प्रसिद्ध कोहिनूर हीरा प्राप्त हुआ था। बाद में मु. बिन तुगलक ने वारंगल पर अधिकार कर लिया तथा इसका नाम बदलकर सुल्तानपुर रख दिया। फिर यह बहमनी साम्राज्य का हिस्सा बना, बाद में यह गोलकोंडा के अधीन चला गया एवं अंत में इस पर हैदराबाद के निजाम ने अधिकार कर लिया।

एक काकतीय शासक ने 1273 में यहां एक विशाल पाखाल झील बनवायी थी, जो वारंगल नगर से लगभग 50 किमी. की दूरी पर स्थित है। वारंगल रामप्पा एवं घानपुर मंदिरों के लिए भी प्रसिद्ध है।

thejobsyogi.com

भाग तीन

भारतीय इतिहास तथा संस्कृति के विभिन्न पहलुओं से संबद्ध अलग-अलग स्थलों को दर्शाते मानचित्र

इस भाग में भारतीय इतिहास तथा संस्कृति के विभिन्न पहलुओं से संबंधित स्थलों को दर्शाने हेतु मानचित्रों को शामिल किया गया है।

नोटः संघ लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित सिविल सेवा परीक्षा हेतु इतिहास के वैकल्पिक प्रश्न-पत्र में मानचित्रों पर आधारित प्रश्नों के स्वरूप में बदलाव, विशेष रूप से 2011 के उपरांत, किए गए हैं; आगामी अभ्यास उसी स्वरूप को ध्यान में रखते हुए दिए गए हैं। प्रत्येक स्थल का विवरण भाग दो में दिया गया है।

thejobsyogi.com

प्राचीन गुहा चित्रकला केंद्र

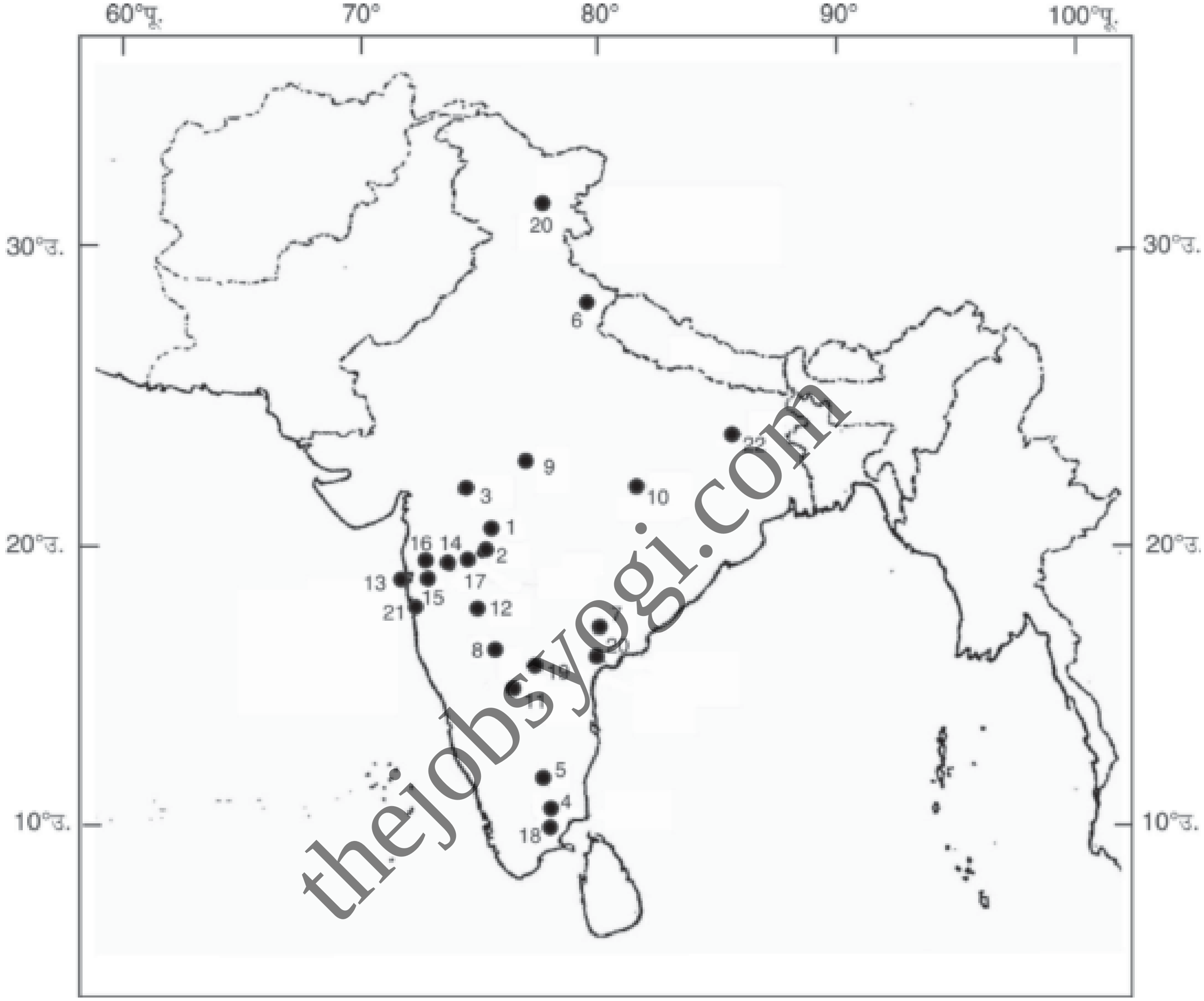

thejobsyogi.com

1. अजंता
2. एलोरा
3. पितलखोड़ा गुफाएं, औरंगाबाद
4. बाघ
5. सित्तनवासल
6. अरममलई
7. लखुडियार
8. कुपगल्लु
9. पिकलीहल
10. भीमबेटका
11. जोगीमारा
12. बदामी
13. भाजा
14. एलिफैन्टा
15. कन्हेरी
16. कारसांबल गुफाएं
17. कुडा गुफाएं
18. लेनयाद्री गुफाएं, जुन्नार
19. मनमोद गुफाएं, जुन्नार
20. मलयदिपत्ति
21. रावण फदी एहोल
22. ससपोल गुफाएं
23. उदंवल्ली, गुफाएं
24. करला गुफाएं
25. बराबर गुफाएं

नोटः एक से अधिक ऐतिहासिक महत्व के स्थल जो बहुत निकट स्थित हैं, के लिए एक ही अंकन किया गया है।

भारतीय उपमहाद्वीप में प्राचीन बंदरगाह

thejobsyogi.com

भारतीय उपमहाद्वीप में
प्राचीन एवं मध्यकालीन शिक्षा केंद्र

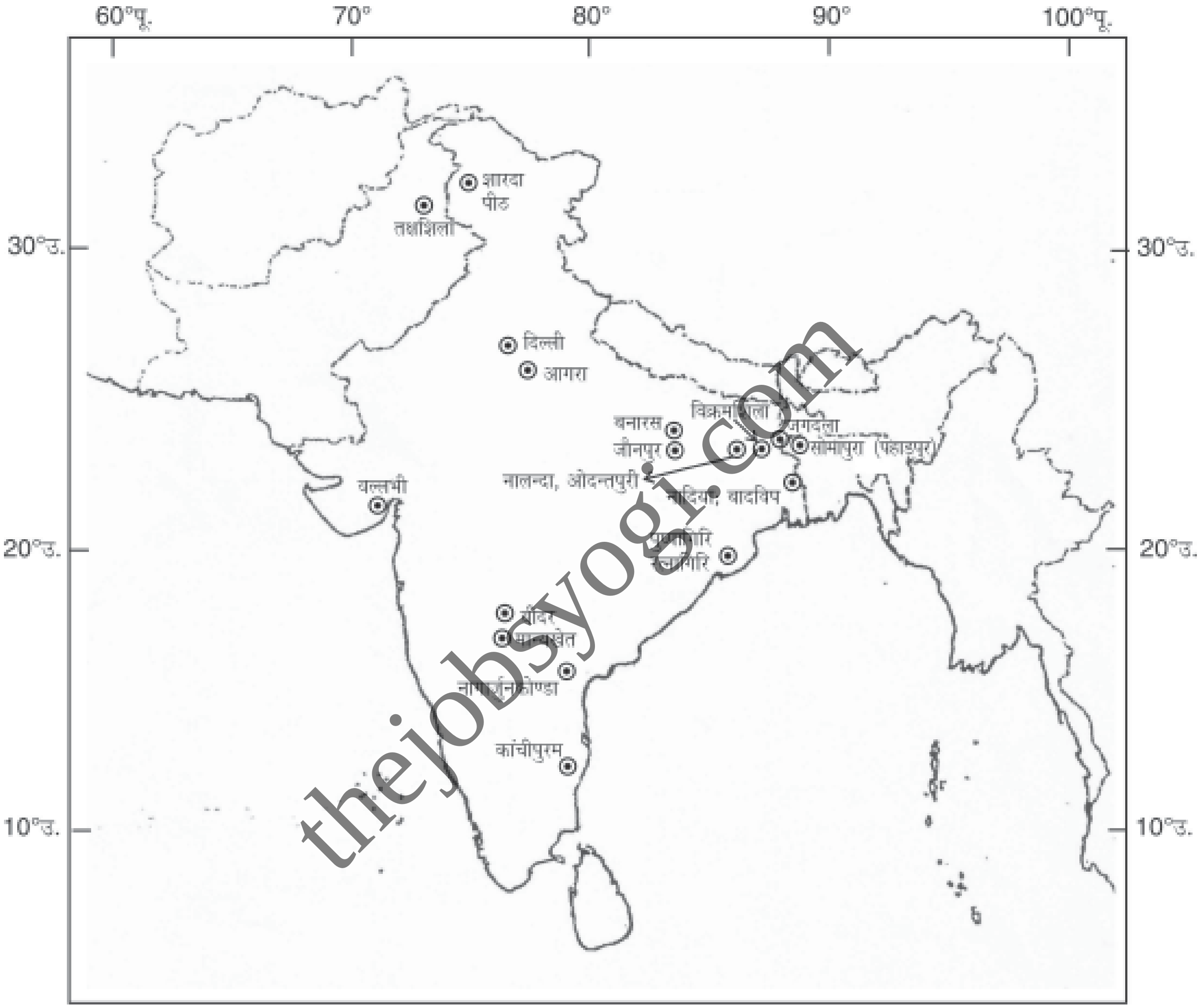

thejobsyogi.com

भाग चार

अभ्यास सत्र

इस भाग में हमने भारत के रेखा मानचित्र में स्थानों को किस प्रकार चिन्हित किया जाए, इससे संबंधित निर्देश, कुछ अभ्यास प्रश्नावलियां तथा एक नमूना मानचित्र दिया है।

thejobsyogi.com

दिशा-निर्देश

किसी परीक्षा जैसे कि संघ लोक सेवा आयोग इत्यादि द्वारा आयोजित सिविल सेवा परीक्षा के वैकल्पिक विषय इतिहास में आपको एक रेखा मानचित्र दिया जाता है, जिस पर कुछ नदियां दर्शायी जाती हैं। (अभ्यास प्रश्नावलियों के लिए दिया गया नमूना मानचित्र देखें। रेखा मानचित्र में नदियां न दर्शायी गई हों, ऐसा भी संभव है।)। स्थलों की एक सूची दी जाती है, जिनकी अवस्थिति आपको रेखा मानचित्र पर दर्शानी होती है तथा प्रत्येक स्थल से संबंधित एक संक्षिप्त विवरण देना होता है। प्रश्न-पत्र के नवीन स्वरूप के अनुरूप बिंदुओं द्वारा चिन्हित विभिन्न संख्याबद्ध स्थलों वाला एक मानचित्र प्रदान किया जाता है। आपको दिए गए विवरण—'एक नवपाषाण स्थल', 'एक हड़प्पा सभ्यता संबंधी उत्खनन', एवं ऐसे ही अन्य—के स्थलों को पहचानना होगा। यहां पर आपको सम्बद्ध स्थल का नाम स्मरण रखने की आवश्यकता है। इस स्थिति में विभिन्न मानचित्रों में चित्रित स्थलों को भी आपको याद रखना होगा और प्रदत्त विवरण के साथ उन्हें जोड़कर सही स्थल की पहचान करनी होगी। परीक्षा में दिया गया एक रिक्त मानचित्र आपको विक्षुब्ध कर सकता है एवं आपको संदेह हो सकता है कि क्या आप दिए गए स्थलों की अवस्थिति को सही-सही दर्शा सकते हैं। ऐसी काफी सारी विधियां हैं जिससे आप इन स्थलों की अवस्थिति को काफी हद तक सही-सही चिन्हित कर सकते हैं।

पृष्ठ संख्या 57 पर दिए गए भारत की नदियों से संबंधित मानचित्र का ध्यानपूर्वक अध्ययन कीजिए तथा नदियों की अवस्थिति व उनके बहाव के मार्ग को याद करने का प्रयास कीजिए। मानचित्रों तथा उन पर अंकित स्थलों का अध्ययन करते समय तीन बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है (a) नदियां (b) तटरेखा (c) राष्ट्रीय सीमाएं। इस प्रकार आप स्पष्ट रूप से देखेंगे कि अधिकांश स्थल किसी न किसी प्रकार नदियों की स्थिति से संबंधित हैं। अब स्वयं से निम्नलिखित प्रश्न कीजिए तथा जो उत्तर आपको प्राप्त हों उन्हें नोट कीजिए:

- क्या दिया गया स्थल किसी विशेष नदी के उत्तर, दक्षिण, पूर्व अथवा पश्चिम में स्थित है? (यदि रेखा मानचित्र पर नदियां नहीं दी गई हों तो कुछ नदियों को अपनी स्मृति द्वारा हल्के ढंग से चित्रित कीजिए, जिससे उनको बाद में मिटाया जा सके)
- दिया गया स्थल पूर्वी तट अथवा पश्चिमी तट में से कहां पर स्थित है? अपने संदर्भ हेतु दोनों तटों पर स्थित स्थलों की ऊपर से नीचे अथवा नीचे से ऊपर के क्रम में एक सूची तैयार कीजिए।
- दिया गया स्थल किस राष्ट्रीय सीमा के कितना समीप है?

एक अन्य विधि यह है कि भारत के मानचित्र में अक्षांश तथा देशांतर रेखाओं के सदृश स्थूल रूप से कुछ रेखाएं खींचिए, जैसा कि पृष्ठ 179 तथा 180 पर दिए गए मानचित्र में दर्शाया गया है। (ये रेखाएं अक्षांशों तथा देशांतरों के सन्निकट रूप से ही सदृश हैं और ये मात्र स्थलों के समूहीकरण हेतु खींची जाती हैं। इनको सही-सही माप के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए।)

इस प्रकार आपको स्थलों के समूह की छोटी इकाइयां प्राप्त होती हैं। इस विधि का प्रयोग उस प्रत्येक मानचित्र में किया जा सकता है, जिसमें स्थानों को दर्शाया गया है। इससे तथ्यों को छोटी इकाइयों में विभाजित करके सरलता से आत्मसात किया जा सकता है। प्रत्येक छोटी इकाइयों के अंतर्गत आने वाले सभी स्थलों की एक सूची तैयार कीजिए। अब यदि आप इसी प्रकार की रेखाएं हल्के ढंग से पृष्ठ 181 पर दिए गए नमूना मानचित्र पर बनाएंगे तो संभवतः आपको स्थलों को चिन्हित करने में आसानी होगी। वास्तव में आप मानचित्र को खण्डों में विभाजित करने के लिए किसी भी प्रकार से रेखाओं का उपयोग कर सकते हैं। परंतु सभी मानचित्रों के लिए एक ही पद्धति अपनाना अति आवश्यक है।

पृष्ठ 183 पर दिए गए रिक्त मानचित्र पर अभ्यास कीजिए (यदि आपको अभ्यास के लिए अधिक मानचित्रों की आवश्यकता है तो इस कोरे मानचित्र की प्रतिलिपियां करा लीजिए)। इस प्रकार आप स्थलों की अवस्थिति को सही-सही दर्शाने में अधिक कुशलता प्राप्त कर सकेंगे। (यद्यपि इसमें संदेह है कि ऐतिहासिक मानचित्र के विषय में कोई शत-प्रतिशत परिशुद्धता से स्थलों को चिन्हित करने में कुशलता प्राप्त कर सकता है)। अन्य प्रकार के मानचित्र संबंधी प्रश्नों में, आप को स्थलों तथा उनकी अवस्थिति को याद करना होगा ताकि आप उन्हें पहचान सकें।

thejobsyogi.com

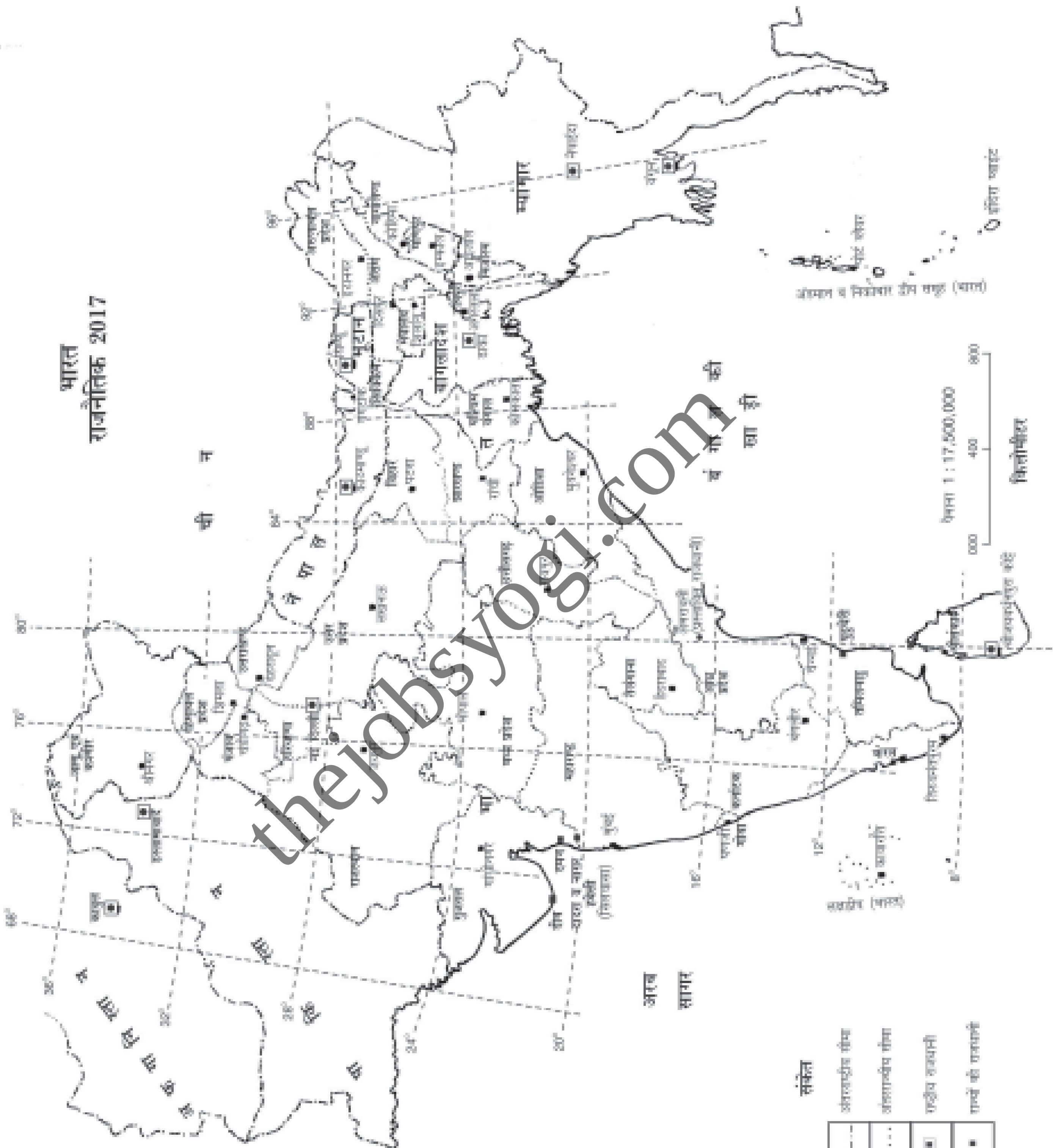

thejobsyogi.com

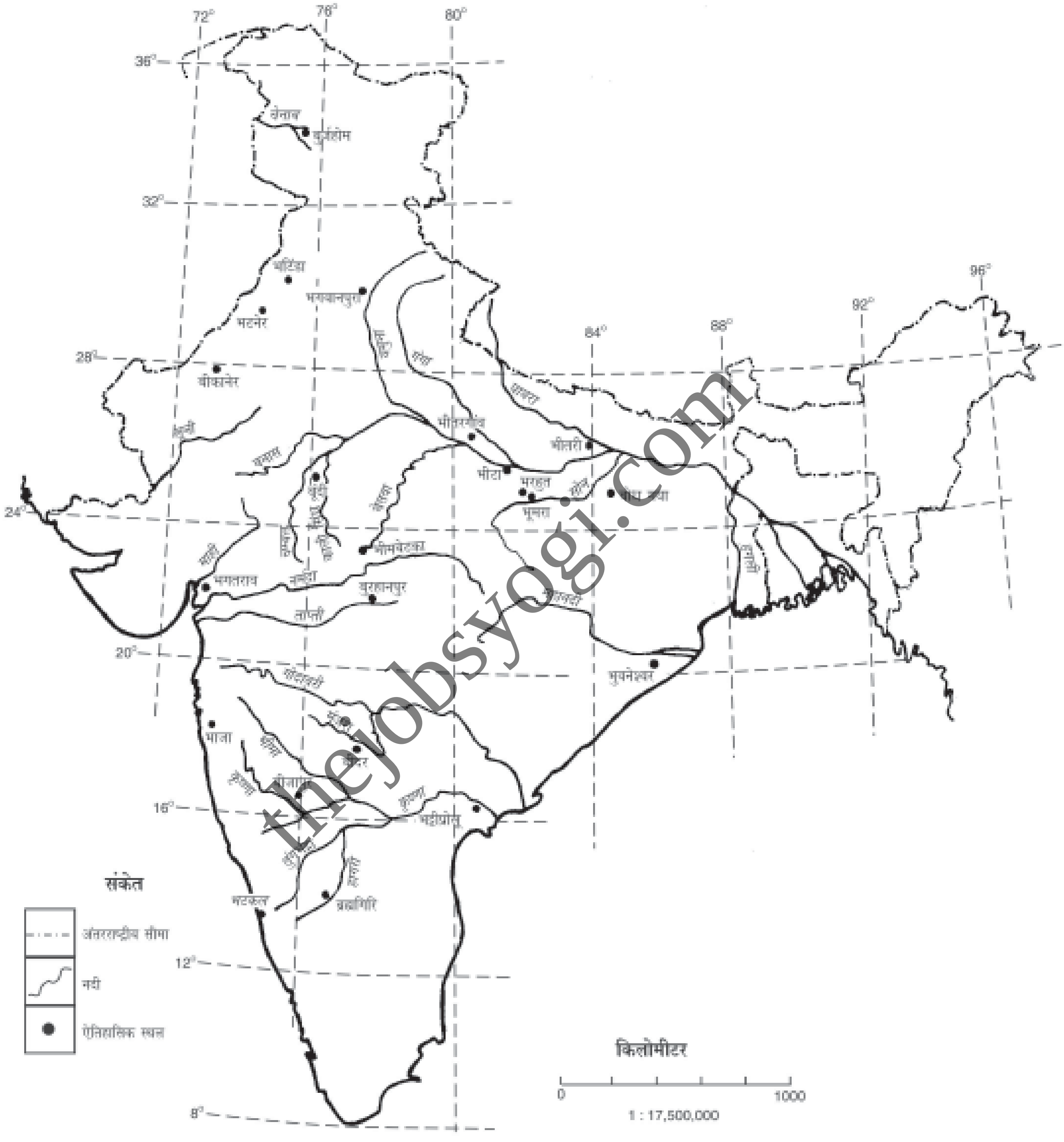

thejobsyogi.com

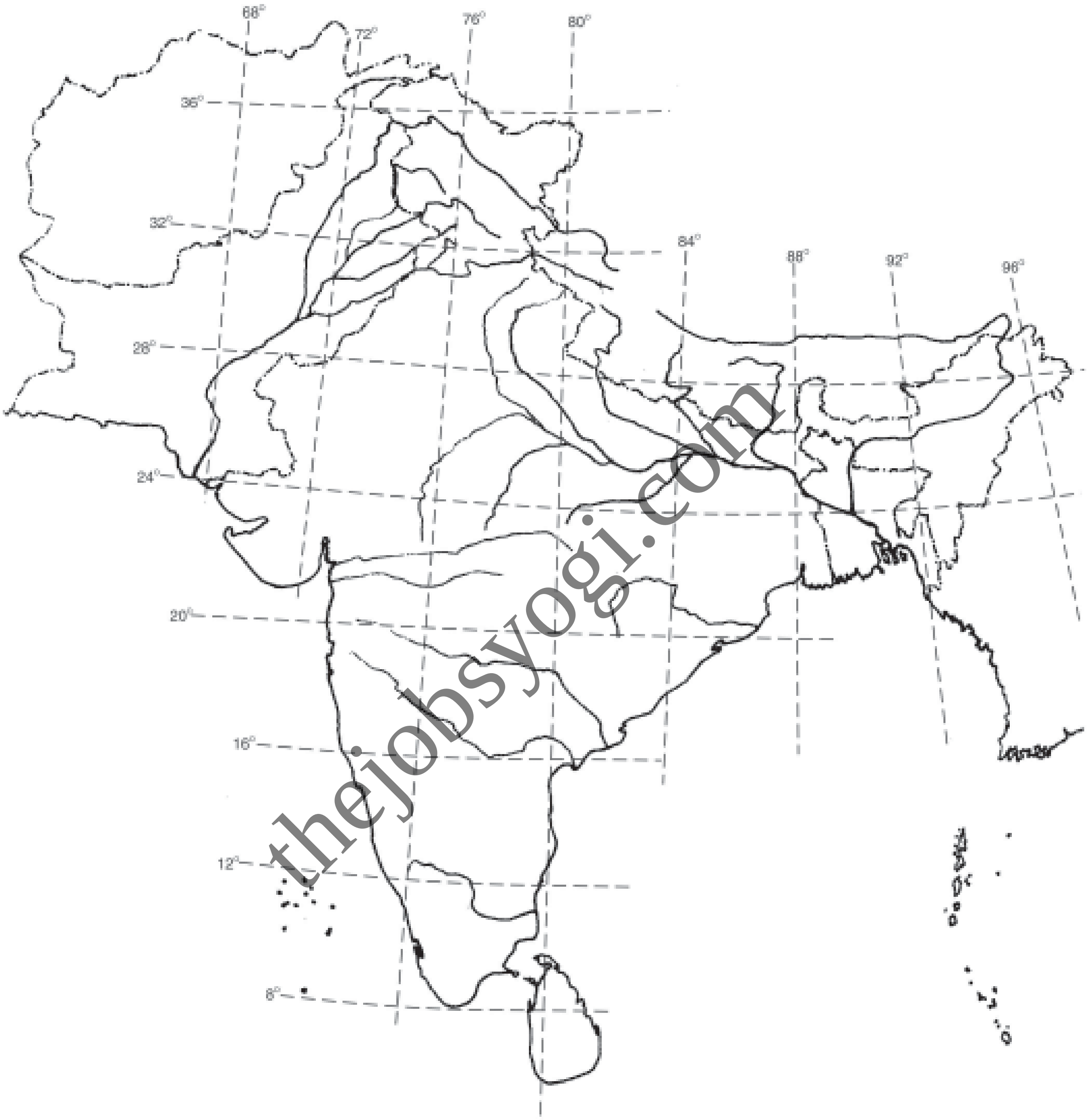

thejobsyogi.com

अभ्यास

अभ्यास 'एक'

निर्देशः दिए गए रेखा मानचित्र में निम्नलिखित स्थलों को चिन्हित कीजिए तथा प्रत्येक स्थल के बारे में एक संक्षिप्त विवरण दीजिए।

1. आमेर
2. आम्बेर
3. अरिकामेडू
4. बेलूर
5. बद्रीनाथ
6. भटकल
7. चिदांबरम्
8. धौलावीरा
9. एरण
10. गोली
11. हेलेबिड
12. जौगडा
13. कावेरीपत्तनम
14. लिपाक्षी
15. मुखलिंगम

अभ्यास 'दो'

निर्देशः दिए गए रेखा मानचित्र में निम्नलिखित स्थलों को चिन्हित कीजिए तथा प्रत्येक स्थल के बारे में एक संक्षिप्त विवरण दीजिए।

1. बुर्जहोम
2. चौल
3. देवल
4. लोथल
5. मोधेरा
6. नासिक
7. पंढारपुर
8. क्वीलोन
9. राज़िम
10. संघोल
11. सित्तनवासल
12. शहबाजगढ़ी
13. तिगवा
14. उरैयूर
15. वैशाली

अभ्यास 'तीन'

निर्देशः दिए गए रेखा मानचित्र में निम्नलिखित स्थलों को चिन्हित कीजिए तथा प्रत्येक स्थल के बारे में एक संक्षिप्त विवरण दीजिए।

1. अनेगोन्डी
2. भिलसा
3. बालासोर
4. चंदेरी
5. चंद्रगिरि
6. एलिफैन्टा
7. कण्टकशिला
8. लखनौती
9. जालौर
10. काल्पी
11. कोरकई
12. ललितगिरि
13. मांडू
14. नचना-कुठार
15. तिरुपति

अभ्यास 'चार'

निर्देशः दिए गए रेखा मानचित्र में निम्नलिखित स्थलों को चिन्हित कीजिए तथा प्रत्येक स्थल के बारे में एक संक्षिप्त विवरण दीजिए।

1. बारबरा
2. भगवतराव
3. धार
4. दाभोल
5. इलिचपुर
6. जिन्जी
7. कलाड़ी
8. मुजिरिस
9. महास्थान
10. मान्यखेत
11. नारनौल
12. ओरछा
13. राज़िम
14. रंगपुर
15. सिगिरिया

अभ्यास 'पांच'

निर्देशः दिए गए रेखा मानचित्र में निम्नलिखित स्थलों को चिन्हित कीजिए तथा प्रत्येक स्थल के बारे में एक संक्षिप्त विवरण दीजिए।

1. आमरी
2. अपरान्तक
3. बामियान
4. भारूकच्छ
5. भटनेर
6. चन्हुदड़ो
7. द्वारका
8. पुष्कर
9. रोपड़
10. सिरसा
11. श्रीरंगपट्नम
12. शत्रुंजय
13. तराइन
14. उच्छ
15. वलभी

thejobsyogi.com

अभ्यास हेतु रेखा-मानचित्र

thejobsyogi.com

अभ्यास छह

(स्रोतः यूपीएससी सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2016)

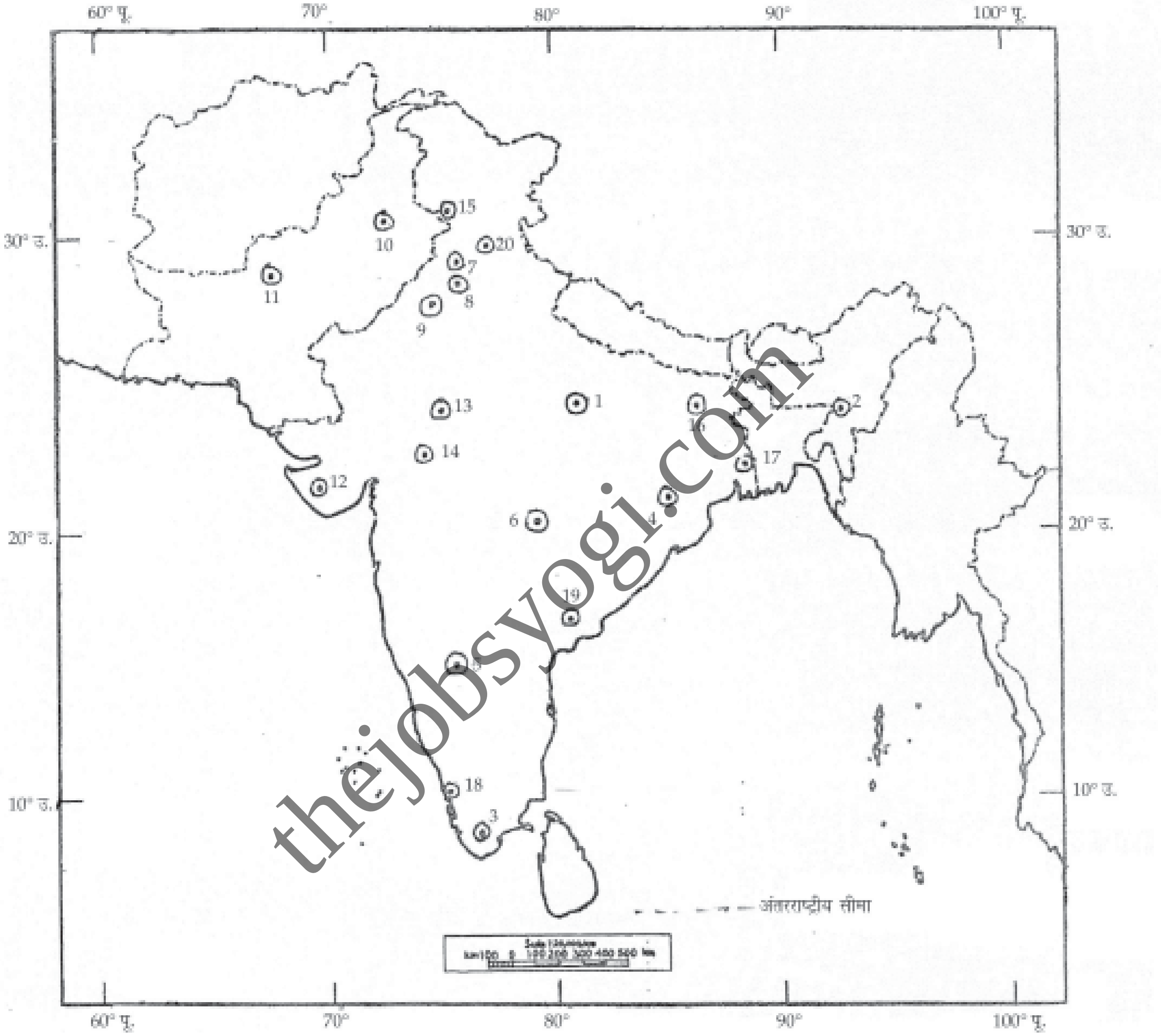

thejobsyogi.com

अफगानिस्तान, बांग्लादेश, भूटान नेपाल, म्यांमार (बर्मा), पाकिस्तान तथा श्रीलंका के साथ भारत

दिए गए मानचित्र पर अंकित निम्न स्थानों की पहचान कीजिए तथा प्रत्येक पर लगभग 30 शब्दों की संक्षिप्त टिप्पणी लिखिएः

1. एक मध्यपाषाणकालीन स्थल
2. एक नवपाषाणकालीन स्थल
3. एक महापाषाण-ताम्रपाषाणकालीन स्थल
4. एक नवपाषाणकालीन स्थल
5. एक नवपाषाणकालीन स्थल
6. एक महापाषाणकालीन स्थल
7. बौद्ध पुरावशेषों के लिए ज्ञात एक स्थल
8. एक हड़प्पाकालीन स्थल
9. एक हड़प्पाकालीन स्थल
10. एक हड़प्पाकालीन स्थल
11. एक नवपाषाणकालीन स्थल
12. एक हड़प्पाकालीन स्थल
13. एक राजधानी
14. एक शैलकृत गुहा स्थल
15. एक परवर्ती हड़प्पाकालीन स्थल
16. एक शिक्षण केंद्र
17. एक मृण-कला केंद्र
18. एक बंदरगाह
19. एक राजधानी
20. एक राजधानी

अभ्यास सात

(स्रोतः यूपीएससी सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2015)

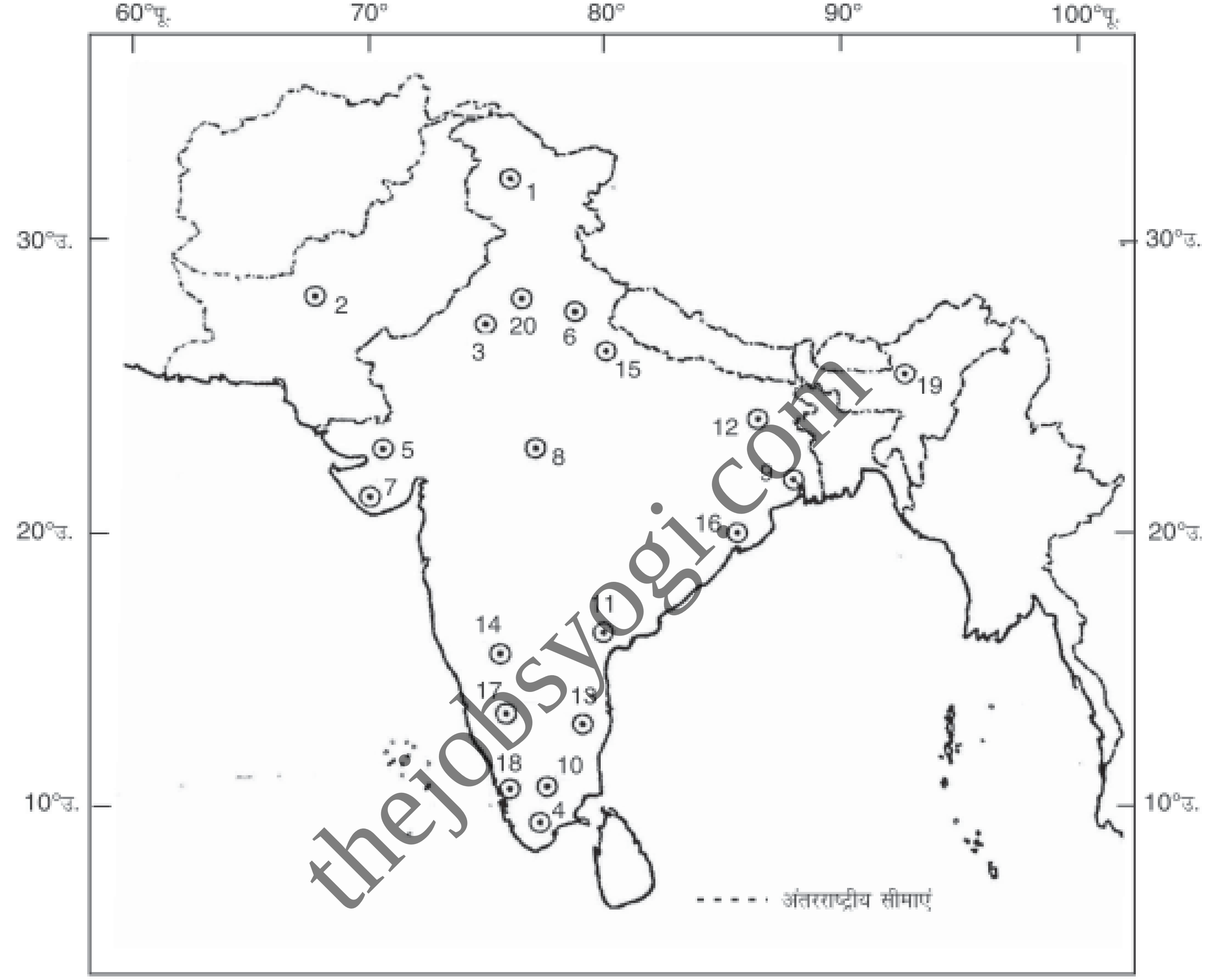

thejobsyogi.com

अफगानिस्तान, बांग्लादेश, भूटान नेपाल, म्यांमार (बर्मा), पाकिस्तान तथा श्रीलंका के साथ भारत

दिए गए मानचित्र पर अंकित निम्न स्थानों की पहचान कीजिए तथा प्रत्येक पर लगभग 30 शब्दों की संक्षिप्त टिप्पणी लिखिएः

1. एक नवपाषाणकालीन स्थल
2. एक नवपाषाणकालीन स्थल
3. एक हड़प्पाकालीन स्थल
4. एक महापाषाणकालीन स्थल
5. एक हड़प्पाकालीन स्थल
6. एक चित्रित धूसर मृदभांड स्थल
7. एक शिलालेखीय स्थल
8. एक महत्वपूर्ण प्राचीन स्थल
9. एक प्राचीन बंदरगाह
10. एक प्राचीन गुफा-चित्र स्थल
11. एक बौद्ध स्थल
12. एक शिक्षण केंद्र
13. ब्रह्मदेय ग्राम
14. एक प्राचीन राजधानी
15. एक प्राचीन राजधानी
16. एक मंदिर स्थल
17. एक प्राचीन राजधानी
18. एक प्राचीन बंदरगाह
19. एक पुरातात्विक मंदिर स्थल
20. एक हड़प्पाकालीन स्थल

अभ्यास आठ

(स्रोतः यूपीएससी सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2014)

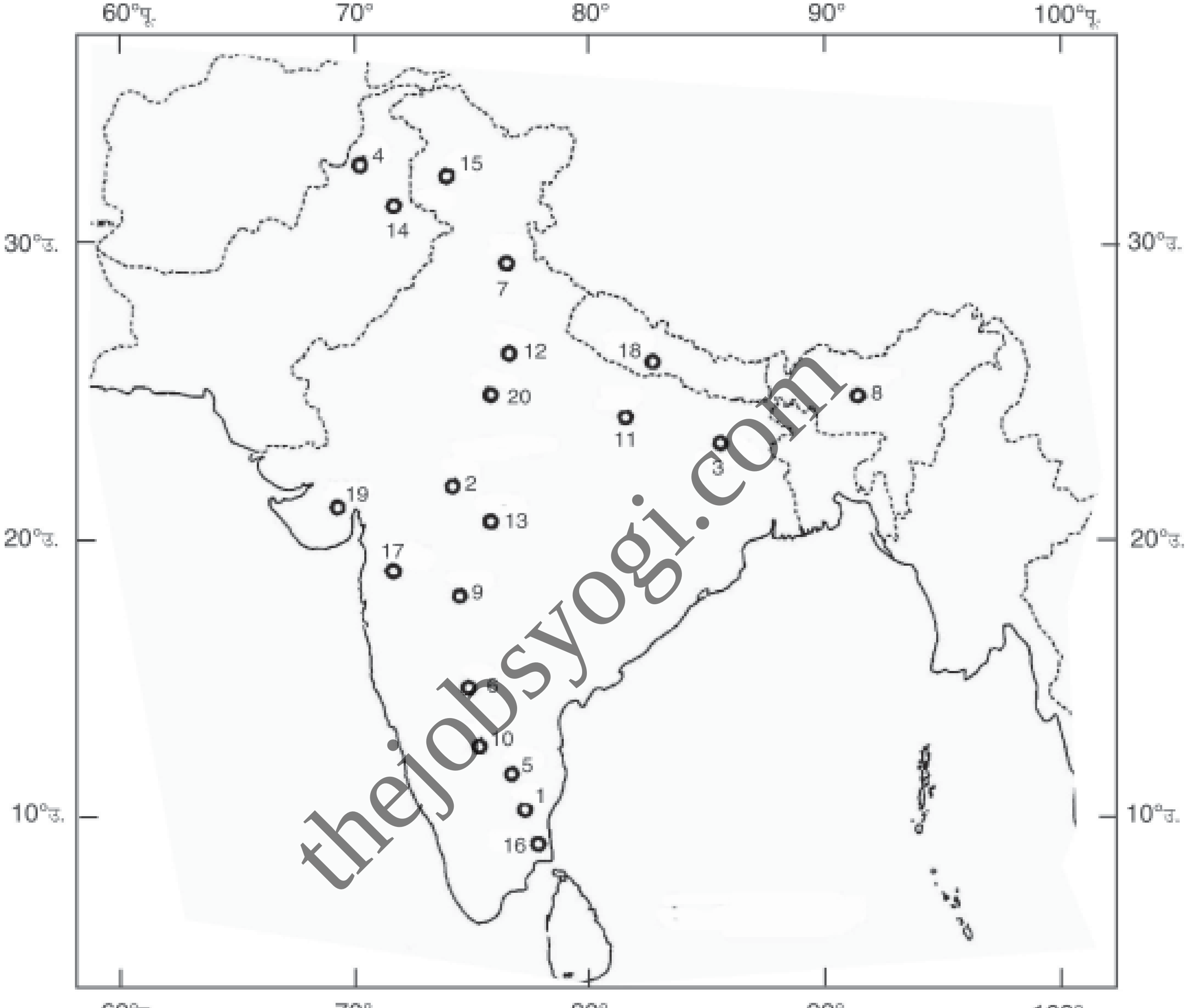

thejobsyogi.com

अफगानिस्तान, बांग्लादेश, भूटान नेपाल, म्यांमार (बर्मा), पाकिस्तान तथा श्रीलंका के साथ भारत

दिए गए मानचित्र पर अंकित निम्न स्थानों की पहचान कीजिए तथा प्रत्येक पर लगभग 30 शब्दों की संक्षिप्त टिप्पणी लिखिएः

1. एक प्राचीन राजधानी
2. एक पुरापाषाणकालीन स्थल
3. एक सांस्कृतिक केंद्र
4. एक प्राचीन राजधानी
5. एक पुरापाषाणकालीन स्थल
6. एक ऐतिहासिक स्थल
7. एक हड़प्पाकालीन स्थल
8. एक प्राचीन राजधानी
9. एक राजनीतिक तथा सांस्कृतिक केंद्र
10. एक महापाषाणकालीन स्थल
11. एक मध्यपाषाणकालीन स्थल
12. एक ताम्रपाषाणकालीन स्थल
13. एक प्रागैतिहासिक स्थल
14. एक राजनीतिक तथा सांस्कृतिक केंद्र
15. एक प्राचीन राजधानी
16. एक लुप्त बंदरगाह
17. शैल-गुहा कला केंद्र
18. एक प्राचीन राजधानी
19. एक राजनीतिक तथा सांस्कृतिक केंद्र
20. एक प्राचीन नगर

अभ्यास नौ

(स्रोतः यूपीएससी सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2013)

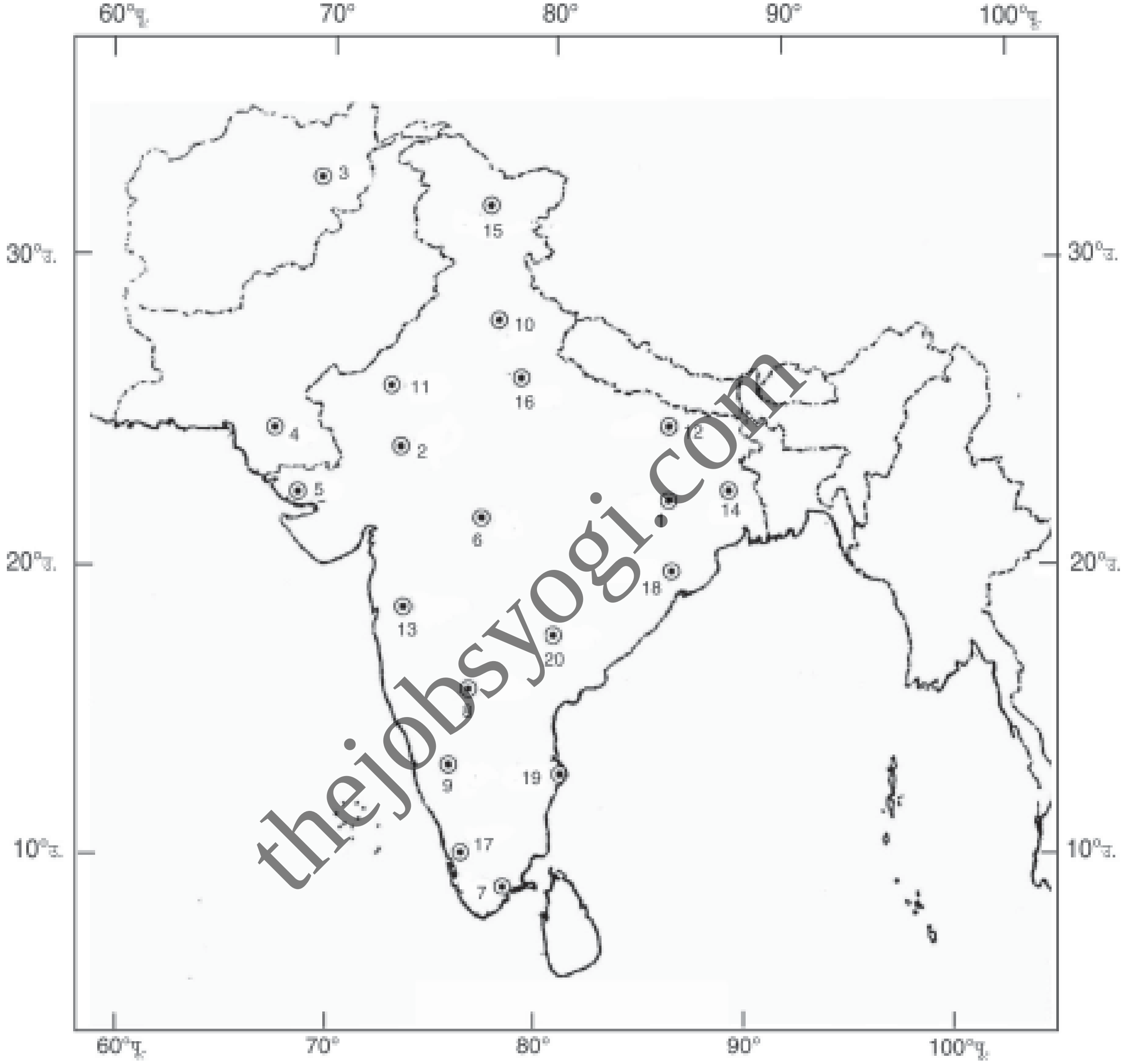

thejobsyogi.com

अफगानिस्तान, बांग्लादेश, भूटान नेपाल, म्यांमार (बर्मा), पाकिस्तान तथा श्रीलंका के साथ भारत

दिए गए मानचित्र पर अंकित निम्न स्थानों की पहचान कीजिए तथा प्रत्येक पर लगभग 30 शब्दों की संक्षिप्त टिप्पणी लिखिएः

1. एक पुरापाषाणकालीन तथा मध्यपाषाणकालीन स्थल
2. एक मध्यपाषाणकालीन स्थल
3. एक महत्वपूर्ण विश्राम स्थल
4. एक प्राक-हड़प्पन स्थल
5. एक महत्वपूर्ण हड़प्पा स्थल
6. महत्वपूर्ण जीवाश्मों का स्थल
7. एक बंदरगाह
8. एक पुरापाषाणकालीन स्थल
9. एक नवपाषाण, मध्यपाषाण तथा ताम्रपाषाणकालीन स्थल
10. एक हड़प्पा स्थल
11. एक पुरापाषाणकालीन स्थल
12. एक नवपाषाणकालीन स्थल
13. एक ताम्रपाषाणकालीन स्थल
14. एक ताम्रपाषाणकालीन स्थल
15. एक बौद्ध मठ स्थल
16. एक चित्रित धूसर मृदभांड स्थल
17. एक प्रसिद्ध भारतीय दार्शनिक से संबद्ध स्थल
18. ऐतिहासिक शैल-कर्त गुहा
19. प्रसिद्ध दुर्ग
20. प्रसिद्ध राज्य की राजधानी

अभ्यास दस

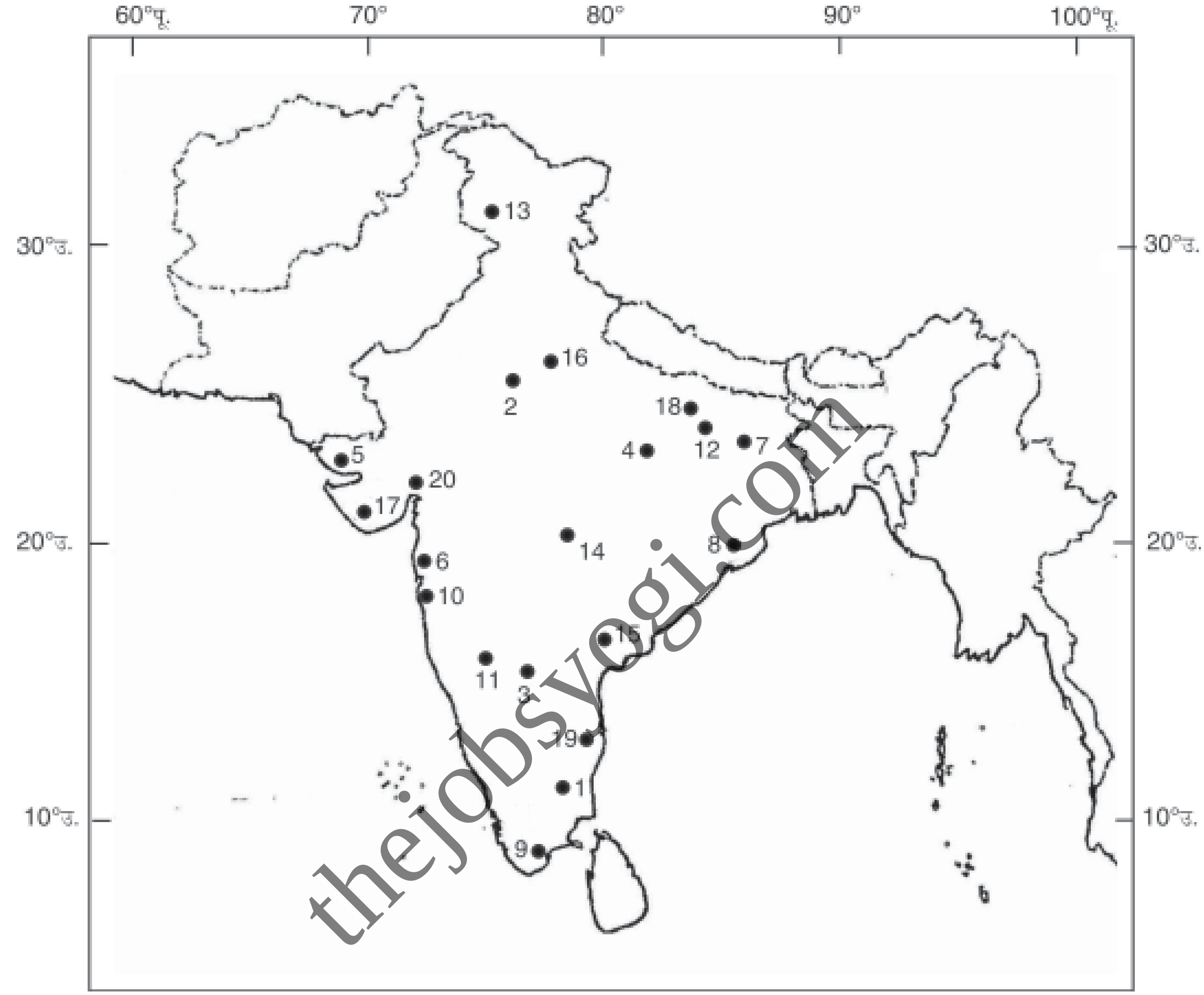

thejobsyogi.com

अफगानिस्तान, बांग्लादेश, भूटान नेपाल, म्यांमार (बर्मा), पाकिस्तान तथा श्रीलंका के साथ भारत

दिए गए मानचित्र पर अंकित निम्न स्थानों की पहचान कीजिए तथा प्रत्येक पर लगभग 40 शब्दों की संक्षिप्त टिप्पणी लिखिएः

1. एक प्राचीन राजधानी
2. एक चित्रित धूसर मृदभांड स्थल
3. लघु पाषाण को काटकर तराशी गई अशोक की राजाज्ञा संबंधी स्थल
4. प्रारंभिक मध्यकालीन भारत में एक दुर्ग-नगर
5. जैन मंदिरों के लिए प्रसिद्ध एक स्थल
6. एक प्रसिद्ध बौद्ध मठ
7. एक प्राचीन शैक्षिक केंद्र
8. प्राचीन शिलालेखीय स्थल
9. एक प्राचीन पत्तन-नगर
10. एक बंदरगाह
11. प्राचीन भारत में एक राजधानी
12. प्रसिद्ध शैल-कर्त गुहा
13. चित्रकला शैली हेतु एक प्रसिद्ध स्थल
14. एक महापाषाणकालीन स्थल
15. एक उत्तरी काले चमकदार मृदभांड स्थल
16. एक ओसीपी स्थल
17. एक ताम्रपाषाणकालीन स्थल
18. हड्डी के औजारों के लिए प्रसिद्ध एक नवपाषाणकालीन स्थल
19. एक प्राचीन शिक्षण केंद्र
20. एक हड़प्पाकालीन बंदरगाह

अभ्यास ग्यारह

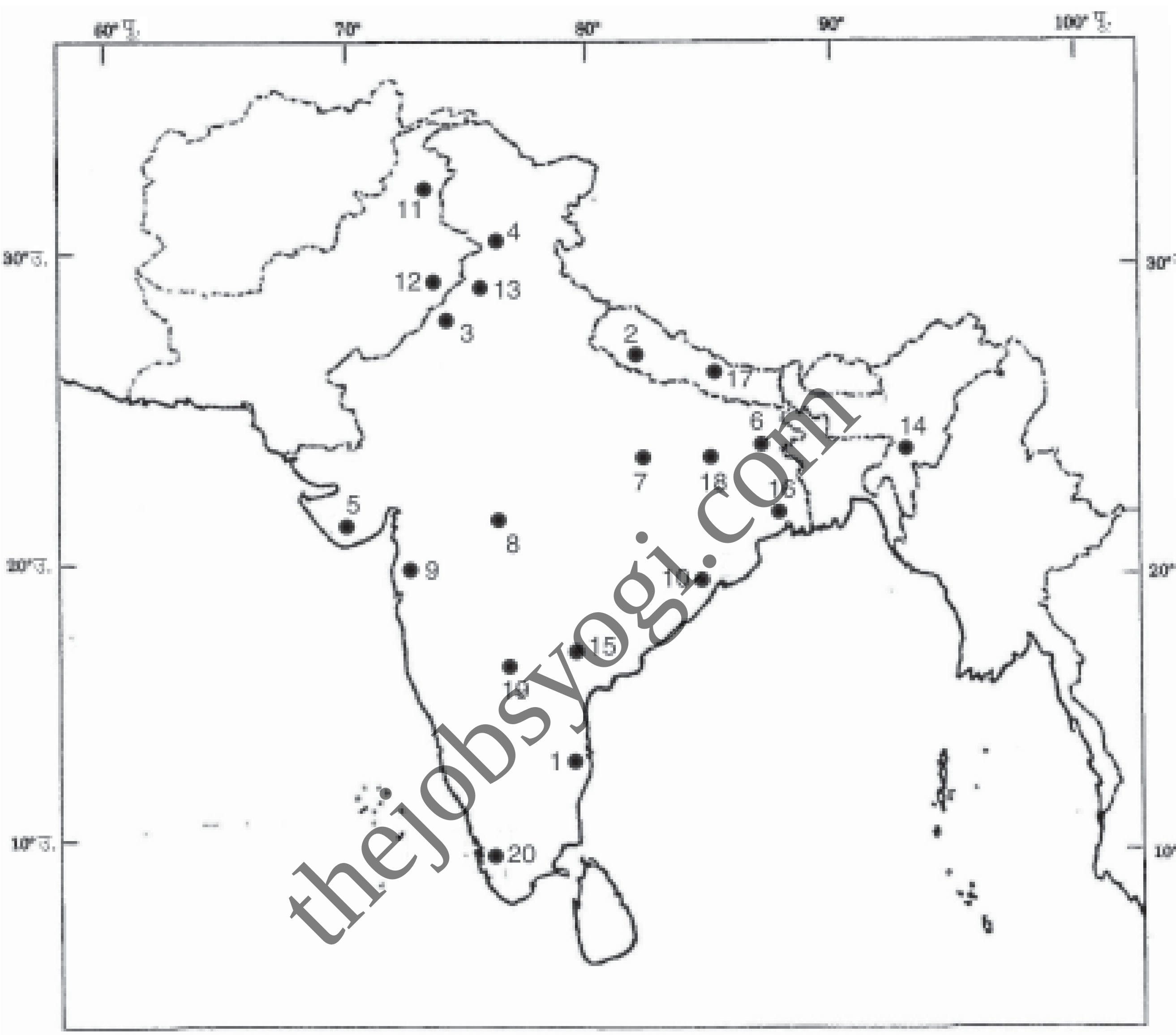

thejobsyogi.com

अफगानिस्तान, बांग्लादेश, भूटान नेपाल, म्यांमार (बर्मा), पाकिस्तान तथा श्रीलंका के साथ भारत

दिए गए मानचित्र पर अंकित निम्न स्थानों की पहचान कीजिए तथा प्रत्येक पर लगभग 40 शब्दों की संक्षिप्त टिप्पणी लिखिएः

1. एक ब्रह्मदेय ग्राम
2. एक धर्म प्रस्तोता से संबद्ध एक स्थल
3. एक हड़प्पाकालीन स्थल
4. एक प्राचीन राजधानी
5. एक प्राचीन जलाशय का स्थल
6. एक प्राचीन राजधानी
7. एक नवपाषाणकालीन स्थल
8. एक मध्यपाषाणकालीन स्थल
9. अशोक का एक वृहद शिलालेख
10. एक मंदिर-नगर
11. एक अभिलेख स्थल
12. एक आईवीसी स्थल
13. एक ताम्रपाषाणकालीन स्थल
14. एक नवपाषाणकालीन स्थल
15. एक महापाषाणकालीन स्थल
16. एक एनबीपीडब्ल्यू स्थल
17. अशोक द्वारा स्थापित एक नगर
18. एक प्रसिद्ध राजनैतिक चिंतक से संबद्ध नगर
19. ताम्र भंडार संस्कृति तथा ओसीपी संस्कृति का स्थल
20. एक प्राचीन पत्तन नगर

अभ्यास छह हेतु उत्तर

1. सराय नाहर राय (संभवतः अन्य विकल्प—महादहा, चोपानी-मांडो)
2. दाओजलि हडिंग
3. अदिचनाल्लुर
4. कुचई
5. मास्की ('ब्रह्मगिरि' भी हो सकता है)
6. जूनापानी
7. संघोल
8. बनवाली
9. कालीबंगा
10. हड़प्पा
11. मेहरगढ़
12. रोजड़ी
13. उज्जैन
14. बाघ गुफाएं
15. मांडा (अख्नूर)
16. नालंदा
17. चंद्रकेतुगढ़
18. मुजिरिस
19. अमरावती (वेंगी भी पास में है)
20. नागरकोट/त्रिगर्त/भीमागर (आधुनिक कांगड़ा)

अभ्यास सात हेतु उत्तर

1. बुर्जहोम
2. मेहरगढ़
3. बनावली/बनवाली
4. अदिचनाल्लुर
5. सुरकोटदा
6. हस्तिनापुर
7. जूनागढ़
8. सांची/विदिशा (बेसनगर)
9. ताम्रलिप्ति
10. मलयदिपत्ति
11. अमरावती
12. नालंदा
13. उत्तरमेरूर
14. वतापी (आधुनिक बदामी)
15. कन्नौज
16. भुवनेश्वर
17. बनवासी
18. मुजिरिस
19. प्रागज्योतिष्पुर
20. रोपड़

अभ्यास आठ हेतु उत्तर

1. थानेश्वर/थानेसर
2. भीमबेटका
3. नालन्दा या विक्रमशिला
4. पुरुषपुर/पेशावर
5. अतिरमपक्कम
6. मास्की
7. रोपड़
8. प्रागज्योतिष्पुर, कामरूप की राजधानी
9. प्रतिष्ठान (पैठन)
10. जदिगेनहल्ली
11. सराय-नाहर-राय
12. आलमगीरपुर
13. आदमगढ़
14. तक्षशिला
15. परिहासपुर(आधुनिक श्रीनगर)
16. पुहार/कावेरीपट्टिनम
17. जुन्नार
18. तिलौर कोट (कपिलवस्तु), शाक्य गणराज्य की राजधानी
19. वल्लभी
20. मथुरा

अभ्यास नौ हेतु उत्तर

1. बमदोरा, पूर्वी सिंहभूम झारखंड का जिला
2. बागोर, राजस्थान
3. काबुल, अफगानिस्तान
4. आमरी
5. देसलपुर
6. मन्डला
7. कोरकई
8. हुन्सगी/हुनासगी
9. हल्लूर
10. आलमगीरपुर
11. नागौर
12. चिरांद
13. चंदोली
14. पांडु राजर धिबि
15. थिकसे गोम्पा/अल्ची गोम्पा
16. अहिच्छत्र
17. कलाड़/कलटी, श्री आदिशंकर का जन्म स्थान
18. उदयगिरि गुफाएं
19. सेंट जॉर्ज किला/आलमपराई शैल दुर्ग
20. वारंगल

अभ्यास दस हेतु उत्तर

1. गंगैकोण्डचोलपुरम
2. इंद्रप्रस्थ
3. जटिंग रामेश्वर
4. काल्पी
5. कुम्भरिया
6. कन्हेरी
7. विक्रमशिला
8. उदयगिरि
9. कोरकई
10. चौल
11. बनवासी
12. बारबरा
13. बसोहली
14. जूनापानी
15. अमरावती
16. हस्तिनापुर
17. प्रभासपाटन
18. चिरांद
19. कांचीपुरम
20. लोथल

अभ्यास ग्यारह हेतु उत्तर

1. उत्तरमेरूर
2. लुम्बिनीग्राम
3. कालीबंगा
4. कांगड़ा, चांद वंश की राजधानी
5. गिरनार, चंद्रगुप्त मौर्य के गवर्नर द्वारा बनवाया गया जलाशय
6. गौड़/लखनौती
7. चोपानी-मांडो
8. आदमगढ़
9. सोपारा
10. कोणार्क
11. मानसहेरा
12. हड़प्पा
13. हनुमानगढ़
14. दाओजली हडिंग
15. नागार्जुनकोंडा
16. तामलुक
17. ललितपाटन, काठमांडू का प्राचीननाम
18. पाटलिपुत्र
19. कल्लुर
20. मुजिरिस या क्विलोन

thejobsyogi.com